श्रीस्वामिचरणदासजीकृत

व्रजचरित्रवर्णन आदि

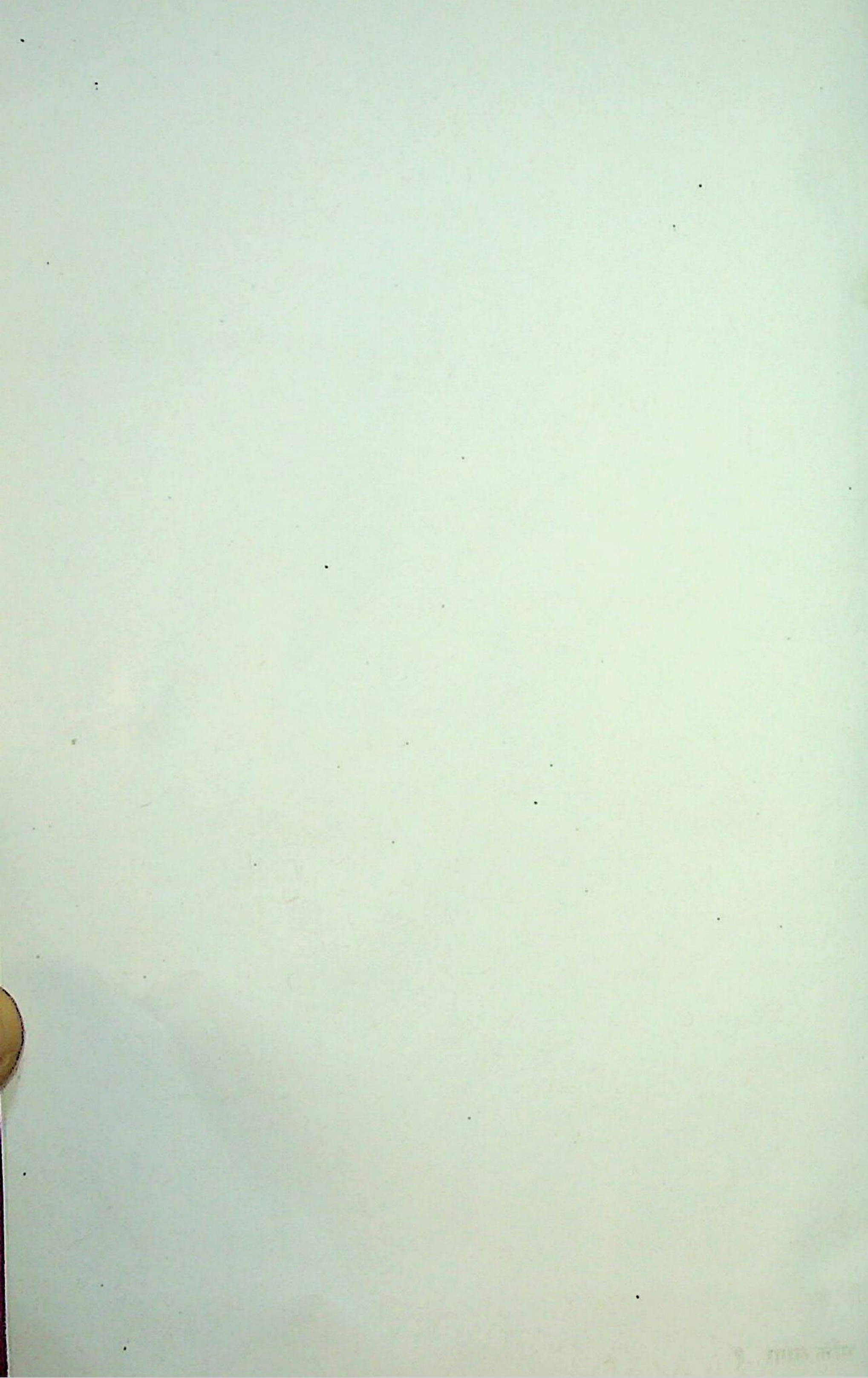
भक्तिसागरादि

१७ ग्रन्थ



खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन, बम्बई.





ॐ

श्रीस्वामिचरणदासजीकृत-

व्रजचरित्रवर्णन आदि

भक्तिसागरादि

(१७ ग्रन्थ)



जिनमें

व्रजचरित्र, अमरलोक, अष्टांगयोग, षट्कर्म, हठयोग, ज्ञानस्वरोदय, भक्तिपदार्थ, ब्रह्म-ज्ञान, शब्दवर्णन, भक्तिवर्णन आदि उपदेशिक विषय रोचक पद्योंमें वर्णित हैं.



खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन बम्बई

संस्करण : अगस्त २०१९, संवत् २०७६

मूल्य : ३५० रुपये मात्र।

मुद्रक एवं प्रकाशकः
खेमराज श्रीकृष्णदास,™
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
मुंबई - ४०० ००४.

Printers & Publishers
Khemraj Shrikrishnadass
Prop: Shri Venkateshwar Press
Khemraj Shrikrishnadass Marg,
7th Khetwadi, Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.khe-shri.com
E-mail : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj for M/s Khemraj Shrikrishnadass
Prop. Shri Venkateshwar Press, Mumbai-400004,
at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial Estate,
Pune -411 013.

प्रस्तावना



भगवानने संसारी जीवोंके उद्धार हेतु अपनी पूर्ण कृपासे कितने ही नररत्न निर्माण किये हैं, उन्हीं रत्नोंमें जगतप्रसिद्ध शुकदेवजी महाराज हुए जिनके शिष्य चरणदासजीने अपने गुरुजीसे प्रश्नोत्तरमें लोकोपकारार्थ यह ग्रंथसंग्रह निर्माण किया है। बहुत समयसे हमारे चितमें इस ग्रंथके प्रचार करनेका मनोरथ था, परन्तु कोई शुद्ध प्रति न मिलनेसे नहीं छाप सके। एक समय परमहंस चरणदासजी, पण्डित रामशरणदासजी महामराज कनखल (हरद्वार) धर्मशालाके महंत हमारे बम्बई कार्यालयमें पधारे और उनसे इस विषयमें वार्तालाप हुआ उन्होंने हमारे मनोरथकी प्रशंसा कर अपने मित्र मुन्शी शिवदयालजी वकील अदालत जयपुरसे एक प्राचीन ग्रंथ मँगाकर दिया जिससे शुद्ध कर यह ग्रंथ प्रकाशित किया गया है। हम अपने मनोरथसिद्धिकर्ता उक्त दोनों महाशयोंको हृदयसे धन्यवाद देते हुए यह ग्रन्थ प्रकाशित करते हैं और सर्वाधिकार सुरक्षित रखा है।

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" प्रेस–बम्बई.

श्रीनिकुञ्जविहारिणे नमः

श्रीस्वामि चरणदासजीका-जीवन चरित्र

*

प्रगट हो कि, श्रीयुत स्वामी चरणदासजी महाराजका सुयश तो जगत्में भलीभांति विख्यातही है परंतु यहां वर्णन करनेकी आवश्यकता समझकर संक्षेपरीतिसेही लिखा जाता है। वह इस रीतिसे है कि, श्रीमान् चरणदासजी संवत् १७६० विक्रममें मवात देश प्रांत अलवर राजधानीके निकट डहरा ग्राममें भृगुवंश अर्थात् च्यवनकुलमें श्रीमती कुजोमाताके गर्भसे उत्पन्न हुए; श्रीमान्के कुलकी आठवीं पीढीमें पूर्वजन्मज्ञानी परमप्रेमी परमभक्त शोभनदासजी हुए हैं, जब उनकी प्रेमभक्ति पूर्णताको पहुँच गई तो उनको श्रीवृंदावनयुगलविहारीलाल महाराजने प्रत्यक्ष दर्शन देकर वर मांगनेकी आज्ञा दी। तब शोभनदासजीने भी यही वर मांगा कि, मेरे कुलमें सदैव आपकी भक्ति बनी रहे इससे बढकर और कोई पदार्थ मांगनेके लायक नहीं है। तब युगल सरकारने तथास्तु कहकर आज्ञा की कि, तुम्हारे पश्चात् आठवीं पीढीमें हमारा अंशावतार संतरूप प्रगट होकर जगत्के अनंत जीवोंका उद्धार करेगा। इसी अभिप्रायसे श्रीमान् चरणदासजी भगवत्के वही अंशावतार हुए हैं। श्रीमान्के पिता श्रीमुरलीधरदासजी बाल्यावस्थासे ही भगवद्भक्तिमें लवलीन रहते थे। जैसे जलमें कमल उत्पन्न हो कर जलसे जुदा रहता है उसी प्रकार मुरलीधरजीने जगद्व्यवहारोंको स्पर्श नहीं किया और चमत्कार यह कि, सदेह वैकुंठगामी हुए श्रीचरणदासजी महाराजकी पांच वर्षकी अवस्थामें डहरेग्राम नदीके निकट श्रीवेदव्यास नंदन जगवंदन श्रीशुकदेवमुनिराजने दर्शन दिया। पश्चात १९ वर्षकी अवस्थामें श्रीगंगातट स्थान शुकताल जहांपर राजा परीक्षित्को श्रीमद्भागवत कथा सुनाकर श्रीशुकदेवजी महाराजने कृतार्थ किया था। वहांपर

दूसरी बार श्रीचरणदासजीको दर्शन दिये और विधिवत् दीक्षा देकर श्रीचरणदासजीको अपना शिष्य कर भक्तियोग, ज्ञान, वैराग्यादिसे पूर्ण कर तारन तरन बनाया। इसके पश्चात् श्रीचरणदासजीने इंद्रप्रस्थ अर्थात् दिल्लीस्थानमें विराजमान होकर अष्टांगयोग साधनकर १४ वर्षकी समाधि लगाकर अष्टसिद्धि प्राप्तकर त्रिकालज्ञ तारनतरन महात्मा कहलाये। तदनन्तर दिल्लीसे चलकर श्रीयुगलविहारीजीके दर्शनाभिलाषी श्रीवृंदावनधाम सेवाकुंजमें पहुँचकर श्रीयुगलविहारीजीके सह समाज सखी सुमसहित दर्शन पाया। श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंद परमात्माने श्रीचरणदासजीको अपना अनन्य निष्काम प्रेमी भक्त समझकर वात्सल्यतापूर्वक निज हृदयसे लगाया और रासविलासका आनंद दिलाकर प्रेमभक्तिका प्रचार कर जीवोंका उद्धार करनेकी आज्ञा देकर अंतर्द्धान हुए। तिस पीछे श्रीचरणदासजीसे श्रीयुगलविहारीजीका वियोग न सहा गया और विरहवियोगकी दशामें वंशीवटके नीचे मूर्च्छित होगये उसी समय श्रीशुकदेवजी तीसरी बेर वहीं प्रकट होकर दर्शन देकर समाधान कर वंशीवटके नीचे श्रीचरणदासजीके मस्तकपर निजहस्त कमलधर श्रीवृंदावनयुगल विहारीजीका प्रगट दर्शन कराकर विरहाग्निको शीतल कर इंद्रप्रस्थ जाकर जीवोंके उद्धार निमित्त भक्ति उपदेश करनेकी आज्ञा देकर अंतर्धान हुए। पश्चात् श्रीचरणदासजी दिल्ली आये। परमशोभायमान श्रीजीका मंदिर सिद्धनकर विराजमान हुए और हरिगुरू आज्ञानुसार नवधाभक्ति द्वारा लक्षावधि जीवोंका भगवत्के सम्मुखकर भगवान्के दर्शनका साक्षात् कराया, श्रीचरणदासजीके सहस्रों संत, विरक्त, नेमी, प्रेमी, ज्ञानी, ध्यानी, सिद्ध समाधी हुए और भारतवर्षके उत्तमोत्तम तीर्थों तथा सप्तपुरी चारों धामोंमें जाकर विराजमान हुए और भगवद्भक्तिका विस्तार किया;

श्रीमान्‌के संत चरणदासीय वैष्णव कहलाए। इनकी शुकसंप्रदाय जगत्‌में विख्यात हुई और उस समय दिल्लीमें मुहम्मदशाह बादशाह थे वे भी श्रीमहाराजके परम प्रभाव और अनेकानेक ईश्वरीय चमत्कार देखकर श्रीमहाराजमें भक्तिवश होकर नित्य दर्शन व सत्संगकी अभिलाषासे श्रीमान्‌के पास आने लगे। यहां तक कि, सहस्रों ग्राम श्रीमहाराज शिष्योंके नाम भगवत् संतसेवानिमित्त भेंट किये, वे अबतक चले आते हैं और उन ग्रामोंके सहस्रों फरमानशाही अबतक मंदिरमें मौजूद हैं, मुहम्मदशाहबादहशाहके अहदमें एक समय ईरान से चढकर दिल्लीपर नादिरशाह और उसके आगमनका वृत्तांत छः महीने पहिले लिखकर श्रीमान्‌ने मुहम्मदशाहको दे दिया, उस लेखके अनुसारही नादिरशाहने वर्ताव किया। इस वृत्तांतको नादिरशाहने मुहम्मदशाहके मुखसे सुनकर श्रीमान्‌का दर्शन कर और चमत्कार पाकर इनको वलीअल्लाह और मकबूलपाकर पीरमुरशद माना और श्रीमान्‌के उपदेशसे आपने अपनी तमोगुणी वृत्ति व आसुरी बुद्धिका परित्याग कर ईरानको चला गया! श्रीमान्‌ने अस्सी वर्षतक भूतलपर विराजकर भगवद्भक्ति प्रेम और परोपकारमें काल क्षेप किया, अंतमें भगवद् आज्ञानुसार स्वेच्छासे दिल्लीमें योगाभ्याससे संवत् १८३९ विक्रममें दशवें द्वारको वेधन कर पांच भौतिक शरीरको त्याग परमधामको पधारे। इन स्वामीजीकी सहस्रों वाणी इस "श्रीगुरु भक्ति प्रकाश" ग्रंथमें विस्तार पूर्वक वर्णित हैं। उसके अवलोकनेसे श्रीमान् स्वामिचरणदासजी महाराज का पूर्व प्रभाव मालूम हो सकता है॥

॥ इति शुभम् ॥

श्रीमहाराज स्वामी चरणदासजीकी वाणीका माहात्म्य

★

दोहा–नमो नमो शुकदेव मुनि, नमो स्वामि चरण दास ।
प्रगटे श्रीमहाराज ह्वै, करन भक्ति परकाश ॥१॥
परम सनातन आपनो, धर्म भागवत जाहि ।
आचारज वपु धरि बहुरि, प्रकटायो ले ताहि ॥२॥
कलियुगमें सतयुग कियो, लियो संत अवतार ।
निस्तारचो सब जगतको, प्रेमभक्ति विस्तार ॥३॥
तानो सुयश वितान निज, शुकसंप्रदा चलाय ।
वाणी विमल बनाय जग, सोवत दियो जगाय ॥४॥
जा जाके श्रवणन परी, सो सो भये निहाल।
वाणी श्रीमहाराजकी, जीतन जग यमकाल ॥५॥
अष्टादश षट चार नौ, चौदह सबको मूल ।
वाणी श्रीमहाराजकी, हरन भर्म भय सूल ॥६॥
भारत गीता भागवत, रामायण इतिहास ।
वाणी श्रीमहाराजकी, सब मिल करत प्रकाश ॥७॥
संस्कृत भाषा है जितक, शास्त्र रु वेद पुराण ।
वाणी श्रीमहाराजकी, सबको लिये प्रमाण ॥८॥
जहँ लगयुक्ति जु मुक्ति लग, अनुभव उक्ति अपार ।
वाणी श्रीमहाराजकी, सबहीके अनुहार ॥९॥
परा बुद्धि व्यापक सकल, परम सनातन सत्व ।
वाणी श्रीमहाराजकी, सब सत्वनको सत्व ॥१०॥

विरलो जन जानत कोऊ, जाको विमल विचार ।
वाणी श्रीमहाराजकी, सब सारनको सार ॥ ११ ॥
अगम अर्थको सुगमकर, ज्योंकी त्यों दरशाय ।
वाणी श्रीमहाराजकी, सबको दे समझाय ॥१२॥
ज्ञानयोग वैरागनिधि, प्रेमभक्ति रसरूप ।
वाणी श्रीमहाराजकी, अद्भुत अधिक अनूप ॥१३॥
निर्गुण सर्गुण सर्वमय, सर्वोपरि पहिचान ।
वाणी श्रीमहाराजकी, सकल सुखनकी खान ॥१४॥
सबहीके मन भावती, सबहीको जु सुहात ।
वाणी श्रीमहाजकी, ज्यों बालकको मात ॥१५॥
सबही मत मारग मिली, सबहीके अनुरूप ।
वाणी श्रीमहाराजकी, काढन भवतम कू ॥१६॥
कोऊ प्रतिवादक नहीं, सबही प्रशंसत जाह ।
वाणी श्रीमहाराजकी, सबको करत निबाह ॥१७॥
वाणी श्रीमहाराजकी, श्रीमहाराजही जान ।
शब्दब्रह्म परब्रह्ममय दुबिधा दुर्मत भान ॥१८॥
कहँलौ मैं महिमा कहौं, मोपै कही न जात ।
महिमा सिंधु अगाध गति, मम मति सीप न मात१९
वाणी श्रीमहाराजकी, श्रीमहाराज स्वरूप ।
दीपहि दीप जगाय ज्यों, लेत सुकर निज रूप॥२०॥
मूरखको पंडित करन, पंडितको साक्षात ।
वाणी श्रीमहाराजकी, दशों दिशा विख्यात ॥२१॥
कोउ पढो सीखो गुणो, सुगम सबहिको सोय ।
वाणी श्रीमहाराजकी, दुई न कोई होय ॥२२॥

वाणी श्रीमहाराजकी, ज्यो पारसका पर्स ।
लोह कंचन करत ज्यों, त्यों जानों हिय सर्स ॥२३॥
वाणी श्रीमहाराजकी, भृंगीकी ज्यों जान ।
कीट सरिस तनु लेत कर अपनेही जु समान ॥२४॥
वाणी श्रीमहाराजकी, मलयाचल सम भाय ।
निकट शरन जन तरु सघन, चंदन लेत बनाय ॥२५॥
मनमोहन बिबदास गुरु महिमा कहा अपार ।
ग्रंथ भक्तिसागर सरस, जीवन प्राण अधार ॥२६॥

इति श्रीदिल्लीनिवासी अमरलोकवासी श्रीबिबदासजीके शिष्य मनमोहनदासजी चरणदासीयवैष्णवकृत श्रीयुत स्वामि चरणदासजीकी वाणीमाहात्म्य संपूर्ण ॥ शुभम् ॥

श्रीस्वामिचरणदासजीकृतग्रंथसंग्रहकी अनुक्रमणिका

इति अनुक्रमणिका समाप्त ।

अथ ग्रन्थपाठविधि प्रारंभ



संत सुनो विनती चितलाई । कहूं जोर कर शीश नवाई ॥
ग्रंथ पाठकी विधि समझाऊं । जैसेकी जैसी पुनि गाऊं ॥
शुचि पवित्र अरु हो निश्चित । स्थिर चितकरि बैठ एकंत ॥
ग्रन्थराज चौकी पधरावे । चन्दन पुष्प सप्रीति चढावे ॥
श्रीशुक चरणदास उर ध्यावे । चरणवन्दना कर बलि जावे ॥
प्रथम माहात्म्य ग्रंथ पढि लीजै । पीछे पाठ ग्रन्थको कीजे ॥
सहज सहज मधुरे स्वर वाँचे । भावभक्तिके रँगमें राचे ॥
मन एकत्र कर अर्थ विचारै । पढै सुनावै हियमें धारै ॥
ग्रन्थ पढे पीछे सुन भाई । आरति पद गावे हुलसाई ॥
नित्य पाठ कर हरि गुरु सेवै । बिना पाठ अनजल नहिं लेवै ॥
प्राण समान ग्रन्थको राखे । इष्ट ज्ञान मुख अस्तुति भाखे ॥
करै ग्रन्थकी सेवा पूजा । ग्रन्थ समान और नहिं दूजा ॥
गुरुमुखियनकी संपति येही । ग्रन्थ न तजै प्राण तज देही ॥
यथावकाश पाठ नित कीजे । अनध्याय नहिं होने दीजे ॥
नेम सहित नित पढै सुनावै । चारों मुक्ति अष्ट सिधि पावै ॥
या विधि जो रहनी बनि आवे । पूरा सन्त महंत कहावे ॥
करनी करै युग गुण गावे । निश्चय परमधाम पद पावे ॥
गुरु बलदेव दास समझायो । सरस माधुरी सोई गायो ॥

इति श्रीयुत स्वामी बलदेवदासजीके चरणसेवक पंडित शिवदयाल
वकील अदालत मंत्री श्रीरामसभा राजधानी सवाई जयपूर
रचित भक्तिसागरग्रन्थकी ग्रन्थपाठविधि संपूर्ण ।

श्रीभक्तिसारग्रथंकी–आरतीका पद

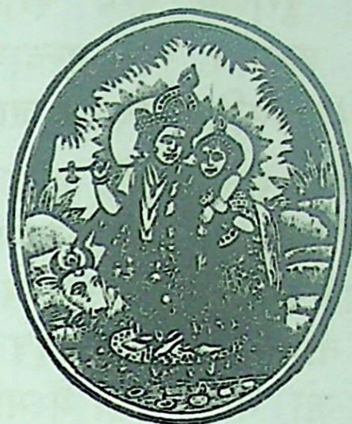
*

आरती ग्रंथराजकी कीजे । जीत जनम यह लाभ जो लीजै ॥
ग्रंथको ध्यान धरें चरणदास । ग्रंथ है संतनको सुखरास ॥
अष्टादश षट् चारों वेद । ग्रंथमाहिं सबहीको भेद ॥
जो नर ग्रंथको सुने सुनावैं । सो नर भक्ति कृष्णकी पावैं ॥
अमरलोक निश्चय कर जावैं । या जगमाहीं बहुरि न आवै ॥
पिय प्यारीके निकट रहावैं । सेवा कर मनमें हरषावैं ॥
श्रीठाकुरदास गुरुभेद बतावै । बलदेवदास हरष गुण गावै ॥ १ ॥

आरती ग्रंथ भक्तिसागरकी नितही हुलस सकल जन कीजै ॥
पूरण प्रेम घिरत हित बाती चित चौमुखमें जोय सु दीजै ॥
होय प्रकाश वासना नाशै घटते तिमिर अविद्या छीजै ॥
दरशैं श्यामा श्याम हियमें नैनन निरख रूपरस पीजै ॥
पराभक्तिको पाय परम रस भजन भावनामें मन भीजै ॥
युगल ध्यान धुनि सहज समाधी हरिगुरु कृपासु पाय पतीजै ॥
भजन प्रताप पहुँचे चौथे पद अजर अमर हो युगरजीजै ॥ २ ॥

प्रगट हो कि, यह "भक्तिसागर" ग्रंथ जगत् उजागर श्रीयुत वेदव्यासनंदन जगवंदन श्रीपरहंसावंतस शुकमुनि महाराजके परमप्रियशिष्य श्रीस्वामी चरणदासजीरचित ज्ञान वैराग्यका भंडार प्रेमा पराभक्तिका सार भजनभावनाका आगार संत महंत भक्तजनोंका जीवनाधार मुमुक्षुपुरुषोंके हृदयमें धारण करनेका मुक्तिस्वरूपी अमूल्य मोतियोंका हार हैं, जो महानुभाव भक्तिभाव सहित भक्तिसागर ग्रंथके प्रेमपूर्वक पठन श्रवण मनन निदिध्यासन अनुभव सहित इसमें गोता लगावेंगे वे निर्गुण गूढतत्त्व तथा चतुर्वर्गरूपी अलौकिक रत्न प्राप्त कर जीवन्मुक्तिका प्रत्यक्ष फल पावेंगे ॥

श्रीव्रजविहारिणे नमः



अथ श्री स्वामिचरणदासजीकृत ग्रंथसंग्रह

व्रजचरित्रवर्णन १.

★

दोहा-दीनानाथ अनाथकी, बिनती यह सुनि लेहु ।
मम हिरदयमें आयकै, व्रज गाथा कहि देहु ॥ १ ॥
चारि वेद तुमकूं रटैं, शिव शारदा गणेश ।
औरन शीश नवायहूँ, श्रीकृष्ण करो उपदेश ॥ २ ॥
कै गुरु कै गोविन्दको, भक्ती कै हरिदास ।
सबहुँनको एकै गिनौ, जैसे पुहुप रु बास ॥ ३ ॥
नारदमुनि अरु व्यासजू, कृपा करिय सुदयाल ।
अक्षर भूलौं जो कहीं, कहौ मोहि तत्काल ॥ ४ ॥
श्रीशुकदेव दयाल गुरु, मम मस्तक पर ईश ।
व्रजचरित्र मैं कहत हौं, तुमहिं नवाये शीश ॥ ५ ॥
सब साधुन परणाम करि, कर जोरौं शिर नाय ।
चरणदास बिनती करै, बाणी देहु बनाय ॥ ६ ॥
सदा शिव व्रजमें रहे, करि गोपीको रूप ।
मूरति तौ परगट भई, आप रहत हैं गूप ॥ ७ ॥

बंशीबट ढिग रहत हैं, करत रहत हैं ध्यान ।
बकता वेद पुराणके, परम परातम ज्ञान ॥ ८ ॥
ब्रह्मादिक कलपत रहैं, वृन्दावनके हेत ।
सुधि आये ब्रजभूमिकी, बिसरि जाय सब वेत ॥ ९ ॥

अब ब्रजकी गति गाय सुनाऊं। बुद्धि शुद्धि हरि भक्ति जु पाऊं॥
चिन्ता मेटन भूमि बखानी । रणजित मित जहँ दुर्ग बिनानी॥
कमलापतिको चक्र सुदर्शन । चरणदास ताको करै बन्दन॥
मथुरा मण्डल तापर रहै । व्यासदेव मुनि ऐसे कहै ॥
बाराह संहितामें जो गायो । सो मैं भाषा बीच बनायो ॥
गोवर्द्धन महिमा अतिभारी । चरणदास ताके बलिहारी ॥
जाकी महिमा सबने गाई । जहां कृष्ण नित गऊ चराई॥
खरक बनाय धेनु जहँ राखी । अजहूँ चिन्ह देत हैं साखी ॥

दोहा-गोवर्द्धन विनती करूं, मो बिनती सुनि लेहु ।
जगतफांससों काढि करि भक्तिदान मोहिं देहु ॥१०॥

हाटकरूप अडोल खरारी । जाकी शरण रही ब्रज सारी॥
ता दिन इन्द्र सकोप पठायो । सकल मेघ झुकि ब्रजपर आयो॥
करपल्लव पर गिरि हरि धारो । तबहीं शरण रहो ब्रज सारो ॥
दिव्य दृष्टि बिन दृष्टि न आवै। कञ्चनरूप पुराण बतावै ॥
मथुरामण्डलमें गिरि सोई । मथुरामण्डल अब सुनि लोई॥
चौराशी कोशी परमाना । मथुरामण्डल व्यास बखाना॥
हरिके चरण सदा जो परसै । कृष्णरूपमें निशिदिन सरसै॥
सखासंग लिये नित हरि डोलैं। सखियनके सँग करत कलोलैं॥

दोहा-सदा कृष्ण ब्रजमें रहै, मोहिं मिलत है नाहिं ।
लहर मेहर कबहूँ करै, आनि गहैं मो बाहिं ॥११॥

जामें बारह बन बड़ भागी । बारह उपवन हैं अनुरागी ॥
जिन माहीं हरि बेणु बजावैं । मधुर मधुर बाँके सुर गावैं ॥
चौथे पदको है वह स्वामि । सब जीवनको अन्तरयामी ॥
भक्तन हेतु रहै ब्रजमाहीं । गुप्त रहैं वृन्दावन ठाहीं ॥
फिरत रहैं सबहीं वन सुन्दर । अन्तर बनो रासको मन्दर ॥
जगत दृष्टिसों रहैं अलोपा । मिलिहैं ताहि ध्यान जिन रोपा ॥
मथुरा मण्डल परगट नाहीं । परगट है सो मथुरा नाहीं ॥
मथुरा मण्डल यही कहावै । दिव्य दृष्टि बिन दृष्टि न आवै ॥

दोहा-बन उपवन अब कहत हौं, मथुरा मण्डल माहिं ।
बिना भक्ति ब्रजनाथकी, कबहूँ दीखत नाहिं ॥ १२ ॥

उपवन कदम मुंजवन दूजा । नंदी सुर रु नंदवन सूजा ॥
मंगल आनँद बन वहि गायो । जहाँ महरजा गाँव बसायो ॥
वन सकत सो सब जग जाने । बरसानो सब कोउ पहिचाने ॥
भोजन थाली वही कहायो । जहां बैठी ओदन हरि खायो ॥
बन सुगन्ध अब सोइ कहावै । बन अखण्ड पुस्तक दरशावै ॥
खेलन बन द्रुम खेलत रहैं । मोहन बन केती बन कहैं ॥
दधि ग्राम बन वही कहायो । लूटि लूटि जहँ दधि हरि खायो ॥
वत्सहरण वन वही कहायो । ब्रह्मा माया देखि भुलायो ॥

दोहा-ग्वाल बाल ब्रह्मा हरे, राखे कहूँ दुराय ।
जानि बूझि टारो दियो, लीन्हें और बनाय ॥ १३ ॥

जब ब्रह्मा समुझौ करि ज्ञाना । कर्ता कृष्ण सत्य करि जाना ॥
फिरि चेतन ह्वै शीश नवायो । आदिपुरुष पुरुषोत्तम पायो ॥
द्वादश उपवन गाय सुनाये । मथुरामण्डल मध्य बताये ॥
द्वादश बनकी गति सुनि लीजै । जिन माहीं हरि ध्यान करीजै ॥
भद्रा वन अति महा सुहायो । श्रीबन लालनके मन भायो ॥

भांडिर बनकी महिमा गाऊं । भिन्न भिन्न कहि तोहि समझाऊं॥
लोहबन महिमा कहियत भारी। महाबन सुन्दरता अति धारी॥
तालरबन वहि दृष्टि निहारो । धेनुक दानव जहँ हरि मारो॥

दोहा-दानव धेनुक अति बली, भाव भक्ति हरि हेत ।
मुक्तिकाज सेवन कियो, तालरबनको खेत ॥ १४ ॥

खिदरबन जानत सब कोई । फूल माल जहँ लालन पोई॥
बहुला बन घन दुरमन छायो।कुमुदबन तोहि कहि समुझायो॥
कामाबन लालन सुखदाई । मधुबन लालन भूमि सुहाई॥
वृन्दावनकी शोभा भारी । रासरच्यो जहँ श्रीबनवारी ॥
बन उपवन शोभा गति ईशा ।शिव ब्रह्मादिक नायो शीशा॥
इन्द्र वरुण कुबेर विज्ञानी ।इनहू गति मति ब्रजकी जानी॥
बलि रावण जहँ सेवा लाई । ऊंची नवनिधि उनहू पाई ॥
सप्तऋषिन[1] मिलि सेवन कीन्हों। ऊंचो आसन ध्रुवको दीन्हो॥

दोहा-बहुतक सुर नर तरि गये, तप करि ब्रजके बीच ।
जाति पांतिको को गिनै, ऊंचा नीचा नीच ॥१५॥
वृन्दावन सबसों बड़ो, जैसे दूधमें घीव ।
सब धर्मन हरिभक्ति ज्यों, यथा पिण्डमें जीव॥१६॥
सब तीरथ जगमें बड़े, जिनहूंमें हैं ईश ।
उन सेवन फल कामना, इहि सेवन जगदीश ॥१७॥
बीसकोशके फेरमें, वृन्दावनको जान ।
कुंजगली अति सोहनी, द्रुमवेली पहिचान ॥१८॥
कंचनकी जहँ भूमि है, धरे सतोगुण भेख ।
चरणदास बलिबलि गयो,दिव्य दृष्टि करि देख॥१९॥

---

१. नारद वसिष्ठ रु भृगुमुनि, अंगिरा कश्यप जान ।
विश्वामित्र रु पुलस्त्यजी, ऋषि हैं सप्त प्रमान ।।

फूल जो फूले ऋतु बिना, नाना छबि बहुरंग।
अलि मलकत गुञ्जत फिरैं, भँवरी सुत लिय संग॥२०॥
ऋतु वसन्त जहँ नित रहत, बिहरत नंदकिशोर।
कुहकत कोयल मगन है, बोलत दादुर मोर॥२१॥
तिहि बिच वृन्दाबनमहा, निज वृन्दाबन जान।
तिरकोणी वर्णन कियो, योजन है परमान॥२२॥
जाकी महिमा सबहुन गाई। रास करै जहँ कुँवर कन्हाई॥
यमुना जहँ परिकरमा दीन्हीं। गुप्त पियाकी लीला चीन्हीं॥
गोपसुता जहँ नित उठि न्हाई। बर पूरण पायो कुँवर कन्हाई॥
श्यामरङ्ग निर्मल जल गहरी। वृन्दाबनके ढिग ढिग लहरी॥
आशा मंशा करि कोइ न्हावै। सहस सुरसरीको फल पावै॥
दिव्य वृन्दाबन दिव्य कालिन्दी। देखै सो जीतै मन इन्द्री॥
निकट किनार द्रुमनकी छाहीं। आय परी यमुना जलमाहीं॥
दोहा—भक्ति बिना पावै नहीं, वृन्दाबनकी संध।
विन पाये निन्दा करै, भोंदू मूरख अंध॥२३॥
झिलमिल सुबकी उठत तरंगा। बोलत दादुर अरु सुरभृंगा॥
कालीदह महिमा सुन भ्राता। सहस गंगके फलकी दाता॥
विहारघाट बसि भजन करीजै। जेहि सेवन यम ज्वाब न दीजै॥
बंशीबट बसि हठ इमिकीजै। तजै देह जब दर्शन लीजै॥
अब सुन वृन्दावनकी बतियाँ। शीतल करी हमारी छतियाँ॥
बनघन कुञ्जलता छबि छाई। झुकि टहनी धरणी पर आई॥
करत मंद समीर पयाना। बसत सुगन्ध सबै अरघाना॥
बरसत अमृत फुही सुहाही। निकसत कोमल गोभ गुहाई॥
दोहा—वृन्दाबनमें रहत हैं, ज्ञानी गुणी अतीत।
वृन्दाबनको ना मिलैं, कोउ लहत जगजीत॥२४॥

नित बसन्त जहँ सुगन्ध सुरारी। चलत मन्द जहँ पवन सुखारी॥
पुष्प विकसि रहे रङ्ग बिरङ्गा। लेत बास गुञ्जत सुरभङ्गा॥
बोलत भँवर महाध्वनि गाजैं। मानो अनहदकी गति साजैं॥
जुगुनू दमकि चमकि चकरावैं। समय जानि करि हर्ष बढ़ावैं॥
नाचत मोर करत चतुराई। पंख पसारि मुदित मनगाई॥
कै इक उचक बोल निज बोलैं। कै इक कुंजन ऊपर डोलैं॥
युगल नाम लै कीर पुकारैं। बारबार वन ओर निहारैं॥
वृन्दाबन चारों युग माहीं। गुप्त[1] रहे शुकदेव बताहीं॥

दोहा-वृन्दाबनकी साधगति, कापै बरणी जाय।
जैसी जाकी दृष्टि है, तैसोही दरशाय॥ २५॥
जैसे हरि मथुरा गये,सबन विलोक्यो आय।
काल कंसकी दृष्टिमें, साधुन प्रभू लखाय॥ २६॥
मथुरामें योधा बड़े, जिन्हैं मल्ल दरशाय।
नारिन दरशैं कामसम,प्रीति रीति अधिकाय॥ २७॥
वृन्दाबन सोइ देखि हैं,जिन देख्यो हरि रूप।
दुर्लभ देवनको भयो, महागूपसों गूप॥ २८॥
वृन्दाबन सेवन करै, अमरलोकको जाय।
इन्द्री जीतै हरि भजै, प्रेम प्रीतिके भाय॥ २९॥

रसिक केलि वृन्दाबन माहीं। अमरलोककी भाँति कराहीं॥
अमरलोक तिहुँ लोकसों न्यारो। मथुरामण्डल अंश विचारो॥
अमरलोक बिच है निज धामा[2]। जासु अंश वृन्दाबन नामा॥
पुरुषोत्तम निज धामाँ माई। कारण प्रेम रहे ब्रह्म आई॥
पुरुषोत्तम प्रभु लीला धारी। वृन्दाबनमें सदा विहारी॥
निज धामाकी कहियत शोभा। वृन्दाबनमें रहै अलोभा॥

१. गुप्त. २. मोक्षधाम.

दिव्यदृष्टि बिन दृष्टि न आवैं। सकल पुराण वेद यों गावैं ॥
गोल चौतरो निज वृन्दावन । तापर वारों अपनो तन मन॥
रहो चौतरो छिपि वहि ठाहीं । जैसे अग्नि काठके माहीं ॥
तापर चौंसठि खम्भा सोहैं ।कोटि कामको निज मन मोहैं॥
तापर रंगमहल अधिकाई । कुन्दन रूप स्वरूप सुहाई ॥
रंगमहल अरु खम्भन माईं । पन्ना लाल बेलिकी नाईं ॥
पन्ना नग लागे जहँ मोती ।झलकैं जगमग जगमग ज्योती॥
रंग महल यों छिप्यो गुसाईं । जैसे लाली मेहँदी माईं ॥
नित बिहार जहँ करै बिहारी ।कृष्णकुँवर अरु राधा प्यारी॥
गौररूप वृषभानु दुलारी । श्यामरूप हैं कृष्ण मुरारी ॥
नीलांबर ओढ़े सँग राधा । दिव्य अभूषण रूप अगाधा॥
भूषण अँग सँग लाजत ऐसे । चन्द निकट लघु तारे जैसे ॥
पीत वसन पहिरे नँदलाला । मोर मुकुट माथे गलमाला॥
जरद बादलेको अँग नीमा । बन्धी गलजिंद सुख सीमा॥
मोतियनकी माला गल सोहै । नाक बुलाक अधरपर जोहै॥
श्याम भुवंगम जुलफैं प्यारी ।बांकी भौंहकुटिल अनियारी॥
मकराकृत कुण्डल श्रवणमें । युगल दामिनी मानहुँ घनमें॥
ललचो है अरु नैन ढरारे । रसके माते अरु कजरारे ॥
मोती नासाके बिच लटकै । बोलत बोल होंठ पर मटकै ॥
मुरली मुख ताको रस पीवै । चाहनवारो देखत जीवै ॥
गले धुकधुकी सुन्दर झमकै।तामधिकौस्तुभमणिअधिचमकै॥
अधिक सुघर पहिरै हिय चौकी।बनमालाकहियतनौनिधिकी॥
गोल भुजनपर बाजू सोहै ।पहुंची कड़ा कनक करि गोहै॥
पहुँची ढिग पहिरे जहँ गीरी ।रतनचौक छबि लगी जँजीरी॥
रततचौक है पीठ हथेली लगी जँजीर मुँदरियन भेली॥
सोहैं छाप छला अरु मुँदरी । नुहसत पहिरै सुन्दर अँगुरी॥

इकिस चित्त चरनमें धारे । झुनुक झुनुक पैंजनि झनकारे॥
मन्द मन्द विहँसत मुसकाई । रणजीत मित छबि कहीनजाई॥
नितकिशोर अरुनित्त किशोरी। द्वादश बरष अवस्था भोरी ॥
राधे भूषण छबि कह गाऊं । नाम लेत मनमें शरमाऊं ॥
हूँ मैं दास नाम रणजीती । भक्तिदान मोहिं दीजे रीती ॥
बहुत सखी जिनके निजसंगा। रासिकेलि खेलैं बहुरंगा ॥
बनके चौंसठि खम्भे माहीं । होत अखण्ड रास वहि ठाहीं॥
झुनुकझुनुक सखियनपग बाजैं।घुंघुरू अधिक महाध्वनिगाजैं॥
दिवि भूषण पहिरे पिय प्यारी। शशिबदनी तिरगुणते न्यारी॥
नवल किशोरी गौरी सारी। सुघर सयानी चातुर नारी ॥
दिव्य वस्त्र अरु मधुर शरीरा।अधिकरूप छबि गहर गँभीरा ॥
कजरारी कच लटके बेनी । अँजन नैन सैन पिय देनी ॥
चूडामणि गहनो अति नीको । शीशफूल अरु बेनी टीको ॥
नथ बुलाक अरु बिन्दी झलकै। घूँघरवारी लटकै अलकै ॥
मुखऊपर अलकैं छबि ऐसी । चन्द चढ़ी द्वै नागिन जैसी॥
करणफूल सँग झुमके मलकैं। सब सखियनके भूषण झलकैं॥
चम्पाकली नौलडी माला । चन्दनहार सु पहिरे बाला ॥
कंठुला जैसे गले जनेऊ ।अरु हिय चौकी महा अभेऊ॥
फूलमाल सखियां सब पहिरे। गुंजनकी माला हिय लहिरे॥
बाहनमें बाजूबंद बांधे । बंकबला बाहन पर साधे ॥
सदा सुहागिनि पहिरे चूरी । सुभग पछेली बँगली रूरी ॥
कँगनी अरु पहिरे जहँगीरी । रतन चौक आरसी धीरी ॥
छाप छला अरु पहिरे गूठी । नुहसत पहिरे अजब अनूठी॥
पांवनमें पगनेवर बाजैं । नखशिखलों आभूषण साजैं॥
झुनुक झुनुक नाचैं अरु गावैं। ठमुक ठमुक निरतैं अरु धावैं॥

१. चरणदासजीका प्रथमका नाम यही था.

कबहूँ थेइ थेइ थइ थइ करैं । कबहूँ कर ऊपर कर धरैं ॥
कबहूँ घिनन घिनन अंग मोरैं। भाव बताय तान बहु तोरैं॥
कबहूँ कर उठाय गति चालैं । सांगोपांग बतावत हालैं ॥
है अनुराग राग बहु गावैं ।घुंघुरूकी गति अधिक बजावैं॥
कोई नाचे कोई गावै ।कोई मृदंग कोइ ताल बजावै॥
बैन सरू काहू कर राजैं । कोउ तंबूरा नारी साजैं ॥
उपँग लिये कर कोउ सहेली ।अमृत कुण्डली कोउ अलबेली॥
कोइ बीन कोइ लिय मुहचङ्गा। मगन रूप सबही निजसङ्गा॥

दोहा—कहा बुद्धि कह कहि सकूं, रासकेलि को साज ।
बाजे हैं बहु भांतिके, वर्णत आवै लाज ॥ ३० ॥
कबहूँ करसों कर मिला, नृत्यत श्रीगोपाल ।
कबहूँ बैठे सांवरो, नृत्यत सुन्दर बाल ॥ ३१ ॥

कबहूँ हँसकरि निकट बुलावैं । कबहूँ फूलमाल पहिरावैं ॥
कबहूँ मन्द मन्द मुसकावैं । वैन सैन दे नृत्य बतावैं ॥
बृन्दावनमें ऐसी लीला । चरणदासको जहां वसीला ॥
जो कोइ इनको ध्यान लगावै। अमरलोक निश्चय करि पावै॥
सिमिटो मन कबहूँ नहिं फूटै। सोवत जागत ध्यान न छूटै॥
जोकोईइनको ध्यान न करि है। भरमि भरमि चौरासी परिहै॥
सुर नर मुनि सबही मिलि ध्यावैं।शिव ब्रह्मादिक अन्त न पावैं॥
वेद विना यह भेद न पावै । आपु भरमि अरु जग भरमावै॥
वेद पुराण संहिता गावैं । चारों युग हरिभक्ति बतावैं ॥

दोहा—इत उत भटको जग फिरे, कीन्हों नाहिं विचार ॥
सत्य पुरुष जानों नहीं, कैसे उतरै पार ॥ ३२ ॥

द्वापर बीतो कलियुग आयो । राजाको शुकदेव सुनायो ॥
कलियुगकी दुर्बुद्धि बताऊं ।सुनहु परीक्षित कहि समुझाऊं॥

१. पूर्ण रीतिसे ।

औछी बुद्धि मनुष्यकी होगी । सकल विकल अरु मनके रोगी ॥
सूक्षम ज्ञान महा अभिमानी । नहीं मानि हैं वेद पुरानी ॥
परमेश्वरकी निन्दा करि हैं । जती मसानी चित्तमें धरि हैं ॥
खेतरपाल भूमिया माने । कृतिमको कर्ता करि जाने ॥
परमेश्वर की बात न भावै । ऐसा उत्तर तुरत बतावै ॥
कहि हैं राम कहाँ है भाई । हमहूको तुम देहु दिखाई ॥

दोहा-चहूँ ओर हरिको विभव, सात दीप नौ खण्ड ।
चरणदास सुनु आंधरे, राच्यो किन ब्रह्मण्ड ॥३३॥
भक्ति बिना दीखै नहीं, इस नयनन हरिरूप ।
साधुनको परगट भयो, बिना भक्ति हरि गूप ॥३४॥

साधु सन्तकी निन्दा करि हैं । भजन करै तासे बहु अरि हैं ॥
करि अभिमान आपमें जरिहैं । गुरुको कहो नेक नहिं करिहैं ॥
पंथ खड़े करि हैं छत्तीसा । भरम पूजि तजि हैं हरि ईसा ॥
दम्भ झूठकी सेवा करि हैं । झूठे पंथनमें जा लहि हैं ॥
गऊ ब्राह्मण भिष्टल होई । बाप पूतमें परिहै दोई ॥
विद्यादान कपट व्यवहारा । राजा दुष्ट दुखित संसारा ॥
वेद पढ़ करि हैं अभिमाना । हम पंडित अरु सब अज्ञाना ॥
पढ़े पुराण भेद नहिं जानैं । साधुनसों झगड बहु ठानैं ॥
पंथ पुजाय हरिहिं विसरावैं । झूठे बात विवाद वढ़ावैं ॥
व्यभिचारिणी होइहैं बहु नारी । बोले झूठ बहुत परकारी ॥
शुकदेव कहैं राजासों बैना । सो अब देखे अपने नैना ॥
राजा डाँटि बाँधि करि लूटे । पूजे भूत रामसों छूटै ॥
गौ बिष्ठा सो खाती जानी । पंडित देखे बहु अभिमानी ॥
दम्भ कपट बहु पूजा दौरी । कलुवा जाहर पूजे बौरी ॥
पण्डित वेद पढ़े बिसरावैं । स्याने भोयेको शिर नावैं ॥
हरिके साधुनको बिसरावैं । तजै राम औरनको ध्यावैं ॥

हरिकी भक्ति सदा चलि आई। वेद पुराणनमें जो गाई ॥
उनको समुझि भये जो ज्ञानी।नाभा जिनकी भक्ति बखानी॥
जिनकी महिमा सब जग जानी। सब जानत है चतुरा ज्ञानी ॥
पापी सदना सैना नाई । धना जाट अरु मीरा बाई ॥
नामदेव रैदास चमारा । तुलसी माधो मीर विचारा ॥
कूबा कुम्हरा फत्तू सक्का । सऊ समरन रंका बेका ॥
करमैंती अरु करमा बाई । दास कबीरा वाणी गाई ॥
जैदेवा अरु नरसी महता । दास मलूक कडामें रहता ॥
अनन्तानन्द कील अरु जंगी। देव मुरारि निपट सरवंगी ॥
नरहरि लालदास हरिवंशा । रंगनाथ बनवारी हंसा ॥
नानक सूरदास अरु साधू । सनक सनन्दन कहिये आदू॥
ध्रुव प्रह्लाद विभीषण शबरी । हनूमान शंकर औ गवरी ॥
वाल्मीकि अम्बरीष सुदामा । मोरध्वज राजा संग्रामा ॥
बहुतक भक्त और जो भये । नाम न जानूं जात न कहे ॥
कई कोटि वैष्णव हैं बांके । सबही गये मुक्तिके नाके ॥
चरणदास हरिभक्ति विचारी ।सुमिरि सुमिरि पहुँचो नरनारी॥

दोहा–लिखि पढ़ि समुझि विचार करि,सदा करो हरिध्यान।
कृष्ण भक्ति दृढ करि गहो,मिटै सकल अज्ञान॥३९॥

कवित्त–सांगीत

मुकुट जटित शिर अधिक विराजत,गहे बँसुरिया अधरनधरनम्
शंख चक्र गदा पद्म निराजत, कोटि मदनकी छबि बरनम् ॥
गिरिवर नख धरि असुरन मारे, सन्तनके दुखको हरनम् ॥
जन चरणदास चरणको चेरो, सदा रहै गिरिधर शरनम् ॥
कुमकुम बिन्दी दीपित भालं, उदधि जात द्युतिता हरनम् ॥
मकराकृत कुण्डल अतिराजत,झुमक दामिनी छबि धरनम्॥
कटि किंकिणि पैंजनि पग बाजत, मुक्तमाल सुरसरि बरनम्॥

जन चरणदास चरणको, चेरो, सदा रहै गिरिधर शरनम् ॥
सुन्दर बाल लाल सँग लीन्हे, रास करत मन अति मगनम्॥
घुमरि घुमरि धुकि धुकि कर निर्तत, खुटर खुटर नाटक बरनम्॥
मधुर मधुर ध्वनि बज्जत गज्जत, झनक झनक झनका झरनम्॥
जन चरणदास चरणको चेरो, सदा रहै गिरिधर शरनम् ॥
रास रचावैं सब सचुपावैं, सांवरे बदन छबि वर्णनम् ॥
धुधक धुधक धूधूकारि नृत्यत, तकृत तकृत ताधिन धिननम्॥
झुनुक झुनुक नूपर झुनकारत, झनक झनक झनझन झननम् ॥
जन चरणदास चरणनको चेरो, सदा रहै गिरिधर शरनम् ॥

क०-नन्दके कुमार हौं तो कहौं बारबार मोहिं,
लीजिये उबारि ओट आपनींमें कीजिये ।
काम अरु क्रोध काटि डारौ यमबेड़ा प्रभु,
माँगौं एकनाम मोहिं भक्तिदान दीजिये ॥
औरकी छुटाओ आश सन्तनको दीजै साथ,
वृन्दावन बास मोहिं फेरिहू पतीजिये ।
कहै चर्णदास मेरि होय नाहिं हास श्याम,
कहूँ मैं पुकारी मेरी श्रौन सुनि लीजिये ॥ १ ॥
वाही हाथ कुच गहि पूतनाके प्राण सोखे,
पाय ऊंचो पद निज धामको सिधारी है ।
वाही हाथ श्रीधरको मुख माड़ो दहीसेती,
छातीपर पाँव दै मरोरि जीभ डारी है ॥ २ ॥
वाही हाथ कूबरीके कूबरको सीधो कियो,
वाही हाथ मत्तगज खैंचि मूढ़ मारी है ।
वाही हाथ बाँह चरणदास कहै आय गहो,
जाही हाथ यमुनामें नाथ्यो नाग कारी है ॥३॥

इति श्रीस्वामिचरणदासजीकृतव्रजचारित्रवर्णन ॥ १ ॥

वैकुंठविहारिणे नमः



अमरलोकअखंडधामवर्णन २

दोहा-करूँ प्रणाम श्रीशुकदेवको, सो हैं गुरू दयाल ।
काम क्रोध मद लोभसे, काढ़ैं मेरे साल ॥ १ ॥
वाणी विमल प्रकाश दी, बुद्धि निमल की तात ।
मोहिं मूरुख अज्ञानको, नहिं आवत है बात ॥२॥
अमरलोक वर्णन करौं, वेही करैं सहाय ।
दृष्टि हिये मम खोलिकर, सबही देहु दिखाय ॥३॥
भेद लियों गुरुदेवसों, अद्भुत रचों सुग्रन्थ ।
साखी वेदपुराणमें, जानी सुनिये सन्थ ॥ ४ ॥

भेद अगोचर कोइ न जानै । गुरू दिखावै तो पहिचानै ॥
पता कहैं कछु वेद पुराना । ज्योंका त्यों उनहू न बखाना ॥
कछु कछु मत मारगहू भाखैं । फिरि भूलैं समुझैं नहिं साखैं ।
हरिकी कृपा प्रगट मैं गाया । किया उजागर खोलि सुनाया ॥

दोहा-महा कठिन दुर्लभ हुतो, अमरलोकको भेद ।
ताको मैं बीजक कियो, भाख्यों भेद अभेद ॥५॥
निराकार तौ ब्रह्म है, माया है आकार ।
दोनों पदवीको लिये, ऐसा पुरुष निहार ॥ ६ ॥

माया जीव दोऊते न्यारा । सो निज कहिये पीव हमारा ॥
क्षर अक्षर निरअक्षर तीनों । गीता पढ़िसुनि इनको चीनों ॥

गीता अक्षर जीव बतावै । क्षर माया सोइ दृष्टि दिखावै ॥
निर अक्षर है पुरुष अपारा । ज्ञानी पण्डित लेहुँ विचारा ॥
जीवातम परमातम दोऊ । परमातम जानत है कोऊ ॥
आतमचीन्हिपरमातम चीन्हों। गीतामध्य कृष्ण कहि दीन्हों॥
माया उपजै विनशै अतिही । चेतन ब्रह्म अमर है नितही ॥
पारब्रह्म पुरुषोत्तम जानो । चरणदासके सो मन मानो ॥

दोहा-अमरलोक बिच पुरुष है, ब्रह्म जु सबके माहिं ।
माया दरशत है सबै, ब्रह्म दिखत है नाहिं ॥७॥

अब सुन अमरलोककी बानी । त्रैगुण रहित परम सुखदानी॥
तेज पुंजके ऊपर राजै । अहं विराट सो बाहर गाजै ॥
ताको ज्योति कहत नरलोई । तेजपुंज कहियत है सोई ॥
सूरज मण्डल ताहि बतावै । योगी योग युक्तिसों पावै ॥
सूरज मण्डल जैहै चीरा । वा लोकै कोइ पैहै बीरा ॥
कोटि भानुको सो उजियारो । तेज पुंजको रूप विचारो ॥
तीनि लोकसों बाहर होई । सात भवनसों बाहर सोई ॥
ताके ऊपर अविचल लोका।पाप पुण्य दुख सुख नहिं शोका॥
काल न ज्वाल अवधि नहिं होई। रंजितदास जहँ सुरति समोई॥
महा अगोचर गुप्तसों गुप्ता । जहां विराजत है भगवंता ॥
अमरलोक निज लोक कहावै । चौथा पद निर्वान बतावै ॥
अगमपुरी बेगमपुर ठाऊं । कहा बुद्धि जो सब गति गाऊं॥
कछु इक बरणि बताऊ वाको । ब्रह्मासुत सतयुगमें भाषो ॥
पुष्पद्वीप है श्वेत अकारा । सब ब्रह्मण्डनसों है न्यारा ॥
जो कोउ जाय बहुरि नहिं आवै । आवागमन सकल बिसरावै ॥
सो कोउ गयो बहुरि नहिं आवै । देही दिव्यरूप अति पायो ॥
जोलह वरष उमिरि नित रहै । अजर अमर नित आनंद लहै॥

बूढ़ा बाला होय न तरुणा । षोडश भानु रूप जहँ धरणा ॥
तत्त्वस्वरूपी काया पावै । भवसागरमें बहुरि न आवै ॥
पांचतत्त्व बिन है थिर थायो । ना वह बन्यो न कृत्य बनायो ॥
ओर छोर कछु दीखत नाहीं । कबसों है औ कबसों नाहीं ॥
है अडोल मर्याद न ताकी । बे परमान वेद यों भाषी ॥
वेद पुराण पार नहिं पावै । कछू कछू धरि ध्यान बतावै ॥
अनन्त भानुको सो उजियारो । पिण्ड ब्रह्मण्ड दोउते न्यारो ॥
लोकमध्य अविचल निजधामा । श्वेत स्वरूप अगम पुर नामा ॥
अगमपुरी निरधारा सूची । हंस लहैं जिनकी मति ऊंची ॥
बेहद लोक बन्यो अतिभारी । असंख्य भानकीसी उजियारी ॥

दोहा-हद्द कहूं तौ है नहीं, बेहद कहूं तौ नाहिं ।
ध्यान स्वरूपी कहत हौं, बैन सैनके माहिं ॥ ८ ॥

अतिउज्ज्वल रवि दृष्टि न ठहरे । मणि हीरा लागे जहँ गहिरे ॥
कई रङ्गके हीरा भाखे । कलश कँगूरा अस्थिर राखे ॥
ता भीतर द्रुम बहुत अशोका । अक्षयवृक्ष फल लगे निरोका ॥
कल्पवृक्ष बहुरङ्ग बिरङ्गा । फल अरु पात फूल इक सङ्गा ॥
कोमलदल शोभा अति भारी । अजरपुरुष दरसन अधिकारी ॥
चेतनरूप गहर अति छाहीं । साधु रहत तिनकी परछाहीं ॥
षोडश भानु सम देह स्वरूपा । हरिरस मदमाते निधिरूपा ॥
उन वृक्षनके निच निच मंदर । अनगिन महल महामठ सुंदर ॥
महल महलपर ध्वजा पताका । पुरुषोत्तम पुरुष नामलिखिराखा
ध्वजा पताका लहरत ऐसे । सिमिटि बीजुरी बहुतक जैसे ॥
रतन जटित तिनकी अँगनाई । बैठत उठत चलत हरषाई ॥
काम क्रोध नहिं लोभ अधीरा । निर्मल दशा शील गुण धीरा ॥
जहां न आलस नींद जँभाई । भूख प्यास मिलता नहिं भाई ॥

मैल पसीना आँसू नाईं। दिव्य देह धरि रहे गुसाईं॥
एकै रूप एकै गति पाई। एक वरण एकै सब दाई॥
संशय शोक रोग नहिं दहै। मगन रूप मन आनँद लहै॥
षोडश वर्ष अवस्था जितही। गुण पौरुष हरिजनके अतिही॥
दिविभूषण दिवि वस्तर अंगा। श्यामगात सुन्दर छबि अंगा॥
जुल्फ लटकि रहीं कजरारी। कुण्डलछबिसोहत अधिकारी॥
नासा मोती सुबक सुढारा। सुन्दर तिलक लगत अति प्यारा॥
दीरघ दृष्टि कछुक अरुणाई। माथे मुकुट जटित ललिताई॥
घर घर दिव्य आसन सिंहासन। और महासुख हैं हरिदासन॥

दोहा-भय मेटन औ तम हरण, तुमहिं नवाऊं सीस।
चरणदास चरणन परो, भक्ति करो बकसीस॥ ९॥
गुरु शुकदेव कृपा करि, दीन्हो भेद लखाय।
साधुनके पग पूजते, सकल व्याधि मिटिजाय॥ १०॥
आसपास हरिजन रहैं, मध्य ईश दरबार।
रसिक केलि बहु कुञ्ज हैं, ललितद्वार हैं चार॥ ११॥
राजमहल जनपति रहैं, कापै वरण्यो जाय।
गिनत शारदा छवि अधिक, गौरीसुतथकिजाय॥ १२॥

अनन्त भानुको सो उजियारो। वा मण्डलको रूप विचारो॥
समतुल और काहु को लाऊं। वैन सैन दै ताहि बताऊं॥
चन्दन सूर यहि ठौर न चीन्हों। हित दृष्टान्तको पटतर दीन्हों॥
आदि अनादि पुरातम रामा। जैसे आदि पुरुष घनश्यामा॥
श्वेतहि रूप स्वरूप सुगन्धा। सहजमहकजहँ उठत सुगन्धा॥
चार द्वार बहु बाजन बाजै। अनहद शब्द महाध्वनि गाजै॥
दिव्यरूप जो लगी किवाँरा। तिनके आगे बाग सुढारा॥
सो बाग अद्भुत है भाई। दूजे द्वार महा अरुनाई॥

तीजे द्वार बाग पियराई। चौथे ऊदो है थिर थाई॥
उन बागनके आसा पासा। बहुत भवन जहँ साधु निवासा॥
मेढी मण्डप बहुत सुढारी। श्वेत वरण सुन्दर अधिकारी॥
साधु सन्त जहँ हरिजन पूरे। दास भाव भावना शूरे॥
षोडश भानुकि सुन्दरताई। जगत जीति पहुँचे जो जाई॥
सखा भाव पहुँचत वहि ठाई। सखीभाव भीतरको जाई॥
धरे स्वरूप अनूपम भारी। सदासुहागिनि हरि प्रियप्यारी॥
परम पुरुष पुरुषोत्तम पावैं। निकट रहैं नित केलि बढावैं॥
चारौं मुक्ति जहां कर जोरैं। भाव बताय तान बहु तोरैं॥
दरशन कारणकी सुखदाई। धरे स्वरूप रहैं हरषाई॥
रतन जडित जहँ भूमि सुहाई। कोटिभानुछबि रहत लजाई॥
एकसमय नित ऋतु छबिपावत। शीत उष्ण पावस नहिं आवत॥
ऋतु वसन्त पीरी छबि सोहै। बन घन कुञ्जलता मन मोहै॥
निज वृन्दावन है वहि ठाहीं। सदा बसो मेरे मन माहीं॥
दिव्य फूल फूले बहुरंगा। बिन ऋतु फूले रंग बिरंगा॥
सकल सखी बिचरत हरि संगा। गौरी सखी श्याम हरि अंगा॥

दोहा-पुष्प जु फूले नित रहैं, मौरें ना कुम्हिलायँ।
कई बरण कइ रंगसों, अति सुगन्ध हरषायँ॥१३॥

उन पुष्पनको नाम न जानौं। कहा नाम लै तिनहिं बखानौं॥
बहुत वृक्ष कुंजन घनछाहीं। फल अरु फूल लगे उन माहीं॥
काहू द्रुमन फलैं नहिं फूला। पुष्प रूप ह्वै आपहि भूला॥
कोऊ लाल रूप ह्वै छायो। कोऊ श्वेत रूप मन भायो॥
रंग रंगके वृक्ष बखाने। सो पुरुषोत्तमके मनमाने॥
वनके माहिं बहुत जहँ क्यारी। पुष्प रंग छबि न्यारी-न्यारी॥
कई भांतिकी वास तरंगा। मनन रूप बोलत स्वरभंगा॥

बन बिच श्वेतरूप छबि नाना। गोल चौतरो रूप निधाना॥
इक रस चेतन परम सढोला। कोटिभानुछबि अमर अडोला॥
जहँ परिकर्मा सखी सहेली। बारह भानु रूप अलबेली॥
दिव्य दमक जहँ हीरा लागे। सात रंगके झिल मिल तागे॥
ऊदा लाल श्वेत अरु पीरा। हरित श्याम लहरी अतिधीरा॥
तापर चौंसठ खम्भा दमकैं। मानो कोटि भानु छबि झमकैं॥
खम्भन लगे लाल अरु मुक्ता। पन्ना लगे बेलिकी युक्ता॥
मूँगा लाल पिरोजा भारी। ध्यान धरो ताको नर नारी॥
इक सब लगे बखानों ऐसे। जैसी युक्ति लगे हैं तैसे॥
जड़ लालनकी विद्रुम डारी। पन्ना पात वृक्ष गति धारी॥
चुन्नी पँचरँग फूल सुहाये। फल मुक्ताहल झलक झुकाये॥
और बनी बहु चित्तरकारी। बेलि बङ्क बूटा अधिकारी॥
हीरा मोती चेतन होई। जानै साधू बिरला कोई॥

दोहा-ताकी छबि अति ललित है, शोभा सरस सुजान।
लगो चँदोवा दिव्य अति, चेतन करो बखान॥१४॥

लगे चँदोवा झालरि मोती। मानो उडुगण झिल मिल ज्योती
झालर बनी चँदोवा केरी। दिव्य दृष्टि करि साधुन हेरी॥
तापर रंगमहलकी शोभा। चेतन आनँद सुखकी गोभा॥
अस्थिर इकरस भीत सुढारी। बने झरोखा अद्भुत बारी॥
अजब कँगूरा सुबक सुढारे। चौंसठ कलश लगैं अतिप्यारे॥
रतन जटितकी खिड़की सोहैं। तिनके आगे दिनकरको हैं॥
भीत झरोखा कलशन माहीं। नग पन्ना लागे सब ठाहीं॥

दोहा-मणि हीरा माणिक लगे, रंगमहलके माहिं।
बिन पहुँचे निजधामके, क्योंहू दीखत नाहिं॥१५॥

आस पास बहु कुंज हैं, बीच लालको धाम।
चरणदासको दीजिये, सखियनमें विश्राम ॥१६॥
जैसे चौंसठ खम्भ हैं, तैसे करों बखान।
छत्र सिंहासन वर्णहूँ, अरु सखियनकी आन ॥१७॥

तीस खम्भमें खम्भा बीस। तामें चौदह अम्भा ईस॥
परम बिछौना है थिरथाये। मानों सूरज लक्ष बिछाये॥
तापर सिंहासन बड़भागी। श्वेतरूप चेतन अनुरागी॥
सिंहासन पर कछू बिछायो। शोभा ताकी कहत लजायो॥
धरो गेंद वा तकिया नीके। छत्तर सोहैं ऊपर पीके॥
पियकी शोभा कहाँ बखानूं। आदि अन्त ताको नहिं जानूं॥
अजरपुरुष पुरुषोत्तम स्वामी। सब जीवनको अन्तरयामी॥
पारब्रह्म अविचल अविनाशी। बायें अंग रूपकी राशी॥
गौरी राधा कृष्ण श्यामघन। सिंहासनपर लसत मुदित मन॥
आसन जहाँ अखिल जगदीशा। मुकुट चन्द्रिका शोहत शीशा॥
मकराकृतकुण्डल छबि ऐसी। जगमें कहा बखानूं जैसी॥
जुलफैं श्याम भुजंगम कारी। कजरारी अरु घूँघरवारी॥
सहज सुगन्ध रहै महकाई। लांबी चिकनी अरु बलखाई॥
बांकी भौंहैं कुटिल अनियारी। तिरछी पलकैं लागैं प्यारी॥
रसके माते घूम घुमारे। ललचौहैं दृग हैं कजरारे॥
बांके दीरघ अरु ललचौं हैं। चितवत सखियनके मन मोहैं॥
सुबक बुलाक नाकमें सोहै। ध्यान करत मेरो मन मोहै॥
बिज्जुलिसी मुसकानिपियाकी। मन खैंचनि अरुभालहियाकी॥
बदन श्यामघन नैन निहारूँ। कोटि भानु छबि मुखपरवारूँ॥
दिव्यनिमो अँग माहीं सोहै। सूरज कोटिकला छबि मोहै॥
कंठी कंठ धुकधुकी झमकै। तामधिकौस्तुभमणिअतिदमकै॥
मोतियनकी माला बनमाला। हुलसैं देखि धामकी बाला॥

दिव्य बँधो गल जंग जड़ाऊँ । नौ रतनके बाजू बाऊं ॥
पहुँची कड़ा कहा छबि गाऊं। समतुल ताकी कहा बताऊँ॥
दिव्य जहांगीरी करमाहीं । ताकी सम कछु कलमें नाहीं॥
रतन चौकमें लाल बिराजैं । शोभा गावत मो मन लाजैं॥
रतन चौक है पीठ हथेली । लगी जँजीर मुँदरियन मेली॥
चौका सुघर हियेपर राजै ।कटिकिंकिणिघुँघुरुध्वनिबाजै॥
युगल चरण पैंजनि झनकारे । दिव्य टोरे तिनमें ठनकारे ॥
कोटि चन्द्र दश नखपर वारूं।तलुअन चिह्न इकीश निहारूं॥
बायें अंग राधिका प्यारी ।कोटि चन्द्र छबिमुखपरवारी॥
युगल सखी लै चँवर ढुरावैं ।हिरदय हरषि महा सुख पावैं॥
खंभ खंभ ढिग सखी सहेली । चौदह खड़ी ईश अलबेली॥
और सखी बहुतक वहि ठाऊं।शोभा जिनकी कहत लजाऊँ॥
नित्य किशोरी गौरी सारी । पांच तत्त्व त्रैगुणते न्यारी ॥
दिव्य वस्त्र आभूषण नाना । अधिकरूप छबिबारह भाना॥
कजरारी कच लटकै बेनी ।मोतियन माँग भरी छबि पैनी॥
चूडामणि गहनो अति नीको। शीशफूल अरु बेणी टीको ॥
करणफूल सँग बन्दी लागी । झुमके थिरकैं महा सुभागी ॥
अंजन आँजे नैन ढरारे । ताखे अनियारे पिय प्यारे ॥
घूंघरवाली अलकैं लटकैं । बेसरनासा छबि लिये मटकैं॥
चम्पाकली नौलरी माला । चन्दन हार सु पहिरे बाला॥
कँठुला कैसे गले जनेऊ । अरु हिय चौकी महा अभेऊ॥
सखी शिंगार हार सब साधैं । बाजूबँद बाहन पर बाँधैं ॥
सदा सुहागिनि पहिरे चूरी । सुबक पछेली बँगली रूरी ॥
कँगनी अरु पहिरे जहँगीरी ।रतकचौक छबि लगी जँजीरी॥
छाप छला अरु पहिरे गँदरी। नुहसत पहिरे सुन्दर अँगुरी॥

पाँवनमें पग नूपुर बाजैं । नख शिखलौं आभूषण साजैं॥
और सखी बिखरीं बन माहीं । सो काहू विधि गिनी न जाहीं॥

दोहा–सुन्दर छबि पियरे बसन, झुण्ड सखिनको जान ।
कोउ पुञ्ज ऊदे बसन, सुघर सवारी आन ॥१८॥
लाल बसन बहुतक सखी, श्वेत बसन बहु नार ।
नीलबसन बहु भामिनी, सबको रूप अपार ॥१९॥
हरे बसन नारी घनी, घनी गुलाबी वेष ।
बहुत झुण्ड कइ रंगसो, गाय सकैं नहिं शेष ॥२०॥

निजवन चौंसठ खंभे माहीं । होत अखण्ड रास वहि ठाहीं॥
झुण्ड सबै यों बनि बनि आवैं ।हुलसि हुलसि लालन ढिगधावैं॥
रासकेलि खेलैं बहुरंगा । सदा विहार करैं पिय संगा ॥
कबहूँ घुमरि घुमरि घुमरावैं । नैन सैन दे भाव बतावैं ॥
कबहूँ थेइ थेइ थेइ थेइ करैं । कबहूँ अँगुली नासा धरैं ॥
कबहूँ कर उठाय गति चालैं । सांगोपांग बतावत हालैं ॥
कबहूँ ठुमक ठुमक पग धावैं । घुंघुरूकी गति अधिक बजावैं॥
हो अनुराग रागनी गावैं । बाजे अद्भुत अधिक बजावैं ॥

दोहा–कहाँ बुद्धि जो कहिसकूं, रासकेलिको साज ।
अद्भुत लीला ह्वै रही. वर्णत आवै लाज ॥ २१ ॥
अखण्ड धामलीला अमर, नित वृन्दावन रास ।
नित बिहार जहँ होत है, चरणदासको वास ॥२२॥
गौरीसुत नहिं गाय सके, नहीं शारदा बाम ।
चरणदास कहँ बुद्धि है, बरणि सकै निजधाम ॥२३॥
बड़ी दया मोपै करी, कृष्णकुँवर सुन लाल ।
बाणी आप बनायकै, कीन्हो मोहिं निहाल ॥२४॥

मम हिरदयमें आयकै, तुमहीं किये प्रकाश ।
जो कछु कहौ सो तुम कहौ, मेरे मुखसों भास ॥२५॥
आदि पुरुष परमातमा, तुमहिं नवाऊँ माथ ।
चरणन पास निवास दै, कीजै मोहिं सनाथ ॥२६॥
तुम्हरी भक्ति न छोड़हूँ, तनमन शिर क्युँ न जाव ।
तुम साहिब मैं दास हूँ, भलो बनो है दाँव ॥२७॥
गुरु शुकदेव कृपा करी, मूरख भयो प्रवीन ।
मम मस्तक पर कर धर्‌यो, जानि निपट आधीन ॥२८॥
कोटि नामको फल लहै, तिरवेणी असनान ।
शोभा गावै लोककी, मूरख होय सुजान ॥ २९ ॥
पढ़ै सुनै जो प्रीतिसों, पावै भक्ति हुलास ।
नित उठिकर तू पाठ यह, चरणदास कहि भास ॥३०॥
प्रेम बढ़े अघ सब हरैं, कलह कल्पना जाय ।
पाठ करै या लोकको, ध्यान करत दरशाय ॥३१॥

इति श्रीअमरलोकअखण्डधाम लीलावर्णन ॥२॥

श्रीदत्तात्रेयाय नमः



धर्मजहाज वर्णन ३

(श्रीगुरुचेलासंवाद)



शिष्य वचन

दोहा-ठाढ़ो है कर जोरिकै, अरज करै चरणदास ।
एहो श्रीशुकदेव श्री, कछु पूछनकी आस ॥ १ ॥

गुरु वचन

पूछौ मनको खोल करि, मेटौं सब सन्देह ।
अरु तुम्हरे हिरदय विषे, सदा हमारो नेह ॥ २ ॥

शिष्य वचन

मैं तो चरणन दास हौं, तुम तौ परम दयाल ।
एकन पग पनहीं नहीं, एक चढ़ैं सुखपाल ॥ ३ ॥
यही जु मोहिं बताइये, एक मुक्तिको जाहि ।
एक नरकको जाय करि, मार यमौंकी खाँहि ॥४॥
एक दुखी इक अति सुखी, एक भूप इक रंक ।
एकनको विद्या बड़ी, एक पढ़ैं नहिं अंक ॥ ५ ॥
एकनको मेवा मिलै, एकन चनेभी नाहिं ।
कारण कौन दिखाइये, करि चरणनकी छाहिं ॥ ६ ॥
यही मोहिं समझाइये, मनका धोखा जाइ ।
ह्वै करि निस्सन्देह मैं, चरण रहौं लपटाइ ॥७॥

गुरु वचन

जिन जैसी करणी करी, तैसेही फल पाय ।
भुगतत हैं वे जगतमें ताको बदला आय ॥ ८ ॥

शिष्य वचन

तुम कही सो हृदय धरी, व्यास पुत्र शुकदेव ।
सुगति कुगति करणीनकी, भिन्न भिन्न कहु भेव ॥९॥

गुरु वचन

अब मैं वर्णन करत हौं, ऐ शिष्य धर्मजहाज ।
तामें बैठे विधि सहित, रहनी गहनी साज ॥१०॥
जो कोइ करणी ना करै, बहुत करै बकवाद ।
रीता जानौ तासुको, छूटै ना जग व्याध ॥११॥
कथनी कै पूजी नहीं, करणी है ततसार ।
तामें लाभहि लाभ है, बदला दे करतार ॥१२॥
सूरति कीन्ही साधुकी, तन मन लागी आग ।
बिन करणी कैसे बुझे, हरिसों नाहीं लाग ॥१३॥
कथनी कथि दंभी भये, कहै दूरकी बात ।
अन्तरमें करणी नहीं, मनहीं माहिं लजात ॥१४॥
दंभी उनको जानिये, जगमें सिद्ध दिखात ।
तन मन वचन न साधिया, तिहुँ विधि रोपी घात॥१५॥
तन मन साधैं साधुसो, वचन साधि जो लेय ।
उज्ज्वल करणीके सहत, रामभक्ति चित देय ॥१६॥
तनसों करणीही करै, मनसों निश्चय लाय ।
बचन सु ऐसा बोलिये, जो सबकोहि सुहाय ॥१७॥

बिन करणी थोथी सब बातैं । जैसे बिन चंदाकी रातैं ॥
ताते समुझि करो तुम करणी। बिन बोये नहिं उपजै धरणी॥

जैसा बोवै तैसा लुनिये। जानत ज्ञानी पण्डित गुनिये॥
कीकर नींब बुवै सोइ पावै। अरु मेवा बोवै सोइ खावै॥
पिछली करणी अबके पावै। ताहीको नर करम बतावै॥
होनहार अरु भाग वही है। परालब्ध सोइ बड़ो कही है॥
खोटी करणीसे दुख भारी। होवै रंक पुरुष अरु नारी॥
कहैं शुकदेव सांच यह जानौ। चरणदास ले मनमें आनौ॥

दोहा-कोई कोढ़ी कोइ आंधरा, कोई रोगी निर्धन्न।
अंगहीन मांगत फिरै, कोई भूखा बिन अन्न॥१८॥
बिना बुद्धि कोइ बावरे, कोइ छोटे तन हान।
कोइ कर्मोंसे अति दुखी, जीवै ना सन्तान॥१९॥
कोइ जगत आधीन है, कोई बिना परतीति।
कोइ सब वस्तूहीन है, यह पापोंकी रीति॥२०॥
जन्म मरण बहु भांतिके, नाना भवन निवास।
करणीहीसे होत है, ऊंच नीच घर बास॥२१॥
पशु पक्षी अरु चर अचर, सोभी छूटै नाहिं।
कर्मोंहीकी चालसों, भुगतै जगकै माहिं॥२२॥

भाँति भाँतिके कष्ट घनेही। पावत है वे कर्म सनेही॥
इनकी आँखिनसों तुम देखौ। अपने मनमें करि करि लेखौ॥
तन छूटै नरकै जावै हैं। नाना विधिके त्रास सहै हैं॥
नरकनकी गति परघट जानौ। शास्त्र माहिं सब कियो बखानौ॥
अरु इक नरक जगतके माहीं। कोतवाल हाकिमके ठाहीं॥
खोटे कर्मनसूं ह्वाँ जावै। त्रास सहै बहुतै बिललावै॥
शुभ कर्म्मी जो निकसे आगे। उठि हाकिम चरणनसे लागे॥
कह शुकदेव साँच है करणी। सुनु रणजीत करै सो भरणी॥

दोहा-शुभकरणी पिछली करी, उज्ज्वल पाई देह ।
शोभा जिनके भागकी, चरणदास सुनिलेह ॥ २३ ॥

तनसो सुखी और धनधारी । सुत नाती सुन्दर संसारी ॥
नाना विधिके भोग करत हैं । अरु बहुतनके दुःख हरत हैं॥
ऊँचे महल महा सुखदाई । जहां विराजत हैं मनलाई ॥
तीनौं ऋतुमें वे सुख पावैं । बहुतक लोग टहलमें आवैं ॥
पिछली करणी करम जु लाये। जैसे तैसेही सुख पाये ॥
काहू मिली तुरंग सवारी । काहू पालकी झालर दारी ॥
काहू गज पाय बहुतेरे । लाखौं पुरुष रहत हैं चेरे ॥
श्रीशुकदेव कह यह बैना । चरणदास लखु अपने नैना॥

दोहा-लाखौं पगसों लगि रहे, रखैं जीवका आस ।
ईश्वर तिनके जेइ हैं, वे हैं चरणहिं दास ॥२४॥

ऐसी ईश्वर पदवी पाई । पुण्य प्रताप कहा नहिं जाई॥
सुनिकै शुभ करमनको कीजो। खोटे कर्म्म सभी तजि दीजो॥
इनहीं आँखिन सों सब सूझै । बुद्धिमान प्रत्यक्ष जो बूझै ॥
कोई चढ़े जाय रथ माहीं । सूरजमुखी तासुकी छाहीं ॥
कोइ करोड़पति लाखनवारा । कोइ हजारनको व्यवहारा ॥
कोइ थोड़ेमें सुख पावै । ह्वै कर सुखी बहुत हरषावै ॥
पिछली जैसी करी कमाई । तैसी तैसीही निधि पाई ॥
शुकदेव कहियों आलस हरियो।चरणदास शुभकरणी करियो॥

दोहा-देव दानव अरु अप्सरा, मानुष यक्ष गण प्रेत ॥
कर्मोंहीसे होत हैं, पाप पुण्यका हेत ॥ २५

नाहीं तो हरि द्वै द्रष्टा नाहीं । एक दृष्टि सब ऊपर छाहीं ॥
जो जैसी करणी करि लेवै । हरि तैसेही बदला देवै ॥
अपना किया आपही पावै । परालब्धि वह नाम कहावै ॥

घटै बढै वह नेकु न क्योंही । पावै वही जु करणी ज्योंही ॥
नारी पुरुष मिलिकरिव्यवहारा। करणीसों उपजै संसारा ॥
बाहै बोवै खेत किसाना । भांति भांतिके उपजें दाना ॥
बाग लगावै सींचै माली । जब फल लागैं डाली डाली॥
पक्षी अरु मानुष सुख पावैं । चरणदास शुकदेव सुनावैं ॥

दोहा–माली करणी जो तजै, सींचै ना षटमास ।
जब वह बाग उदास हो,दिन दिन वाको नास॥२६॥
दया धर्म पुण्य दानही, बड़ करणी है सांच ।
तीनलोक चौदह भुवन, माहिं न आवै आंच॥२७॥

तीरथ बरत कछू जो कीजै । अरु काहूको दान जु दीजै ॥
याको भी फल नीको पावैं । चरणदास शुकदेव दिखावैं ॥
शुभकरणी करि भक्ति उपावैं । ताते हरिके निकट रहावैं ॥
करणी योग महा बलदाई । ईश्वर है पावै मुक्ताई ॥
चार मुक्ति करणीसों पावै । मन करणीसो ज्ञान जगावै ॥

दोहा–उज्ज्वल कर्म सदा किये, अरपै हित भगवान ।
लहे मुक्ति सालोकयही, जन्म मरणकरि हान॥२८॥
सेवाकरि भगवानकी, निकट बिराजे जाय ।
सामीप मुक्ति पाई तिन्ह,इन्द्रहुसे अधिकाय ॥२९॥
ध्यान किया श्रीकृष्णका, भये जु वाके रूप ।
तिन सारूप मुक्तिलही,तन धरि अधिक अनूप॥३०॥
पांचों मुद्रा योगबल, दशवें काढ़े प्रान ।
मिला ज्योतिमें ज्योतिही,यह सायुज्य पिछान॥३१॥
सबही करणी है बड़ी, भक्ति सबन शिरमौर ।
बाँह पकरि हरिहेत करी, राखै आपनी ठौर ॥३२॥
अजामीलसेभी अधिक, जो कोउ पापी होय ।
नाम जपै हिय शुद्धसों, पातक जावै खोय ॥३३॥

महिमा गुरुके ध्यानकी, को करिसकै बखान ।
मेरे मन निश्चय यही, जाय मिलै भगवान ॥ ३४ ॥
करणीसों सत्ती भवै, करणीसों दातार ।
करणीसों शूरा भवै, जावै स्वर्ग मँझार ॥ ३५ ॥
भांति भांतिके सुख जहाँ, भोगै भोग अपार ।
धर्म पन्थ कोई चलै, शूद्रहिके नर नार ॥ ३६ ॥
चारि समय नितनेम करि, सदा रहै निष्पाप ।
गिना जाय हरिजन विषे, होय नहीं जन ताप ॥ ३७ ॥
जिन जैसी करणी करी, सो निष्फल नहिं जाय ।
जाका बदला होगया, शुकदेवा कहे गाय ॥ ३८ ॥
ब्राह्मण करणी ब्राह्मण होई । क्षत्री कर्मसों क्षत्री सोई ॥
वैश्य कर्म्मसों वैश्य कहावै । शूद्र कर्मसों शूद्र दर्सावै ॥
नहीं तो सबकी देह बराबर । पांचतत्त्व त्रैगुणसों कर कर ॥
कान आंख मुख नासा एकी । शीश हाथ पग काया देखी ॥
एक बाट है सबही आवै । एकहिं भांति सबै बनि धावै ॥
दोहा-जाति वर्ण अरु आश्रम, करणीसों दरशाय ।
चरणदास निश्चय करो, मूरख बिरले पाय ॥ ३९ ॥
धोबी छीपी आदि दे, ये छत्तीसौं पौन ।
करणीके सब नाम हैं, जैसी करै सो जौन ॥ ४० ॥
कर्म्मोंहीसे जग यह भासै । कर्म्मोंहीसे फिर है नासै ॥
उत्पति परलय कर्म्म करावै । होनिहु कर्म्म ब्रह्म है जावै ॥
परलय समय कर्म्म जिय साथा । बुरे भले जो लागे गाथा ॥
संगहि जाय रहै मायामें । माया जाय लगत चरननमें ॥
बासा करि हरि चरनन माहीं । होय लीन वह मिटै जु नाहीं ॥
पूजी कर्म्म जो माया पासा । फिर उतपतिकी वाको आसा ॥

परलय काल बदी तै जबही । उतपति करै जगतकूं तबही ॥
चरणदास तुम ऐसे जानौ । कहै शुकदेव साँच करि मानौ ॥
दोहा–छः द्रव्य प्रलयमें रहे, इनका नाश न होय ।
सो मैं वर्णन करत हौं, बुद्धि आंखनसों जोय ॥४१॥
काल अकाश जीव अरु माया । पाप पुण्य प्रत्यक्ष बताया ॥
फिर उतपति इनहीसों होई । जानै पण्डित बिरला कोई ॥
काल न एकौ करै पुराना । प्रलय होय सो निश्चय जाना ॥
फिर परलयको लागा रहै । करै समाप्त आपना गहै ॥
उतपति समय और नहिं होई । परलय हुये जो उतपति सोई ॥
कर्म धरे रहैं ज्योंके त्योंही । उलटे पलटे नाहीं क्योंही ॥
जैसे के तैसे तन धारे । कर्म लगे रहैं उनके लारे ॥
कह शुकदेव कर्म्मगति भारी । चरणदास कोइ छुटै खिलारी ॥

शिष्य वचन

दोहा–चरणदास यों कहत है, सुनो गुरू शुकदेव ।
ज्यों करि हो निःकर्महीं, ताको कहिये भेव ॥४२॥

गुरु वचन

कहे शुकदेव संदेह मिटाऊँ । ज्योंकी त्यों पूरी समुझाऊँ ॥
खोटी करणी नरकहि जावै । पाप क्षीण मृतलोकहि आवै ॥
भले कर्म्म जा स्वर्ग मँझारा । पुण्य क्षीण मृतलोकहि डारा ॥
ऐसे लोक लोक फिरि आवै । कर्म न छूटे दुख सुख पावै ॥
जैसे कर्म छुटे सों कहूँ । तो पै दया करतही रहूँ ॥
खोटे कर्म सो सकल निवारै । शुभ करणीको नीके धारै ॥
जाके फलको मन नहिं लावै । है निष्कर्म्म परमपद पावै ॥
फल त्यागै सोइ चरणनदासा । चरण कमलकी राखै आसा ॥
दोहा–सो पावै निर्वान पद, आवागमन मिटाय ।
जन्म मरण होवै नहीं, फिरि फिरि काल न खाय ॥४३॥

शिष्य वचन

जो जो कहि गुरुदेवजी, सूझ परी प्रत्यक्ष ।
चरणदास को दीजिये, साधु होनका लक्ष ॥ ४४ ॥

गुरु वचन

वही साधुआ जानिये, निरवारै सब कर्म ।
तन मन वचन साधे रहै, पालै अपना धर्म ॥ ४५ ॥
पहिले साधै वचनको, दूजे साधै देह ।
तीजे मनको साधिये, गुरुसों राखै नेह ॥ ४६ ॥
तिनहींके उपदेशको, राखै अपनो चित्त ।
ताको मनन सदा करै, भूलै ना नित वृत्त ॥ ४७ ॥

शिष्य वचन

जो जो कही सो जानिया, एहो श्रीशुकदेव ।
साधन तन मन बचनको, सबही कहिये भेव ॥ ४८ ॥

गुरु वचन

शिष्य सो तोसों कहत हौं, नीके सुन दे कान ।
ज्यों ज्यों कर्म बचैं दशौ, ताकी कर पहिचान ॥ ४९ ॥

वचनके चार दोष

प्रथम बचनके चार सुनाऊं । तेरे चित्तमें नीके लाऊं ॥
एक यही जो झूँठ न बोलै । साँच कहै तप हिरदय तोलै ॥
झूँठ कहनको पातक भारी । जो जप करै सु देह उजारी ॥
झूँठेका जप लागत नाहीं । सिद्ध होय नहिं निष्फल जाहीं ॥
अरु झूँठेकी नहिं परतीतैं । झूँठेकी खोटी सब रीतैं ॥
दूजे निन्दा नाहीं करिये । परके औगुण चित्त न धरिये ॥
निन्दाका भारी है पाप । यासों भी निष्फल है जाप ॥
तीजे कडुआ बचन न भाखै । सब जीवनसों हितही राखै ॥

खोटा बचन महा दुखदाई। जो साध सो अति बलदाई॥
खोटा बचन तपस्या खोवै। नरक माहिं लैजाय समोवै॥
मीठे बचन बोलि सुख दीजे। उनके मनका शोक हरीजे॥
कह शुकदेवा चौथा सुनिये। चरणदास लै मनमें गुनिये॥

दोहा–चौथे मौन गहे रहै, लक्षण अधिक अमोल।
कम लगै जग बातसों, हरि चरचामें खोल॥ ५०॥

शरीरके तीन दोष

तनसों तिनी कर्म्म जो लागे। सो मैं कहूं तुम्हारै आगे॥
चोरी जारी अरु हिंसा है। इन पापनसों भारी भय है॥
कर्म छुटै जाकी विधि गाऊं। भिन्न भिन्न तोको समुझाऊं॥
तनसों चोरी कबहु न कीजे। काहूकी नहिं वस्तु हरीजे॥
चोरी त्यागैं सो सतवादी। तापर रीझै राम अनादी॥
जारीके कर्म ऐसे मानो। पर तिरियाको माता जानो॥
तीजी हिंसा त्यागहि कीजै। दया राखि जीवन सुख दीजै॥
दया बराबर तप नहिं कोई। आतम पूजा तासों होई॥
कर्म छुटनका भारी गैला। ज्यों साबुन उजला पट मैला॥
शुकदेवा कहै तनके कहे। तीनि करम अब मनके रहे॥

मनके तीन दोष

दोहा–कहौ जु मनके तीनि अब, झीनी जिनकी बात।
गुरु दिखाय सोइ दीखई, अरु विधि नाहिं दिखात॥ ५१॥
खोटी चितवन बैरही, अरु तीजा अभिमान।
इनसों कर्म लगै घने, मेटैं सन्त सुजान॥ ५२॥

खोटी चितवनि खोलि दिखाऊं। जासो कहिये सो समझाऊँ॥
कबहूँ चितवै पर नारीको। कबहूँ चितवै फलवारीको॥
मनहों मनमें भोगै भोगा। हाथ न आवै उपजै शोगा॥

कबहूँ चितवै वाको मारौं । कबहूँ चितवै फांसी डारौं ॥
कबहूँ चितवै द्रव्य चुराऊँ । वाको धन अपने घर लाऊँ॥
कबहूँ चितवै ठगई करौं । माल बिराना छलकरि हरौं॥
भांति भांति चितवनि उपजावै। बुरे मनोरथ कर्म लगावै ॥
ताते याका करै उपाऊ । होय जो साधू कर्म छुटाऊ ॥
जो चितवै तौ हरि गुरु चरणा। ब्रह्मबिचार सदाहीं करना ॥
खोटी चितवनि चितवै नाहीं । सदा रहै थिरताके माहीं ॥
कहि शुकदेव सो हिरदे रहै । इत उतको चित नाहीं बहै ॥

दोहा–दूजा कर्म जु बैर है, महा पापकी पोट ।
सदा दिया जलता रहै, करे खोटहि खोट ॥ ५३ ॥

बैर भावमें औगुण भारी । तन छूटे जा नरक मँझारी ॥
बैरी याद रहै मन माहीं । हरिसों हेत लगन दे नाहीं ॥
ताते बैर भाव नहिं कीजे । याको कर्म्म लगन नहिं दीजे॥
अरु तीजा जानो अभिमाना। गुरू कृपासों ताको जाना ॥
हूं हूं हूं हूं करता रहै । नीची होय तो अन्तर दहै ॥
कबहूं फूले मनके माहीं । मो समान कोउ ऊँचा नाहीं॥
मैंही योंकर योंकर करिया ।मो विनकारज कछू न सरिया॥
अपनेको चतुरा बहु जानै । और सबनको मूरख मानै ॥
अभिमानी ऐसा मन लावै । हरिके गुण किरिया बिसरावै॥
गर्व भरा खोटी वृति धारे । अपने मनमें कबहुं न हारे ॥
शुकदेव कहै वहि पापी जानो। नरक जायगा निश्चय आनो॥
रणजित सुनु अभिमान न कीजै।कर्म बचाय परम सुख लीजै॥

दोहा–कृत्य धनी बेमुख भवै, गुरुसों विद्या पाय ।
उनको जान तनकही, आपनको अधिकाय ॥५४॥

कृतघ्नीका दृष्टान्त

जैसे इक दृष्टान्त सुनाऊँ । कथा पुरानी कहि समुझाऊँ ॥
महापुरुष इक स्वामी पूरा । ज्ञान ध्यानमें था भरपूरा ॥
लक्षण सभी हुते वा माहीं । आठ पहर हरिहीकी घाहीं ॥
उनको शिष्य आन इक भयो । वहि उपदेश जु नीको दयो ॥
करिकै प्यार निकट जो राखा । प्रीतिकरी अरु सब कुछ भाखा ॥
फिरि रामतकी आज्ञा लीन्हीं । उनहूं करि किरपा तब दीन्हीं ॥
पहुँचा एक नगर अस्थाना । ह्वांके मनुषन सिध बड़ जाना ॥
ठहराया अरु पूजा कीन्हीं । बहुत नरनने कण्ठी लीन्हीं ॥
बहुतक प्राणी आवैं जावैं । सन्ध्या भोर शीश बहु नावैं ॥
महिमा देखि फूलि मनमाहीं । कहा कि हम सम गुरुभी नाहीं ॥

दोहा–गद्दी पर बैठा रहै, तकिया बड़ा लगाय ।
बहुत रहै आज्ञा विषे, शिरपर चँवर ढुराय ॥५५॥

गुरु परताप नहीं वह जानै । अपनीही बुधि बड़ी जु ठानै ॥
मूरख आगे क्यों नहीं भया । दीन होय करि द्वारे गया ॥
थोड़ेहीसे बहु इतराना । गुरुकी कृपा प्यार ना जाना ॥
बार बार शोच मन सोई । हमरो गुरु क्या ऐसो होई ॥
उनको तो नर कोइ कोइ जानै । हमको सिगरो देश बखानै ॥
दिन दिन बढ़ता दीखै आगे । मेरे भाग बड़ेही जागे ॥
मेरे मनमें ऐसी आवै । उनका शिष्य अब कौन कहावै ॥
वही अचानक गुरु ह्वां आया । बैठेही शिर शिष्य नवाया ॥

दोहा–जैसे आते वैष्णवहि, करता वह दण्डौत ।
ऐसेही गुरुसे किया, आदर किया न बौत ॥५६॥

देखि गुरू मन हाँसी ठानी । वाको जाना बहु अभिमानी ॥
मुखसों कहिकरि बहु झिरकारा । कहा कि तू अभिमानी भारा ॥

नीकि बुद्धि तेरी गइ खोई । बसी मत्सरता घटमें सोई ॥
मेरा सब उपदेश बिसारा । जग मोहनका मनमें धारा ॥
दश बीसनको शिष्य करि भूला । गद्दी ऊपर बैठ बहु फूला ॥
शिष्यने कहा और क्या कीया । वही किया आज्ञा तुम दीया ॥
तुमनेही सतसंग बताई । कीजो दीजो जित मन लाई ॥
शिष्य सखा करि संगत बढाई । मेरी तुम्हरी भई बडाई ॥
देखि ईर्षा तुमको आई । हमरी देखी बहु अधिकाई ॥
फिर हँसि गुरु कहि तू अज्ञानी । मैं कहि संगति तैं नहिं जानी ॥
मैं कहि भक्तनका सँग कीजो । सत पुरुषनके चरण गहीजो ॥
दिन दिन ज्ञान होय सरसाई । हरि गुरुसों ह्वै प्रीति सवाई ॥
तेरी तौ गति और भई । महा अविद्यामें मति ठई ॥

दोहा-झरना मूँदे ज्ञानके, छाय रहा अज्ञान ।
राम रुठाव नहीं किया, भई मुक्तिकी हान ॥५७॥
कहा बात पूजी कहा, इतनेमें गयो भूलि ।
मति ओछी घट थोथरा, तापर बैठा फूलि ॥५८॥
सिद्ध प्राप्त विभवमें, देह विसर्जन होय ।
वह भी जो गुरुको तजै, जाय नरकको सोय ॥५९॥
कछू तपस्या ना करी, नहीं किया कछु योग ।
नातो लगी समाधिही, ले बैठा तू भोग ॥ ६० ॥
रजगुणतमगुण लेलिया, तजा सतोगुण अङ्ग ।
हरि गुरुको दइ पीठही, करि विषयिनको सङ्ग ॥६१॥
भक्ति भावको छोड़िकै, करि दम्भकी हाट ।
मुक्तिपन्थको तजि दिया, लई नरककी बाट ॥६२॥
इन बातनसों क्या सरै, बहुत भया विख्यात ।
तुमसे अधिकी मूढ नर, जगके घने दिखात ॥६३॥

हुकुम बड़ा माया बड़ी, नामी बड़े जु भूप ।
नर नारी बहु टहलमें, सुन्दर अधिक अनूप ॥६४॥
सन्तनकी गति और है, हरि गुरुसों सनमुक्ख ।
मुक्ति होय छूटैं सबैं, जन्ममरणके दुक्ख ॥ ६५ ॥
जगत बड़ाईमें फँसे, परी अविद्या छाहिं ।
नरक भुगति यमदण्डही, फिर चौरासी माहिं ॥६६॥

हरि औ गुरुको शिरपर धरिये। सत पुरुषनकी संगति करिये॥
रहिये साधुनके सँग माहीं । ध्यान भजन जहँ छूटै नाहीं॥
है परिपक्व जहां मन रहो । गुरु मत दया दीनता गहो ॥
सहज सहज उपदेश लगाओ। भूलेको हर बाट बनावो ॥
तारन तरन बहुत जन भये । क्षमा दीनता धारे गये ॥
पै उनको अभिमान न आया। नेक न पड़ी अविद्या छाया॥
आपा मेटी गुरुही राखा । जब बोले तब गुरुही भाखा॥
तू अभिमानी जन्म गँवाया । पाप बोझ शिर घना उठाया॥

दोहा-वोही नभकी ओरसों, वाणी भई जु आय ।
किये गुरुसों मान तै, चौरासीको जाय ॥ ६७ ॥
हांसे गुरु रमते भये, शिष्यहि दै फटकार ।
कहा कि तेरे तन विषे, हूजो बड़ो विकार ॥ ६८ ॥
ता पाछे कछु दिननमें, देही भयो विकार ।
निकट आवौं तासुके, हांके सब नर नार ॥ ६९ ॥
कष्ट भयो अर्द्धंगको, रहो न काहू योग ।
आठ प्रहर वाकौ भयो, निरा शोगही शोग ॥७०॥
तन तजिकै नरकै गयो, फिर चौरासी माहिं ।
जो गुरुसों अभिमान करै, ताकी गति हो नाहिं॥७१॥

कहै गुरू शुकदेवजी, चरणदास परवीन ।
मनसों तजि अभिमानको, गुरुसों रहिये दीन ॥७२॥
मान न काहूसों करे, सबहीसों आधीन ।
सुमिरत हरिकी भक्तिमें, जगत काजसों हीन ॥७३॥

अगमचेती दृष्टान्त

दश कर्मोंको जानिये, महा पापकी खान ।
तन मन वचन सँभारिये, यही जु अधिक सयानि ॥७४॥
कहूँ एक दृष्टान्त हो, सो परमारथ भेश ।
सुनि समुझै हिरदै धरै, तौ लागे उपदेश ॥ ७५ ॥
नगर एक है अति सुभग, बसैं लोग सुखमान ।
नर नारी सुन्दर सबै, अरु धनवन्ते जान ॥ ७६ ॥
नया करैं जहँ भूपही, बरष दिनाके माहिं ।
संबत बीते तासुको, फिर वै राखैं नाहिं ॥ ७७ ॥

पकड़ डार दे नदी पारा । जहां भयानक अधिक उजारा ॥
पशू आदि ताको भखि जावैं । स्वपनासा देखैं बिनशावैं ॥
नया भूप करि आज्ञा माने । ताको अपना ईश्वर जाने ॥
रहैं हुकुम माहीं कर जारैं । वाको बचन न कबहूँ मोरैं ॥
छत्तरधारी ह्वाहीं डारैं । जो मैं आगे कही उजारैं ॥
कई सैंकडों ऐसे भये । चेते नाहीं निष्फल गये ॥
राजा नया और इक किया । सो वह समझ चेता हिया ॥
मनही मनमें कहै विचारे । बहुत भूप जङ्गलमें डारे ॥

दोहा-बरस दिना जब बीति है, हमहुँको देहै डारि ।
सरिताहीके पारही, अधिकी जहां उजारि ॥ ७८ ॥

याके कछू उपाय बिचारौं । ता सेती यह जन्म न हारौं ॥
एक दिना उन यही बिचारा । देखन गयो नदीके पारा ॥

जहां भूप जा जा करि मरते । तिनके हाड वहांही गिरते ॥
खड़ा जु होय देखि मन आई। नीकी ठौर बनाऊँ ह्यांई ॥
दृष्टि उठाय ऊँचि जो कीन्ही । कामदारको आज्ञा दीन्ही ॥
बन काटो आज्ञा दइ एता । फिरता पांचकोशमें जेता ॥
सुन्दरसा इक कोट बनाओ । तामें सुन्दर बाग रचाओ ॥
करौ हवेली ताके माहीं । जैसी भूपनहूँके नाहीं ॥
गिलम बिछौने परदे लावो । अरु तय्यारी सबै करावो ॥
होयचुके जब मोहिं सुनावो । बहुत इनाम अधिक तुम पावो॥

दोहा-वैसाही बनने लगी, जैसी आज्ञा दीन ।
बनने बनने बन चुकी,सुन्दर अधिक नवीन॥७९॥

फिरि राजाको आनि सुनाया। राजा सुनि बहुतै सुख पाया॥
अच्छी चीज वहां पहुँचाई । ह्यां जो रही न सुरति लगाई॥
कहा कि एक दिना ह्वां जाना ।क्षणक्षण होय अविधिकीहाना॥
पांचक गांव कोटके साथा । किये दिये लिखि अपने हाथा॥
अपना एक हितू मन भाई । भरी कचहरी लिया बुलाई ॥
करि इनाम ताको वह दिया । वाका देखा साँचा हिया ॥
और कही जो राजा होवै । वाहि तलाक याहि जो कोवै॥
वोही आठ महीने बीते । करणी करि भय मनके चीते॥

दोहा-ह्वै निश्चित आनँद भय,चिन्ता भय नहिं कोय ।
अपना कारज करि चुके, ह्यां ह्वां एकहि होय॥८०॥

सुखहीमें वह वर्ष बिताया ।अवधिबीतिफिरिवहदिनआया॥
सब उमरावजु घरि कर आये। नया भूप करनेको लाये ॥
याहि सिंहासनसों दियो डारी। कहा कि तुम्हरी बीती बारी॥
ऐसे कहि कर गहि लै चाले । पार नदीके जंगल घाले ॥
शुभकरणीको करि वह राजा । अपने महलन जाय बिराजा॥

इतसे भी उत सुख बहुभारी । ना कोइ बैरी ना जंजारी ॥
अपनी करणीसे सुख पावै । रही अशोक न चिन्ता आवै॥
कहि शुकदेव चरणहीं दासा । शुभ करणी करि पाया बासा॥

दोहा-ऐसे मानुष देहको, जानहु नगर समान ।
राजा यामैं जीव है, शुभ करणी परमान ॥ ८१ ॥

नाहिं तो चौरासी जङ्गल है । भांति भांतिका जितही भय है॥
पशू पशूको जित भखि जावै। नित भयमानि नहीं सुख पावै॥
बहु दुख पावै खोटी करनी । जैसी करनी तैसी भरनी ॥
शुभ करणीको जो नर धावै । बहुत भाँति सुख सुरपुर जावै॥

दोहा-भूप उमरि अपनी किया, अपना पूरण कामं ।
ऐसेही शुभ कर्म्मसों, तुमहूं पावो धाम ॥ ८२ ॥

दूसरी कथा

अरु इक कथा कहौ अतिनीकी। जा सुनि जाय अविद्या जीकी॥
इक राजा था बहु परबीना । सो वह पुत्र बिना था दीना॥
एक समय वहि रोग जो आया। पुत्र विना बहुतै कलपाया ॥
कौन काज अब ह्यांको करि है। जो मेरी देही यह मरि है ॥
रामत करत सिद्ध इक आया। राजाने सब वाहि सुनाया ॥
सिद्ध कहि बालक गोद घलावो। बेटाकरि तिहि राज बिठावो॥
राजा कहि जौ ध्यान लगावो। राजा भागमें ताहि बतावो ॥
फिर उन कही जु खोलि दिखाऊं। साहूकारको पुत्र बनाऊं ॥
वाका भाग्य लिखी यह राजा। ताको सुतकरि कीजै काजा॥
फिरि उन वाको गोद जु लीन्हा। ह्वांको राज काज सब दीन्हा॥
कोइक दिनमें उन तन त्यागा। पुत्र राज्य करने तब लागा॥
राज्य पितासों नीका कीन्हा । प्रजा आदिको सबसुख दीन्हा॥

दोहा–राज करत वर्षैं भई, सुख ले अरु सुख दीन।
वाके नगरके विषय, द्रव्य बिना नहिं हीन ॥८३॥

एक दिना ऐसे भयो काजा। सोवत चौंकि उठा वह राजा॥
भोर भये सब फौज बुलाई। हरिकी आज्ञा सो समुझाई॥
कहा जहांतक परजा मेरी। ताको लूटो जाय सबेरी॥
आज्ञा लै सब फौज पधारी। परजा लूटी नीके सारी॥
दूजे फिर कहि ह्वां तुम जावो। जिनकूं लूटो भवन जलावो॥
घर परजाके सभी जलाये। नीच ऊंचने बहु दुख पाये॥
तीजे बचन भूप यों भाखो। कहा फौजसों खोज न राखो॥
बड़ों-बड़ों पर शस्तर मेलो। लड़के बाले कोल्हू पेलो॥
यह सुनि सकल प्रजा बिरआई। राजा पास पुकार सुनाई॥
बहुतक राजा भये अनूठा। अपनी प्रजा कोइ नहिं लूटा॥

दोहा- पहिले सबको सुख दिया, अब भे तुम दुखदाय।
कारण यह कहि दीजिये, सबहीको समुझाय ॥८४॥
यह कहि साहूकारने, जो था याका बाप।
कुयश चला संसारमें, बहुत लगाये पाप ॥ ८५ ॥
साहुकार पण्डित घने, और बडेही लोग।
कोल्हूकी सुनि कतलकी, बहुतक माना शोक ॥८६॥
आये हैं फरयादको, सुने बिगडते काज।
सकल प्रजाको मारकै, किसका करिहो राज ॥८७॥
सकल प्रजा तुव शरण है, बकसि देउ महराज।
अपनी अपनी भूमिमें, फेरि बसैं सब साज ॥८८॥

राजा कही सो मैं नहिं जानूं। अपने मुखसे कहा बखानूं॥
कहा पुरुष सो इक तुम आनो। जिनका कहा सांच तुम मानो॥
यह सुनि ज्वाब सवालहि वारे। आकरि बैठे सबन मझारे॥

सो इक नर बहुते इतबारी । जिनकी साखि हुती बहु भारी ॥
तिनको लै राजाके पासा । खड़े किये सब चरणन दासा ॥
राजा उठि उनहींके माहीं । मिलि बैठो पुनि वाही ठाहीं ॥
राजा कही जु हरिकी वोरैं । ध्यान लगायो मनको मोरैं ॥
घडी चारि जब ध्यान लगाया । नभसे शब्द यही जो आया ॥

दोहा—ढील भूप तैं क्योंकरी, इनको कीजै जेल ।
बड़े कतलही कीजिये, छोटे कोल्हू पेल ॥ ८९ ॥

तीन हि बार लगाया ध्यानी । बाग्म्बार यही भइ बानी ॥
भूप कही क्या दोष हमारा । कोपित भयो जो सिरजनहारा ॥
अब तुम परजासों कहि देवो । कतल पेलना कोल्हू लेवो ॥
आये नर कहि सबमें खोली । सुनि परजा ऐसे उठि बोली ॥
आपसमें सब कहने लागे । हम हैं मूरख बड़े अभागे ॥
हम शुभ कर्म्म कबहुँ नहिं कीन्हें । तिथि परबहि केहु दान न दीन्हें ॥
कथा कीरतनमें नहिं गये । कुटुम्ब जालमें पागे रहे ॥
हरिकी भक्ति नहीं चित लाई । ताते अब होती मुकताई ॥

दोहा—हरिही को बिसराइया, पूत महलके काज ।
नाम रहेगा जगतमें, सोभी रहा न आज ॥ ९० ॥

चले नरकको निश्चय जैहैं । मार यमोंकी तीक्षण खैहैं ॥
कांपत हैं सब देह हमारी । आपसमें भाषै नर नारी ॥
ऐसे ही सब रो रो बोलैं । व्याकुल भये धरणिमें डोलैं ॥
एक ठावँ ह्वै मता उपाया । सो राजाको जाय सुनाया ॥
कर जोरे मुख तृण गहि लीन्हे । नख शिखतनमन दीनजु कीन्हे ॥
इक षटमास जु हमैं बचाओ । अपने हरिको अरज सुनाओ ॥
जामैं जप तप धर्म बढावैं । बोलैं सांच झूठ बिसरावैं ॥
चोरी जारी हिंसा त्यागै । राति दिना हरिही सो लागै ॥

दोहा-नितप्रति उठि शुभकर्म करि, लहै धाममें बास ।
काम क्रोध बिसराय करि,होय चरणही दास॥९१॥

अब तुम हमें बेगि बकसाओ। मास षष्ठकी छूट दिलाओ॥
हम रय्यत हैं सभी तुम्हारी । एक बार करो अरज हमारी॥
और कही तुम्हें बोझ हमारा।राजा सुनि उन ओर निहारा॥
कही कि मैं अब कैसे कहूं। आठ पहर डरताही रहूं ॥
अरज करत कांपै तन सारा । तेजवन्त है वह दरबारा ॥
पै तुम देखि दया उपजाई । मेरे भी मन ऐसी आई ॥
बैठि अकेला ध्यान धरूंही । तुम्हरे कारण अरज करूंही॥
दिन यों बीता निशि जब आई।भूप ध्यान करि अरज सुनाई॥

दोहा-अरज करी उन दीन ह्वै, बारबार यह भाखि ।
या परजाको मास षट,क्षमा दृष्टि करि राखि॥९२॥
जो जो इनके मनविषे, सो सो करैं उपाय ।
छठ मासके ऊपरै, एक द्योस नहिं जाय ॥ ९३ ॥
देखि भूपकी दीनता, पिछले दीन दयाल ।
नभसे बाणी यह भई,वही समय ततकाल॥ ९४ ॥
यह परजा तुव कारणे, बकसी है षट मास ।
ऊपर जा दिन एक जब,कीजो इनका नास ॥ ९५ ॥

आज्ञा भई भूपकी जबहीं ।सोयो पलँग निडर ह्वै तबहीं॥
भोर भये बाहरको आया ।सकल प्रजाको निकट बुलाया॥
कहा कि षटही मास बचाया।अपने मनका करिल्यो भाया॥
यह सुनि परजा सब हरषाई। अपने अपने घरको आई ॥
केहुँ सिरकी केहुँ छप्पर मारा। पक्का मंदिर नाहिं बिचारा ॥
चोरी जारी सबै बिसारी । ठाले भये सभी व्योहारी ॥

अरु साधुन कीसी वृति धारी। बालक युवा और सब नारी॥
रहे नहीं वे खोटे मनके। भये तपस्वीसे सब बनके॥

दोहा-गड़ा हुआ जो द्रव्य था,करी न ताकी आंट।
राखि लिया षटमासको,अरु सब दीन्या बांट॥९६॥

जिनके था धन तिन अस कीन्हा।जिनपै ना था तिनका दीन्हा॥
आपसमें कहे धन कह करि हैं। छठे महीना पाछे मरि हैं॥
यही समुझि उपजा वैरागा। सबही इन्द्रिनका रस त्यागा॥
फीके लगे भोग सब जगके।सहज छूटि गये काम जो अघके।
सबकी दशा एक जो भई। मौत जानि करि चिन्ता ठई॥
दिन दिन दुर्बल होते जावैं। हरिहीका जप ध्यान लगावैं॥
एक एक दिन लागै प्यारा।भजन करैं जगि न्यारा न्यारा॥
जिद अरु बाद न कोऊ ठानैं। इक इक घरी अमोलक जानैं॥
कहैं कि खोवैं तौ कित पावैं। कथा कीर्तनसों चित लावैं॥
कथा कीरतन तित जित होई। साधु समागम ह्वै गये सोई॥
घर घर शुभ कर्मन व्योहारा।धर्म पकड़ि अधरम सब डारा॥
ज्यों ज्यों दिवस अवधिके आवैं। घने घने शुभ कर्म कमावैं॥

दोहा-जाको होवै मौत भय, जगमें लगे न चित्त।
झुकै रामकी ओरही, बहुत लगावै हित्त॥९७॥

उन मनुषनकी यह गति भई। जगकी चाल डारि सब दई॥
लाड चाव त्योहार न कोई। व्याह सगाई पुत्र न होई॥
काम क्रोध नहिं उपजै मोहा।लोभ मान नहिं प्रीति न द्रोहा॥
ऐसे रहि शुभ कर्म्म जु करैं। सदा मौतसे डरते रहैं॥
सहजसहज फिरि वह दिन आया।डरे नहीं शुभ कर्म कमाया॥
आपसमें कहैं हमको क्या है। यमकी मार नरक भय नाहै॥
राजा जान्यो वह दिन आया। अपना सेवक तुरत पठाया॥

कही कि फौज सबै बनि आवैं। कतल करन परजाको धावैं॥
फौज साजि करि ठाढी भई। आज्ञा ओर दृष्टि जो दई॥
राजाके मन ऐसे आई। उन सब पुरुषन लेहुँ बुलाई॥
सांचे सबहीके इतबारी। फेरि बुलावो अबकी बारी॥
यही शोचि फिरि शीश उठाया। आज्ञाकारी निकट बुलाया॥

दोहा-कामदारसों यों कही, वे सो पुरुष बुलाय।
जिनमें मिलि बैठा प्रथम, हरिसों ध्यान लगाय॥९८॥

फिरि उनहींको लियो बुलाई। मिलि बैठा सबका सुखदाई॥
कहीकी सब मिलि सुरति उठावो। राम ओरको ध्यान लगावो॥
आज्ञा हो सोई तुम मानो। मेरा दोष कछू मत जानो॥
मोको आज्ञा होय सो करिहौं। अपने हिये नेक नहिं धरिहौं॥
राजा कहि फिर ध्यान लगाया। ऐसा शब्द गगनसों आया॥
राजा मैं अब बकसि दिया है। सकल प्रजाकी शुद्ध हिया है॥
जिन करमोंसे कोप भया था। तिनके कारण खड्ग लिया था॥
सब प्रजासों बातैं डारी। करि सुकर्म हरिभक्ति सँभारी॥

दोहा-ताते आज्ञा यों दई, रचौ कुटुँब घर वार।
शुभ कर्म्मनको कीजिये, खोटे कर्म्म निवार॥९९॥

राजा कही खोलि दृग दीजे। आज्ञा भई सोइ अब कीजे॥
खोलि आँख कर जोरे भाखे। बकसे गये तुम्हारे राखे॥
जो तुम कहो सोइ अब करैं। वचन तुम्हारे हिरदय धरैं॥
राजा कही यही तुम कीजो। रामनामको संगी लीजो॥
गुरुका ध्यान धरो मन माहीं। विपति जासु सो आवत नाहीं॥
अपनी त्रिया त्रियाके जानो। परतिरियाको माता मानो॥
परधनको पाहन सम देखो। शुभकर्मनको करो विशेखो॥
बोलो सांच झूंठकूं नाखो। निंदा हिंसा नेक न राखो॥

हो रहियो सबके सुखदाई। कडुवा बचन न बोलो काही॥
जो व्योहार करो तो सांचा। लोक परलोक न आवै आंचा॥
दोहा-कहै श्रीशुदेवजी, सुनौ चरणही दास।
राजा उपदेश दै, खोई सबकी त्रास॥ १००॥
फिरि वै पुरुष बिदा ह्वै आये। हरि राजाके वचन सुनाये॥
जिन चालनसों बकसे सारे। सो रखियो तुम हिये मझारे॥
उज्ज्वल कर्म भूलि मति जैयो। हरिकी भक्ति माहँही रहियो॥
सुनिकरि आपसमें कीन्ही। प्रगटसु अपनी आंखिन चीन्ही॥
सबने मानी निश्चय कीन्ही। प्रगटसु अपनी आंखिन चीन्ही॥
हाथ कँगनको दर्पण केहा। जैसी करणी भुगतै जेहा॥
खुशी भये लागे व्यवहारा। रामभक्तिका लिये समारा॥
कहि शुकदेव चरणही दासा। सबै प्रजा रहै उमँग हुलासा॥
दोहा-शुकदेव कहैं चरनदास सुनि, मैं उपदेशू तोहिं।
जो पहिले हरिको भजै, पाछे दुःख न होहिं॥ १०१॥

तीसरी-इन्द्रनाम ब्राह्मणके दश पुत्रों की कथा

कथा कहौं इक और पुरानी। करणी करै सुसमुझै प्रानी॥
इन्द्रनाम एक ब्राह्मण हुता। जाके दश सुत अरु एक सुता॥
सुता व्याहि दइ घरकी हुई। जाके पीछे माता मुई॥
पिता मुआ दश पुत्र रहे थे। आपसमें सब बैठि कहे थे॥
ऐसी कछू जु करणी कीजे। जगमें ऊँची पदवी लीजे॥
इकन कही हूजिये भूपा। सुन्दर देही धरो अनूपा॥
तेज मुलकमें होवे भारी। हुकुम जु मानैं नर अरु नारी॥
और एक ऐसे उठि बोला। सावधान ह्वै अंतर खोला॥
दोहा-राजाहीका हुकम तो, थोरेमें ही होय।
ऐसी करनी कीजिये, भूप चक्कवे होय॥ १०२॥

एक द्वीप नौ खण्डमें, जाको पूरा राज।
एक और उठि बोलिया, यह भी ओछा साज॥१०३॥
चक्रवर्तिसे इन्द्र बड़, देवनहूंको भूप।
उमर बड़ी आनँद बड़े, दुखकी लगे न धूप॥१०४॥

करणी करत इन्द्रही लोगा। होकर राजा कीजै भोगा॥
जहाँ अप्सरा नृत्य करत हैं। सुन्दर अधिकी रूप धरत हैं॥
और बडा भाई यों भाखा। सुरपतिहूको नाहीं राखा॥
कहा की पदवी ब्रह्माकीसी। और न दीखै काहू हीसी॥
जाके एक दिवसही माहीं। इन्द्र चतुर्दश है हैं जाहीं॥
सब ब्रह्माण्ड आसरे वाके। विनशि जाय मिटि जावैं ताके॥
तीनलोकका पिता वही है। वेद पुराणन माहँ कही है॥
करणी करिकरि ब्रह्म हूजै। ऐसो पदवी क्यों नहिं लीजै॥

दोहा—सागर यों उठि बोलिया, सत्य सत्य यह बात।
ऐसाही अब कीजिये, ठहराई सब भ्रात॥१०५॥

दशहू करन तपस्या लागे। पारब्रह्मकी औरी पागे॥
अधिक तपस्या कीन्ही भारी। मांस सुखिगा दीखै नारी॥
हाड त्वचा चिपटी रहगई। लोहू धातु कछू ना ठई॥
सबही चित्रहिसे रहगये। कष्ट तपस्या ऐसे सये॥
फूल पात जलहू नहिं लीन्हा। ऐसा तप दशहूने कीन्हा॥
तन त्यागे दूजेही जन्मा। दशहू भ्रात हुये जो ब्रह्मा॥
जिनके दश ब्रह्माण्ड बने हैं। एक एक तिन माहिं ठने हैं॥
करणी कबहुँ न निष्फल जावै। जो मन धारै सोई पावै॥

दोहा—करणीसों भये इन्द्रहू, करणी ब्रह्मा होय।
करणीसों ईश्वर भये, शुकदेवा कहे सोय॥१०६॥

दस हजार के बीसही, वर्ष तपस्या कीन्ह ।
हरि जाको बदलो दियो,माँगो सो वर दीन्ह॥१०७॥
चारों युगले माहिं जो, करणी ही परधान ।
गुरु शुकदेवा कहत है, चरणदास उर आन ॥१०८॥
उज्ज्वल कर्म्मनके किये,दिन दिन उज्ज्वल होय ।
मनमें उपजे भक्तिही, प्रेम पदारथ सोय ॥ १०९ ॥

चरणदास तुम करणी कीजो । याहीमें मन नीके दीजो ॥
ऐसा जन्मा बहुरि नहिं पैहो ।बीति जाय पुनि बहु पछितैहो॥
मनुष्य देह या दुर्लभ जानौ । वाको पा शुभ करणी ठानौ॥
या देहीमें करी कमाई । जाय स्वर्गमें नौनिधि पाई ॥
भक्ति करी देहीके माहीं । जा वैकुण्ठ सु आये नाहीं ॥
या देहीमें ज्ञान भया है । जीव ब्रह्म जो होय गया है ॥
मूरख करणीको नहिं जानै ।कथनी कथि २ बहुत बखानै॥
थोथी कथनी काम न आवै । थोथा फटकै उडि उडि जावै॥

दोहा–कथनीहीके बीचमें, लीजो तत्त्व विचार ।
सार सार गहि लीजियो,दीजो डारि असार॥११०॥

थोथी कथनी वही जु जानौ । बिन करनी जो करै बखानौ॥
लोग प्रलोक न शोभा पावै ।बकि बकि बकि खाली रह जावै॥
कथनीके शूरा बहु जाने । करणीमें कायर अरु याने ॥
शूरा वही जो करणी करै । दया धर्म्म लै सम्मुख अरै ॥
पाँव धरे सो नाहिं उठावै । करणी करता चला जु जावै॥
फिरै जबहिं फल लैकर आवै । सो वह शूरा मह्ल कहावै ॥
कायर बीचहिंसों फिरि आवै । सो वह करनीको बिसरावै ॥
अपना खोंट न जानै भोंदू । वह तो कथनीहीका गोंदू ॥

दोहा–ऐसे जगमें बहुत हैं, वैसे जगमें नाहिं।
कोई कोइ हि देखिये, सतगुरुके मधि माहिं॥ १११॥

होनहारको बहुत बतावै। पै ताको कछु मर्म न पावै॥
कहैं कि होनी होय सु होई। ताको मेटि सकै नहिं कोई॥
याको समझ उपाय न करिया। श्रद्धा तजि कायर है परिया॥
समझि निखट्टू गेहि भये हैं। वेष धारि बिन करणी रहे हैं॥
जानत नाहिं जु पिछली करणी। अब के भई जु होनी भरणी॥
परालब्ध अरु भाग्य कहावै। पिछिले कर्म्मनसे उपजावै॥
अबके करै सु आगे पावै। कछू कछू फल अभी दिखावै॥
कै काहू गाली दै देखो। कै काहूको मारि बिशेखो॥
कै काहूको भोज खवावो। कै काहूको शीश नवावो॥
कै कोइ चोरी जूआ खेलौ। कै काहूको गुस्सह झेलौ॥
दोनोंका फल आगे आवै। चरणदास शुकदेव बतावै॥
प्रगट देखिये यही तमाशा। नीच ऊंच करणी परकाशा॥

दोहा–कोटि यही उपदेश है, यही जु सगरी बात।
करणी ही बलवन्त है, यौं शुकदेव दिखात॥ ११२॥
मनकी करणी ज्ञान है, परमातम लखि लेय।
ब्रह्म रूप ह्वै जाय जब, छूटै सबही भेय॥ ११३॥
भवसागरमें भय घने, ताकी लगै न आंच।
झूठेको भय बहुत है, भय नहिं व्यापै सांच॥ ११४॥
करणीहीसों पाइये, पारब्रह्मका खोज।
सतगुरुपै चलि जाइये, मेटैं सबही सोज॥ ११५॥

इच्छा ब्रह्म करी सो करणी। ईश्वररूप धरा लै धरणी॥
महत्तत्त्व करि अहँकार जुकीये। तीन रूप उनको करि दीये॥

राजस तामस सात्त्विक जानौ। यही त्रैगुन मनमें आनौ ॥
राजससों जगको उपजावे । सात्त्विकसों पाले सिरजावे ॥
तामससों बिनशावे तोडै । बहुत सृष्टि नहिं भूपर जोडै ॥
जोडे तौ वह कहां समावै । धरतीका परिमाण कहावै ॥
योजन पचास क्रोड बताई । वेद पुराणन माँहि जो गाई ॥
धरती करणीहीसों ठाढी । कछुवा शेष भये जो गाई ॥
करणीहीसों घन बरसावै । बादल मिलती पवन चलावै ॥

दोहा-करणी सों करतारही, धरा ब्रह्मका नावँ ।
माया भी तौ उन करी, खेली बहुविधि दावँ॥ ११६॥

कोई निराकार बतलावै । कोई निरगुण कहि समुझावै ॥
कोई कहै दोनोंसे न्यारा । है जु अकर्ता अलख अपारा॥
कहै कि माया कियो पसारा । जेता दीखै यह संसारा ॥
तौ कब माया कितसों आई । अन्त यही हरिने उपजाई ॥
वही सृष्टिका कारण काजा । वाने जगत प्यार करि साजा॥
देह देहमें वह दरशावै । चातुर हो चतुराई पावै ॥
जैसे बरतन गढ़ै कुम्हारा । सबमें दीखै सिरजनहारा ॥
चित्र मध्य चित्रांमी सूझै । सुरति लगाय लगाय उरूझै ॥
जबहीं बनी बनाई नीके । कहि शुकदेव जु अपने जीके ॥

दोहा-विना किये कछु होय ना, आपहि लेहु विचार ।
करनी देखी दूरलौं, शोचा बारम्बार ॥ ११७ ॥
चरणदास तोसों कहौं, उठि उद्यमको लाग ।
आलस सकल गवांयकै, विषयनमें मति पाग॥ ११८॥
कारज लोक प्रलोकके, विन करणी हो नाहिं ।
करणीहीसों होत हैं, करणी सबके माहिं ॥११९॥

१ रजोगुण ब्रह्मा । २ तमोगुण शिव । ३ सतोगुण विष्णु । ४ चित्रकार ।

खोटे कर्म्मनसों दुखी, या दुनियाके बीच।
करणीहीसों होत हैं, नर ऊँचा अरु नीच ॥१२०॥
संगति मिलि करने लगे, ऊँचे नीचे कर्म्म।
बुधि मैली जो होत है, खोवे अपना धर्म्म ॥१२१॥
सतसंगतिसे धर्म्म है, कुत्सित सँगसों जाय।
शुकदेव कहैं चरणदास सुन, दोनों दिये दिखाय॥१२२॥
धर्म गया जब सत गया, भ्रष्ट भई अति बुद्धि।
तबहीं पाप रु पुण्यकी, कछू रही ना शुद्धि ॥१२३॥
पाप पुण्यही सत्यहै, ठहरि रहा ब्रह्मण्ड।
इन दोनोंके मिटतही, होय खण्डही खण्ड ॥१२४॥
पाप पुण्य व्यवहार है, ताहि देखु प्रत्यक्ष।
जाही सेती प्रेम यम, देवत गण अरु यक्ष ॥१२५॥
चौरासी अरु मनुष सब, चन्द सूर लौं जान।
पाप पुण्यके फेरमें, सबही पडे पिछान ॥१२६॥
पाप किये नरकै पडै, पावै दुःख अपार।
पुण्य किये सुख बहुत है, देखो दृष्टि उघार ॥१२७॥
विरलै जनको होत है, पाप पुण्यकी सूझ।
सोइ छूटै जग जालसों, बहुतैं रहैं अरूझ ॥१२८॥
लाख बातकी बात है, कोटि बातकी जान।
पाप पुण्यसों जानिये, लाभ होय कै हान ॥१२९॥
करणी बिन थोथा रहै, कछू न पावे भेव।
विभव प्राप्त कहुँ होय ना, कहैं जु यों शुकदेव॥१३०॥

होनी कहैं जु वे भी सारे। करणी करते दृष्टि निहारे॥
विन करणी व्यवहार न चालै। नहीं तौ बैठे रह जा ठालै॥
कृत्य करै सो भी यह करणी। बनियाँ हाट पंडिया वरणी॥
करणीहीसों खावै पीवै। योग करै बहुते दिन जीवै॥

मनमां जे सबही परकाशै । करणी बिन झूठी सब आशै ॥
करणीहीसों सिधि ह्वै जावै । अष्ट सिद्धि करणीसों पावै ॥
जीवनमुक्ती करणी हेती । सुनिले सकल शास्त्रसों तेती ॥
गुरुसों निश्चय यहै जु कीनी । रणजीता मैं तुमको दीनी ॥

दोहा-यह तौ धर्म जहाज है, मैं तोहिं दई निहार ।
भवसागरमें डारियो, चढै सो उतरै पार ॥१३१॥
बादवान पुनि खेइयो, दीजो ताहि चलाय ।
पानी पाप निकासियो, नेकहु ना भरि जाय॥१३२॥
चढि उतरै जो पारही, पावै सुखका धाम ।
आनँदही आनँद रहै, करै तहाँ विश्राम ॥१३३॥

शिष्यवचन

दोहा-धनि धनि श्रीशुकदेव हौ, वचन तुम्हारे धन्य ।
सब संदेह मिटाय करि, निश्चय कीन्हो मन्य॥१३४॥

व्यासपुत्र तुम मम गुरुदेवा । करूँ मानसी तुम्हरी सेवा ॥
मनमें तुम्हरी पूजा साजू । तुमसों पूछि करौं सब काजू ॥
मेरे ध्यान शिताबी आये । जो थे सो सन्देह मिटाये ॥
मैं तो ध्यान करतही रहूं । तुम्हरी मूरति हिरदय गहूं ॥
मेरे जीवन प्राण अधारा । मैं नहिं रहौं चरणसे न्यारा ॥
तुम्हरे चरणका दास कहाऊँ । बारबार तुमपै बलि जाऊँ ॥
तुमहींको ईश्वर करि मानूं । पारब्रह्म तुमहींको जानूं ॥
और न कोई दूजी आसा । मो हिरदयमें राखो बासा ॥

दोहा-अपने चरणहिं दासको, सब विधि पिया अघाय ॥
अस्तुति करूँ तौ क्या करूँ, मो पै कही न जाय ॥

इति धर्मजहाज सम्पूर्ण ॥ ३ ॥

---

१ शीघ्र-जल्दी

श्रीगणेशाय नमः



अष्टांगयोग वर्णन ४

(गुरु शिष्य संवाद)

*

शिष्य वचन

दोहा-व्यासपुत्र धन धन तुम्ही, धन धन यह अस्थान ।
मम आशा पूरी करी, धन धन वह भगवान ॥ १ ॥
तुम दर्शन दुर्लभ महा, भये जु मोको आज ।
चरण लगो आपा कियो, भये जु पूरण काज ॥२॥
चरणदास अपनो कियो, चरणन लियो लगाय ।
शिर कर धरि सब कुछ दियो, भक्ति दई समुझाय ॥३॥
बालपने दरशन दिये, तबहीं सब कछु दीन ।
बीज जो बोया भक्तिका, अब भयो वृक्ष नवीन ॥४॥
दिन दिन बढता जायगा, तुम किरपाके नीर ।
जब लग माली ना मिला, तब लग हुता अधीर ॥५॥
अरु समुझाये योगही, बहु भाँती बहु अंग ।
ऊरधरेता ही कही, जीतन बिंद अनंग ॥ ६ ॥
अरु आसन सिखलाइया, तिनकी सारी विद्धि ।
तुम्हरी कृपासों होहिंगे, सबही साधन सिद्धि ॥७॥
इक अभिलाषा और है, कहि न सकूं सकुचाय ।
हिये उठै मुख आयकरि, फिरि उलटीही जाय ॥८॥

गुरु वचन

सतगुरुसे नहिं सकुचिये, एहो चरणनदास
जो अभिलाषा मन विषे, खोलि कहौ अब तास॥९॥

शिष्य वचन

सतगुरु तुम आज्ञा दई, कहूं आपनी बात।
अष्टांगयोग[१] बुझाये, जाते हियो सेरात ॥ १० ॥
मोहिं योग बतलाइये, जो है वह अष्टांग।
रहनी गहनी विधिसहित, जाके आठों अंग ॥ ११ ॥
मत मारग देखे घने, ह्यां सियरे भये प्रान।
जो कुछ चाहो तुम करो, मैं हौं निपट अयान॥१२॥

गुरु वचन

अष्टांगयोग समुझाइ हैं भिन्न भिन्न सब अंग।
पहिले संयम साखिये, जाते होत न भंग ॥ १३ ॥

शिष्य वचन

संयम काको कहत हैं, कहौ गुरू शुकदेव।
सो सबही समुझाइये, ताको पाऊं भेव ॥ १४ ॥

गुरु वचन

योगियोंके अवश्यमेव कर्तव्य

पहिले सूक्षम भोजन खावै। क्षुधा मिटै नहिं आलस आवै॥
थोडासा जल पीवन लीजे। सूक्षम बोलै बाद न कीजे॥
बहुत नींद भर सोवै नाहीं। दूजा पुरुष न राखै पाहीं॥
खट्टा चरफर खार न खावै। बीरज क्षीण होन नहिं पावै॥
करै न काहू वैरी मिता। जगवस्तुनकी न राखै चिंता॥
निश्चल ह्वै मनको ठहरावै। इन्द्रिनके रस सब बिसरावै॥

१ यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा, समाधि ये अष्टांगयोग हैं।

त्रिया तेल नहिं देह छुवावै । अष्ट सुगंध अंग नहिं लावै ॥
मनुषनकी राखै नहिं आसा । गुरुका रहै चरणही दासा ॥

दोहा—काम क्रोध मद लोभ अरु, राखै ना अभिमान ॥
रहै दीनताई लिये, लगै न माया बान ॥ १५ ॥

छल नहिं करै न छलमें आवै । दम्भ झूँठके निकट न जावै ॥
टोना यंत्र भूत नहिं धावैं । झूँठ जानिकै सब बिसरावैं ॥
धातु रसायन मन नहिं लीजे । झूँठ जानि याहू तजि दीजे ॥
स्वांग तमाशे बाग न जैये । आसन ऊपर बैठा रहिये ॥
दृढ ह्वै लगे युक्तिके माहीं । ताते विघ्न होय कछु नाहीं ॥
रूठा रहै जगत लोगनसों । न्यारो रहै सबी भोगनसों ॥
इन्द्र आदि लौ सुख संसारी । नेक न चाहै चित्त मझारी ॥
सिमिटि रहै हियमाहिं समावैं । ऐसे योग सधे सिधि पावैं ॥

दोहा—ऋद्धि सिद्धि अरु कामना, तिनकी रखै न आस ॥
मान बडाई चपलता, त्यागै चरणहि दास ॥१६॥

गहि संतोष क्षमा हिय धारै । संयम करि करि रोग निवारै॥
अहंकारको छोटा करिये ।कुटिल मनोरथ मन नहिं धरिये॥
बसिये जितहि देश सुस्थाना । निर उपाधि धरती अस्थाना ॥
भली भूमि लखि गुफा बनावै । नीची ऊंची रहन न पावै ॥
जमीं बराबर चौरस होई । होय लदाव कि मधरी सोई॥
सांकर द्वार कपाट लगावै । कहूं छिद्र रहने नहिं पावै ॥
तामहँ बैठि योग तप कीजै । दूजो पुरुष न भीतर लीजै ॥
कहि शुकदेव चरणही दासा । जगसों रहिये सदा उदासा ॥

दोहा—यह सब निश्चयही करै, योग युक्तिके आदि ।
पहिले ऐसा होय करि, पीछे साधन सादि ॥१७॥

योगके आठ अंग

आठ अंग कहुं योगके, सुनो चरणहीदास।
मेरे वचननके विषे, चित दै करौ निवास ॥१८॥

यमके अंग प्रथम सुनि लीजे। दूजे नियम कहूं चित दीजे॥
तीजै आसन हित करि साधौ। प्राणायाम चौथ आराधौ॥
प्रत्याहार पांचवाँ जानौ। छठौ धारणाको पहिंचानौ॥
सतवें ध्यान मिटै सब बाधा। कहूं आठवाँ अंग समाधा॥

शिष्य वचन

धन्य धन्य तुम श्री गुरुदेवा। मेरे प्राणनाथ शुकदेवा॥
व्यासपुत्र तुम दीनदयाला। मम अनाथको कियो निहाला॥
आठ अंग मोहिं दियो सुनाई। अब कहो भिन्न भिन्न समझाई॥
एक एकको जुदा बखानो। जासो जाय दास पर जानो॥

गुरु वचन

दोहा-एक एकका कहत हौं, जुदा जुदा विस्तार।
श्रवणन सुनो विचारिकै, लै लै हियमें धार ॥१९॥

१--यमअंग वर्णन

१. अहिंसा

प्रथम कहौं यमके दश अंगा। समझै योग न होवै भंगा॥
प्रथम अहिंसाही सुन लीजै। मनकरि काहू दोष न कीजै॥
कडुवा वचन कठोर न कहिये। जीवघात तनसों नहिं दहिये॥
तन मन वचन न कर्म लगावै। यही अहिंसा धर्म कहावै॥

२. सत्य

दूजे सत्य सत्यही बोलै। हिरदै तौलि बचन मुख खोलै॥

३. अस्तेय

तीजे असते त्याग सुनीजे। तन मनसों कछु नाहिं हरीजे॥
तन चोरीके लक्षण नाखै। मनकी चोरीका नहिं राखै॥

४. ब्रह्मचर्य

चौथा ब्रह्मचर्य बतलाऊं । भिन्न भिन्न करि ताहि सुनाऊं॥

अष्ट प्रकारका मैथुन

दोहा--ब्रह्मचर्य यासों कहैं, सुनहु चरणही दास ।
आंठ अंग सो नारिकी, नेक न राखै आस ॥२०॥

यती होय दृढ कांछ गहीजै । वीर्य क्षीण नहिं होने दीजै ॥
मैथुन कहूं अष्ट परकारा । ब्रह्मचर्य रहे इनसे न्यारा ॥
सुमिरण तिरियाका नहिं करिये।श्रवणन सुरतिरूप नहिं धरिये॥
रस शृङ्गार पढै नहिं गावै । नारिनसों नहिं हँसै हँसावै ॥
दृष्टि न देखै त्रिष नहिं दौरै । मुख देखै मन होजा औरै ॥
बात इकन्त करै नहिं कबहीं । मिलन उपाय जु त्यागै सबहीं॥
अथवा स्पर्श निकट ना जावै । काम जीति योगी सुख पावै॥
अष्ट प्रकारके मैथुन जानौ । इन तजि ब्रह्मचर्य पहिंचानौ॥
कहैं शुकदेव चरणहीदासा । ब्रह्म सत्य मैं करै निवासा ॥

५. क्षमा

दोहा--पँचवीं सुखदाई क्षमा, जलन बुझावै सोय ।
जो दुख आवै घटविषे, पातक डारै खोय ॥२१॥

कोई दुष्ट कछू कहि जावो । गाली देकर कोइ खिझावो ॥
कै कोइ शिरपर कूडा डारो । कै कोइ दुख देवो अरु मारो॥
वाकी कछू न मनमें लावै । उलटा उनको शीश नवावै ॥
ऐसी क्षमता हियमें लावौ । बोलौ शीतल अग्नि बुझावौ ॥

---

१ आठ अंग-श्रवण स्मरण कीरतन, चिंतवन बात इकन्त ।
दृढसंकल्प प्रयत्न तन, प्राप्ति अष्ट कहंत ॥ १ ॥

६. धीरज

छठा अंग धीरजका जानो । धीरजही हृदय में आनौ ॥
योगयुक्ति धीरजसों कीजै । सब कारज धीरजसों लीजै ॥
धीरजसों बैठे अरु डोलै । धीरज राखि समुझिकर बोलै॥
आनि परे दुख ना अकुलावै । धीरजसों दृढता गहि लावै ॥
दोहा-धीरज रहा तौ सब रहा, काहूसे न डराय ।
सिंह प्रेत अरु कालका, धीरजसों डर जाय॥२२॥

७. दया

दया सातवीं अब सुनि लीजै । सब जीवनकी रक्षा कीजै ॥
लख चौरासीका सुखदाई । सबके हितकी कहै बनाई ॥
रहिये तन मन बचन दयाला । सबहीसों निर्बैर कृपाला ॥

८. आर्जव

अठवें कहूं आरजव खोलै ।कोमल हृदयसों कोमल बोलै॥
सबको कोमल दृष्टि निहारै । कोमलता तन मनमें धारै ॥
कोमल बरती बीज बनावै । बढै बेगि फूलै फल लावै ॥
ऐसे कोमल हिया बनावै । योग सिद्धिकरि पद पहुँचावै॥
यही आरजव लक्षण जानो ।शुकदेव कहै रणजित पहिंचानो॥

९. मिताहार

दोहा-मिताहार जो नवम है, समझ लेहु मनमाहिं ।
सतगुन भोजन खाइये, ऐसा वैसा नाहिं ॥२३॥
खावै अन्न विचारिकै, खोटा खरा सँभार ।
तैसा ही मन होत है, जैसा करै अहार ॥ २४ ॥
सूक्षम चिकना हलका खावै । चौथा भाग छोडि करि पावै॥
बानप्रस्थ कै हो संन्यास । भोजन सोलह ग्रास गिरास॥

अरु गृहस्थ बत्तीस गिरासा । आवै नींद न बहुत न श्वासा ॥
ब्रह्मचारी भोजन करै इतना । पठन माहँ बीरज रहै जितना ॥

१०. शौच

दशवां शौच पवित्तर रहिये । कर दातौन हमेश नहइये ॥
जो शरीरमें होवै रोगा । रहै न तन जल छूवन योगा ॥
तौ तन माटीसूं शुधि कीजे । अब अंतरकी शुधि सुनि लीजै ॥
राग द्वेष हिरदयसों टारै । मनसा खोटे कर्म निवारै ॥
दोहा—दश प्रकारका कहा यह, पहिल योगकी नीव ॥
नेम कहूं अब दूसरा, सो है साधन सींव ॥ २५ ॥

२—नियम अङ्गवर्णन

१. इन्द्रिय वश

दूजा अंग नियमका गाऊँ । भिन्न भिन्न सब अंग सुनाऊं ॥
पहला तप इन्द्री वश कीजै । इनके स्वाद सभी तजि दीजै ॥
खाते पीते सोवत जागत । योगी इन्द्रिनकूं वश राखत ॥
तनकूं वश कर मनकूं मारे । ऐसी विधि तपका अँग धारे ॥

२. सन्तोष

दूजा अंग कहूं सन्तोषा । हानी भय नहिं मानै शोका ॥
लाभ भये नाहीं हरषावै । ऐसी समुझ हियेमें लावै ॥
परालब्ध तन होय सो होई । संकलप विकलप रखै न कोई ॥

३. आस्तिकता

दोहा—तीजा आस्तिक अंग है, जाका सुनो विचार ।
समझ समझ मनमें धरो, ताको गहो सँचार ॥ २६ ॥
शास्त्रन सुनि परतीति जो कीजै । सतब्रह्म निश्चय करि लीजै ॥
बुधि निश्चय आतमके माहीं । जगत सांच करि मानै नाहीं ॥

४. दान

चौथा दान अंग विधि होई। पात्र कुपात्र विचारै सोई॥
एक दान उपदेश जु दीजै। भवसागरसों पार करीजै॥
दूजा दान अन्न अरु पांनी। दीजै कीजै बहु सनमानी॥
और पराये दुखकी बूझै। सुखदानी परमारथ सूझै॥

५. ईश्वराराधन

पंचम ईश्वर पूजा करिये। तन मन बुद्धि जहां लौं धरिये॥
ह्वै निष्काम तजै सब आसा। सेवा करै होय निज दासा॥
दोहा-पीती फूल जु भावसों, यह सुगंध करि धूप।
शुकदेव कहैं यों कीजिये, पूजा अधिक अनूप॥२७॥

६. श्रवण

छठै सिद्धांत श्रवण सुनि बानी। करि विचार गहिये मनमानी॥
सार असार विचार जो कीजै। पानीको तजि पयको पीजै॥
अरु सतगुरुसों निश्चय करिये। परखि सँभारि हृदयमें धरिये॥
करणी करै तिन्हौं सो मिलना। वचन अयोगीके नहिं सुनना॥

७. लज्जा

सतवां वही जु कहिये लाजा। सो वह सकल सँवारे काजा॥
साध गुरूसे लाज करीजै। तन मन डोलन नाहीं दीजै॥
करम विपर्यय सब परिहरिये। हिय आँखिनमें लज्जा भरिये॥
शुकदेव कहै सुनु चरणहिदासा। लज्जा भवन माहिं करिवासा॥
दोहा-कुटुँब मित्र जग लोगहीं, सबसूँ कीजै लाज।
बड़ी लाज हरिसूँ करो, नीके सुधरै काज॥२८॥

८. दृढता

अष्टमहू मति दृढ सो कहिये। सो विशेष साधनकूं चहिये॥
शुभ करमनकी इच्छा करनी। हो न सकै तो भी हिय धरनी॥

बहकै ना काहू बहकाये। कैसेहू नहिं हलै हलाये ॥
जग सुख देखि न मनमें आनै।स्वर्ग आदि सुख तुच्छहि जानै॥
कोइ अस्तुति आदर करि सेवै। कोइ कुभाव करि गाली देवै ॥
दोनोंमें निश्चय रह जोई। शुकदेव कहैं दृढ मति है सोई॥

९. जाप

नवम जाप करै गहि मौना। मन जिज्ञासूं कीजे जौना ॥
दोहा—हरि गुरुकी अस्तुति पढै, सोभी कहिये जाप।
शुकदेव कहैं रणजीत सुनु, त्रैविधि नाशै ताप॥२९॥
दशवें समझा होमही, कीजे दोय प्रकार।
अँगन माहिं साकल्यकूं, वेद कहैं क्यों डार॥३०॥
दूजे पावक ज्ञानकी, तामें इन्द्री होम।
वाकूं परगट भूमि है, याकूं हिरदा भौम ॥३१॥
यमका अंग सभी कह दीना। नेम कहा सोभी तुम चीन्हा॥
निरे योगहीके मत जानौ। सबके कारजको पहिंचानौ ॥
आपै योग पहल ये चहिये। शुभकरमनके मारग गहिये॥
जो ये होय तौ होवै योगा। नाहीं बहै जगतके भोगा ॥
जिज्ञासीकूं पहल सुनीजे। पाछे भेद योगको दीजे।
यम अरु नियम दोउ बतलाये। अच्छी नीकी भाँति सुनाये॥
अब तीजे आसन समझाऊं। जुदे जुदे कहि सबै सुनाऊं ॥
योग पहिल आसनही साधै। आसन बिना योग बरबादै॥

३—आसन वर्णन

दोहा—चरणदास निश्चय करौ, बिन आसन नहिं योग।
जो आसन दृढ होय तो, योग सधै भजि रोग॥३२॥
लख चौरासी आसन जानो। योगिनकी बैठक पहिचानो ॥
तिनमें चौरासी चुन लीन्हें। दुरलभ भेद सुगम सो कीन्हें॥

तिनमें दोय अधिक परधानै । तिनकूं सब योगेश्वर जानै ॥
सो तुमकूं पहिले बतलाय । जिनकूं साधोगे चितलाय ॥
आसन सिद्ध पदम कहलावै । इनकूं करि निश्चल ठहरावै ॥
अरु आसन सब रोग भजावैं । ये दो आसन योग सधावैं ॥
इनकूं साधै जो जन कोई । ध्यान समाधि लगावै सोई ॥
चरणदास शुकदेव कहैं यों । आसन दोनों बरणौं हैं ज्यों ॥

पद्मासनविधि

पहिले आसन पदम बताऊँ । ज्योंकी त्यों मूरति दिखलाऊँ ॥
पहिले बायाँ पाँव उठावै । दहिने जंघा ऊपर लावै ॥
दहिना पाँव फेरि यों लाके । बाँवीं साथल ऊपर राखै ॥
बावाँ कर पीछेसों लावै । वाम अँगूठा गहि तन तावै ॥
ऐसे हाथ दाहिना लावै । दहिन अंगूठा पकड़ दृढ़ावै ॥
ग्रीवा लटक चिबुकही आवै । नासा आगे दीठि लगावै ॥
देव दृष्टि हो कौतुक दरशै । कहै शुकदेव अभै पद परशै ॥
दोहा-कै हिरदै राखै चिम्बुक, कै सम राखै देह ।
कै घुठनों दोउ हाथ रखि,कै अँगुठा गहिलेह ॥३३॥

सिद्धासनविधि

दूजा आसन सिद्धजु कीजै । बावाँ पाँव गुदाढिग दीजै ॥
दाहिन पाँव लिंगपर आवै । दृष्टि सु भृकुटीपै ठहरावै ॥
अचरज जहाँ अधिक दरशावै । खुले कपाट मोक्ष गति पावै ॥
आसन साधि व्याधि परिहरै । भूँख नींद जोपै बश करै ॥
दोहा-ऍंडी बावैं पांवकी, सीवन मध्ये राख ।
लिंग गुदाके मध्यमें, मूल गोलिये साख ॥३४॥
संयमसूं इन्द्री गहै, राखै सरल शरीर ।
दृष्टि उठा भृकुटी धरै, मिटै जु दोनों पीर ॥३५॥

दहिने लावै लिंगपर, भाग बराबर राखि ।
बारी बारी कीजिये, शुकदेवा कहै भाखि ॥३६॥

४–प्राणायाम अंग वर्णन

चौथे प्राणायामहीं, कहूँ सुनौ चित लाय ।
जा बल जीतै पवनकूं, चढै गगनकूँ धाय ॥३७॥
षट चक्रकूं छेद करि, सुखमनहींकी राह ।
दल सहस्रके कमलमें, पहुँचै करैं उछाह ॥३८॥
हिरदैमें अस्थान है, प्राण वायुका जान ।
वाके रोके सब रुके, वायुनमें परधान ॥ ३९ ॥
जैसे गंगा एकही, घाट घाटको नाँव ।
ऐसे प्राणहि वायुके, नावँ कहे बहु ठाँव ॥ ४० ॥
चौरासी अस्थान पर, चौरासीही वाय ।
तामें दश ये मुख्य हैं, बरणौं सुनिये ताय ॥४१॥
प्राण अपान समानही, और व्यान उद्यान ।
नाम धनंजय देवदत, कूरम किरकल जान ॥४२॥
दश वायू जो एकही, तिनमें दीरघ होय ।
सो वै प्राण अपान हैं, तिन्हैं पिछाने कोय ॥४३॥
अपान जाय प्राणै मिलै, रहै प्राणके प्रान ।
शुकदेव कहि वर्णन करूं, अब इनके अस्थान॥४४॥

प्राणवायु हिरदैके ठाहीं । बसै अपान गुदाके माहीं ॥
वायु समान नाभि अस्थाना । कंठ माहिं बाई उद्याना ॥
व्यान जु व्यापक है तन सारै। नाक वायुसों उठै डकारै ॥
पलक उघाडे कूरम बाई । देवदत्तसूं होय जँभाई ॥
किरकल वायु जु भूख लगावै । मुखै धनंजय देह फुलावै ॥
सबमें प्राण वायु मुख जानौ । सो हिरदैके मध्य पिछानौ ॥

हिरदाही देहीके माहीं। जो कुछ है सो ह्याहीं ह्याहीं॥
योगेश्वर ह्यांई फल पावै। ह्यासूं अनहद नाद जगावै॥

चक्रवर्णन

दोहा-अब चक्कर वर्णन करूं, पाछे प्राणायाम।
वरणूं नारी सुषमना, सुधरैं सबही काम॥ ४५॥
हैं वै सूरति कमलकी, छोटे और विशाल।
मूसूं लेकर शीशलौं, एकहि जिनकी नाल॥४६॥

कुं०-लालरंग पहिला कहूं, चक्रधार तिहिं नावँ।
च्यारपैंखरी तासुकी, हैं जु गुदाके ठाँव॥
हैं जु गुदाके ठाँव, देह ताही पर साजै।
चारौं अक्षर तहां, देव गन्नेश विराजै॥ १॥
पवन सुरत ह्वालै धरै, खोलि कहै शुकदेव।
दूजा लिंगस्थानही, जाको सुन अब भेव॥
पीतवरण षट पैंखरी, नाम जु स्वाधिष्ठान।
षट अक्षर जापै दिये, ब्रह्मा दैवत जान॥२॥
ब्रह्मा दैवत जान, संग सावित्री दासा।
इन्द्रसहित सब देव, तहां सबहीका वासा॥
मणिपूरक चक्कर कहूँ, तीजा नाभिस्थान।
नीलवरण दश पैंखरी, दश अक्षर परमान॥३॥

दोहा-विष्णु जहाँका देवता, महालच्छिमी संग।
चरणदास अब कहतहूँ, चौथेको परसंग॥❋॥
अनहदचक्र हिरदय विषे, द्वादश दल अरु श्वेत।
शिवशक्ती जहँ देवता, द्वादश अक्षर भेद॥४७॥
पँचवां चक्कर कंठमें, विशुद्ध नाम जिहि केर।
षोडश दल जीव देवता, षोडश अक्षर हेर॥४८॥

छठयों भौंहन बीचमें, आज्ञा चक्कर सोय ।
ज्योति देवता जानिये, दो दल अक्षर दोय ॥४९॥

शिष्य वचन

दोहा-कमलोंपर अक्षर कहे, समझ न आई मोहिं ।
कौन कौन अक्षर तहां, सतगुरु कहिये सोहिं ॥५०॥

गुरु वचन

पहिला कमल अधार सुनाऊं । व श ष स अक्षर वरण बताऊं ॥
दूजा कमल जु स्वाधिष्ठाना । ब भ म य र ल जु ताहि बखाना ॥
तृतिये मणिपूरक जो कहिये । ड ढ ण त थ हीं लहिये ॥
द ध न प फ जो गाये । ये दश अक्षर वरण बताये ॥
चौथे चक्र अनाहद माहीं । द्वादश अक्षर वरण बताहीं ॥
क ख ग घ ङ जो जाना । च छ ज झ ञ ट ठ जु माना ॥
पँचवां षोडश विशुद्ध जो आछे । आदि अकार अकार सु पाछे ॥
छठा जो आज्ञा चक्कर मानो । हंस वरण दो अक्षर जानो ॥

दोहा-भवँर गुफा मंडल अखँड, तिरवेणी जहँ न्हान ।
नित परवी जहँ होत है, करै पापकी हान ॥ ५१ ॥
उलट पवन बध षटनपर, ऊपर पहुँचै जाय ।
शुकदेव कहैं चरणदासजू, सुषमन सहज समाय ॥५२॥
कमल सहसदल सातवां, शीशन मध्यहि वास ।
तहां देवता संतगुरू, पूरी करै जु आस ॥ ५३ ॥
ह्यांतक सुषमनका सिरा, सो सातौंकी नाल ।
हैं वे उलटे षट कमल, तलै अपान बयाल ॥५४॥
अपानवायुकूं साधि करि, ऊपर लावै मोड ।
जब होवैं उलटे कमल, मुख अकाशकी ओड ॥५५॥

अपानवायु ज्यों ज्यों चढ़ै, चक्र चक्रके पास ।
त्यों त्यों सीधे होयँ सब, पूर जान अभ्यास ॥५६॥
अपानवायु आवै जबै, चक्र अनाहद माहिं ।
दश प्रकारके नादही, शनै शनै खुलि जाहिं ॥५७॥

पहिले नाद खुले जो ऐसा । चिडी चीकला बोलै जैसा ॥
एकहि बार कहै यों चिन्ना । दूजीबार खुलै चिन चिन्ना ॥
क्षुद्रघंट ज्यों तीजी जानौ । चौथी नाद शंख पहिचानौ ॥
पँचवीं नाद बीन ज्यों गाजे । छठवीं उपजे ताल ज्यों बाजे ॥
सतवीं नाद मुरलिया ऐसी । अठवीं उठै पखावज जैसी ॥
नवैं नफीरी नाद सुनावै । दशवें सींव गर्ज उपजावै ।
नौ तजि दशवेंसूं हित लावैं । अनहद सुनि अनहद हो जावैं ॥
होय जीवसों ब्रह्म अगाधा । जो कोइ सुनै सो अनहद नादा ॥

दोहा-खुलै जो अनहद नाद ज्यों, सो साधन सुनि लेहु ।
जासों पहुँचे सिद्धिको, या करणी चित देहु ॥५८॥
अधारचक्रसूं खैंचकरि, अपान वायु सजलेइ ।
स्वाधिष्ठानके पासही, तीन लपेटै देइ ॥ ५९ ॥

याकी विधि सब तोहिं बताऊं । जैसे है तैसे समझाऊं ॥
पहिले मूल द्वारको शोधै । बंध लगाय अपान निरोधै ॥
पहिले चक्करमें ठहरावै । खैंचि दूसरेके ढिग लावै ॥
वाके आसौ पास फिरावै । दहिने तीनि लपेट लगावै ॥
फिरि मणिपूरकमें पहुँचावै । फेरि अनाहदमें लैजावै ॥
अनहद खुलै सुनै सुख पावै । फिरि ह्वां प्राण अपान मिलावै ॥
हिरदय कंठ मध्य ठहरावै । संयमसों ताको परचावै ॥
बंध दूसरो तहां लगावै । चरणदास शुकदेव बतावै ॥

अष्टपदी

पहिले अनहदनाद खुलै हिय ऊपरै। कंठसु नीचै रोंकि ध्यान ह्वांई धरै ॥ जहां अपरबल होय जु अनहद शब्दही। फिरि यों जानो जाय कण्ठके मध्यही। तहां किये अभ्यास ध्यान राखैं घना। होवैं अधिकी नाद सुनै साधूजना ॥ केतकद्योसनमाहिं ब्रह्मरन्धर कनै। जाय खुलै जहँ नाद सुरति दै ह्वां सुनै ॥ शनै शनै यों होय जान कोई साधही। हिरदयते अरु ब्रह्मलोकलों एक नादही ॥ मीठी और सवाद बहुतही पाइये। सतगुरुके परताप जहां मन लाईये ॥ ब्रह्मलोककी बात सुनै होवै जुह्वां। सबही सूझै वस्तु जो कछु होवैं तहां ॥

दोहा—अनहदके सम और ना, फल वरणे नहिं जाहिं।
पटतर कछू न दे सकूं, सब कछु है वा माहिं ॥६०॥
पांच थकै आनँद बढै, अरु मनुआ वश होय।
शुकदेव कहि चरणदास सुनि, आप अपनपा खोय।६१।
नाडिनमें सुषुमन बड़ी, सो अनहदकी मात।
कुम्भकमें केवल बड़ा, सो वाहीका तात ॥ ६२ ॥
मुद्रा बडी जु खेचरी, वाकी बहिनी जान।
अनहदसा बाजा नहीं, और न या सम ध्यान ॥६३॥
सेवकसे स्वामी भये, सुनै जु अनहद नाद।
जीव ब्रह्म ह्वै जात है, पावै अपनी आद ॥ ६४ ॥
चरणदास अब कहत हूं, वही जु प्राणायाम।
शुकदेव कहैं ताके किये, पावैं मन विश्राम ॥ ६५ ॥

बहत्तरहजार आठसोंचौंसठ नारी। सबकी जड हैं नाभिमें झारी॥ तिनमहँ दश नाडी शिरमोरी। पँच बायें पँच दहनी ओरी ॥ जिनमें तीन अधिक परधाना। इडा पिंगला सुषुमन जाना ॥

उनमें सुषुम्ना अधिक अनूपा। सो वह कहिये अग्निस्वरूपा॥
दश नाडी अस्थान बताऊं। ठौर ठौर तेहि कहि समझाऊं॥

दोहा-नाडि शंखिनी गुदामें, किरकल लिंगस्थान।
पूषा सखन दाहिने, जसनी बायें कान॥ ६६॥
गंधारी दृग वामही, हस्थिनि दहिने नैन।
नारि लंबका जीभमें, सब सवाद सुख दैन॥६७॥
नासा दहिने अंग है, पिंगल सूरज बास।
इडा सुबायें और है, जहँ शशिकर परकास॥६८॥
दोऊके मधि सुषमना, अद्भुत वाको भेव।
ब्रह्म नाडिहू कहत हैं, यों कह सो शुकदेव॥६९॥
इडा ब्रह्म जमना जहां, सुषमन विष्णु निवास।
और सरस्वति जानिये, येहो चरणहिं दास॥७०॥
शिव पिंगल गंगासहित, सो वह दहिने अंग।
तिरवेणी याते भई, मिली जु तीनौं संग॥७१॥
कबहुँ इडा सर जलत है, कबहूँ पिंगल माहिं।
मध्य सुषुमना बहत है, गुरु बिन जानै नाहिं॥७२॥
सो वह अग्निस्वरूप हैं, बड़ी योग सरदार।
याहीते कारज सरै, ऐसी सुषुमन नार॥७३॥

इनसों प्राणायाम करीजै। पूरक कुंभक रेचक हीजै॥
इडा पिंगला मारग थाकै। उलटि सुषुमना चालन लागै॥
बायें खैंचन पूरक जानौ। ठहराबनको कुम्भक मानौ॥
फेरि उतारे रेचक वोई। प्राणायाम कहावै सोई॥

दोहा-इडा पवन पूरक करै, कुम्भक राखै रोक।
रेचक पिंगलसों करै, मिटैं पापके थोक॥ ७४॥

पिंगल रोकै पवन न जावै । इडा और सो वायु चलावै ॥
कुम्भक करि हिय चिबुक लगावै। जितका तित मनको ठहरावै ॥
सोलह मात्रा पूरक लीजै । चौंसठि कुम्भकमें जप कीजै॥
रेचक फिरि बत्तीस उतारै । धीरे धीरे ताहि निवारै ॥
पहिल पहिलही कीजे आधे । तीनि महीने ऐसे साधे ॥
यासे आगे फेरि बढावै । दोय आठ अरु चारि चढावै॥
बढत बढत ऐसे ही बढै । योहीं चौंसठि ताहीं चढै ॥
इडा बायसों पूरक कीजे । पिंगलसों रेचक तजि दीजै ॥
फिरि पिंगलसों पूरक धारै । बहुरि इडाहीसों निरवारै ॥
ऐसे बारी बारी करिये । तीजे प्राण वायु अघ हरिये॥
होयसकै कुम्भक सरकावै । चौसठिमें भी परै बढावै ॥

शिष्यवचन

दोहा-चरणदास कहै कर जोरिकै, सुनौ गुरू शुकदेव ।
कौन समै याको करै, राति दिना कहि देव ॥७५॥
मात्रा कासों कहत हैं, जो बतलायो जाप ।
कैतो करे अहारही, जाको कहिये नाप ॥७६॥

गुरु वचन

दोहा-ॐबिन्दीके सहितही, ताही मात्रा जान ।
बीजमन्त्र तासों कहत, प्रणवकूं हुँ पहिचान॥७७॥
कोमल भोजन कीजिये, आधी रखिये भूख ।
पवन बसै सुखसों जहां, तन नहिं आवै दूख॥७८॥
साठि घरी दिनरातिकी, आठ तासुके याम ।
लीजै चौथा भागही, कीजै प्राणायाम ॥७९॥
चार भाग ताके करै, चार समै ठहराय ।
चार चार घटिका करै, दृढव्रत चित्त लगाय॥८०॥

और दूसरी भांति सुनीजै। होय न सकै तौ याको कीजै॥
बारहलौं ॐपवन चढावै। कुम्भक माहिं बीस ठहरावै॥
बारह पिंगल पवन उतारै। राति दिनामें चारहि बारै॥
फेर बढावै कुम्भक दुगुनी। केते द्यौसनमें मिर तिगुनी॥
फेर पिङ्गलसों पूरक लीजै। इडा वायु रेचकही कीजै॥
बेरिया एक इडासों खैंचे। पिंगला दूजी वार जु ऐंचे॥
कबहूँ मासूं कबहूं वासू। रेचक करै सुपूरक जासू॥
कुम्भक तिगुनी सो अधिकावै। होयसकै जितनी सरकावै॥

दोहा-भाँति दूसरी और सुनु, साधन अधिक अनूप॥
गुरु बिन भेद न पाइये, महा गूपसूं गूप॥८१॥

अष्टपदी

प्राणवायुकी युक्ति कहौं जेहि बात है। द्वादश अंगुल नासिका आगे जात है॥ संयमहीसों सहज जु उलट घटाइये। शनै शनै ही साध जु ताहि समाइये॥ आपन वायुको खैंचि प्राणघर लाइये। फिरि बाहरसों रोकि जु तिन्हें मिलाइये॥ तीनि कर्मपूरकके कुंभकके कहे। रेचकहींके कर्म दोय निश्चय भये॥ दो रेचकके कर्मपूरकके तीनहीं। ये सबही रहिजायँ होय जब छीनहीं॥ पूरक रेचक छुटे केवल कुंभक यही। ठौर समैका बंधन राखै नाशही॥ याकिरियाको अन्त जानो तुम हां तहीं॥ प्राणवायुको रोंक कायाके महीं॥

दोहा-साठ हजार इकीस लख, सबके श्वास प्रमान।
यह तौ रोंके देहमें, जबलग एकहि प्रान॥८२॥
याके हूये सौ दिना, साधन हुवै जु सिद्धि।
केवल कुम्भक जानिये, पूरी हुवै जु विद्धि॥८३॥

अष्टपदी

इतनी होवै शक्ति रुकन जब श्वासकी। रहै नहीं परमाण जु गिनती मासकी॥ द्वादश कैसो वरष सहस कै लाखहीं॥

चाहै जबलग रखैं सांच यह साखही॥ गुप्तमहा यह जान कठिन है साधना। कोटिनमें कोई एक करै आराधना॥ देखा देखी बहुत मनुष याकूं लगैं। कोई चढै परमान घने मगमेंथकैं॥ चरणदास यह समुझि कहैं शुकदेवही। शनै शनैसों करै पाय या भेवही

दोहा–मूल बंध अरु खेचरी, मुद्राहीको जान।
दोनोंके साधे बिना, अपान न होवै प्रान ॥८४॥

खेचरि मुद्रा कहूँ बखानै। जाको कोटिनमें कोइ जानै॥
सकलशिरोमणि योग मँझारी। ज्यों मन खोवै छत्तर धारी॥
शीशफूल ज्यों गहनो माहीं। या विन ताडी लागै नाहीं॥
साधन कर कर जीभ बढावै। सो ब्रह्मरंधर ताईं लावै॥
उरै ताल वा ठौर कहावै। रसनासूं ह्वां बंध लगावै॥
जासूँ पवन न सरकन पावै। श्रवण नैन जू बाट रुकावै॥
प्राणवायु बाहर नहिं आवै। मुखनासा होइ निकसि न जावै॥
शुकदेव कह चरणदास बताऊं। आगे मूलबंध समुझाऊं॥

दोहा–मूल बन्ध जानौ यही, एँडी गुदा लगाव।
थक दहनी बावीं कभी, सिद्धासन ठहराव ॥८५॥

मूलबन्ध जा कारण दीजे। सो मैं कहूँ सबै सुनि लीजे॥
आधार चक्रसूं पवन उठावै। स्वाधिष्ठानहिंके ढिग लावै॥
दहिने ओरकूं ताहि फिरावै। ऐसे निन लपेट लगावै॥
सीधा हो ऊपरकूं धावै। मणिपूरक चक्करमें आवै॥
शनई शनई ताहि चढावै। चक्कर चक्करमें पहुँचावै॥
भवचक्करके ऊपर ताईं। ब्रह्मरंध्रके लावै ठाईं॥
ऐसे षट चक्करकूं सोधै। प्राण वायुको यों परमोधै॥
अपान वायु सुन ह्वांतक आवे। प्राण वायु ह्वै सहज समावै॥
शुकदेव कह सुन चरणहिंदासा। सहज शून्यमें करै निवासा॥

अष्ट प्रकारके कुम्भकवर्णन

शिष्य वचन

दोहा–प्राणायाम कि विधि सबै, गुरु तुम दई सुनाय ।
सो लैकरि हिरदै धरी, ताहि न देउँ भुलाय ॥८६॥
चरणदासके शीशपर, तुमहीं गुरु शुकदेव ।
कुम्भक अष्ट प्रकारके, तिनको कहिये भेव ॥८७॥
लक्षण नाम स्वभाव गुण, जुदे जुदे समुझाय ।
चरणदासके मन विषे, सुनबेको अतिचाय ॥८८॥

गुरु वचन

दोहा–अब आठौं कुम्भक कहूं, नाम भेद गुण रूप ।
शुकदेव कहैं परसिद्ध हैं, योगहि माहिं अनूप॥८९॥
प्रथमैं कुम्भकहीं कहूँ, नाव जु सूरज भेद ।
दूजे ऊजाई सुनो, साधे छूटैं खेद ॥ ९० ॥
शीतकार अरु शीतली, पँचवीं भस्त्रिक जान ।
छठीं जु भ्रमरी नाम है, नीके समझि पिछान॥९१॥
नाम मूरछा सातवीं, आठवीं केवल होय ।
रणजीता सबसे बडी, आयु बढावै सोय ॥ ९२ ॥

पवन पूर पूरकही कीजे । पाछे बन्ध जलन्धर दीजे ॥
कुम्भक रेचकके मधि जानो । ह्यांई बन्ध उड्यान पिछानो॥
पवन जोरहीसूं गहि लीजै । अर्ध ऊर्ध्व संकोच न कीजे ॥
मध्यम कीजे पश्चिम तानै । ब्रह्म नारिके माहिं समानै ॥
नाडी पवन खैंचिये ऐसे । भरिये सब संधान जु जैसे॥
अपान वायुकूं ऊपर लावै । प्राण वायु नीचे लै जावै ॥
जोपै यह साधन बनि आवै । योगी बूढा होन न पावै ॥
तरुण अवस्था दीखै ऐसी । नितही रहै जानिये जैसी ॥

अथ सूर्यभेदन १

कुं०-कुम्भक सूरज भेदही, पहिले देहुँ सुनाय।
सुख आसनके कीजिये, अथवा बज्र लगाय॥
अथवा बज्र लगाय, पूरक दहिने स्वर कीजै।
नख शिख सेती रोंकि बायुकूं बन्धन कीजै॥
बायें सेती रेचिये, हौरे हौरे जान।
कपाल शोधनी जानिये, चरणदास पहिचान॥३॥

दोहा-वायु किरम पीडा हरै, कीजै वारंवार,।
कुम्भक सूरज भेदनी, शुकदेव कह हिय धार॥९३॥

ऊजाई २

अब ऊजाई कुम्भक सुनिये। समझ सीख मनमाहीं गुनिये॥
दोउ सुर समकरि पवन चढावे। पेट कण्ठलौं ताहिं भरावे॥
ताको रोंकै दृढ करि राखे। सहज इडासों रेचक नाखे॥
ऐसे जो कोइ साधन करै। रोग सलेषमके सब हरै॥
हिरदय कण्ठ माहिं जो होई। कफका रोग रहै नहिं कोई॥
रोग जलन्धरहीका भागै। भजै वायु दुख पावक जागै॥
बैठत चलत पवनको भरै। यही उजाई कुम्भक करै॥
चरणदास शुकदेव बतावै। तीजी शीतकार समुझावै॥

शीतकार ३

दोहा-ओड जँभाई नासिका, लीजै खिचै जु पौन।
ताहि कछू ठहरायकै, छोडे मुखसों जौन॥९४॥
धीरे धीरे रेचिये, सीसी शब्द उचार।
सुन्दर होवै तेजवत, अधिक रूपको धार॥९५॥
भूख प्यास व्यापै नहीं, आलस नींद न होय।
तन चेतनही होत है, रहै उपाधि न कोय॥९६॥

यहि विधि साधतही रहै, होय योगिनमें भूप ॥
शुकदेव कहे चरणदास सुनि, कुम्भक यही अनूप।९७।

शीतल ४

कहूं शीतली कुम्भक आगे । जो कोइ करै भाग तिहिं जागे॥
तालु मूल जिह्वा बलसेती। प्राणवायु पीवै कर हेती ॥
कुम्भक राखै सबतन माहीं । ढिला गात रमावै ह्वाहीं ॥
नासा सेती रेचक कीजे । एक मास सिधि हो सुख लीजे॥
पीवै पवन जीभको मोड । सहजै छोडै नासा ओड ॥
दोनों रंधरंसे तजी दीजै । यों अभ्यास पूर करी लीजे॥
ताप तिली गोला जु रहोई । वाके तनमें रहै न कोई ॥
देह पुरानी नूतन होय । तीनि वरष साधै जो कोय ॥
जैसे साँप कांचुली भोहिं । श्वेत बाल तजि काले होहिं ॥
काहु भाँतिका दुख नहिं व्यापै । भूख प्यास पित भाजै आपै॥

भस्त्रिका ५

दोहा-अब कहुँ कुम्भक भस्त्रिका, पित कफ वायु नशायँ।
अगिनि बढै अभ्याससों, तीनिगाठि खुलि जायँ॥९८॥

आसन पद्म सु या विधि करै । वामजंघ दहिनो पग धरै ॥
बाँवो पग दहनीपर लावै ।जाँघनका दोउ हाथ मिलावै॥
ग्रीवा पेट बराबर राखै । आगे सुनु शुकदेवा भाखै ॥
मुख मूँदै रेचक नासासूं । पूरक चपल करै श्वासासूं ॥
रेचक पूरक ऐसे कीजै । बारम्बार तजै अरु लीजै ॥
जैसे खाल लोहार जु भरै । रेचक पूरक आतुर करै ॥
करत करत जबहीं थकि जावै । नेक ठहरि दूजी विधि लावै॥
फिरि पूरक सूरजसों करै । पवन उदरके माहीं भरै ॥
तर्जनि अंगुलीसों दृढ रोकै ।नासा मध्य धारि करि जोखै॥

दोहा–कुंभक पिछली भांति करि, रेच इडासों बाय ।
कफ पित वायु नशायके, लेवै अग्नि बढाय॥९९॥
कुण्डलिनी देवै जगाय, यह कुम्भक सुखदाय ।
करजु हित व्रत धारिकै, चरणदास चित लाय॥१००॥
कुण्डलिनी सरकायकै, वेधै तीनों गाँठ ।
ऐसी पँचवीं भस्त्रिका, रहै न कोई आँठ ॥१०१॥

ब्रह्म नाडिकाके छिद्रमाहीं । रोंकि रही सुखदे रहि ह्वाहीं॥
लाय लपेटै नाभी ठाहीं । दृढ है बैठी सरकै नाहीं ॥
सवा विलस्तकि जाकी देही । तामें अस्थित जीव सनेही॥
शक्ति नागिनी यही जु कहिये । याका भेद गुरूसों लहिये ॥
महा अपरबल जागै नाहीं । ताते नर सब मरि मरि जाहीं॥
कोइ इक योगी ताहि डुलावै । सुषमन वाट गगन लै जावै॥
ब्रह्मरंधरमें जाय समावै । लगै समाधि बहुत सुख पावै॥
जो कछु होय सो कहा न जावै। चरणदास शुकदेव सुनावै ॥

दोहा–शिव शक्तीमें लाभ है, रहै न दूजो भाव ।
कुण्डलिनी परबोधका, जो कोई करै उपाव ॥१०२॥

शिष्य वचन

दोहा–व्यासपुत्र शुकदेवजी, किरपा करी दयाल ।
चरणदास आधीनही, समझो भयो निहाल ॥१०३॥
एक वार फिरि खोलिकै, कुण्डलिनी समुझाव ।
याके सबही भेदको, सुनबेको अति चाव ॥१०४॥

गुरु वचन

दोहा–फिरभी तोसों कहत हौं, कुण्डलिनी विस्तार ।
ताके सगरे भेदही, सुनिकै हियमें धार ॥१०५॥

नाभिस्थान नागिन रहै, कुण्डल शशी अकार ।
प्राण पियारा वही है, आगे सुनो बिचार ॥१०६॥
कुंभक कर्म कोई करै, देवै शक्ति जगाय ।
जैसे लागी लष्टिका, नागन शीश उठाय ॥१०७॥
सीख गुरूसों कुंभक साधै । नीकी बिधि ताकी अवराधै ॥
पवन ठवन लग ताहि जगावै । तब ऊरधको शीश उठावै ॥
नाभि ठौर ताका है वासा । पद्मराग मणि ज्यों परकासा॥
आठ लपेटे, बाई जानौ । ताते शक्ति कुंडली मानौ ॥
नाडी सहस लगी हैं वाको । ऐपर छुटी जानिये ताको ॥
जिनमें तीर नारि अधिकाई । इडा पिंगला सुषमन गाई ॥
तिनके माहिं शिरोमणि सुषमन। नालकमल जानत योगीजन॥
जा पहुँची ब्रह्मरंधर ताहीं । ऊरध कमल सातवें माहीं ॥
आवन जानि पवनकी बाटा । सकत चढन ऊरधका घाटा॥
कह शुकदेव चरणही दासा । आगे कहूं जु हो परकाशा ॥
दोहा–नागिन सूक्षम जानिये, बाल सहस वा भाग ।
शुकदेव कहैं आकारही,रक्त वरण ज्यों नाग ॥१०८॥
कुंभक हो अत्यन्त जब, तब ऊरधको जाय ।
ब्रह्मरंध्रमें आय करि, घडी दोय ठहराय ॥१०९॥
ई व्रतका करि पानहा, पूरण हो अभ्यास ।
उड़ते देखै सिद्ध तब, वाके माहिं अकास ॥११०॥
पै देखत है नैन विनाहीं । चहै करै लीला उन माहीं ॥
खेचर मिलि खेचर ह्वै जावै । यह भी शक्ति उड़नकी पावै ॥
अधिकी ठहरै लगै समाधी । यह तो कहिये खेल अगाधी ॥
शिव शक्ती जहँ मेला होई । होय लीन मन उनमन सोई ॥
योग युक्ति करि याको पावै । परासक्त अपने वश लावै ॥

चाहै अर्द्ध ठौर लै आवै । जब चाहै ऊरध लैजावै ॥
कबहूँ हिरदयके मधि आनै । याहीको आपनपो जानै ॥
इच्छा करै सिद्धिकी जैसी । होय प्राप्तसो बेगिहि तैसी ॥
चहै अस्थूल सूक्ष्म तन धारहूँ । वैसाही होय जाय सवारहूँ ॥
कह शुकदेव सुन चरणहि दासै । जो कुंडलिनी हृदय प्रकासै ॥

दोहा–कुण्डलिनी परकाशही, भौंरा एक अनूप ।
सोउ प्रकाशत है तहां, सुवरणकासा रूप ॥ १११ ॥
हिरदयमें उजियार हो, होत चपल यहि भाँति ।
जैसे धूमर मेघमें, बिजलीही दमकाति ॥११२॥

शुकदेव कहे चरणदास बताऊँ । और अनूठी सिद्धि सुनाऊँ ॥
चाहै पर देहीमें वरहूं । अपनी कायाको परिहरहूं ॥
रेचक प्राणायाम प्रतापै । कुण्डलिनी जो अपनी आपै ॥
रेचक किये बाहरे आवै । परकायामें जाय समावै ॥
अस्थित होय जाय यों जानो । सदा विराजत ऐसे मानो ॥
ऐसे पहिली देह गिरावै । ज्यों मणिको डोरा तजि जावै ॥
जब चाहै अपने घट माहीं । परासक्तही आवै त्वाहीं ॥
काया पलट कहत हैं याको । कोइक योगी जानत ताको ॥

दोहा–चाहै तनको छोड करि, देह कलप धरि और ।
मन मानै जहँ गमन करि, फिरि आवै अपठौर ११३॥

भ्रामरीकुंभक ६

दोहा–छठी जु कुम्भक भ्रामरी, सुनिये चरणहिंदास ।
शुकदेवा हौं कहतहूं, तामें करो विलास ॥ ११४ ॥
जैसे भृंगी धुनि करै, यों उपजै हिय माहिं ।
दोनों स्वरसों कीजिये, परकट सुनिये नाहिं॥ ११५॥

बलसेती पूरक करै, यही शब्द ले साथ ।
भृंगीकीसी धुनि सहत, रेचै मन्द सुहात ॥११६॥
या अभ्यासके कियेसे, चित चंचल रहै नाहिं ।
योगीश्वर लीला करै, चिदानन्दके माहिं ॥ ११७॥

मूर्च्छा ७

दोहा-सतवीं कुंभक मूरछा, पूरक ऐसे होय ।
खैंचत होवै सोरसा, मेघधार ज्यों होय ॥ ११८॥
बन्धै जलंधर दीजिये, सहज कण्ठ तल जान ।
रेचत वाई मूरछित, होय यही पहिचान ॥ ११९ ॥
सुखदाई सुखकी करन, कही जोइ शुकदेव ।
केवल कुंभक आठवीं, गुरुसों पावै भेव ॥ १२० ॥
पूरक रेचकही सहित, ये कुम्भक करि लेहि ।
केवल कुम्भक ना सधै, जबलगह्यां चित देहि॥१२१॥
केवल कुम्भक आश धरि, येहू साधत लोग ।
बल पावै बस पवन हो, और भजैं तन रोग ॥१२२॥

केवल कुम्भक ८

दोहा-आयु बढावै सिद्धि दे, लागै और समाधि ।
केवल कुम्भक गुण भरी, बिन परमाण अगाधि१२३
केवल कुम्भक जब सधै, तब ये सब रहि जाहिं ।
जैसे सूरज उदयते, तारे सब लुकि जाहिं ॥ १२४॥
केवल कुम्भक योगमें, ज्यों नगरीमें भूप ।
रेचक पूरकके बिना, जैसे बँधा जु कूप ॥ १२५ ॥
सो तुमसों पहिले कही, विधिगति सब समुझाय ।
सो तुम सुनि हिरदय धरी, देहौ ना बिसराय॥१२६॥

प्राणायाम बडा तप सोई । प्राणायामसों बल नहिं कोई ॥
प्राणवायुको यह वश लावै । मनको निश्चल करि ठहरावै ॥
आयुर्दाको यही बढावै । तनमें रोग रहन नहिं पावै ॥
पाप जलावै निर्मल करै । उपजै ज्ञान तिमिर सब हरै ॥
योग युक्तिकी जड यह जानो । याहि टेक गहि करना ठानो ॥
अडिग आसनसो याको कीजै । नवो द्वार पट नीके दीजै ॥
पाँचों इन्द्रीके रस पेलौ । इडा पिंगला सुषमन खेलौ ॥
कह शुकदेव चरणहीं दासा । प्रत्याहार सुनु विषै निरासा ॥

५-प्रत्याहार अंग वर्णन

दोहा-प्रत्याहार जो पाँचवाँ, समझाऊं चरणदास ।
शुकदेव कहे कहु खोल करि, नीके समझौ तास १२७

प्रत्याहार पांचवाँ कहिये । सो योगीको निश्चय चहिये ॥
विषय ओर इन्द्री जो जावै । अपने स्वादनको ललचावै ॥
तिनकी ओर न जाने देई । प्रत्याहार कहावै एई ॥
रोंकि रोंकि इन्द्रिनको लावै । ध्यान आतमा माहिं लगावै ॥
जैसे कछुआ अंग समेटै । रंक ज्यों शीतकालमें लेटै ॥
जैसे माता पूत खिलावै । बालक वस्तुनको ललचावै ॥
सरप आग अरु शस्तर कोई । कछू और दुखदाई होई ॥
तिनको बालक नाहीं जानै । पकड़नको दौड़ मन आनै ॥

दोहा-बालक जानत है नहीं, दुखदाई सब एह ।
जो पकरूंगा हाथसे, दुख पावैगी देह ॥१२८॥
माता जानत है सबै, खोटी खरी विकार ।
राखै तुमको खैंचि करि, बारम्बार निहार ॥१२९॥
ऐसेहीं बुधि ज्ञानसों, पाँचौं इन्द्री रोग ।
विषय ओरसों फेरिये, लहै न अपना भोग ॥१३०॥

ज्यों ज्यों इनको भोग दै, परबल होती जाहिं ।
बिना भोग होनी नहीं, वह बल रहै जु नाहिं ॥१३१॥
नैन जु भोगैं रूपको, और गन्धको घ्राण ।
षटरस भोगै जीभही, शब्दहि भोगै कान ॥१३२॥
स्पर्श भोग है त्वचाको, बाढै अधिक विकार ।
पांचो इन्द्री जानिले, इनका यही अहार ॥१३३॥
इनसे मिलि मन बिगडे, होयगया कछु और ।
इन्द्री रोकै मन रुकै, रहै जु अपनी ठौर ॥१३४॥
ज्यों ज्यों होवै प्राणवश,त्यों त्यों मनवश होय ।
ज्यों ज्यों इन्द्री थिर रहे, विषय जायँ सब खोय॥१३५
ताते प्राणायाम करि, प्राणायामहि सार ।
पहिले प्राणायाम कर, पीछे प्रत्याहार ॥१३६॥

६-धारणा अंग वर्णन

दोहा-तत्त्वनकी कहुँ धारणा, तिनमें करै प्रवेश ।
शनई शनई साधिकरि, पहुँचै निरभय देश ॥१३७॥
पहिले भूमि धारणा कीजै । ठौर काल जीमें चित दीजै ॥
पीतवरण चौकोर अकारो । विधि दैवत है तहाँ विचारो॥
प्राण लीनकरि पांच घडीहीं । चित अस्थिर होवेगा जबहीं॥
यासों पृथिवीको वश करिये । यही धारणा जो नित धरिये ॥
हिरदयसे ऊपर जल जानो । कण्ठतई ताको पहिचानो ॥
चन्दफांक अरु श्वेत अकारो । हृषीकेश तहँ देव निहारो ॥
ह्यां हूं पांच घरी अस्थापै । प्राणलीन करि चित दै आपै ॥
व्यापै ना विष काहू विधिको ।शुकदेव कहैं फलजलके सिधिको
दोहा-कण्ठसे ऊपर तालुका, लो पावक अस्थान ।
लाल रंग तिरकोन है, रुद्र देवता मान ॥ १३८ ॥

तहाँ लीन करि प्राणको, पाँच घडी परमान ।
भय व्यापै नहिं जालको, अग्नि धारणा जान ॥१३९॥
जाके आगे आयु है, भ्रुकुटीलों मर्य्याद ।
मेघ वर्ण षट कोण है, ईश्वर दैवत साध ॥१४०॥
प्राण लीन जहँ कीजिये, पांच घडी रे तात ।
पै है खेचर सिद्धि ही, तत् पदही है जात ॥१४१॥
ब्रह्मरंध्र आकाश है, बडा जु तत्त्वन माहिं ।
श्याम वरण ब्रह्म देवता, योगी जहाँ सिराहिं ॥१४२॥
प्राणलीन घटि पांच करि, पावै मुक्ति अनूप ।
व्योम तत्त्वकी धारणा, जहाँ छाहँ नहिं धूप ॥१४३॥
पृथिवी संग लकारही, जलके संग बकार ।
पावक संग रकार है, मारुत संग मकार ॥ १४४ ॥
पंच तत्त्व आकाशहि, सबके ऊपर जान ।
अक्षर जहाँ हकारकी, शुकदेव करै बखान ॥१४५॥
पहिलि धारणा, थंभनी, दूजी द्रावण होय ।
तीजी दहिनी जानिये, चौथि भ्रामिनी सोय ॥१४६॥
पँचवीं नाम जु शंखिनी, इनको लेवो जान ।
शुकदेवा अब कहत है, आगे और विधान ॥१४७॥
प्रथम धारणा गुरुकी लीजै । अपना रूप उन्हींसा कीजै ॥
ऐसे ध्यान सभी सुधि पावै । जैसी धारे सो हो जावै ॥
वेगहि सब साधन सधि आवै । आलस कायरता भजि जावै ॥
लोक प्रलोक सभी सुख लेवै । जो गुरुको ऐसी व्रत सेवै ॥
दूजे परमातमकी धारण । मुक्ति देन अरु बंध निवारण ॥
धारनसों चित घना लगावै । सिमिट सभी ओरनसों आवै ॥
जो कछु होय सो आगेहि आगे । टेक पकरि मारगसे लागे ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । सती शूरमा ज्यों मन लावै ॥

दोहा-प्राण वायुकी धारणा, परमेश्वर पहिंचान ।
परमातम ह्वै जात है, जो पै रोपे प्रान ॥ १४८ ॥
बारह मात्रासों चढ़ै, ह्वां तक पहुँचे जाय ।
बारहवे अरु छानवें, कुंभकमें ठहराय ॥ १४९ ॥
यही धारणा अंग है, शनै शनै कर ध्याव ।
यातें दुगुनी ध्यानमें प्राण वायु पहुँचाव ॥ १५० ॥
दूजा जानि समाधि लों, ध्यानहिं सेती एहु ।
पाँच हजार ओ एकसौ, चौरासी गिन लेहु ॥१५१॥

७-ध्यान अंग वर्णन

शिष्य वचन

दोहा-अंग धारणाको कहा, सो धारा चित माहिं ।
ध्यान अंग वर्णन करौं मैं रहुँ चरणन छाहिं ॥१५२॥

गुरु वचन

दोहा-चरणदास अब ध्यान सुनु, कहूं तोहिं समुझाय ।
शुकदेव कहे सुनि सुनि समुझि, करौ तोहिं चितलाय ॥
ध्यान जु चारि प्रकारके, कहू उनकी रीत ।
पदस्थ पिंड रूपस्थ है, चौथा रूपातीत ॥१५४॥

पदस्थ ध्यान १

दोहा-हिय पदपंकज ध्यान करि, फिरि करि सारी देह ॥
नखशिखलौं छवि निरखिकै चरणनमें चितदेह १५५॥
कै कुंभकही कीजिये, हुआ प्रणवका जाप ।
मन निश्चल हो सहजमें, भाजैं त्रैविधि ताप ॥१५६॥
पदस्थ ध्यान याको कहैं, करै सो जाने भेव ।
पिंडस्थ ध्यान वर्णन करैं, खोलि खोलि शुकदेव १५७॥

पिंडस्थ ध्यान २

दोहा—ब्रह्मण्ड सोई यह पिंड है, यामें करि करि वास ।
कमलनके लखि देवता, लहै परापत तास ॥१५८॥
सोधै सगरे पिंडको, षटचक्रहुको ध्यान ।
शोधत शोधत आ चढै, भवँर गुफा अस्थान ॥१५९॥
तिरवेणी संगम बहै, ज्योति जहां दरशाय ।
सात जन्म सुधि होय जब, ध्यान करै मनलाय ॥१६०॥
आगे कमल हजार दल, सद्गुरु ध्यान प्रधान ।
अमृत सिन्धू बहि चलै, हंस करै जहँ न्हान ॥१६१॥
ऊपर तेजहिं पुंज है, कोटि भानु परकाश ।
शून्य शिखर ता ऊपरै, योगी करै विलास ॥१६२॥

रूपस्थ ध्यान ३

दोहा—रूपस्थ ध्यानको भेद सुनि, कीजै मन ठहराय ।
देखै त्रिकुटी मध्य है, निश्चल दृष्टि लगाय ॥१६३॥
ध्यान किये पहिले जहां, अगन फूल दृष्टाय ।
केते द्योसल माहिंहीं, दीप ज्योति प्रगटाय ॥१६४॥
शनै शनै आगे जहां, दीपमाल दरशाय ।
फिरि तारोंकी मालसी, दामिनि बहु दमकाय ॥१६५॥
बहुत चन्द्र सूरज घने, देखे कोटि अनन्त ।
अणज्यों करि सूभर भरे, ध्यान माहिं दरशन्त ॥१६६॥
झिल मिल झिल मिल तेजमय, भासै सब संसार ।
तन मन उपजै सुखघना, आनन्द अधिक अपार १६७
जल अथाहमें डूबि ज्यों, देखे दृष्टि उघार ।
जो देखे तौ नीरही, दश दिशि अपरम्पार ॥१६८॥
यह तो ध्यान प्रत्यक्ष है, गुरू कृपासों होय ।
कह शुकदेव चर्णदासकर, तन मन आलस खोय ।१६९।

रूपातीत ध्यान ४

रूपातीत शून्य ध्यानहिं जानो । शून्यहिको परब्रह्म पिछानो ॥
त्रिकुटी परै शून्य अस्थान । सो वह कहिये पद निर्वान ॥
चिदानन्द ताका हिय आनो । वाहीमें मनहीको सानो ॥
आठ पहर जहँ चित्त लगावो । याके कीन्हेसों लय पावो ॥
ज्यों आकाशमें पक्षी धावै । धावत धावत दृष्टि न आवै ॥
बहुरि अचानक दीखै आई । वह ध्यानी ऐसा है जाई ॥
परम शून्यका अधिकी ध्याना । सब ध्याननमें है परधाना ॥
सो योगी यह लहै ठिकाना । सायुज्यमुक्ति होइ जाय निदाना

दोहा-यासों लगै समाधिही, निश्चै कहिये योग ।
ध्याता होवै लीनही, रहै न त्रिकुटी सोग ॥१७०॥
सतवाँ कह जु ध्यानही, अठवाँ कहूं समाधि ।
ज्ञान ध्यान जहँ बीसरै, तहां न विद्यावाद ॥१७१॥

८-समाधि अंग वर्णन

अष्टपदी

अठवीं कहूं समाधि लक्षण वर्णन करूं । तोकों सब समुझाय तेरी दुबिधा हरूं ॥ सबही लगै समाधि योगी आनँद लहै । योग भया सिध जान क्रिया कोइ ना रहै ॥ मिलि ध्याता अरु ध्यान एक होवै जहां । दूजा रहै न भाव मुक्ति बतैं जहां ॥ निरउपाधि निर्खेद ऐसा वह देश है । करम भरम अरु धरम नहीं कोइ लेश है ॥ आपा रहै न कोय सकल आसागसरै । चिन्ताका दुख नाहिं वासना सब जरै ॥ पंच विषय जहँ नाहिं नहीं गुण तीनहीं । होवै ब्रह्मस्वरूप जीवताक्षी नहीं ॥ जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति होवेही नहीं । चौथे पदको पाय होय जहँ लीनहीं ॥ ऐसे कहै शुकदेव सुनो चरणदासही । यह निर्द्वंद समाधि करौ तहँ वासही ॥

दोहा-जहां कछू गमि ना रहै, विद्या वेद न बाध।
ऋधिसिधि मिटि आनंद लहै,ऐसी शून्य समाधि १७२

अष्ट पदी

तहां किये परवेश रहै न अकारही। रूप नाम गुण क्रिया यही साकारहीं॥पाप पुण्य सुख दुःख जहां नहिं पाइये। मत-मारग कुल धर्म न देत दिखाइये॥भूख प्यास अरु उष्ण जहां नहिं शीत है। हर्ष शोक नहिं नेक वैर नहिं प्रीत है॥इन्द्री मन नहिं रहत गलित ह्वै जात है। सिध साधक गुरु शिष्य न भाव रहात है॥ उडुगन चन्द न सूर न दिवस न रात है। त्वंपद ईश्वर ब्रह्म न जान्यो जात है॥जैसे जलमें नीर क्षीरमें क्षीर ही। असि पदमें यों जीव नीरमें नीर ही॥अहं मिटै मिटि जाय जु आपा थोकही।ना परमातम आतम बंधन मोक्षही॥ ऐसे कह शुकदेव यों होय समाधिमें। वैसाही ह्वै जाय सोई था आदिमें

दोहा-हुता अदि परमातमा, बिचं उठि लगा विकार।
मिलि समाधि निर्मल भवै,लहै रूप ततसार॥१७३॥

अष्टपदी

जहँ आतम देव अभेव सेवक नहिं सेव है।स्वामी भी ह्वां नाहिं पूजा नहिं देवहै॥ नौधा नेम न प्रेम ज्ञान नहिं ध्यान है। जड चेतन कछु नाहिं सुरति नहिं ज्ञान है॥ विधि निषेध नहिं भेद अन्वय व्यतिरेक ह्वां। निश्चय अरु व्यवहार कछू तामें न ह्वां॥ उत्तम मध्यम भाव न शुभ ना अशुभन है। सिंह सर्प डर नाहिं और शस्तरको न भै है॥ पावक दग्ध न करै बहावै जल नहीं। ह्वां नहिं पहुँचै काल न ज्वाला है तहीं॥ ऐसा भवन समाधि भागि सों पाइये। तजिकै

जक्त उपाधि तहां मठ छाइये॥यतन करै लख माहिं और सब भेषही।कोटिनमें कोइ होय समाधी एकही॥ह्वांतक पहुँचे जाय सोइ सिध साध है।कहै शुकदेव पुकारि जु कठिन समाधि है॥

दोहा-भक्ति योग अरु ज्ञानकी, त्रैविधि कहूं समाधि।
गुरु मिलै तौ सुगम है,नाहीं कठिन अगाधि ॥१७४॥

१-भक्तिसमाधि

दोहा-सब इंद्रिनको रोकिकै, करि हरि चरणन ध्यान।
बुद्धि रहै सुरतिहु रहै, तौ समाधि मत मान॥१७५॥
ध्याता बिसरै ध्यानमें, ध्यान होय लय ध्येह।
बुद्धि लीन सुरती न रह,पद समाधि लखि लेह१७६

२-योगसमाधि

दोहा-आसन प्राणायाम करि, पवन पंथ गहि लेहि।
षट चक्करको छेद करि,ध्यान शून्य मन देहि॥१७७॥
आपा बिसरै ध्यानमें, रहे सुरति नहिं नाद।
लीन होय किरिया रहित, लागे योग समाध॥१७८॥

ज्ञानसमाधि

दोहा-जब लग तत्त्व विचारि करि, कहैं एक अरु दोय।
ब्रह्मव्रत बांधे रहै, ह्यांलग ध्यानहिं होय ॥ १७९ ॥
मैं तू यह बल भूलि करि, रहै जू सहज स्वभाय।
आपा देखि उठाय करि, ज्ञान समाधि लगाय॥१८०॥
ज्ञान रहित ज्ञाता रहित, रहित ज्ञेय अरु जान।
लगी कभी छुटै नहीं, यह समाधि विज्ञान ॥१८१॥
पूछे आठों अङ्ग ते, योग पंथकी बात।
शुकदेव कहै ताभें चलौ, गुरूकृपा लै साथ ॥१८२॥

इति अष्टांगयोग ॥ ४ ॥

श्रीयोगिजनवल्लभाय नमः



षट्कर्म-हठयोगवर्णन ५

(गुरु शिष्य संवाद)



शिष्यवचन

दोहा—अष्टांग योग वर्णन कियो, मोको भइ पहचान ।
छहों कर्म हठयोगके, वरणो कृपानिधान ॥ १ ॥

गुरु वचन

पहिले ये सब साधिये, काया होवै शुद्धि ।
रोग न लागै देहको, उज्ज्वल होवै बुद्धि ॥ २ ॥

अरु साधे षट्कर्म बताऊँ । तिनके तोकों नाम सुनाऊँ ॥
नेती धोती वसंती करिये । कुंजर करम देह सब हरिये ॥
न्योली किये भजे तन बाधा । देखि देखि जिन गुरुसों साधा ॥
त्रोटक कर्म दृष्टि ठहरावै । पलक पलकसों लगन न पावै ॥

१—नेतीकर्म

कुं०—मिही जु सूत मँगायकै, मोटी बाटै डोर ।
ऊपर मोम रमायकै, साधै उठि करि भोर ॥
साधै उठि करि भोर, डेढ बालिस्त कि कीजै ।
ताको सीधी करै, हाथ अपनेमें लीजै ॥
नासारंध्रमें मेल कर, खींचै अंगुली दोय ।
फेरि विलोकन कीजिये, नेती कहिये सोय ॥ १ ॥

दोहा-कान नाक अरु दांतको, रोग न व्यापै कोय।
उज्वल होवै नैनही, नित नेती करि सोय ॥३॥

२-धोतीकर्म

धोती कर्म यासों कहैं, पट्टी सोलह हाथ।
कोट अठारह ना भवैं, करैं जु नित परभात ॥४॥

कुं०-चौडी अंगुल चारिकी, मिही वस्त्रकी होय।
जलमें भेइ निचोय करि, निगल कंठसों सोय ॥
निगल कंठसों सोय, सिरा बाहर रहिजावै।
फेरि निकासै ताहि, पित्त कफ दोऊ लावै।
माया होवे शुद्धही, भजै पित्त कफ रोग।
शुकदेव कहे धोती करम साधैं योगी लोग ॥ २ ॥

३-वस्तीकर्म

कुं०-तीजे वस्ती कर्महीं, कहौं सुनो चितलाय।
किया करे गणेशही, कुंजी तहां लगाय ॥
कुंजी तहां लगाय, मूलको धोवन कीजै।
पंसारन संकोच, सुरत दै यह करि लीजै ॥
नीर गुदासों खैंच करि, थांमै उदर मँझार।
कछू डोल अरु बैठकर, फिरि दे ताहि उतार ॥३॥

दोहा-यही जु वस्ती कर्म है, गुरु बिन पावै नाहिं।
लिंग गुदाके रोग जो, गर्मीके नशि जाहिं ॥ ५ ॥

४-कुंजरकर्म

दोहा-गजकर्म याहि जानिये, पिये पेट भरि नीर।
फेरि युक्तिसों काढिये, रोग न होय शरीर ॥ ६ ॥

५-न्योलीकर्म

न्योली पदमासनसों करै। दोनों कर घुटनों पर धरै ॥
पेट रु पीठ बराबर होय। दहने बाँये नले बिलोय ॥

मल पेटमें रहन न पावै। अपान वायु तासोंवश आवै॥
तापतिली अरु गोला शूल। होन न पावे नेक न मूल॥
जो गुरु करिकै ताहि दिखावै। न्योलीकर्म सुगम करि पावै॥
और उदरके रोग कहावैं। सो भी वै रहने नहिं पावैं॥

६—त्रोटककर्म

त्रोटक कर्म टकटकी लागे। पलक पलकसों मिलै न तागै॥
नैन उघारे ही नित रहै। होय दृष्टि थिर शुकदेव कहै॥
आँख उलटि त्रिकुटीमें आनो। यह भी त्रोटककर्म पिछानो॥
जिते ध्यान नैनके होई। चरणदास पूरण हो सोई॥

दोहा-कपाल भाँति अरु धौंकर्नी, बार्घा[1] शंख पशाल।
चारि कर्म ये और हैं, इनहिं छहौंके नाल॥ ७॥

इति षट्कर्मवर्णन

मुद्रा वर्णन

१-खेचरी मुद्रा

शिष्य वचन

दोहा--एकबार फिर भी कहौ, मुद्रा पांच दयाल।
मोसे रंक अधीन पर, होकर बहुत कृपाल॥ ८॥

गुरु वचन

अष्टपदी--आगे मुद्रा तोहिं कहीं समुझाइया। फिर भी कहूं अब खोलि सुनौ चितलाइया॥ पहिले मुद्रा खेचरीको साधन भनूं। जैसे आगे करी सबीं ऋषि मुनि जनूं॥ ताते जलके कुरले करि जु बगाइये। ता पाछे चौबंस्तको चूरण लाइये॥ जिह्वा हाथमें पकरि मर्दन छीलन करै। दोहनतानन करै बहुरि दश-

---

१ स्याह मिर्च, पीपल, सोंठ और मधु।

नन धरै ॥ फिरि करि चालन ताहि छेद नहिं कीजिये। तातु ज्यों कटि जाय यत्न सोइ लीजिये ॥ ब्रह्मरंध्रको धोयकै मैल निवारिये। बायें अँगूठे ऊपर कागको धारिये ॥ सहज सहज सरकायकै आगे लाइये। यह सब साधन कठिन गुरूसे पाइये॥ दो अंगुलीकी कूंचीसूं करि मेलना। जिह्वा ऊलटी राख जु नितप्रति खेलना ॥ यह उपाय षट मास करैं तजि मानहो। रसना यों बँधि जाय चढै अस्थान हो ॥

दोहा--चार काज यासूं सरैं, फलदायक बहुभाँति।
योग माहिं बड भूप है, अधिकी जाकी कांति ॥९॥

अष्टपदी

एक जु प्राणायाम जीभसूं कीजिये। दूजे बन्ध उदान यहीसूं दीजिये॥ तीजे करि करि ध्यान निरखि जहँ ज्योतहो। अमृत पिवै खुलै तहँ सोतही॥ खैंचै त्रिकुटी पाठ सहज अरु फेरिये। द्रवै सुधा रस नीर जहां मन घेरिये॥ अमृतहीके स्वादको कौन बखानई। जो कोइ अँचवै हंस सोई पुन जानई॥ दिन दिन पलटै देह रक्त दूधा भवै। बीस बरस अरु चार माह ऐसा हवै॥ इच्छा चारी होय बरस छत्तीसमें। सब लोकनमें जाय जु अपनी शक्तितें॥

दोहा--जेते विष व्यापै नहीं, रोग न दहै शरीर।
जो कोइ पीवै युक्तिसूं, कामधेनुको क्षीर ॥ १० ॥
भूख प्यास अरु नींदकै, रहै न तीनों लेव।
नाद बिन्द गुटका बँधे, कहै यही शुकदेव ॥११॥
तीन महीने चारका, बालक गोदी माय।
ना वह पीवै नीरही, अन्न नहीं वह खाय ॥ १२ ॥
वह तौ जीवै दूधसूं, वाकूं वही जु काम।
लगो रहै माता कुचन, निसरै एक न याम ॥१३॥

अमृत पीवै योगिया, ऐसे चरणहिदास ।
पहरहु यह छाँडै नहीं, कामधेनुको पास ॥ १४ ॥
ऐसे धारै तो बनै, सुधा रसीला संत ।
दिव्यकाय होजाय जब, धन कहै कमलाकंत ॥१५॥
आठ पहर लागा रहै, पीवै कैकरि ध्यान ।
मैं कहा जैसाही बनै, परसै पद निरवान ॥ १६ ॥
भेद गुरूसे ये लहै, और छिपावै वाहि ।
जो फल याके अधिक, होय परापति ताहि ॥१७॥
योगेश्वर अरु देवता, मुनी ऋषीश्वर जान ।
रखवारे वाके घने, करन न देवैं ध्यान ॥१८॥
टेक गहै सो जा पियै, और करै ह्यां ध्यान ।
यती सती अरु गुरुमुखी, जाकी ऐसी आन ॥१९॥
बड़ी जु मुद्रा खेचरी, मुखमें याका वास ।
जो कहि मैं शुकदेवही, जान लेहु चरणदास ॥२०॥

२—भूचरीमुद्रा

दोहा—दूजी मुद्रा भूचरी, नासा जाको वास ।
प्राण अपान जुदी जुदी, एक करै चरणदास ॥२१॥
जितकी तित रख प्राणको, वा घरलाय अपान ।
ताहि मिलावै युक्तिसूं, करि करि संयम ध्यान॥२२॥
जब वह जीतै पवनकूं, मन चंचल ठहराय ।
गगन चढनकी आश हो, कहै शुकदेव सुनाय॥२३॥
गुदाद्वार बँध दीजिये, एँडी पांव लगाय ।
आसन सिद्ध जु कीजिये, मन पवना वशलाय॥२४॥
अपान वायु जब वश भवै, ऊरध खैंच चलाय ।
शनई शनई जा चढै, प्राणवायु ह्वै जाय ॥ २५ ॥

३--चाँचरीमुद्रा

दोहा--तीजी मुद्रा चाँचरी, जाको नैनन वास।
नासा आगे दृष्टिकूं, राखै मन धर आस ॥२६॥

अंगुल चार नासिका आगे। चित अस्थिर करि देखन लागे॥
खुले पांच तत करै जु कोई। मन अरु पवन जहां थिर होई॥
फिर ह्वांसूं नासा परि आवै। अचल टकटकी तहां लगावै॥
जहँ बहुतक अचरज दरशावैं। विभव स्वर्गके आगे आवैं॥
जितसूं पलट तिरकुटी माहीं। ध्यान करै कहुँ अन्त न जाहीं॥
दीरघ तारासा परकासै। उदय होय सूरज ज्यों भासै॥
चित चेतन दोउ मेला करैं। लै उपजै अरु दुविधा हरैं॥
यही चाँचरी मुद्रा जानौ। चरणदास याकूं पहिंचानौ॥

४--अगोचरीमुद्रा

कहूं अगोचरी चौथी मुद्रा। तामें सुख पावै योगीन्द्रा॥
या मुद्राका शरवन वासा। शुकदेव कहैं सुन चरणहिदासा॥

दोहा--ज्ञान सुरति दोउ एक है, पलट अगोचर जाय।
शब्द अनाहदमें रतैं, मन इन्द्री थिर पाय ॥२७॥

५--उन्मनीमुद्रा

दोहा--पँचवीं मुद्रा उनमनी, दशवें द्वारे वास।
सिद्धसमाधि मिलै जहां, दग्ध होय सब आस॥२८॥
आनन्दही आनन्द जहां, तहां, न काल कलेश।
तीनौ गुन नहिं पाइये, ह्वां नहिं मायालेश ॥ २९ ॥
जीवातम परमातमा, होय जाय वा ठौर।
ध्याता ध्यानन ध्येय जहँ, तहाँ न॥किरिया और॥३०॥

बन्धवर्णन

१--महाबन्ध

महाबन्ध तोहि पहल बताऊं । पाछे मूलबन्ध समझाऊं ॥
बायां पांव सिवन गहि दीजै । मूल द्वार एँडी बँद दीजै ॥
दहिनी जंघ जंघपर लावै । गउमुख आसन नाम कहावै ॥
राखै चिबुक हृदय पर लाय । पवन राह पूरबको जाय ॥
ध्यान त्रिकूटी संयम करै । प्राणवायु हिरदेमें धरै ॥
महाबन्ध ऐसे करि साधै । गुरु प्रताप यही आराधै ॥
बिना पुरुष तिरियाको जानो । बन्ध बिना मुद्रा पहिचानो ॥
निर्फल जाय पुरुष बिन नारी । महाबन्ध बिन मुद्राधारी ॥
माहिं कंठके ध्यान लगावै । सुरत निरत ह्वांइ ठहरावै ॥

दोहा–महाबन्ध अस्थित करै, सो योगी ह्वै जाय ।
पवन पंथ मुद्रित करै, ध्यान कण्ठमें लाय ॥ ३१ ॥

शशि घरकूं सूरज घरलावै । रेचक पूरक पवन फिरावै ॥
महाबन्धको करै अभ्यासा । अमृत अचवै बुझै पियासा ॥
जरा अमृत देही नहिं आवै । महाबन्ध तीनों गुन पावै ॥
जठर अग्नि परचै बहुभारी । निशिदिन माहिं करै अठवारी ॥
पहर पहरमें पवन भरीजै । प्रथम अल्प अभ्यास करीजै ॥
सिय सेवन तापन नहिं करै । काम अग्नि काया नहिं जरै ॥

दोहा–ऐसी विधि साधै पवन, योग पन्थ धरि पाय ।
पहर पीछला बनत जन, आयुरदा बढि जाय ॥ ३२ ॥

२–मूलबंध

दोहा–मूलबन्ध अब कहतहूं, अपानवायु वश होय ।
ऊपरकूं खैंचन करै, मिलै प्राण में सोय ॥ ३३ ॥

कमल कमल सीधे भवै, नाभि तले हो राह ।
आगे मारग सुगम हो, पहुँचै योगी नाह ॥ ३४ ॥

मूलबन्ध गुण ऐसा होई । वायु अधोगति जाय न कोई॥
ऊरध रेता यासूं सधै । दिन दिन आयु सवाई बधै ॥
यासूं कारज सब बनि आवै । रोग रक्तके सभी नशावै ॥
योगी पहिले या आराधै । अपान वायुकूं नीके साधै ॥
अब मैं मूलबन्ध बतलाऊं । ज्योंका त्यों साधन दिखलाऊं॥
गुदा वास याका तुम जानौ । गुदा द्वार बन्धन है ठानौ ॥
बायें पांवेकि एँडी सेती । मूल द्वार रोकै करि हेती ॥
ऊरधहीकूं खैंचन कीजे । शुकदेव कहै नीके सुन लीजै॥
अरु कबहूँ मन ऐसी धरै । आसन पदम करनकूं करै ॥
कपडेकी इक गेंद बनावै । गुदा मध्य कस बन्ध लगावै॥
योंभी वायु सधै वा भाँती । जोपै लगा रहै दिन राती ॥
पवन तत्त्वके ऊपर जावै । प्राण अपान सहज मिल जावै॥
नाद बिंद रल मिल जा दोई । एक वरस साधै जो कोई ॥
योग माहिं यह भी परधान । बूढी देह पलट हो ज्वान ॥
जठर अग्नि बाढै अधिकाय । जो चाहै तौ बहुतै खाय ॥
सुन चरणदास कहै शुकदेव । जो गुरु पूजा देवै भेव ॥

३--जलंधरबंध

दोहा--मूलबन्ध तोसूं कहा, गुण कह सब समुझाय ।
बन्ध जलंधर कहतहूं, सुनहु श्रवण करि चाय॥ ३५॥

तीजा बन्ध जलंधर जानौ । कंठ वास ताका पहिचानौ ॥
ग्रीवा लटक चिबुक हिय लावै । कंठ पवन रोकै परचावै ॥
हिरदे प्राण पूरकरि रहिये । बन्ध जलंधर यासूं कहिये ॥

ऊरध पवन नीचेको जाय । अधर पवन ऊरधकूं लाय ॥
उदर मध्य लै ताहि बिलोय । ब्रह्मरंध्र जा पहुँचै सोय ॥
इह विधि ब्रह्मपंथकूं धावै । सहजै सहजै मध्य समावै ॥
जरा मरण जहँ भय नहिं व्यापै । लहे अमरपद होरह आपै ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । जो पै बन्ध उडचान लगावै ॥

४--उडचानबन्ध

दोहा—बँध उडचान आगे कहा, जिह्वा उलट लगाय ।
कान आँख मुख नाकके, स्वर सब बन्ध कराय ॥ ३६ ॥
इह सुबंध महिमा अधिक, लागै बजर किवाँर ।
सात द्वारकी बाट हो, निकसै नाहिं बयार ॥ ३७ ॥
पांचौं मुद्रा बंध सब, दिखलाया यह देश ।
शुकदेव कहै रणजीत सुन, और कहू उपदेश ॥ ३८ ॥

अष्टपदी

चौरासीही जानि जु आसन योगके । सिद्धपरम तिन माहिं बडेही थोकके ॥ बहु नारिनके माहिं जु नौ नारी भनी । तिनमें सुषमन जान बडी गुरुसूं सुनी ॥ तीन बंधके माहिं मूलकूं जानिये । मुद्राहीमें बडी जो खेचरि मानिये ॥ वायुनमें परधान प्राणकूं देखिये । सब कुंभकहूं माहिं केवल बड लेखिये ॥ बानी चारौ मध्य परा ही गाइये । चार अवस्था माहिं तुरी बड पाइये परम शून्यको ध्यान परसूं है परे । याकी सम कोई नहिं ध्यान तिनको धरै ॥ अजपाकेही जाप बराबर और ना । शील क्षमासे मीत न कोई देहमां ॥ पूजन मैं बडि जान जु आतमकी करै । ज्ञान समान न दान सकल विपता हरै ॥ गुरुसा रक्षक और नहीं कोइ लोकमें । योग युक्ति सा स्वाद नहीं कोइ भोगमें ॥ कहे गुरू शुकदेव सुनो रणजीतही । बडी जोगकी गांस खोल तुमकूं जुदी ॥

छन्द--अमरी करतैं बजरी रोकैं बजरी करतैं वाई ।
रोकैं छींक साधना करिकै नासा लेहु जँभाई ॥
जल संयमसूं नभकूं देखै संयम नादसुं ज्योती ।
संयम पवन होय थिर काया सो वशराखै मोती ॥
जिया बिछावै मृत्यक ओढै बूढी होय न काया ।
संयम नींद बिंद नहिं जावै यह शुकदेव बताया ॥
दहिने स्वरमें भोजन कीजै बायें स्वरमें पानी ।
दहिने स्वरमें अमरी रेचै देह न होय पुरानी ॥
दहिने स्वरमें जलसूं न्हावै बायें स्वरमें लंगी ।
शिव आसनसूं सोवन कीजै नारि न कीजै सङ्गी ॥
पावकसूं तापन नहिं कीजै जो तापै तो नैना ।
भोजन गरम न खट्टा खावैं फटैं झिरैं नहिं मैना ॥

दोहा-गरमीके ही रोगमें, चन्द चला रवि चन्द ।
शीत रोग सूरज चला, शशिपर राखै बन्द ॥ ३९॥
तीन रोजकै पांच दिन, कै दिन राखै सात ।
रोग देखि जैसी करै, होय निरोगा गात ॥ ४० ॥
सूरज रात चलाइये, द्योस चलावै चन्द ।
पवन फिरै ऊषा बधै, श्वास चलै जो मन्द ॥४१॥
कान आँख अरु दांतके, सबही रोग भजाहिं ।
श्याम बाल नहिं श्वेत हों, करै जु नीकी दाहिं॥४२॥
रुई पुरानी बहुतही, दिनकूं दहिने राखि ।
बायें राखै रैनिकूं, खोली साधन भाखि ॥४३॥
शीत उष्ण व्यापै नहीं विष नहिं व्यापक होय ।
बीस बरस साधन किये, रहै विकार न कोय ॥४४॥

बासी ग्रास न खाइये, छूछम करै अहार ।
जल बहुतै पीवै नहीं, सपरस करै न नार ॥ ४५ ॥
तन मन साधै वचनहीं, पाप न लगने देह ।
शुकदेव कहैं चरणदास सुनु, अघकीसाधनयेह ॥४६॥
सब जीवन सुख दीजिये सबसों मीठा बोल ।
आतम पूजा कीजिये, पूजा यही अतोल ॥ ४७ ॥
दया पुष्प चन्दन नवन, धूप दीप दे मन्न ।
भाँति भाँति नैवेद्यसूं, करै देव परसन्न ॥ ४८ ॥
जो कोइ आवै राजसी, देहु बडाई ताहि ।
जाकूं देखो तामसी, करौ नम्रता वाहि ॥४९॥
जो कोइ होवै सात्त्वकी, मिलै ताहि तजि मान ।
गुढी खोल चरचा करो, लीजै ततमत छान ॥ ५० ॥
सबहीकूं परसन करै आप रहै परसन्न ।
बास लहौ हरि ध्यानही, ह्यां कहै सब धन धन्न ॥५१॥
राजस तामस सात्विकी, छेत्तर तीनहिं भांति ।
क्षेत्रक आतम देव है, सबकूं चहिये क्रांति ॥ ५२ ॥
सबमें देखै आपकूं, सबकूं अपने माहिं ।
पावै जीवन मुक्तिको, यामें संशय नाहिं ॥ ५३ ॥
सबमें देखै आतमा, आपनमें करि ध्यान ।
यही ज्ञान ब्रह्मज्ञान है, यही जु है विज्ञान ॥ ५४ ॥
अहंकार मिटि ब्रह्म हो, परमातम निरवाण ।
शुकदेवा हौं कहत हूं, चरणदास हिय आन ॥५५॥
जो तैं पूंछा कहा, भेद कहा सब खोल ।
अरु तेरे हियमें कछू, सकुच खोल कर बोल ॥५६॥

शिष्य वचन

दोहा-अपना लखि किरपा करी, समझायो बहुभाँति ।
योग ओरतैं गुरुजी, हियमें आई शांति ॥ ५७ ॥
तुम्हरी कह अस्तुति करूं, मोपै कही न जाय ।
उतनी शक्ति न जीभको, महिमा कहै बनाय ॥५८॥
किरपा करी अनाथ पर, तुम हो दीनानाथ ।
हाथ जोरि मांगौं यही, मम शिर तुम्हरा हाथ ॥५९॥
मोसे रंक गरीबकी, तुम गहि पकरी बाँह ।
भव बूडत राखा मुझे, चरणकमलकी छाँह ॥६०॥
आपहि तुम किरपा करी, मैं कित लहता तोहिं ।
तुमको पाऊं ढूँढि करि, इतनी शक्ति न मोहिं ॥६१॥
व्यासपुत्र शुकदेव तुम, जक्त माहिं विख्यात ।
तुम दर्शन दुर्लभ महा, पुरुषनको न दिखात ॥६२॥
बडे भाग मेरे जगे, पुरबिलके परताप ।
किरपा श्रीगोपाल की, आय मिले आप ॥ ६३ ॥
चरणदास अपनो कियो, दियो परम संतोष ।
बैठि करूंगो ध्यानही, अब कुछ रह्यो न शोक ॥६४॥
चलत फिरत ह्यां आइयां, तुम भरि दीन्ह्यो मोहिं ।
नैन प्राण तन मन सभी, देखत अरपै तोहिं ॥६५॥
चाह मिटी सब सुख भये, रहा न दुखका मूल ।
चाहूँ तौ चाहूँ यही, तुम चरणनकी धूल ॥ ६६॥

गुरु वचन

दोहा-योग तपस्या कीजियो, सकल कामना त्याग ।
ताको फल मत चाहियो, तजो दोष अरु राग ॥६७॥

अष्ट सिद्धि जो पै मिलै, नेक न कीजै नेह ।
धरि हिरदय परमातमा, त्यागे रहियो देह ॥ ६८ ॥
जेती जगकी वस्तु है, तामें चित्त न लाय ।
सावधान रहियो सदा, दियो तोहि समुझाय ॥६९॥
बार बार तोसें कहूं, ह्यां मत दीजो चित्त ।
सिद्ध स्वर्गफल कामना, तजि कीजो हरि मित्त ॥७०॥
जो कीजे हरि हेत ही, एहो चरणहिदास ।
भक्तियोग अरु शुभ करम, नीकी ठौर निवास ॥७१॥

शिष्य वचन

दोहा—ऐसेही सब करूँगा, तुम चरणन परताप ।
अष्ट सिद्धि समझो चहों, वर्णन कीजे आप ॥७२॥
समझौं तो त्यागूँ उन्हैं, करवायो पहिचान ।
कहा नाम लक्षण कहा, कौन रहै अस्थान ॥७३॥

गुरु वचन

दोहा—शुकदेव कह वर्णनकरूँ अष्ट सिद्धिके नाउँ ।
लक्षण गुण सबही सहित, नीके तोहिं समुझाउँ ॥७४॥

अष्टसिद्धिके नाम

प्रथमैं अणिमा सिद्धि कहावै । चाहै तो छोटा ह्वै जावै ॥
अणु समान छिपि जावै सोई । ऐसी कला जु पावै कोई ॥
दूजी महिमा लक्षण एता । चाहै बडा होय वह जेता ॥
तीजी लघिमा वह कहवावै । पुष्प तुल्य हलका ह्वै जावै ॥
चौथी गरिमा कहूं विचारी । चाहै जितना होवै भारी ॥
पंचवीं प्रापति सिद्धि कहावै । जित चाहै तितही ह्वै आवै ॥

छठवीं पराकाम्य गुण धरै । शक्ति पाय चाहै सो करै ॥
सतवीं सिद्धि ईशिता रानी । सबको आज्ञा माहिं चलानी ॥

दोहा--बशीकरण सिद्धि आठवीं, कहै जु श्रीशुकदेव ।
चाहै जिसको वश करै, अपनाही कर लेव ॥७५॥
चरणदास सिद्धै कही, समझ लेहि मन माहिं ।
जो हैं जन वै रामके, इनमें उरझैं नाहिं ॥ ७६ ॥

योग किये आठों सिधि पावै । कै भोगै कै चित न लगावै ॥
योग किये मान जीता जावै । पलटै जीव ब्रह्मगति पावै ॥
योगेश्वर चाहै सो करै । भरी रितावै रीती भरै ॥
योगेश्वर ईश्वर ह्वै जाई । दिन दिन बाढै कला सवाई ॥
तजिये भोग योगही करिये । निरगुण परै ध्यानही धरिये ॥
चौथे पदमें करै निवासा । काहू विधिका रहै न श्वासा ॥
योग करै सोई परवीना । शुकदेव कहैं प्रकट कहि दीना ॥

दोहा-पोथी माहीं देखि करि, करे जु कोई योग ।
तन छीजै सिधि ना भवै, देही आवै रोग ॥ ७७ ॥
देखि देखि गुरुसों करै, लै आज्ञा रहु संग ।
सिद्धि होय साधन सबै, कछू न आवै भंग ॥७८॥
योग तपस्यामें बडा, पहुँचावै हरिपास ।
जन्म मरण विपता मिटै, रहै न कोई आस ॥७९॥

शिष्य वचन

दोहा-मैं समझी जानी सभी, सूझ भई हिय माहिं ।
किरपा करि जो जो कहा, ताको बिसरूँ नाहिं ॥८०॥
व्यासदेव श्रीजनक जै, जै जै श्रीशुकदेव ।
जै जै यह शुकता रहै, समुझायो करि हेव ॥ ८१ ॥

हिय हुलसो आनन्द भयो, रोम रोम भयो चैन।
भये पवित्तर कान ये, सुनि सुनि तुम्हरे बैन ॥ ८२ ॥

छप्पय

गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु, गुरु देवनके देवा।
सर्व सिद्धि फल देत गुरु, तुमहीं मुक्ति करेवा ॥
गुरु केवट तुम होय करि, करौ भवसागर पारी।
जीव ब्रह्म करि देत हरो, तुम व्याधा सारी ॥
श्रीशुकदेव दयाल गुरु, चरणदासके शीशपर।
किरपा करि अपनो कियो, सबही विधिसों हाथ धर ॥

इति षट्कर्म--हठयोगवर्णन ॥ ५ ॥

कैलासविहारिणे नमः



योगसन्देहसागरप्रारम्भ ६

*

दोहा-अर्थ बताओ पण्डिता, ज्ञानी गुणी महन्त ।
जो तुम पूरे साधु हौं, भक्ता हरिके सन्त ॥ १ ॥
चरणदास पूछे अरथ, भेदी होय कहो ।
समझौ तौ चर्चा करो, नाहीं मौन गहो ॥ २ ॥

ब्रह्माण्डेसों पिण्डे जानो । ठौर ठौर घटमें पहिंचानो ॥
सात समुंदर घटमें कहां । कछुवा रहै बतावो जहां ॥
शेषनाग केहि ठौर विराजे । रूप वराह कौन छबि छाजे ॥
कहा चार कायामें खान । चौरासी लख योनि बखान ॥
षट चक्करको जो तुम जानौ । नाम सहित सब भेद बखानौ ॥
नाभि कुण्डली का परमान । कैसे जागै कहौ बखान ॥
सहज सहज वह कहाँ समावै । योगी होय सो भेद बतावै ॥
चरणदासका गुरु शुकदेव । सो तौ जानै सबही भेव ॥

दोहा-कहाँ जु वासा पवनका, मन कौने अस्थान ।
कहाँ हियाकी आँखि है, कैसे करे पिछान ॥ ३ ॥

प्राण पुरुष अन्तर्गत कैसे । क्योंकरि भेद बतावो जैसे ॥
इडा पिंगला सुषुमन नारी । कैसे पलटै बारा बारी ॥
आठ प्रकारके कुम्भक जानै । सो युक्ती मेरे मन मानै ॥

चारि अवस्थां चार शरीरां । वांणी चारि नाम कह वीरा ॥
कै प्रकार अजपाका जाप । कै अंगुल श्वासाका नाप ॥
क्यों आवै अरु क्यों वह जाय । याका ज्ञानी करौ लखाय ॥
परा पश्यंती मध्यमा कहा । बता वैखरी देहु कहा ॥
रणजीताका गुरु शुकदेव । सो तौ जानै सबही भेव ॥

दोहा-पद तीनौ कहुँ विष्णु के, स्वप्ना जाग्रत भेद ।
बावन अक्षर देहमें, पुष्पद्वीप कह स्वेद ॥ ४ ॥

कहैं इकीस कायामैं लोग । इन्द्रकरैं कहाँ नित्तहि भोग ॥
ब्रह्मादिक शिव कहाँ प्रकाशा । बारह सूर्य्यनका कित बाशा ॥
तारामण्डल कैसे दरशैं । त्रिकुटी संयम कैसे परशैं ॥
त्रैवेणी को कैसे पावै । रं रकार कहँ शब्द जगावै ॥
वरणों अक्षर आदि ओंकारा । तासे भयो सकल संसारा ॥
जाका कैसे कीजें ध्याना । कौन दिशा अरु को अस्थाना ॥
चरणदास का गुरु शुकदेव । सो तौ जानै सबही भेव ॥

दोहा-निर्गम सुर्गम भेद कहु, श्वास उसाँस बताव ।
कायामें विष कहाँ है, बिन्दु कुण्ड दरसाव ॥ ५ ॥

जीव ब्रह्ममें केता बीच । कौन कौन कायामें नीच ॥
अमृतकुण्ड कौन अस्थान । बङ्कनालकी कहु पहिचान ॥
ब्रह्मरन्ध्रका भेद लखाव । कामधेनुका वरण बताव ॥
मानसरोवर ताल बताय । तामें हंसा कैसे न्हाय ॥
बिना सीप कहँ उपजे मोती । बिना घीव कहँ जगमग ज्योती ॥
बिन सूरज कहँ नितही धूप । भँवर गुफाका कैसा रूप ॥

---

१ जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरीया । २ स्थूल सूक्ष्म, कारण, महाकारण ।
३ परा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी,

शून्य शिखरका कीधर द्वारा । का खिरकी अरु कहा अकारा ॥
चरणदासका गुरु शुकदेव । सो तौ जानै सबही भेव ॥
दोहा--कहाँ दशो दिगपाल हैं, कहँ इन्द्रिनके देव ।
आहार वास चेतत्त्वको, वरणि बतावो भेव ॥ ६ ॥
काशी अरु मथुरा है दोय । कहाँ देहमें कहिये सोय ॥
अरसठि तीरथ घटमें ज्योंकर । सबका गुरु पुष्कर है क्योंकर ॥
कहाँ वसै वाई उद्यान । कहाँ बन्ध लागै उडचान ॥
कहँ कपाटका कुंजी ताला । द्वादश कला कौन मतवाला ॥
कण्ठ कूप उलटा है कौन । नेजू कहा बतावो जौन ॥
पनहारी कहो कैसे भरै । घडिया कहाँ कहाँ भरि धरै ॥
कै परकार अमृतका स्वाद । कौन ठौरसों अनहद नाद ॥
अग्र डोरि कैसे करि पावै । मकर तारका भेद बतावै ॥
चरणदासका गुरु शुकदेव । सो तो जानै सबही भेव ॥
दोहा-घण्ट तालका लम्बका, और अम्बका बोल ।
चारि वस्तु ये कौन हैं, इन्हें बताओ खोल ॥ ७ ॥
कौन कमलपर गुरु विराजै । कै प्रकार अनहद धुनि बाजै ॥
कै बानी है अनहद भूरा । जानैगा कोइ साधू पूरा ॥
तेजपुञ्ज कै योजन आगे । अमरलोक कवि सूजन लागे ॥
तीन शून्य कहँ चौथा शून्य । जितही भूले पढि अरु गून्य ॥
कै कहिके कायाके द्वारे । भिन्न भिन्न कहु मेरे प्यारे ॥
बहत्तर हजार आठसै चौंसठि नारी । इनको भेद बहुत है भारी ॥
बहत्तरि कोठे कहाँ कहाँ । नाम बतावो जहाँ जहाँ ॥
चरणदासका गुरु शुकदेव । सो तौ जानौ सबही भेव ॥
दोहा-सात द्वीप नौ खण्डको, भिन्न भिन्न कहु भेद ।
कायामें केहि ठौर है, कहा नाम किस हेत ॥ ८ ॥

चौरासी बाइका नाँव । कहां कहां है कैसी दावँ ॥
जलका कोठा कीधर होय । कहाँ अग्निका कहिये सोय ॥
ब्रह्मज्वाल कहु कैसे जागै । किस आसनसे निद्रा भागै ॥
किन आसनसे वीरज जीतै । दश मुद्रा कैसे फिर जीतै ॥
नामरूप मुद्रौंका जान । तीन बंधका नाम बखान ॥
चौरासी आसनका नाँव । और बताओ मनके पांव ॥
स्वर्ग मृत्यु अरु कहाँ पताल । कहां सत्य अरु कहां तिताल ॥
चरणदासका गुरु शुकदेव । सो तौ जानै सबही भेव ॥

दोहा–कै प्रकारका योग है, कै प्रकारकी भक्ति ।
पाँच भूमिका ज्ञानकी, सात कालकी शक्ति ॥ ९ ॥

को नगरीका राज करै । को जीवै अरु कौन मरै ॥
पेट बडा किसका है जान । पूजा बडी ताहि पहिचान ॥
सबमें बडा कौन आहार । ताको सुरता लेहु निहार ॥
ता बिन एक घडी नहिं रहै । भेदी होय सो भेदहिं कहै ॥
सबमें बडी कहा जो पूजा । जाकी सम दीखै नहिं दूजा ॥
कहा सो सबको लगम लगा । कौन पुरुष सो भगम भगा ॥
कहा घटै सो घटई घटैं । कहा बढै सो बढई बढैं ॥
ताहि बतायो गुरु शुकदेव । सो तौ जानै सबही भेव ॥

दोहा–क्षरके कहा जु अर्थ है, अक्षर देहु दिखाय ।
निर अक्षरके रूपको, भिन्न भिन्न दरशाय ॥ १० ॥

ओंकारका अर्थ बताओ । महत्तत्त्वका रूप दिखावो ॥
मन चक्करका कैसा रंग । मन मनसा दोउ कैसे संग ॥
कौन घाट है लहौ समाध । कित जा देखै खेल अगाध ॥
चौबिस शून्य है जहां जहां । वज्जर ताला लागै कहां ॥
वज्रद्वार बिन पावै कहां । बिन पाये उरले घर रहां ॥

आठ महलका करौ बखान। कासों कहिये पद निर्वान॥
जो तुम जानो ऊरधरेता। तौ तुम भेद कहौ अब केता॥
दीय मुद्रा अरु मुद्रा राज। जासों सुधरैं काया काज॥
काया महलके जो तुम भेदी। ठौर ठौर कहु घटमें जेती॥
पांचतत्वकी इन्द्री दश। यही बतावो आगे वश॥
चरणदासका गुरु शुकदेव। सो तौ जानै सबही भेव॥

दोहा-चार भेद चौदह चोवारे, भेदी होय सो जानै।
चरणदास शुकदेवका बालक,सो यह भेद बखानै॥११॥

छप्पय-चन्द कला कित छिप बढै जब कितसों आवै॥
बादर कितसों होय फट जब कहां समावै॥
दीपलोय बुझि जाय जाय कित मोहिं बताओ।
राति दिना कित जाय धुवाँ केहि ठौर लगावो॥
चरणदास शुकदेवसों पूँछत हौं शिर नायके।
तन छूटै जी जाय कित आवत है किहि ठाँयते॥

क०-देखो है तमाशा देह समुझि विचारी लेहु, मूर्ख नर होय जो या बातमें हँसैगो। चीतहिको मारि मृग नखशिख सूख गयो, बाघनीको मारिबो सिंहको ग्रसैगो॥ बिल्लीको मारि चूहे प्रेमको नगारो दियो, दादुरहू पांच सर्प मारिकै बसैगो। कहै चरणदास ऐसे खेलसों लगाई आस,चिरियाके शीश टोरो बाजको लसैगो॥

दोहा-पग लागूँ शुकदेवके, और वार ना जावँ।
गुप्तभेव मोसों कह्यो, सबै नावँ अरु ठाँव॥१२॥
सो तुमसों पूछन करौं, हौं पुरुषनके दाय।
या सागर संदेहको, दीजै अर्थ बताय॥१३॥

इति योगसंदेहसागर॥६॥



ज्ञानस्वरोदयप्रारम्भ ७

दोहा—नमो नमो शुकदेवजी, करौं प्रणाम अनन्त ।
तुम प्रसाद स्वरभेदको, चरणदास वरणन्त ॥ १ ॥
पुरुषोत्तम परमातमा, पूरण विस्वा बीश ।
आदिपुरुष अविचल तुम्हीं, तोहिं नवाऊं शीश ॥२॥

कुं०—क्षर ॐ सो कहत हैं, अक्षर सोहं जान ।
निरअक्षर श्वासा रहत, ताहीको मन आन ॥
ताहीको मन आन, रात दिन सुरति लगावो ।
आपा आप विचारि, और ना शीश नवावो ॥
चरणदास मथि कहत हैं, अगम निगमकी सीख ।
यही वचन ब्रह्मज्ञानका, मानो विस्वा बीस ॥
ॐ सो काया भई, सोहं सो मन होय ।
निरअक्षर, श्वासा भई, चरणदास भल जोय ॥
चरणदास भल जोय, खैंचि मनवां तहँ राखो ।
क्षर अक्षर निरअक्षर, एकै दुविधा नाखो ॥
जब दरसै यक एकही, वेष यह सभी तिहारो ।
डार पात फल फूल, मूल सो सभी निहारो ॥
श्वाससों सोहं भयो, सोहंसो ॐकार ।
ॐसों ररा भयो, साधो करो विचार ॥

साधो करो विचार, उलटि घर अपने आवो ।
घट घट ब्रह्म अनूप, सिमिटि करि तहां समावो ॥
चारि वेदका भेद है, गीताका है जीव ।
चरणदास लखि आपयो, तो मैं तेरा पीव ॥
दोहा-सब योगनको योग है, सब ज्ञाननको ज्ञान ।
सर्व सिद्धिको सिद्धि है, तत्त्व स्वरनको ध्यान ॥३॥
ब्रह्मज्ञानको जाप है, अजपा सोहं साध ।
परमहंस कोइ जानि है, ताको मतो अगाध ॥ ४ ॥
भेद स्वरोदयसों लहै, समझै श्वास उसाँस ।
बुरी भली तामें लखै, पवन सुरति मन गाँस ॥ ५ ॥
शुकदेव गुरु कृपा करि, दियो स्वरोदय ज्ञान ।
जबसों यह जानी परी, लाभ होय कै हान ॥ ६ ॥
इडा पिंगला सुषमना, नाडी तीन विचार ।
दहिने बायें स्वर चलै, लखै धारणा धार ॥ ७ ॥
पिंगल दहिने अंग है, इडा सो बायें होय ।
सुषमन इनके बीच है, जब स्वर चालैं दोय ॥ ८ ॥
जब स्वर चालैं पिंगला, तेहि मधि सूरज वास ।
इडा सो बायें अंग है, चन्द्र करत परकाश ॥ ९ ॥
उदय अस्त तिनकी लखै, निर्गम सुर्गम विद्धि ।
अरु पावै तत वरणको, जब वह होवै सिद्धि ॥१०॥
शुकदेव कहि चरणदाससों, थिर चर स्वर पहिचान ।
थिर कारजको चन्द्रमा, चर कारजको भान ॥११॥
कृष्णपक्ष जबहीं ही लगै, जाय मिलत है भान ।
शुक्लपक्ष है चन्द्रको, यह निश्चय करि जान ॥१२॥
मंगल अरु इतवार दिन, और शनीचर लीन ।
शुभकारजको मिलत हैं, सूरजके दिन तीन ॥१३॥

सोमवार शुक्कर भलो, दिन बृहस्पतिको देखि ।
चंद्रयोगमें सुफल हैं, चरणदास बीशेखि ॥ १४ ॥
तिथि अरु वार विचार करि, दहिनो बाओं अंग ।
चरणदास स्वर जो मिलै, शुभ कारज परसंग ॥१५॥
कृष्णपक्षके आदिही, तीन तिथीतक भान ।
फिरि चंदा फिरि भान है, फिरि चंदा फिरि भान ॥१६॥
शुक्लपक्षके आदिही, तीन तिथी लग चन्द ।
फिरि सूरज फिरि चन्द है, फिरि सूरज फिरि चन्द॥१७॥
सूरजकी तिथिमें चलै, जो सूरज परकाश ।
सुख देहीको करत हैं, लाभालाभ हुलास ॥ १८ ॥
शुक्लपक्ष चन्दा चलै, परिवा लेहि निकार ।
फल आनँद मंगल करै, देहीको सुखसार ॥ १९ ॥
शुक्लपक्ष तिथिमें चलै, जो परिवाको भान ।
होय क्लेश पीडा कछू, कै दुख कै कछु हान ॥२०॥
शुक्लपक्ष तिथिमें चलै, जो परिवाको चन्द ।
कलह करैं पीडा करैं, हानि ताप कै द्वन्द ॥ २१ ॥
ऊपर बायें सामने, स्वर बायेंके संग ।
जो पूछै शशि योगमें, तौ नीको परसंग ॥ २२ ॥
नीचे पीछे दाहिने, स्वर सूरजको राज ।
जो कोइ पूछै आयकरि, तौ समझौ शुभकाज ॥२३॥
दहिनो स्वर जब चलत है, पूंछे बायें अंग ।
शुक्लपक्ष नहिं बार है, तो निर्फल परसंग ॥ २४ ॥
जो कोइ पूछे आयकरि, बैठि दाहिने ओर ।
बन्द चलैं सूरज नहीं, नहिं कारज विधिकोर ॥ २५ ॥

जो सूरजमें स्वर चलै, कहै दाहिने आय ।
लग्नवार अरु तिथि मिलै, कहु कारज होइ जाय ॥२६॥
जो चन्दामें स्वर चलै, बायें पूछै काज ।
तिथि अरु अक्षरवार मिलि, शुभकारजको साज ॥२७॥
सात पांच नव तीन गिन, पन्द्रह अरु पच्चीश ।
काज वचन अक्षर गिनै, भानु योगको ईश ॥ २८ ॥
चार आठ द्वादश गिनै, चौदह सोलह मीत ।
चन्दयोगके संग हैं, चरणदास रणजीत ॥ २९ ॥
कर्क मेष तुला मकर, चारौं चरती राश ।
सूरजसों चारों मिलत, चरकारज परकाश ॥ ३० ॥
मीन मिथुन कन्या कही, चौथी अरु धन मीन ।
द्विस्वभावकी सुषमना, सुरली सुत रणजीत ॥३१॥
वृश्चिक हरि वृष कुम्भ पुनि, बायें स्वरके संग ।
चन्द योगको मिलत है, थिरकारज परसंग ॥३२॥
चित अपनो अस्थिर करै, नासा आगे नैन ।
श्वासा देखै दृष्टिसों, जब पावै स्वर बैन ॥ ३३ ॥
पांच घडी पाचौ चलैं, फिरि वा चारहि वार ।
पांच तत्त्व चालै मिलै, स्वरबिच लेह निहार ॥३४॥
धरती अरु आकाश है, और तीसरी पौन ।
पानी पावक पाँचवों, करत श्वासमें गौन ॥ ३५ ॥
धरती तौ सोहीं चलै, अरु पीरो रँग देख ।
बारह अंगुल श्वासमें, सुरत निरतकर पेख ॥ ३६ ॥
ऊपरको पावक चलै, लाल वरण है भेष ।
चारि सु अंगुल श्वासमें, चरणदास औरेष ॥ ३७ ॥

नीचेको पानी चलै, श्वेत रंग है तासु ।
सोलह अंगुल श्वास में, चरणदास कहै भासु ॥३८॥
हरो रंग है वायुको, तिरछी चालै सोय ।
आठसु अंगुल श्वासमें, रणजीत मीतकरि जोय॥३९॥
स्वर दोनों पूरण चलैं, बाहर ना परकाश ।
श्याम रंग है तासुको, सोई तत्त्व अकाशं ॥ ४० ॥
जल पृथ्वीके योगमें, जो कोइ पूछै बात ।
शशिपरमें जो स्वर चलै, कह कारज ह्वै जात ॥४१॥
पावक अरु आकाश पुनि, वायु कभी जो होय ।
जो कोइ पूछै आयकरि, शुभकारज नहिं कोय॥४२॥
जल पृथ्वी थिर काजको, चरकारजको नाहिं ।
अग्नि वायु चरकाजको, दहिने स्वरके माहिं ॥४३॥
रोगीको पूछै कोऊ, बैठि चन्दकी ओर ।
धरती बायें स्वर चले, मरै नहीं विधि क्रोर ॥ ४४ ॥
रोगीको परसंग जो, बायें पूछै आन ।
चन्द बन्ध सूरज चलै, जीवै ना वह जान ॥ ४५ ॥
बहते स्वरसों आयकरि, सुन्न और जौ जाय ।
जो पूछै परसंग वह, रोगी ना ठहराय ॥ ४६ ॥
सुन्न औरसूं आयकर, पूछै बहते श्वास ।
ये निश्चै कर जानियो, रोगीको नहिं नास ॥ ४७ ॥
शून्य ओरसों आयकै, पूंछै बहते पक्ष ।
जेते कारज जगतके, सुफल होयँ यों सच्च ॥ ४८ ॥
बहते स्वरसों आय करि, शून्य ओर जो जाय ।
जो पूँछै परसंग वह, रोगी ना ठहराय ॥ ४९ ॥

बहते स्वरसे आयकरि, जो पूँछैं सुन ओर ।
जेते कारज जगतके, उलटे हो विधि क्रोर ॥ ५० ॥
कै बायें कै दाहिने, जो कोइ पूरण होय ।
पूछँ पूरण ओरही, कारज पूरण सोय ॥ ५१ ॥
बरस एकको फल लहै, ततमत जानै सोय ।
काल समौ सोई लखै, बुरो भलो जग होय ॥५२॥

संक्रायत पुनि मेष विचारै । ता दिन लगै सु घडी निहारै॥
तबहीं स्वरमें करै विचारा । चलै कौन सो तत्त्व नियारा॥
जो बायें स्वर पिरथी होई । नीकी तत्त्व कहावै सोई ॥
देश वृद्धि अरु समै बतावै । परजा सुखी मेह बरसावै ॥
चारा बहुत ठौरकों उपजै । नर देहीको अन्न बहु निपजै ॥
जल चालै बायें स्वर माहीं । धरती फलै मेह बरसाहीं ॥
आनँद मँगलसो जग रहै । आपतत्त्व चन्दामें बहै ॥
जल धरती दोनों शुभ भाई । चरणदास शुकदेव बताई ॥
तीन तत्त्वका कहौं विचारा । स्वर में जाको भेद निहोरा ॥
लगै मेष संक्रायत जबहीं । लगती घडी विचारे तबहीं ॥
अग्नि तत्त्व स्वरमें जब चालै । रोग दोषमें परजा हालै ॥
काल पडै थोडासा बरसै । देश भंग जो पावक दरसै ॥
वायु तत्त्व चालै स्वर संगा । जग भयमान होय कछु दंगा॥
अर्थकाल थोडासा बरसे । वायुतत्त्व जो स्वरमें दरसे ॥
तत्त्व अकाश स्वर चालैं दोई । मेह न बरसे अन्न न होई ॥
काल पडे तृण उपजै नाहीं ।तत्त्व अकाश जो हो स्वरमाहीं॥

दोहा-चैत महीना मध्यमें, जबहीं परिवा होय ।
शुक्लपक्ष तादिन लगै, प्राप्त श्वासमें जोय ॥ ५३ ॥

भोरहि परिवा को लखै पृथ्वी होय सुथान ।
होय समौ परजा सुखी, राजा सुखी निदान ॥ ५४ ॥
नीर चलै जो चन्दमें, यही समैकी जीत ।
घन बरसै परजा सुखी, संवत् नीको मीत ॥ ५५ ॥
पृथ्वी पानी समौ जो, बहै चन्द अस्थान ।
दहिने स्वरमें जो बहै, समौ सुमध्यम जान ॥ ५६ ॥
भोरहि जो सुषमन चलै, राज होय उतपात ।
देखनवारो विनशि है, और काल पडिजात ॥ ५७ ॥
राज होय उत्पात पुनि, पडै काल विसवास ।
मेह नहीं परजा दुखी, जो हो तत्त्व अकास ॥ ५८ ॥
श्वासामें पावक चलै, परे काल जब जान ।
रोग होय परजा दुखी, घटै राजको मान ॥ ५९ ॥
भय कलेश हो देशमें, विग्रह फैलै अत्त ।
परै काल परजा दुखी, चलै वायुको तत्त ॥ ६० ॥
संक्रायत अरु चैतको, दीन्हो भेद लखाय ।
जगतकाज अब कहत हूं, चन्दसूरको न्याय ॥ ६१ ॥

ब्याह दान तीरथ जो करै । वस्तर भूषण घर पद धरै ॥
बायें स्वरमें ये सब कीजे । पोथी पुस्तक जो लिखि लीजै ॥
योगाभ्यास रु कीजे प्रीत । औषधि बाडी कीजै मीत ॥
दीक्षा मंतर बोवै नाज । चन्द्र योग थिर बैठे राज ॥
चन्द्र योगमें अस्थिर जानौ । थिरकारज सबही पहिचानौ ॥
करै हवेली छप्पर छावै । बाग बगीचा गुफा बनावै ॥
हाकिम जाय कोटमें वरै । चन्द्र योग आसन पग धरै ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । चन्द्रयोग थिरकाज कहावै ॥

दोहा-बायें स्वरके काज ये, सो मैं दिये बताय ।
दहिने स्वरके कहत हौं, ज्ञान स्वरोदय गाय ॥६२॥

जो खांडौ कर लीयो चाहै । जाकर बैरी ऊपर बाहै ॥
युद्ध वाद रण जीतै सोई । दहिने स्वरमें चालै जोई ॥
भोजन करै करै असनाना । मैथुन कर्म ध्यान परधाना ॥
बही लिखै कीजै व्योहारा । गज घोडा बाहन हथियारा ॥
विद्या पढै नई जो साधै । मंतर सिद्ध ध्यान आराधै ॥
वैरी भवन गवन जो कीजै । अरु काहूको ऋण जो दीजै ॥
ऋण काहुपैं जो तू मांगै । विष अरु भूत उतारन लागै ॥
चरणदास शुकदेव विचारी । ये चर कर्म भानुकी नारी ॥

दोहा-चर कारजको भानु है, थिर कारजको चन्द ।
सुषमन चलत न चालिये, तहां होय कुछ द्वंद ॥६३॥
गावँ परगने खेत पुनि, ईधर ऊधर मीत ।
सुखमन चलत न चालिये, बरजत है रणजीत ॥६४॥
क्षण बायें क्षण दाहिने, सोई सुषमन जानि ।
ढील लगै कै ना मिलै, कै कारजकी हानि ॥६५॥
होय क्लेश पीडा कछू, जो कोई कहि जाय ।
सुषमन चलत न चालिये, दीन्हों तोहि बताय ॥६६॥
योग करौ सुखमन चलै, कै आतमको ध्यान ।
और काज कोई करै, तौ कुछ आवै हान ॥ ६७ ॥
पूरब उत्तर मत चलै, बायें स्वर परकाश ।
हानि होय बहुरै नहीं, आवनकी नहिं आश ॥६८॥
दहिने चलत न चालिये, दक्षिण पश्चिम जानि ।
जोर जाय बहुरै नहीं, तहाँ होय कछु हानि ॥६९॥

दहिने स्वरमें जाइये, पूरब उत्तर राज ।
सुख संपति आनँद करै, सभी होय सुखकाज ॥७०॥
बायें स्वरमें जाइये, दक्षिण पश्चिम देश ।
सुख आनँद मंगल करै, जो जावै परदेश ॥ ७१ ॥
दहिने सेती आयकरि, दहिने पूछै धाय ।
जो दहिनो स्वर बंध है, कारज अफल बताय ॥ ७२ ॥
दहिने सेती आय करि, बाँये पूछै कोय ।
जो बावों स्वर बंध है, सुफल काज नहिं होय ॥७३॥
जब स्वर भीतरको चलै, कारज पूछै कोय ।
पैज बांधि वासों कहौ, मनसा पूरण होय ॥७४॥
जब स्वर बाहरको चलै, तब कोइ पूछै तोर ।
वाको ऐसे भाषिये, विधि नहिं काज करोर ॥ ७५ ॥
बांई करवट सोइये, जल बायें स्वर पीव ।
दहिने स्वर भोजन करै, तो सुख पावै जीव ॥ ७६ ॥
बायें स्वर भोजन करै दहिने पीवै नीर ।
दश दिन भूलो यों करे, आवै रोग शरीर ॥७७॥
दहिने स्वर झाडे फिरै, बायें लघुशंकाय ।
युक्ती ऐसी साधिये, दीन्हों भेद बताय ॥ ७८ ॥
चन्द चलावै द्योसको, रैनि चलावै सूर ।
नित साधन ऐसे करै, होय अमर भरपूर ॥ ७९ ॥
जितनोही बावों चलै, सोई दहिनो होय ।
दश श्वासा सुखमन चलै, ताहि विचारो लोय॥८०॥
आठ पहर दहिनो चलै, बदलैं नहीं जु पौन ।
तीन बरस काया रहै, जीव करै फिरि गौन ॥ ८१ ॥

सोलह पहर चलै जभी, श्वास पिंगला माहिं ।
युगल बरस काया रहै, पीछे रहनो नाहिं ॥८२॥
तीन रात अरु तीन दिन, चलै दाहिनो श्वास ।
संवत भर काया रहै, पाछे होवै नाश ॥८३॥
सोलह दिन निशि दिनचलै श्वास भानुकी ओर ।
आयु जान इक मासकी, जीव जाय तन छोर ॥८४॥
नौ भृकुटी सप्त श्रवण, पांच तारका जान ।
तीन नाक जिह्वा इकै, काल भेद पहिंचान ॥ ८५ ॥
भेद गुरूसों पाइये, गुरु बिन लहै न ज्ञान ।
चरणदास यों कहत है, गुरुपर वारों प्रान ॥ ८६ ॥
एक मास जो रैनि दिन, भानु दाहिनो होय ।
चरणदास यों कहत है, नर जीवै दिन दोय ॥८७॥
नाडी जो सुषमन चलै, पांच घडी ठहराय ।
पांच घडी सुषमन बहै, तबहीं नर मरि जाय॥ ८८ ॥
नहीं चन्द्र नहिं सूर है, नहीं सुषुम्ना बाल ।
मुखसेवी श्वासा चलै, घडी चारमें काल ॥ ८९ ॥
चारि दिना कै आठ दिन, बारह कैदिन बीश ।
ऐसे जो चंदा चलै, आयु जान बड ईश ॥ ९० ॥
तीन रात अरु तीन दिन, चालै तत्त्व अकाश ।
एक बरस काया रहै, फेर काल विशवास ॥ ९१ ॥
दिनको तौ चन्दा चलै, चलै रातको सूर ।
यह निश्चय करि जानिये, प्राण गमन बहु दूर॥९२॥
रात चलै स्वर चन्दमें, दिनको सूरज बाल ।
एक महीना यों चलै, छठे महीने काल ॥ ९३ ॥

जब साधू ऐसी लखै, छठे महीने काल ।
आगेही साधन करै, बैठि गुफा ततकाल ॥९४॥
ऊपर खैंचि अपानको, प्राण अपान मिलाय ।
उत्तम करै समाधिको, ताको काल न खाय ॥९५॥
पवन पियै ज्वाला पचै, नाभितले करि राह ।
मेरुदंडको फेरिकै, बसै अमरपुर जाह ॥९६॥
जहाँ काल पहुँचै नहीं, यमकी होय न त्रास ।
नभमण्डलको जायकरि, करै उनमनी वास ॥९७॥
जहां काल नहिं ज्वाल है, छुटै सकल सन्ताप ।
होय उनमनी लीन मन, बिसरै आपा आप ॥९८॥
तीनों बन्ध लगायकै, पञ्चवायुको साध ।
सुषमन मारग ह्वै चलै, देखै खेल अगाध ॥९९॥
शक्ति जाय शिवमें मिलै, जहां होय मन लीन ।
महा खेचरी जो लगै, जानै ज्ञान प्रवीन ॥१००॥
आसन पद्म लगाय करि, मूलबन्धको बाँधि ।
मेरुदण्ड सीधो करै, सुरति गगनको साधि ॥१०१॥
चन्द सूर दोउ सम करै, ठोढी हिये लगाय ।
षट चक्करको वेधिकरि, शून्य शिखरको जाय॥१०२॥
इडा पिंगला साधिकरि, सुषुमनमें करि वास ।
परम ज्योति झिलमिल तहाँ, पूजै मन विश्वास॥१०३॥
जिन साधन आगे करी, तासों सब कछु होय ।
जब चाहै जबहीं तभी, काल बचावै सोय ॥ १०४ ॥
तरुण अवस्था योग करि, बैठि रहै मन जीत ।
काल बचावै साध वह,अन्त समय रणजीत॥१०५॥

सदा आपमें लीन रहु, करिकै योगाभ्यास ।
आवत देखै काल जब, नभमण्डल कर वास ॥१०६॥
शनै शनै सो साधिकरि, राखै प्राण चढाय ।
पूरो योगी जानिये, ताको काल न खाय ॥१०७॥
पहिले साधन ना कियो, नभमण्डलको जान ।
आवत जानै काल जब, कहा करै अज्ञान ॥१०८॥
योग ध्यान कीन्हों नहीं, ज्वान अवस्था मीत ।
आगम देखै कालको, कहा सकै वह जीत ॥१०९॥
काल जीत हरिसों मिलै, शून्य महल अस्थान ।
आगे जिन साधन करी, तरुन अवस्था जान॥११०॥
काल अवधि बीतै तभी, जबै बीति सब जाय ।
योगी प्राण उतारिये, लेहि समाधि लगाय ॥१११॥
काल जीति जगमें रहै, मौत न व्यापै ताहि ।
दशों द्वारको फोरिकै, जब चाहै तब जाहि ॥११२॥
सूरजमण्डल चीरिकै, योगी त्यागे प्राण ।
सायुज्यमुक्ति सोई लहे, पावै पद निर्वाण ॥ ११३ ॥
कृष्णपक्षके मध्यमें, दक्षिण होय जु भान ।
योगी वपु नहिं छाडिये, राज होय फिरि आन॥११४॥
राज पाय हरि भक्तिकर, पूरबली पहिचान ।
योग मुक्ति पावै बहुरि, दूसर मुक्ति निदान ॥११५॥
उतरायण सूरज लखै, शुक्लपक्षके माहिं ।
योगी काया त्यागिये, यामें संशय नाहिं ॥ ११६ ॥
मुक्ति होय बहुरै नहीं, जीव खोज मिटि जाय ।
बुन्द समुन्दर मिलि रहै, दुतिया ना ठहराय ॥११७॥

दक्षिणायन सूरज रहै, रहै मास षट जानि ।
फिरि उतरायण जाय करि, रहै मासषट मानि ॥ ११८ ॥
दोनों स्वरको शुद्ध करि, श्वासामें मन राखि ।
भेद स्वरोदय पाय करि, तब काहूसों भाखि ॥ ११९ ॥
जो रण ऊपर जाइये, दहिने स्वर परकाश ।
जीति होय हारै नहीं, करै शत्रुको नाश ॥ १२० ॥
दुर्जनको स्वर दाहिनो, तेरो दहिनो होय ।
जो कोई पहिले चढ़ै, खेत जीति है सोय ॥ १२१ ॥
सुषमन चलत न चाहिये, युद्ध करनको मीत ।
शीश कटावै कै फँसै, दुर्जन होवै जीत ॥ १२२ ॥
जो बायें पृथ्वी चलै, चढि आवै कोइ भूप ।
आप बैठि दल पेलिये, बात कहत हौं गूप ॥ १२३ ॥
जल पृथ्वी स्वरमें चलै, सुनै कान दै बीर ।
सुफल काज दोनों करै, कै धरती कै नीर ॥ १२४ ॥
पावक अरु आकाश तत, वायु तत्त्व जो होहिं ।
कछू काज नहिं कीजिये, इनमें बरजौं तोहिं ॥ १२५ ॥
दहिनो स्वर जब चलत है, कहीं जाय जो कोय ।
तीन पाँव आगे धरै, सूरजको दिन होय ॥ १२६ ॥
दहिने स्वरमें जाइये, बायें पग धरि चार ।
बावाँ डग पहिले धरै, होय चन्द्रको बार ॥ १२७ ॥
दहिने स्वरमें जाइये, दहिने डग धरि तीन ।
बायें स्वरमें चारि डग, बावों कर परवीन ॥ १२८ ॥
गर्भवतीके गर्भको, जो कोइ पूछे आय ।
बाल होय कै बालकी, जीवै कै मरि जाय ॥ १२९ ॥

बाल परीक्षा होनकी, जो कोउ पूछै तोहिं ।
बायें कहिये छोकरी, दहिने बेटा होहिं ॥१३०॥
दहिने स्वरके चलतही, जो वह पूछे आय ।
वाको बावों स्वर चलै, बालक हो मरिजाय॥१३१॥
दहिने स्वरके चलतही, जो वह पूछै बैन ।
वाहूको दहिना चले, लरिका हो सुख चैन ॥१३२॥
बायें स्वर के चलतही, आय कहै जो कोय ।
बेटी ह्वै जीवै नहीं, वाको दहिनो होय ॥१३३॥
बायें स्वरके चलत ही, जो वह पूछे बात ।
वाहूको बावों चलै, पुत्रि होय कुशलात ॥१३४॥
तत्त्व आकाश के चलत ही, कहै गर्भकी आय ।
होय नपुंसक हीजडा, कै सतवाँसो जाय ॥१३५॥
लेत परीक्षा गर्भकी, जो कोइ पूछै आय ।
अग्नि होय जो ता समै, ओछाही गिरिजाय॥१३६॥
क्षण बायें क्षण दाहिने, दो स्वर सुषमन होय ।
पूछनवारेसों कहौ, बालक उपजै दोय ॥१३७॥
वायु तत्त्वके चलत ही, जो कोउ पूछे आय ।
छाया हो बाढै नहीं, पेटै माहिं मिटाय ॥१३८॥
जो कोई पूछै आयकै, याको गर्भकि नाहिं ।
दहिनो बावों स्वर लखै,साधि श्वासके माहिं॥१३९॥
बन्ध ओर जो आयकरि, ह्वै पूछै जो कोय ।
बन्ध और तौ गर्भ है, बहते स्वर नहिं होय॥१४०॥
इडा पिंगला सुषमना, नाडी कहिये तीन ।
सूरज चन्द्र विचारिकै, रहै श्वास लवलीन ॥१४१॥

जैसे कछुआ सिमिटि करि, आपी माहिं समाय ।
ऐसे ज्ञानी श्वासमें, रहै सुरति लवलाय ॥ १४२ ॥
श्वास बाण बैंकोडकी, आव जान नरलोय ।
बीत जाय श्वासा जबै, तबहीं मृत्यक होय ॥१४३॥
इकइस सहस छसै चलै, रात दिना जो श्वास ।
बीसा सौ जीवै वरष, होय अघनको नास ॥१४४॥
अकाल मृत्यु कोई मरै, होकरि भुगतै भूत ।
श्वास जहां बीतै सभी, जब आवै यमदूत ॥१४५॥
चारौं संयम साधि करि, श्वासा युक्ति चलाय ।
अकाल मृत्यु आवै नहीं जीवै पूरी आय ॥ १४६ ॥
सूक्षम भोजन कीजिये, रहिये ना पडि सोय ।
जल थोरोसो पीजिये, बहुत बोल मत खोय॥१४७॥

कु०-मोक्ष मुक्ति तुम चहत हो, तजौ कामना काम ।
मनकी इच्छा मेटकरि, भजौ निरञ्जन नाम ॥
भजो निरञ्जन नाम,तत्त्वदेह अध्यास मिटावो ।
पञ्चनके तजि स्वाद, आपमें आप समावो ॥
जब छूटै झूठी देह, जैसेके तैसे रहिया ।
चरणदास यहि मुक्ति, गुरुने हमसों कहिया ॥

दोहा-देह मरै तू है अमर, पारब्रह्म है सोय ।
अज्ञानी भटकत फिरै, लखै सो ज्ञानी होय॥१४८॥
देह नहीं तू ब्रह्म है, अविनाशी निर्वान ।
नित न्यारो तू देहसों, देह कर्म सब जान॥१४९॥
डोलन बोलन सो बनो, भक्षण करन अहार ।
दुख सुख मैथुन रोग सब,गरमी शीत निहार॥१५०॥

जाति वरण कुल देहकी, सूरति मूरति नाम ।
उपजै विनशै देहसों, पांच तत्त्वको नाम ॥ १५१ ॥
पावक पानी वायु है, धरती और अकास ।
पांच तत्त्व के कोटमें, आय कियो तैं वास ॥१५२॥
पांच पचीसौ देह सँग, गुण तीनों हैं साथ ।
घट उपाधि सो जानिये, करत रहैं उतपात ॥१५३॥
जिह्वा इन्द्री नीरकी, नभकी इन्द्री कान ।
नासा इन्द्री धरणिकी, करि विचार पहिंचान॥१५४॥
त्वचा सुइन्द्री वायुकी, पावक इन्द्री नैन ।
इनको साधै साधु जो, पद पावै सुख चैन ॥१५५॥
निद्रा संगम आलसक, भूँख प्यास जो होय ।
चरणदास पाँचों कही, अग्नि तत्त्वसों जोय ॥१५६॥
रक्त बिन्दु कफ तीसरो, मेद मूत्रको जान ।
चरणदास पर कीरति ये, पानीसों पहिचान ॥१५७॥
चाम हाड नाडी कहूँ, रोम जान अरु माँस ।
पृथ्वीकी परकिरति ये, अन्त सबनको नास ॥१५८॥
बल करना अरु धावना, उठना अरु संकोच ।
देह बढै सो जानिये, वायु तत्त्व है शोच ॥ १५९ ॥
काम क्रोध मद लोभ भै, तत आकाशको भाग ।
नभकी पांचों जानिये, नित न्यारो जू जाग॥१६०॥
पांचों पचीसौ एकही, इनके सकल स्वभाव ।
निर्विकार तू ब्रह्म है, आप आपको पाव ॥ १६१ ॥
निराकार निर्लिप्त तू, देही जान अकार ।
आपनि देही मान मत, यही ज्ञान ततसार ॥१६२॥

शस्तर छेदि सकै नहीं, पावक सकै न जारि।
मरै मिटै सो तू नहीं, गुरुगम भेद निहारि ॥१६३॥
जलै कटै काया यही, बनै मिटै फिरि होय।
जीवऽविनाशी नित्य है, जानै विरला कोय ॥१६४॥
आँख नाक जिह्वा कहूं, त्वचा जान अरु कान।
पांचौ इन्द्री ज्ञान ये, जानै जान सुजान ॥ १६५ ॥
गुदा लिंग मुख तीसरो, हाथ पाँव लखि लेह।
पाचौं इन्द्री कर्म हैं, यह भी कहिये देह ॥१६६॥
पृथ्वी काल जे ठौर है, मुखै जानिये द्वार।
पीली रग पहिचानिये, पीवन खान अहार ॥१६७॥
पित्ते में पावक रहै, नैन जानिये द्वार।
लालरंग है अग्निको, मोह लोभ आहार ॥ १६८ ॥
जलको बासा भाल है, लिंग जानिये द्वार।
मैथुन कर्म अहार है, धौलो रंग निहार ॥१६९॥
पवन नाभिमें रहत है, नासा जानि दुआर।
हरो रंग है वायु को, गंध सुगन्ध अहार ॥१७०॥
अकाश शीशमें वास है, श्रवण दुआरो जान।
शब्द कुशब्द अहार है,ताका श्याम पिछान॥१७१॥
कारण सूक्षम लिंग है, अरु कहियत अस्थूल।
शरीर तीनसों जानिये, मैं मेरी जड मूल ॥ १७२ ॥
चित बुधि मन अहंकार जो, अन्तःकरण सुचार।
ज्ञान अग्निसों जारिये, करि करि मीन विचार॥१७३॥
शब्द स्पर्श रु गन्ध है, अरु कहियत रसरूप।
देह कर्म्म तन मातरा, तू कहियत निहरूप ॥१७४॥

निराकार अद्वै अचल, निरवासी तू जीव ।
निरालम्ब निर्वैरसो, अज अविनासी सीव ॥१७५॥
बाएँ कोठा अग्निको, दहिने जल परकाश ।
मन हिरदय अस्थान है, पवन नाभिमें वास॥१७६॥
मूल कमलदल चारको, लाल पँखुरी रंग ।
गौरी सुत वासो कियो, छस्यै जाप इकंग ॥ १७७ ॥
षटदल कमल पियरे वरण, नाभी तल संभाल ।
षट्सहस्र जपि जाप ले, ब्रह्म सवित्री नाल ॥१७८॥
दश पैंखरी कमल है, नील वरण सो नाभ ।
विष्णू लक्ष्मीवास कियो,षट्सहस्र जप जाप॥१७९॥
अनहद चक्र हृदय रहै, द्वादश दल अरु श्वेत
षट् सहस्र जपि जापले, शिवशक्ती तहँ हेत॥१८०॥
षोडश दलको कमल है, कण्ठवास शशिरूप ।
जाप सहस्र जहाँ जपै, भेद लहै अति गूप ॥१८१॥
अग्निचक्र दो दल कमल, भृकुटी धाम अनूप ।
जाप सहस्र जहाँ जपै, पावै ज्योति स्वरूप ॥१८२॥
दल हजारको कमल है, नभ मण्डलमें बास ।
जाप सहस्र जहाँ जपै, तेजपुंज परकास ॥ १८३ ॥
योगयुक्ति करि खोजि ले, सुरत निरत करचीन ।
दश प्रकार अनहद बजै, होय जहाँ लवलीन॥१८४॥

कु०-एक भँवर गुँजारसी, दूजै घुंघुरू होय ॥
तीजे शब्द जु शंखका, चौथे घण्टा सोय ॥
चौथे घण्टा सोय, पांचवें ताल जु बाजै ॥
छठे मुमुरली नाद, सातवें भेरि जु गाजै ॥

अठवें शब्द मृदंगका, नाद नफीरी नोय ॥
दशवें गरजनि सिंहसी, चरणदास सुनि लोय ॥

दोहा–दश प्रकार अनहद घुरैं, जित योगी होय लीन ।
इन्द्री थकि मनुआँ थकै, चरणदास कहि दीन॥१८५॥
तीन बन्ध नौ नाटिका, दश बाईको जान ।
प्राण अपान समान है, अरु कहियत उदान॥१८६॥
व्यानवायु अरु किरकिरा, कूरम बाई जीत ।
नाग धनंजय देवदत, दश बाई रणजीत ॥ १८७ ॥
नवों द्वारको बन्द करि, उत्तम नाडी तीन ।
इडा पिंगला सुषमना, केलि करैं परबीन ॥१८८॥
करते प्राणायामके, तर गये पतित अनेक ।
अनहद ध्वनि के बीचमें, देखै शब्द अलेख ॥१८९॥
पूरक करि कुम्भक करै, रेचक पवन उतार ।
ऐसे प्राणायाम करि, सूक्ष्म करै अहार ॥ १९० ॥
धरती बन्ध लगायकै, दशौ बन्धको रोक ।
मस्तक प्राण चढाय करि, करै अमरपुर भोग॥१९१॥
पांचौं मुद्रा साधि करि, पावै घटको भेद ।
नाडी शक्ति चढाइये, षट चक्करको छेद ॥१९२॥
योग युक्ति कै कीजिये, कै अजपाको ध्यान ।
आपा आप विचारिये, परम तत्त्वको ज्ञान ॥१९३॥
शूद्र रु वैश्य शरीर है, ब्राह्मण औ रजपूत ।
बूढा बाला तू नहीं, चरणदास अवधूत ॥१९४॥
काया माया जानिये, जीव ब्रह्म है मित्त ।
काया छुटि सूरत मिटे, तू परमातम नित्त ॥१९५॥
पाप पुण्य आशा तजो, तजौ मान अरु थाप ।
काया मोह विकार तजि, जपै सुअजपा जाप॥१९६॥

आप भुलानो आपमें, बँधो आपही आप ।
जाको ढूँढत फिरत है, सो तू आपहि आप ॥१९७॥
इच्छा दुई बिसारिकै, होय क्यों न निर्वास ।
तू तौ जीवन्मुक्त है, तजो मुक्तकी आस ॥१९८॥
पवन भई आकाशसों, अग्नि वायुसों होय ।
पावकसों पानी भयो, पानी धरती सोय ॥१९९॥
धरती मीठे स्वाद है, खारी स्वाद सुनीर ।
अग्नि चरफरो स्वाद है, खट्टो स्वाद समीर ॥२००॥
खट्टा मीठा चरफरा, खारी पर मन होय ।
जबही तत्त्व विचारिये, पांच तत्त्वमें कोय ॥ २०१ ॥
स्वाद नाय अरु रंग है, और बताई चाल ।
पाँच तत्त्वकी परख यह, साधि पाव ततकाल॥२०२॥
तिरकोनी पावक चलै, धरती तौ चौकोन ।
शून्य स्वभाव आकाश को,पानी लांबो गोल॥२०३॥
अग्नि तत्त्व गुण तामसी, कही रजोगुण वाय ।
पृथ्वी नीर सतोगुणी, नभ है अस्थिर भाय ॥२०४॥
नीर चलै जब श्वासमें, रण ऊपर चढि मीत ।
वैरीको शिर काट करि, घर आवै रणजीत ॥२०५॥
पृथ्वी के परकाशमें, युद्ध करै जो कोय ।
दोउ दल रहैं बराबरी, हारि वायुमें होय ॥ २०६ ॥
अग्नि तत्त्वके बहुत ही, युद्ध करन मति जाव ।
हारि होय जीतै नहीं, अरु आवै तन घाव ॥२०७॥
तत्त्व आकाशमें जो चलै, तौ ह्वांई रहि जाय ।
रणमाहीं काया छुटै, घर नहिं देखै आय ॥ २०८ ॥
जल पृथ्वीके योगमें, गर्भ रहै सो पूत ।
वायु तत्त्वमें छोकरी, आँबर सूतक सूत ॥ २०९ ॥

पृथ्वी तत्त्वमें गर्भ जो, बालक होवै भूप ।
धनवन्ता सोइ जानिये, सुन्दर होय स्वरूप ॥२१०॥
अग्नि तत्त्व जब चलत है, कभी गर्भ रहिजाय ।
गर्भ गिरै माता दुखी, हो माता मरि जाय ॥२११॥
वायु तत्त्व स्वर दाहिने, करै पुरुष जब भोग ।
गर्भ रहै जो ता समै, देही आवै रोग ॥२१२॥
आसन संयम साधि करि, दृष्टि श्वासके माहिं ।
तत्त्वभेद यों पाइये, बिन साधे कुछ नाहिं ॥२१३॥
आसन पद्म लगायकै, एक बरत नित साध ।
बैठे लेटे डोलते, श्वासाही आराध ॥ २१४ ॥
नाभि नासिकामाहिं करि, सोहं सोहं जाप ।
सोई अजपा जाप है, छुटै पुण्य अरु पाप ॥ २१५ ॥
भेद स्वरोदय बहुत हैं, सूक्षम कह्यो बनाय ।
ताको समझि विचारि ले, अपनो चितमन लाय२१६॥
धरणि टरै गिरिवर टरै, ध्रुव टरै सुन सीत ।
वचन स्वरोदय ना टरै, कहैं दास रणजीत ॥२१७॥
शुकदेव गुरुकी दयासों, साधु दया सों जान ।
चरणदास रणजीतने, कह्यो स्वरोदय ज्ञान ॥२१८॥

छप्पै-डहरेमें मेरो जनम नाम रणजीत बखानो ।
मुरलीको सुत जान जात दूसरि पहिंचानो ॥
बाल अवस्था माहिं बहुरि दिल्लीमें आयो ।
रमत मिले शुकदेव नाम चरणदास धरायो ॥
योगयुक्ति हरिभक्ति करि ब्रह्मज्ञान दृढ करि गह्यो ।
आतमतत्त्व विचारिकै अजपामें सनि मन रह्यो ॥

इति ज्ञानस्वरोदय ॥ ७ ॥

श्रीहंसावताराय नमः



पंच उपनिषत् प्रारम्भ

हंसनाद उपनिषद् ८

(अथर्वणवेदीय)

★

दोहा—बन्दन श्रीशुकदेवको, उनको हियमें लाय ।
छिप्यो भेद परगट कियो, परमारथके दाय ॥ १ ॥
सहंसकृत भाषा करी, ताको यह दृष्टान्त ।
खोलि खोलि सबही कही, समझे छूटै भ्रान्त ॥ २ ॥
ज्यों कूयेसों नीर ले, बाहर दियो भराय ।
बिना यतन कोई पियो, तिरषावन्त अघाय ॥ ३ ॥
पौ दीन्ही शुकदेवने, मैं जल काढनहार ।
प्यासा कोइ न जाइयो, टेरों बारम्बार ॥ ४ ॥
ब्राह्मण क्षत्री वैश्य जो, अरु शूद्रहु जो होय ।
वह पीवेगा हेत करि, बहु प्यासा जो कोय ॥ ५ ॥
मुक्ति नीरकी प्यास जो, काहूकोही होय ।
और मनुष्य जग प्यासमें, रहे जो मृत्युक होय॥६॥

यह जग ऐसो जानिये, मृगतृष्णाको नीर ।
निकट जाय प्यासा कोई, कभी न भागे पीर ॥७॥
उनकी प्यास बुझे नहीं, होय नहीं हिय चैन ।
ज्ञान सुधा तजि जात है, धोखेको जल लैन ॥ ८ ॥
ज्ञान नीर तिरपत भये, निश्चय बैठे दास ।
संसारी प्यासे गये, पूरी भई न आस ॥ ९ ॥
सहंसकृत या कूपसम, भाषा नीर निकास ।
प्याऊं जिज्ञासूनको, तिनकी भगै पियास ॥ १० ॥

अष्टपदी

वेदहिकी उपनिषद जु मैं भाषा करी । जो कुछ था वहि माहिं सोई जैसे धरी॥सुनि समझै मन माहिं और करनी करै। आवागमन मिट जाय नहीं देही धरै ॥ जगकी बाधा छूटि मुक्ति पद पावई । जाग्रत पहुँचे ठौर स्वप्न विसरावई ॥ तिमिर सभी भजि जाय उजारा होय है। सूझै आतमरूप द्वैतता खोय है॥ उपजै अति आनन्द द्वन्द्व दुख जाय है । तिरपति निर्मलज्ञान विज्ञान अघाय है ॥ जोपै करै विचार और गुरूसों लहै। वाकी गहनी गहै और रहनी रहै ॥ गुरु शुकदेव प्रताप सो चितते गाइया । चरणदास होय सबन शिर नाइया ॥

दोहा—पूजे ऋषि मुनि देवता, पूजे इन्द्रहु भूप ।
पूजा सबही सृष्टिको, देखा हरिके रूप ॥ ११ ॥
सर्वत्रहि प्रभु देखि करि, सबको शीश नवाय
उपनिषदें जो वेदकी, परगट कही बनाय ॥ १२ ॥

अष्टपदी

प्रथम प्रगट करि दई छिपेही भेदकी । हंसनाद अहिनाम अथर्वण वेदकी॥ गौतम ऋषि करि चाव ऋषीश्वरपै गये। संत

सुजान जु नाम बहुत आदर किये॥ गौतम अस्तुति करी बहुतही प्रीतिसों। फिरि पूछी यह बात जु लघुता रीतिसों॥ परमेश्वर पहिचान मोहिं समुझाइये। मुक्त होनेके पंथ सबै जु दिखाइये॥ ह्वैकर बहुत प्रसन्न ऋषीश्वर बोलिया। गौरी अरु महादेवकी चरचा खोलिया॥ सब देवनके देव सदाशिव हैं सही। उपनिषदें जो वेदकी गौरीसों कही। सो मैं तुमसों कहौ प्रीतिके भावसों। तुमहूँ नीके सुनो अधिकही चावसों॥ गुप्त महा यह भेद हियेमें राखिये। जो जड मूरख होय तासु नहिं भाखिये॥

दोहा-हरिभक्ता अरु गुरुमुखी, तप करने की आस।
सत्संगी सांचा यती, ताहि देहु चरणदास॥ १३॥

अष्टपदी-अब मैं कहौं सँभाल सुरत ह्यां दीजिये। यह तौ अचरज कथा श्रवण सुनि लीजिये॥ वही श्वास कहि हंस आय अरु जाय है। पूरा सतगुरु मिलै तौ भेद लखाय है। जो कोउ याको समझि करै अरु ध्यानहीं। ऋद्धि सिद्धि सुख होहिं जु उपजै ज्ञानहीं॥ अन्त मुक्तिही होय अभै पदमें रहै॥ बहुरो जन्म न होय परम आनँद लहै॥ अब मैं वरणौं हंस और परम-हंसही। जो समझै ह्वै ब्रह्म जाय सब संशही॥ हंस हंस जो मंत्र अर्थ पहिचानिये॥ वह मैं हू यों कहै निश्चय करि जानिये॥ यह मन्तर सब माहिं सदाही भरि रह्यो। कोटिनमें कोइ जानि ध्यान सोइ धरि रह्यो॥ जैसे काठमें आगि तिलोंमें तेल है। तैसे सब घटमाहिं इसीका मेल है॥

दोहा-दूध मध्य ज्यों घीव है, मेहँदी माहीं रंग।
यतन बिना निकसै नहीं, चरणदास सो ढंग॥ १४॥
जो जानै या भेदको, और करै परवेश।
सो अविनाशी होत है, छूटै सकल कलेश॥ १५॥

अष्टपदी–तनमथनेको यतन कहू अब जानिये। ज्यों निकसै ततसार बिलावन ठानिये॥ पहिले चक्कर[1] जानि मूलद्वारे विषे। जित ही पाँवकी एँडी बन्ध दे रखे॥ मूल चक्रसों खैंचि अपान चलाइये। दूजे[2] चक्कर पास जु आनि फिराइये॥ दहिनी ओरसों तीनि लपेटे दीजिये। तीजे[3] चक्कर माहिं गमन फिरि कीजिये। चौथे[4] चक्कर माहिं पवन जो लाइये। बहुरौ पँचवें[5] चक्रमें जु पहुँचाइये॥ छठवें[6] चक्करमाहिं जु ताहि चढाइये। सो त्रिकुटीके मध्य तहां ठहराइये॥ रोंके त्रिकुटी माहिं प्राणके वायुको। पट चक्करको छेदि चढै जब धायको॥ अपान वायु चढि जाय वही अस्थान है। प्राणवायु ह्वै जाय साधु कोई जान है॥ रोंकै प्राणही वायु त्रिकुटी मध्यही। ओंकार करै ध्यान शीशमें मध्यही॥ यह तौ ऊंचा ध्यान जु अधिक अनूपही। चरणहिं दासा होय जु ब्रह्मस्वरूपही॥

दोहा–नाम ब्रह्मका है नहीं, है तो वह ओंकार।
जानै आपनको वही, मैं हौं तत्त्व अपार॥ १६॥

अष्टपदी–अनहद शब्द अपार दूरसों दूर है। चेतन निर्मल शुद्ध देह भरपूर है॥ ताहि निरक्षर जान और निष्कर्म है। परमातम तेहि मानि वही परब्रह्म है॥ हृदयकमलके माहिं ध्यान सोहं करै। वाही अजपा जान सुरति मन लै धरै॥ विन जपे जप होय सुसाँची बातही। सहज इकीश अरु छस्सै जहां दिन रातही॥ याको कीजै ध्यान होत है ब्रह्महो। धारै तेज अपार जाहि सब संसही॥ वा पटतर कोइ नाहिं जु योंही जानिये। चन्द सूर्य अरु सृष्टिके माहिं पिछानिये॥ सो वह तेज अपार

---

१ मूलाधारचक्र। २ स्वाधिष्ठान। ३ मणिपूरक। ४ अनाहत। ५ विशुद्ध। ६ सहस्रदल पद्म।

आपको मानिये। निश्चय अरु वहि साँच जु मनमें आनिये॥ जबलग वाही भेद जो जाना था नहीं। जीवातम अरु हंस हो रहाथा तहीं॥ जभी अगोचर भेद जु मन माहीं लहा। परमातम परमहंसरूप निश्चय भया॥

दोहा-जो जीवातम सौ भया, परमातम अरु ब्रह्म।
वाकी सरबरि को करै, पाई परै न गम्य॥ १७॥
पहुँचै ना वा तेजको, कोटि, कोटिही भान।
चरणदास कोइ जानहीं, ताको निर्मल ज्ञान॥१८॥

अष्टपदी-परम ज्योतिको प्रापत सो नर होत है।जिन मन जीता होय लगाया गोत है॥जिन मन जीता नाहिं विषयआशा वहै। हृदय कमलदल आठ ह्वई फिरता रहै॥अष्ट पैंखरी जान जु आठौं अंगही। वही दिशा है आठ करै मनभंगही॥ पँखरी पूरव दिशा जबै मन जात है। तब इच्छा हिय पुण्य करनकी आत है॥ अग्नेय दिशा पैंखरी जब जावै मना। ऊंध नीन्द अरु आलस जित आवै घना॥ दक्षिणहिं जु दिशा पैंखरी पर मन राजई। उपजै बहुत विरोध कठोरता साजई॥ दिशा जु नैऋती पैंखरी पै मन रंगही। पाप करनकी उपजै हिये तरंगही॥ पश्चिम दिशा जु पैंखरी पै मन आ रहै। होयखुशी परफुल्ल जु लीलाको चहै॥

दोहा-बायब दिशा जु पैंखरी, जब मन पहुँचै जाय।
हलन चलन उपजै हिये, बैठे देहि उठाय॥ १९॥

मनकी गति-(अष्टपँखुरी कमलपर)

अष्टपदी-उत्तर दिशा जु पैंखरी पै मन आवई। मैथुन करनकि चाह हिये उपजावई॥ ईशान दिशा पैंखरीपर मन आवै जभी। दान करनकी चाह अधिक उपजै तभी॥ हृदय-

कमलके बीच जबै मन जा रहै। उपजै त्याग वैराग तजन जगको कहै ॥ हृदयकमलको छेदि बाहर मन फिरतही। आंसे पांसे जानि होय जागरतही॥हृदय कमलके घेरके मध्यम जातही। जब आवत है स्वप्न जहां बहु भाँतिही॥ध्यान बराबर छेदि तहां मन जात है। होहिं सबै गुण लीन सुषुप्ती आत है ॥ हृदय कमलको छोडि होय मन न्यारही। तुरियामें मन जात जु तत्त्व अपारही ॥ यों जीवातम जान जु अनहद लीन हो। सो परमातम होय जीवता जाय खो ॥

दोहा-अजपाही के जापके, सिद्धि भयो जब जान।
पहुँचे या अस्थान हीं, रहै न दूजा ज्ञान ॥२०॥
यह जो सब कुछ मैं कहों, हिरदै जाना जाय।
ताहीको पहिचानिये, चरणदास चितलाय ॥२१॥

दशप्रकार अनाहत शब्द

अष्टपदी-कैसे अनहद उठै हिये अस्थानसों। यह जीवातम सुनौ हृदय बल ध्यानसों॥दश प्रकारकेनाद कहूं भिन्न भिन्नही। सो उपनिषदहि माहिं कहे सब चिह्नही ॥ पहली ऐसे होय चिडिया ज्यों चीकला।एकबार कहै चिह्न सुनौ सोई सुरंतला॥ ऐसेही दो बार जु दूजी जानिये । चिन्ह चिन्हही होत ताहि पहिचानिये ॥ क्षुद्रघंटिका तीसरि चौथी शंख ज्यों। पंचम ऐसी जान बजतहै बीन त्यों॥छठीं बजै ज्यों ताल सातवीं बाँसुरी। अठवें शब्द मृदङ्ग लगै मन गाँसुरी॥नवें नफीरी नाद जु दशवें सिद्धि है। बादरकीसी गरज दहु दंह दहै ॥ करतेमें अभ्यास जु नादैं सब खुलैं॥ जैसे बटाऊ चलत नगर नौ मग मिलैं॥ दशवें पहुँचे जाय नवें बिसराइया। रहन किया वा देश जहां घर छाइया। ऐसेही नौ छोड नाद दशवाँ गहै। बादल-

कीसी गर्ज जहां मन दे रहै ॥ वाको छोडै नाहिं सदा रहै लीनहीं । जु अनहदसार जानि परबीनहीं॥ याको प्रापत कहूँ जो मनमें आनियो।गौरीसों शिव कह्यो साँच करि जानियो॥

दोहा-चरणदासने अब कहीं, जुदी जुदी दश नाद ।
वही परापतको लहै, जो कोइ साधै साध ॥ २२॥

अनहदनादकी परीक्षा

अष्टपदी-पहिलि परीक्षा जान जु अनहद नादकी । सब रोमावलिउठै जु वाके गातकी॥ अरु दूजी जब सुनै नाद चितलावई ।सब तन अगन माहिं आलसक छावई॥तीजी अनहद नाद सुनै जितही जुटै। सब अङ्ग न हिय माहिं प्रेम पीडा उठै॥ चौथि सुनैं जब नाद परीक्षा पावई। तब शिर घूमन लगै अमल ज्यों खावई ॥ पँचवीं उठै जो नाद सुनै तामें पगै । वाके शीश सों जानि अमी उतरन लगै ॥ छठी उठैं जब नाद सुरति वाम धरै । कण्ठसों नीचे उतरि अमी पीवन करै ।सतवीं खुलै जो नाद बिना श्रवणन सुनै । अन्तर्यामी होय लखै सबके मनै ॥ दूर दूरके वचन सुनै कोई कहै ।होय परेकी दृष्टि छिप्यो कछु ना रहै ॥ अठवीं परीक्षा जानि परापत जो बनै। सब माहीं सब ठौर नाद अनहद सुनै।है सबकेही मांझ बैन समझै सुनै। यह समझै अरु सुनै ताहि नीके गुनै ॥

दोहा-खुलै नवीं जब नादही, लक्षण यह पहिचान ।
सूक्ष्म होय जित तित गमन, करै धरै जो ध्यान॥२३॥
काहूकीही दृष्टिसों, चहै अगोचर होन ।
होयसकै दीखै नहीं, वह सब देखै जौन ॥ २४ ॥
जैसे सुर सबको लखैं, उन्हैं न देखै कोय ।
रणजित कहै अस्थूल हो, चाहै सूक्ष्म होय ॥२५॥

अष्टपदी–दशवीं खुलै जो नाद परे सोहंपरे। पारब्रह्म होइ जाय ध्यान ताको करे॥ध्यानीको मन लीन होय अनहद सुनै। आप अनाहद होय वासना सब भुनै॥ पाप पुण्य छुटि जाय दोऊ फल ना रहैं। होय परमकल्याण जु त्रैगुण ना रहैं॥ होवै बोध स्वरूप तेज ह्वै जात है। अटक रहै नहिं कोय सबै ठां समात है॥ अज अविनाशी शुद्ध पवित्तर सत्तही। होवै आनँद रूप परम जो तत्रही॥निर्विकार निर्लेप और निर्बानहीं।आनँद सबको देत आपको जानहीं॥ या ध्यानीको नाम जु ॐ कार है। सब नामनमें बडा किया जु विचार है॥ याको ऐसे मान कि वह जो मैंहीं हूँ।रूप नाम गुण जान कि यह सब वाहीसूं॥

दोहा–करतै अनहद ध्यानही, ब्रह्मरूप ह्वै जाय।
चरणदास यों कहत हैं, बाधा सब मिटिजाय॥२६॥

इति अथर्वणवेदीयहंसनादोपनिषद् ॥ ८ ॥

सर्वोपनिषद् प्रारम्भ ९

★

दोहा–दूसरि जो उपनिषद हैं, ताको कहौं बनाय।
सर्व नाम तिहि जानिये, ताहि देहु प्रकटाय॥२७॥

अष्टपदी–परजापतिके शिष्य जो पूछी आयकै। बन्ध मुक्तिका भेद देहु समुझायकै॥ काहि कहत हैं बन्ध मोक्ष कासों कहैं। विद्याऽविद्या भेद कहौं कैसे लहैं॥जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति मोहिं बतलाइये।अरु तुरियाको भेद सभी जु सुनाइये॥कोठे पांचको[1] भेद गुरू वर्णन करो।जुदा जुदा समुझाय तिमिर दुविधा हरो॥ पहिल अन्नसों भरा दुजा भरा है प्रानसों।तीजा मनसों भरा

---

[1] पांचकोष–१ अन्नमयकोष। २ प्राणमयकोष। ३ मनोमयकोष।–

चौथे बुधि रानिसों। पँचवाँ आनँद भरा मोहिं कहि दीजिये। हौं तो चरणहिंदास कृपा जो कीजिये ॥ आतमको जो कर्ता कैसे के कहै। किन अनर्थसों जीव जु याही कोठ है ॥ अरु कहैं याको देहका जाननहार है। देहका साक्षी कहै सो कौन बिचार है॥

दोहा-ऐसो यह बँधन बँधो, कहै तज्ञ निर्बन्ध।
अन्तर्यामी क्यों कहैं, मोहिं बतावो सन्ध ॥ २८ ॥
आतमकोही क्यों कहैं, जीव आतमा मान।
माया यासों कहत है, दूरि करो अज्ञान ॥ २९ ॥

अष्टपदी-परजापति सब सुनिकै यह उत्तर दिया। आतमकाही ज्ञान सभी परगट किया ॥ जीव आतमा देहकूं मानिकै मैं कहौं। ताते परो अज्ञान सबै दुख सुख सहौं ॥ आपको लम्बा जान कि ठिंगना जानई। कबहूं दुबला जान कि मोटा मानई॥ आपको जानै वृद्ध कि बालक तरुण है। जानत नारी पुरुष जु मानत वरण है ॥ देह संग ह्वै देह करै जु विहार है। आपनको गयो भूलि रहै न विचार है ॥ वाको बन्धन यही सुनो चितमें धरो। देहभाव छुटि जाय मुक्ति निश्चय करो। जाही वस्तुसों उपजै तन अभिमान है। वही अविद्या जान वही अज्ञान है। यही भरम उठि जाय जिसी जु विचारसों। वाही विद्या जानि वहीको ज्ञानसों ॥

दोहा-चौदह इन्द्री देवता, मिलि जो कर व्योहार।
चरणदास यों कहत है, जाग्रत यही निहार ॥ ३० ॥
जीव जु अन्तःकरणके, चारौं देवत संग।
सूक्षम देही साथही, देखै स्वपना रंग ॥ ३१ ॥

-४ ज्ञानमयकोष ५ आनन्दमयकोष पांच कर्मेन्द्री, पांच ज्ञानेन्द्री, चार अन्तःकरण यही चौदह इन्द्री और इनके देवता।

चौदहही सब लीन है, जीव आतमा माहिं ।
यही सुखोपति जानिये, कछुभी सूझे नाहिं ॥ ३२ ॥

अष्टपदी-तीन[1] अवस्था मिटैं मिटैऽहंकार है । तुरियाही रहिजाय जु तत्त्व अपार है ॥ परमातम जो पुरुष सदा निर्लेप है । केवल ज्ञान स्वरूप जु ब्रह्म अभेव है ॥

पंचकोष वर्णन

अब कोठोंकी बात कहूं चित दीजिये । जुदा जुदा विस्तार सबै सुनि लीजिये॥पहला कोठा कहूं अन्नसेती भरो।छह कोठे तेहि माहिं सोई श्रवणन धरो ॥ तीन पिता की ओर सो लाया संगही । बीरजमींगी हाड सफेद जु रंगही ॥ अब माताके अंश तीनिही जानिये । लोहु त्वचा अरु मांस अरुण पहिंचानिये ॥ प्रानसे कोठा भरा दशो जहां वायु हैं । अगले भी छः कहे जु रहे समाय हैं॥तीजा कोठा जानि धरो तहँ शुद्धिही । मन चित अरु अहंकार भरी जहँ बुद्धिही।चौथा कोठा देख इन्हींका जानना। तामें भरो है ज्ञान सभीको पिछानना॥ पँचवाँ कोठा जानि जो आनँदसों भरा । जैसे सगरो वृक्ष बीजमाहीं धरा ॥

दोहा-चारौ कोठे जो कहे, अरु कारणको देखि ।
जहाँ सभी ये रहत हैं, वा ठौरीको पेखि ॥ ३३ ॥
वा ठौरीको जानिये, ज्यों तरुवरको बीज ।
डाल पात फल फूलही, रहे जु वाके बीज ॥ ३४ ॥
ऐसे वाको समझिकै, रहै जु आनँद आहिं ।
आनँदही आनँद भरा, पँचवें कोठे माहिं ॥ ३५ ॥

---

१ जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति ।

अष्टपदी-आतम करता जानु जु जामें बुद्धि रहै। दुख सुख वाही माहीं सभी आशा धरै ॥ इच्छा पूरी भय होत मन मोद है। जब पूरी नहिं होय घना दुख होत है॥ सुख दुख दोनों होत जो पंचकके विषे। सोवे इन्द्री जान बिना इसके कसे ॥ सरवनसों सुनि शब्द बुरा भलको यही। और त्वचासों जान स्पर्श कि हो यही॥ आँखिनसों लखि होय जु रूप कुरूपसों। अरु जिह्वासों होय जु षटरस स्वादसों॥ नासासैति होय बुरी भलि गंध ले। इनसे उतपति होय जु दुखसुख मै अभै॥ आतमको जीवातम इस कारण कहै। सूक्ष्म अरु अस्थूल देह संगही रहै ॥ बुरे भले जो करमन के फलमें बँधा। बीच ही लिया लगाय नहीं धुरसों फँधा॥ ज्यों कञ्चनके संग जु टाँका जानिये। धौले वस्तर साथ जु मैल पिछानिये ॥ सोधेसे ह्वै दूर शुद्ध ह्वै जात है। अपनेहिं अञ्जन आप जु श्वेत दिखात है। जीवातम इहि भाँति फलन त्यागन करै। आतमहीं रहिजाय जीवता ना रहै ॥ खोटे कर्म जु त्यागि भले सहजै करै। तिनको फल जो नहीं आशा धरै ॥

दोहा-जीवन ब्रह्म यों होत है, रहै न कछू लगाव।
चरणदास यों कहत है, ऐसा किये उपाव ॥ ३६ ॥

अष्टपदी-देहको जाननहारा ऐसे मानई। सूक्ष्म अरु अस्थूलको अपनी जानई॥ कबहुँ कहै मम शीश आँख मुख हाथ है। कभी बतावै पांव कहै मेरा गात है ॥ मन बुधि चितऽहङ्कार समझ ये चार हैं। अरु पांचों हैं वायु जु कोई निहार है॥ प्राण अपान व्यान उदान समान हैं। सात्त्विक राजस तामस तीनौं जानि हैं ॥ वैर प्रीति अरु तीसरि इनकी ढूँढ है। चौथ मनोरथ तीनिके सब मिलि झुण्ड है। भले बुरे जो कर्म और मन आनिये। सूक्ष्म शरीरको मूल ये सब पहिचानिये ॥ अरु यह सूक्ष्म

शरीर आतमा साथ जो। ताते भासत सत्य सत्य है बात सो॥
जब आतम पहिंचान हियेमें आवई। तब सूक्षमको साँच सबै उठि जावई ॥

दोहा-सूक्ष्म शरीर रु आतमा, भिन्न लखै नहिं कोय।
यही जु मनकी गाँठ है, खुले मुक्तिही होय ॥ ३७ ॥
जानी जाननहार ही, और तीसरी जान।
इन तीनोंको जो लखै, सो साक्षी परधान ॥ ३८ ॥
उपजे तीनों द्वैतसों, मिटै एकता होय।
उपजन मिटना तीनिका, जानै न्यारा सोय ॥३९॥
अपनेही परकाशमें, आप रहा परकास।
सोई साक्षी जानिये, कहे चरणहीं दास ॥ ४० ॥
यद्यपि बन्धनमें बँधा, कहै जु निर्बंध दूर।
चींटी ब्रह्मा आदिलौं, हिरदयमें भरपूर ॥ ४१ ॥
सबही हिरदयके मिटै, वही एक ठहराय।
ना कुछ आया ना गया, ज्योंका त्यों रहि जाय॥४२॥
बन्धनमें आवै सही, लीला करन दयाल।
निरबँधका निरबंध रहे, अज अविनाशि अकाल॥४३॥
अन्तर्यामी अरथ सब, घटमें रहो समाय।
जैसे डोरेके विषे, भाँति भाँति मणिकाय ॥ ४४ ॥
सबके ही भीतर बसे, सबका जाननहार।
वाहीते परगट भई, नाना वस्तु अपार ॥ ४५ ॥
घनेरूप किरिया घनी, घने नाम दृष्टान्त।
सूझै ज्ञानप्रकाशसूं, जब गुरु मेटै भ्रान्त ॥ ४६ ॥
रूप नाम किरिया लगी, जबलग याके साथ।
याहीते जी आतमा, कहलावै यह बात ॥ ४७ ॥

जैसे कञ्चन मृत्तिका, भांडे किये सँचार ।
नामरूप किरिया भई, देखो दृष्टि निहार ॥ ४८ ॥
नामरूप किरिया मिटै, रहे न कछू विचार ।
जो था सोई रह गया, परमातम ततसार ॥ ४९ ॥
आतम अरु जीवातमा, देह धरेसे दोय ।
ताते बढो उपाधही, मैं तू तू मैं होय ॥ ५० ॥
तत्त्वमसी जो यह कहा, ताको याही अर्थ ।
वह तूही है जान ले, परम तत्त्व है सत्य ॥ ५१ ॥

अष्टपदी अरु वह ज्ञान स्वरूप अनन्द अनन्त है। उपजावन सब सृष्टिको जीवन कन्द है ॥ वस्तु काल अस्थान तीनों मिटि जात हैं। वह इकरस सतरूप ब्रह्म रहि जात है ॥ सबको जाननहार मिटै उपजै नहीं। तासूं कहै वहि ज्ञान अर्थ जानो तहीं॥ और कह जु अनन्तसो यासूं जानिये। सब भांडेमें इक माटी जु पिछानिये॥ कनकके बर्तन बहुत जु सोना एकिये। सब वसननके माहीं जु सूतहि देखिये॥ ऐसेहि आदी रु अंत ब्रह्म सब माहिं है। कहिये याहि अनन्त भेद कछु नाहिं है॥ अरु जो आनँद कहै समुझ लीजो वही। वाहीको अंश पिछान जु आनंद हो कही ऐसेही॥ मोहिं समझायो गुरु शुकदेवने। चरणहिं दासा होय लखो या भेवने ॥

ब्रह्मका स्वरूप

दोहा-चार पते ये ब्रह्मके, सत आनन्द अनन्त ।
चौथा ज्ञान स्वरूप है, कहैं वेद अरु सन्त ॥५२॥

अष्टपदी-सर्वस मैं सब ठौर जु इकरस नित्त है। तत्त्वमसीके अर्थ वही तू सत्य है ॥ जबसूं करिकै ज्ञान होय परब्रह्महीं। आपनहीं कूं पाय जाय सब भर्महीं॥ मैं तू वह उठिजाय दूसरी

वासही। आपकूं व्यापक जान ज्यों शुद्ध अकाशही॥ अरु जान निर्लेप सत अरु एकही।जब परमातम होय रूप नहिं रेखही॥ माया याते कहें भरम अरु अन्त है। ज्ञान भये उठि जाय कछू न रहन्त है॥ ज्यों रसरीको सॉंप भरमसूं मानिये।समझ लखा जब झूठी माया जानिये॥ सांच सो लागै झूठ झूठ सच जान है। माया यही सुभाव भरम अज्ञान है॥ रसरीकूं कहै सर्प जु अपने भरमसूं। ऐसेही जड कहत सनातन ब्रह्मकूं॥

दोहा-झूठ जगत दीखत रहै, दीखै ना सतब्रह्म।
यही जु माया जानिये, यही तिमिर यहि भर्म॥८३॥
गुरु शुकदेव प्रतापसूं, कही चरण हीं दास।
यह जु अथर्वण वेदकी, सर्व उपनिषद भास॥८४॥

इति सर्वोपनिषद् ९

तत्त्वयोगोपनिषद्प्रारम्भ १०

★

अष्टपदी-तीजी अरु जो कहूं अथर्वण वेदकी। तत्त्वयोग जिहि नाम गुपतहीभेदकी॥अपने शिषसूं कहा जु परजापतिने। योगसागरमें कहूं जु पावै तत्त्वने॥योगेश्वरकूं लाभ होय जाके किये। पढे पाप भजि जाय सुने राखे हिये॥ निश्चय होवे मुक्त यही तू जानिये।चौथे पद लहै वास सांच करि मानिये॥बड़ा योगीश्वर विष्णु अधिक तप ज्ञान है।जाकी माया गंध नहीं मान है॥योगी करिकै योग सुज्योति निहारही। दीपककीसी लोय लखै होय पारही॥सो वह विष्णु स्वरूप सबनके माहिं है। घट घटमें भरपूर खाली कोई नाहिं है॥ऐसी ज्योतीकूं छोडि और मन लावई। वै नर भोंदू जान जु कूर कहावई॥

दोहा—दूध पिया जिन कुचनसूं, उनकूं मल सुख लेत ।
जन्म खोय खाली चलै, नारिनसूं करि हेत ॥ ९५ ॥

अष्टपदी—जिस द्वारेसूं निकस जन्म जगमें लिया । तामेंही परवेश करन फिर मन किया ॥ वही नारिको रूप जो तासूं मा कही । लगे भार्य्या कहन जु अपने सँग लई ॥ जाही पुरुष स्वरूपकूं कहते बापही । फिर लगे पुत्तर कहन वाहीकूं आपही ॥ वही पुत्र जो जगत में पिता कहावई । सोई पुत्तर भया बडो अति चावई ॥ जैसे कूपका रहँट लौट रीते भरे । वस्तु एकही जान कभी ऊपर तरे ॥ यही भरम अज्ञानसूं आशाही दहे । बहुलोकनके माहिं सदा भरमत रहे ॥ अब मैं कहूं उपाय जगतसूँ ज्यों छुटे । आवागमनका फँद सितांबही[1] कटे ॥ जासूं भरमैं नाहिं रहै थिर होयकै । पावै निज अस्थान विपति सब खोयकै ॥

ओंकारवर्णन

दोहा—ओंकार बड नाम है, हिरदे ध्यान करै ।
शुकदेव कहै चरणदाससूँ, सबही व्याधि टरै ॥ ९६ ॥

अष्टपदी—ओंकारके अक्षर कहिये तीन हैं । अकार उकार मकार जानै परवीन हैं ॥ तीनों अक्षर माहँ तीनों हैं थोकहीं । पहले अक्षरमें जु रहै भूलोकहीं ॥ दूजे अक्षर बीच जानौ आकाशही । तीजे अक्षर माहिं वैकुंठ निवासही ॥ तीन अक्षर माहिं जो तीनै वेद हैं । ऋगुयजुर्वेद रु साम तिहूं जो भेद है ॥ तीनौ अक्षर माहिं तिहूं जो देव हैं । ब्रह्मा विष्णु महेश तिहूं जो अभेय हैं ॥ तीन प्रकार कि अग्नि तीन अक्षर महीं । एक अग्नि यह जान दिखै प्रत्यक्षहीं ॥ दूजी अग्नि प्रचंड सूर्यकी भासई ।

[1] शीघ्रही ।

तृतीय अग्नि माहिं जठर परकासई ॥ तीनों गुण तिन माहिं समझ जानौ यही । रजगुण सतगुण और तमोगुण है सही ॥

दोहा-यह अक्षर ओंकारके, जिनका चौथा भाग ।
अर्द्धमात्रा बोलिये, ऊपर बिन्दी लाग ॥ ९७ ॥

अष्टपदी-जो कोउ याको जपै समझ अरु ध्याय है। ऊपर कही जो वस्तु सबनको पाय है ॥ अक्षर साढें तीन प्रणवके माहिं है। सब वस्तू वा माहिं बाह्य कछु नाहिं है॥ ऐसे रहत वा माहिं पुहुपमें गंध ज्यों । जैसे तिलमें तेल दूधमें घीव त्यों॥ जैसे पाहन माहिं जु कनक बताइये। ऐसेही ओंकारमें सबको पाइये ॥ वाहीको किये ध्यान परमपदको लहै। वेद पुराणन माहिं साख योंही कहै ॥

प्रणवका ध्यान

अष्टपदी-अब परणवका ध्यान जु देहुँ बतायकै। सबही याकी सूझ कहूं समझायकै ॥ हिरदयहींके माहिं जु कमल पिछानिये। ऊपरको है नाल नीच मुख जानिये ॥ वाहीके छिद्र बीच रहत मन भूप है। कहै चरणही दास जु अनूप है ॥

दोहा- अक्षरमें ओंकारके, पहिला है जु अकार ।
ताहि कहेसों होत है, हिरदा शुद्ध विचार ॥ ९८ ॥

अष्टपदी-दूजा जपै उकार कमल विकसै कली। शनै शनै खुलि जाय बसै तामें अली॥ तीजा जपै मकार प्रगट हो नादही। सुनि सुनि आनँद होइ जु परम अगाधही॥ अर्द्ध मात्रा बिन्दु सदा फिर जानिये। हलन चलन कछु नाहिं यही पहिचानिये॥ वामें मन है लीन ज्योति है जाति है। निर्मल अरु शुद्ध बिलौरकी भांति है॥सूरजकीसी किरण महा उज्ज्वल वही। जोइ करै वह ध्यान पुरुष पावै सही॥ सबमें ज्योति

स्वरूप सकल भरपूर है। निकट निकटसों निकट दूरसों दूर है ॥ जो इसकाही ध्यान हृदय किया जायना। तौ करै मस्तक माहिं होय पारायना ॥ शीशमें जय सिद्ध होय रोकै नौ द्वारही। निकसन देवै वायु न काहू द्वारही ॥

दोहा-दोय पगण्डी बाँधिये, नीचेके दो द्वार।
दोउ अँगूठे हाथके, रोको शरवन वार ॥ ५९ ॥

अष्टपदी--तर्जनि अँगुली दोउ हगनपर दीजिये। मध्यमसे दोउ नाक छेद बंद कीजिये ॥ अनामिका दोउ हाथकि और कनिष्ठिका। होंठनको बंद करै जु नीके पुष्टका ॥ नासाके दोउ छेद एक ही जित भये। दोउ भौंहनके बीच चरणदासा कहै ॥ निश्चय ताहि बनारस देहको जानिये। वाहीकी तौ ओर दृष्टिको तानिये ॥ महाकुम्भक इहि नाम इसी विधि साधिये। ध्यान किये होय मुक्ति यही अवराधिये ॥ इंद्रिन-हूके मारगको जो बंद करै। वायु बिना घट माहिं यथा दीपक बरै ॥ होय घना परकाश इसी जो देहमें। इसही ध्यान प्रताप मिलै जा गेह में ॥ पाव चेतन शुद्धि किये इस योगही। कर्मनको ह्वै नाश मिटै मन रोगही ॥

दोहा--उपनिषद पूरी भई, नाम योगही तत्त्व।
अंग अथर्वण वेदका, चरणदास कहि सत्त्व ॥६०॥

इति अथर्वणवेदीय तृतीय तत्त्वयोगोपनिषद् ॥ १० ॥

योगशिखोपनिषत्प्रारम्भ ११



दोहा–योगशिखा चौथी कहूं, तामें अद्भुत ध्यान ।
परजापति ऐसे कही, शिष्य सुनो दै कान ॥६१॥

अष्टपदी–यामें अद्भुत राह बड़े ही ज्ञानकी। कांपन लागै देह कठिन सुनि ध्यानकी ॥ जब आवै मन माहिं मोह तन ना रहै । पांचनहींकी आग नहीं हियमें दहै॥ वाकी विधि मैं कहूं सभी सुनि लीजिये । बैठि इकांतहि ठौर जु आसन कीजिये ॥ आसन पद्म लगायके सुख आसन करौ । सीधो राखौ मेरे नैन नासा धरौ ॥ दोउ पांयनके साथ जु हाथ मिलाइये। सब स्वाद-नको रोकि जो मनको लाइये॥प्रणवहीका जाप जु मनमें राखिये। इस बिन और उपाय सबनको नाखिये ॥ जाका ओं नाम ध्यान ताको करै । आठ पहर संग्राम विना खांडे लरै ॥ देह याही अस्थूल बडा घर जानिये। तामें दीरघ थंभ एक पहिंचानिये॥

दोहा–अरु यामें नौ द्वार हैं, छोटे थंभ हैं तीन ।
पांच देवता तेहि विषे, लहैं साध परवीन ॥ ६२ ॥
यह घर जो मैंने कहा, सोइ मनुषनकी देह ।
कहैं गुरू शुकदेवजी, चरणदास सुनि लेह ॥ ६३ ॥

अष्टपदी–एक बडा जो थंभ मेरुकी डंड है।सोइ पीठका हाड जासु सब मंड है॥ अरु वाहीके बीच नाडि सुषमन भली। सब नाडिन शिरमौर योगी मानै रली ॥ नौ द्वारे अब कहूं तिन्हैं पहिंचानिये । दो स्रवन दो आँख भली विधि जानिये॥ नासा छिद्दर होय जु मुखका एक है। लिंग गुदा दो जान नवोंका लेख है॥ तीन जु छोटे थंभ तीन गुण ही कहे। सतगुण तमगुण और रजोगुणहीं लहे॥ पांच देवता कहे सो पांचों प्रान हैं। प्राण

अपानरु व्यान उदान समान है॥ ऐसे मंदिल माहिं हृदयमें छेद है। तामें सूरजमण्डल अचरज भेद है॥ ताकी बडिही ज्योति किरण उजियार है।पूरा योगी होय सो ताहि निहार है॥

दोहा-ज्योतिमयी मण्डल लखै, हृदयकमलमें होय।
तामें दीखै और इक, दीवेकीसी लोय॥ ६४॥

अष्टपदी-दीपककीसी ज्योति मानु ऊपरचलै। रहे आपनी ठौर भाँति ऐसी हिलै॥वाही ज्योतिको जानै ब्रह्म स्वरूपही। यही समुझिके ध्यान करै जु अनूपही॥ योगी करै जो ध्यान यही हिय माहिहीं। अन्तसमै तन छूटि उपरको जाहिहीं॥ सूरजहूका मण्डल जावै वेधही।सुषमन मारग जाय शीशको छेदही॥ सायुज मुक्तिहीको जाय परापत यही। कोटिन माहिं लहै जु विरला कोयही॥सब ज्योतिनकी ज्योतिबडी जो ज्योति है॥ ताको पाये होय एकही गौत है॥आलससों दुर्भाग्य ध्यान करि ना सकै। तौ दिनमें तिरकाल पाठ करने लगै॥

दोहा-प्रातकाल अरु मध्यमें, संध्याहीकी बार।
उपनिषदन तीनों समै, पढै विचार विचार॥६५॥
करम कटै यमही हटै, चौरासी कट जाय।
देही पावै मनुषकी, पूरा गुरु मिलि जाय॥ ६६॥
फिर पावै यह ध्यानहीं, पीछे कही जु खोल।
जावै परमहिं धामकूं, छोडै सब झकझोल॥६७॥
थोडासा यह ध्यानही, मैं समझायों तोहिं।
परजापति शिष्यसों कहै,बडा जो निश्चय मोहिं॥६८॥
यह पदवी मोकूं मिली, इसी ध्यान परताप।
जीवन्मुक्ताही रहूं, छुटै आप अरु धाप॥६९॥
निश्चल हो या ध्यानकूं, करै जो कोई और।
जगत छुटै आपा मिटै, पावै निर्भय ठौर॥७०॥

आनँदही आनँद जहाँ, अवधि न काल कलेश ।
चरणदास या ध्यानसों, पावै, ऐसा देश ॥७१॥
बहुलोकनमें जन्म धरि, पाप मिटा नहिं मूर ।
चरणदास इस ध्यानसों, सबै होत है दूर ॥७२॥
दूर करन दुख जगतके, आन उपाय न होय ।
योगीकूं या ध्यानसम, और वस्तु नहिं कोय ॥७३॥
उपनिषद चौथी यही, भई समापति येहु ।
चरणदास कहैं पांचवीं, हित चित दै सुनि लेहु ॥७४॥

इति अथर्वणवेदीययोगशिखोपनिषद् ॥ ११ ॥

तेजविंद उपनिषद् १२



दोहा–उपनिषदा जो पांचवीं, वेद अथर्वण माहिं ।
तेज विंद जिहि नाम है, समझ मुक्ति हो जाहिं॥७५॥

अष्टपदी–तेज विंदके अर्थ यही हिय गूँध है। बडे ध्यानके तेजहि की यह बूँद है॥उसका है यह ध्यान जो सबसे ऊंच है। सबसूं पर निहरूप शुद्ध अरु सूच है॥हिरदयहीके मध्य और सूक्षम महा। अरु केवल आनन्द किन्हीं ज्ञानी लहा॥अनन्त शक्ति जिहि माहिं निरा अस्थूल है। बहुत पिण्ड ब्रह्मांड सबनका मूल है॥बडा बिना परमान गहा नहिं जात है। वाकि तपस्या ध्यान कठिन जु दिखात है॥वाका देखन दुर्लभ सुलभ नहिं जानना। वह तो सिंधु अथाह कछू परमानना॥ ज्ञानी पंडित और सबै बुधिवानहीं। पावैं आदि न अन्त और मध्य हां नहीं॥ कै बांधे ब्रह्मव्रत करे कै ध्यानहीं। वाहीके हो रूप पावै तब जानहीं ॥

दोहा—जीतै पहिल अहारही, दूजे और करोध ।
बहु मनुषनका संग तजि, छाँडै प्रीति विरोध ॥७६॥

अष्टपदी—परबल इन्द्री जान सबनकूं वश करै । शीत उष्ण दुख सुख अस्तुति निन्दा हरै ॥ छोडेही अहंकार वासन आसही । अपने कारण वस्तु रखै नहिं पासही ॥ पूरी राखै पैज धारणा धारिकै । गुरु आज्ञा गुरुसेव करै जु विचारिकै ॥ सकल मनोरथ कामनाकूं करै क्षीणहीं । ऐसे जिज्ञासूं कूंचा हिये द्वारे तीनहीं ॥ एक जो द्वारा त्याग दुजा जो उपावही । तीजा गुरुकी निश्चय ऐसा सुभावही ॥ इन द्वारोंमें राह जु आगेकी खुलै । लुटै थकै वह नाहिं सुखालाही चलै ॥ जीवातम हो हंस कहावत यही । याके हैं अस्थान जो तीनोंही सही ॥ जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति परगट जानिये । तुरियाही जु स्थान गुप्त पहिचानिये ॥

दोहा—इन तीनोंसे बडा है, तुरियाकूं नित जान ।
चरणदास पोषण जगत, वाके ना अस्थान ॥७७॥

अष्टपदी—जैसे भूत अकाश यों व्यापक ह्वै रहो । सब इन्द्रिनके माहिं जो सूक्षम जो रहो ॥ वाकी सत्तासेती नहीं चेत रहीं । वही बडा पद जान विष्णुका है सही ॥ वाके नेत्र तीन जो तीनौ वेदही । अरु वाके गुण तीन जो किया निषेधही ॥ है सबका आधार त्रिलोकी धारई । आप रहै निरधार जो अपरम पारई ॥ है निहरूप अडोल अखण्ड अगाधही । है तौ निस्संदेह पहुँचे न उपाधही ॥ करि न सकै परवेश वरण गुण रूपही । अरु सब गुण वा माहिं जु अधिक अनूपही ॥ पावै केवल ज्ञान आपमें आपही । बावन अक्षर माहिं नाम नहिं थापही ॥ वह तौ निरा आनन्द काहुसे है नहीं । कठिन परातम होय दुर्लभ दख नहीं ॥

दोहा–वह उपजै विनशै नहीं, अज अविनाशी सोय।
विन इच्छा थिरही रहै, चरणदास नित जोय ॥७८॥

अष्टपदी–वह सबही विराटपिंड अरुजीव है।नाना कौतुक होय अन्त वहि सीव है ॥ ज्ञानसे जुदा न जान निरा वह ज्ञान है। वही महा आकाश नहीं परमान है॥सब माहीं परवेश जो आतम सत्त है।आपमें पूरण आप परमही तत्त है।अज्ञानी जानै झूठ झूठ पहुँचै नहीं। वह तौ सदा नित जान कभी विनशै नहीं। वाकूं कहा नहिं जाय जाप जापक कभी। अरु सारे हैं जाप उसी माहीं सभी ॥ और जपा भी गया जाप जापक वही। सब कुछ उसकूं जान गुप्त परगट वही ॥ वह निर्गुण निर्लिप्त कोई गुण नाहिंनै। परेसूं परेता परै जानिले वाहिंनै ॥ वासूं पर नहिं और विचारा जाय ना। कहैं चरणहीं दास कछू वा माहिं ना ॥

दोहा–वाकूं जाग्रत है नहीं, वाकूं स्वप्न न कोय।
सोवन सपना है नहीं, जाग्रत कैसे होय ॥ ७९ ॥

अष्टपदी-दुऔसे न्यारा जान जाग्रत अरु सुपनहूं। ऐसा कोई नाहिं न जानै सत्तहूं ॥ सबका जानत मूल जु ज्ञानी लो यही। दीरघ अरु परकाशी जानै सबको यही ॥ जाकूं लोभ न होय अविद्या होय ना। भै अभिमान कुकर्म वासना कीय ना॥ गरमी जाडा भूख प्यासा व्यापै नहीं। पइये क्रोध न मोह नेक वामें कहीं ॥ वाहि न इच्छा होया न पूरी चाहहीं। कुल विद्या अभिमान नउनके माहिहीं॥ मान नहींअपमान न मनमें लावई। सबसूं होय निवृत्त ब्रह्मकूं पावई ॥ तेजविन्द उपनिषद भई सँपूरणही। गुरु शुकदेवके दास चरणदासा कही॥ताहि सुनै मन राखि विचाराही करै। निश्चय होवै मुक्त जगतमें ना परै॥

दोहा—कही गुरू शुकदेवने, मेरी कछू न बुद्धि ।
पढो नहीं मूरख महा, मोकूं नेक न शुद्धि ॥ ८० ॥
मेरे हिरदयके विषे, भवन कियो गुरु आय ।
वेइ विराजत हैं सदा, मेरी देह दिखाय ॥ ८१ ॥
जबसूं गुरु किरपा करी, दर्शन दीन्हों मोय ।
रोम रोममें वै रमे, चरणदास नहिं कोय ॥ ८२ ॥
जाति वरण कुल मन गया, गया देह अभिमान ।
अपने मुखसों क्या कहौं, जगही करै बखान ॥ ८३॥
रहे गुरु शुकदेवजी, मैं मैं गई नशाय ।
मैं तैं तैं मैं वही है, नख शिख रहो समाय ॥ ८४॥

इति तेजविन्द उपनिषद् १२

इति पंचोपनिषद् ।

श्रीवैकुण्ठविहारिणे नमः



भक्तिपदार्थ प्रारम्भ १३



१–गुरुमहिमा

दोहा–प्रणवों श्री मुनि व्यासजी, मम हिरदयमें आय ।
भक्तिपदारथ कहतहूं, तुमहीं करो सहाय ॥ १ ॥
प्रेम पगावन ज्ञानदे, योग जितावन हार ।
चरणदासकी वीनती, सुनियो बारम्बार ॥ २ ॥
तुम दाता हम माँगता, श्रीशुकदेव दयाल ।
भक्ति दई व्याधा गई, मेटे जगजंजाल ॥ ३ ॥
किसी कामके थे नहीं, कोउ न कौडी देह
गुरु शुकदेव कृपा करी, भई अमोलक देह ॥ ४ ॥
को है कोइ न जानता, गिनतीमें नहिं नावँ ।
गुरु शुकदेव कृपा करी पूजन लागे पावँ ॥ ५ ॥
सीधी पलक न देखते, छूटे नाहीं छाहिं ।
गुरु शुकदेव कृपा करी, चरणोदक ले जाहिं ॥ ६ ॥
दूसरके बालक हुते, भक्ति बिना कंगाल ।
गुरु शुकदेव दया करी, हरिधन किये निहाल॥७॥

जा धनकूं ठग ना लगै, धारि सकै नहिं लूट ।
चोर चुराय सकै नहीं, गाँठ गिरै नहिं खूट ॥ ८ ॥
बलिहारी गुरु आपने, तन मन सदके आँव ।
जीव ब्रह्म क्षणमें कियो, पाई भूली बाँव ॥ ९ ॥
हरिसेवा सोलह बरस, गुरु सेवा पल चार ।
तौभी नहीं बराबरी, वेदन कियो विचार ॥ १० ॥

गुरुकी सेवा साधू जानै । गुरुसेवा कह मूढ पिछानै ॥
गुरु सेवा सबहुन पर भारी । समझ करो सोई नर नारी ॥
गुरुसे वासों विघन विनाशै । दुरमति भाजे पातक नाशै ॥
गुरु सेवा चौरासी छूटै । आवागमनका डोरा टूटै ॥
गुरु सेवा यमदण्ड न लागै । ममता मरै भक्तमें जागै ॥
गुरु सेवासूं प्रेम प्रकाशै । उनमत होय मिटै जग आशै ॥
गुरु सेवा परमातम दरशै । त्रैगुण तजि चौथापन परशै ॥
श्रीशुकदेव बतायो भेवा । चरणदास कर गुरुकी सेवा ॥

दोहा-गुरु सेवा जानैं नहीं, पाँय न पूजे धाय ।
योग दान जपतप कियो, सभी अफल ह्वैजाय ॥ ११ ॥

योग दान जब तीरथ न्हाना । गुरु सेवा बिन निष्फल जाना ॥
गुरु सेवा बिन बहु पछितैहौ । फिरि फिरि यमके द्वारे जैहौ ॥
गुरु सेवा बिन अति दुख पैहौ । जगमें पशु दरिद्री ह्वै हौ ॥
गुरु सेवा बिन कौन उतारै । भवसागरसूं बाहर डारै ॥
गुरु सेवाविन जड कहा करिहै । कार्की नाव बैठकर तरि है ॥
गुरु सेवाविन कछु नहिं सरिहै । महा अंधकूपनमें परि है ॥
गुरु सेवा विन घट अँधियारा । कैसे प्रगट ज्ञान उजियारा ॥
नरक निवारण गुरु शुकदेवा । चरणदास करि तिनकी सेवा ॥

दोहा--इन्द्री जित निरवैरता, निरमोही निरद्वन्द्व ।
ऐसो गुरुकी शरणकूं, मिटै सकल दुखद्वन्द्व ॥ १२ ॥

राग द्वेष दोनोंसे न्यारे। ऐसे गुरू शिष्यकूं तारे॥
आशा तृष्णा कुबुधि जलाई। तन मन वचन सबन सुखदाई॥
निरालम्ब निर्भरम उदासी। निर्विकार जानौ निरवासी॥
निर्मोहत निर्बन्ध निशंका। सावधान निर्वाण अशंका॥
सारग्रही और सरवंगी। संतोषी ज्ञानी सतसंगी॥
अयाचीक जत निर अभिमानी। पक्ष रहित स्थिर शुधं वानी॥
निहतरंग नाहीं परपंचा। निहकरम निरलिप्त जो संचा॥
शीतल तासु मति है देवा। चरणदास कियो सो गुरुदेवा॥

दोहा—सतवादी अरु शीलवंत, सुहृदै अरु योगीश।
निश्चल ध्यान समाधिमें, सो गुरु विस्वेबीश॥१३॥
भरम निवारण भय हरण, दूर करण सन्देह।
मुठिया खोलै ज्ञानकी, सो सद्गुरु करलेह॥१४॥
सद्गुरुके लक्षण कहे, ताकूं ले पहिचान।
निरख परख कर दीजिये, तन मन धन अरु प्रान॥१५॥
ऐसा सद्गुरु कीजिये, जीवित डारै मारि।
जनम जनमकी वासना, ताकूं देवै जारि॥१६॥
सद्गुरुके ढिग जाइकै, सम्मुख खावै चोट।
चकमक लग पथरी झरै, सकल जरावे खोट॥१७॥
सद्गुरु मेरा शूरमा, करै शब्दकी चोट।
मारै गोला प्रेमका, ढहै भरमका कोट॥१८॥
मुखसेती बोलन थका, सुने न थका जु कान।
पावनसूं थिरवा थका, सद्गुरु मारा बान॥१९॥
मैं मिरगा गुरु पारधी, शब्द लगायो बाण।
चरणदास घायल गिरे, तनमन बींधे प्राण॥२०॥

शब्दबाण मोहिं मारिया, लगी कलेजे माहिं ।
मार हँसे शुकदेवजी, वाकी छोडी नाहिं ॥२१॥
सद्गुरु शब्दी तेग है, लाग दो करता देहि ।
पीठि फेरि कायर भजे, शूरा सम्मुख लेहि ॥२२॥
सद्गुरु शब्दी सेलर है, सहै धमूका साध ।
कायर ऊपर जो चलै, तौ जावै बरबाद ॥२३॥
सद्गुरु शब्दी तीर है, तन मन कीयो छेद ।
बेदरदी समुझै नहीं, विरही पावै भेद ॥२४॥
संतगुरु शब्दी लागिया, नावकका सा तीर ।
कसकत है निकसत नहीं, होत प्रेमकी पीर ॥२५॥
सद्गुरु शब्दी बाण है, अँग अँग डारै तोड ।
प्रेम खेत घायल गिरे, टाँका लगै न जोड ॥२६॥
सद्गुरु शब्दे मारिया, पूरा आया वार ।
प्रेमी जूझे खेतमें, लगा न राखा तार ॥२७॥
ऐसी मारी खैंचकर, लगी वार गइ पार ।
जिनका आपा ना रहा, भये, रूप ततसार ॥२८॥
सद्गुरुके मारे मुये, बहुरि न उपजै आय ।
चौरासी बन्धन छुटै, हरिपद पहुँचे जाय ॥२९॥
सद्गुरुके वचनौं मुये, धन्य जिन्होंके भाग ।
त्रैगुणते ऊपर गये, जहां दोष नहिं राग ॥३०॥
वचन लगा गुरुदेवका, छुटे राजके साज ।
हीरा मोती नारि सुत, गज घोडा अरु बाज ॥३१॥
वचन लगा गुरु ज्ञानका, रूखे लागे भोग ।
इन्द्रकि पदवी लौं उन्हें, चरणदास सब रोग ॥३२॥

सद्गुरु ढूँढा पाइये, नहीं सुहेला होय।
शिष्य भी पूरा कोइ है, सानी माटी जोय ॥ ३३ ॥
जाति वरण कुल आश्रम, मान बडाई खोय।
जब सद्गुरुके पग लगै, सांच शिष्य है सोय॥३४॥

गुरुके आगे राखै माथा। कहै पाप दुख मेटौ नाथा ॥
मैं आधीन तुम्हारो दासा। देहु आपने चरणन वासा ॥
यह तन मन ले भेंट चढायो। अपनी इच्छा कुछ न रहायो ॥
जो चाहै सों तुमहीं करो। या भाँडेमें जो कुछ भरो ॥
भावै धूप छाँहमें डारो। भावै बोरो भावै तारो ॥
गुण पौरुष कुछ बुधि नहिं मेरी। सब विधि शरण गही प्रभु तेरी॥
मैं चकई अरु तुम किय डोरा। मैं जो फिरूं सब तुम्हरे जोरा॥
मैं अब बैठा नाव तुम्हारी। आशानदीसुं करिये पारी ॥
भ्रमर जाल जगसूं मोहिं काढो। हाथ जोरि चरणदासा ठाढो॥

दोहा-गुरुके आगे जाय करि, ऐसे बोलै बोल।
कछू कपट राखै नहीं, अर्ज करै मन खोल ॥ ३५ ॥
यह आपा तुमकूं दिया, जित चाहौ तित राख।
चरणदास द्वारे परो, भावै झिडको लाख ॥ ३६ ॥

ऋद्धि सिद्धि फल कछू न चाऊं। जगत कामनाको नहिं लाऊं॥
और कामना मैं नहिं राखूं। रसना नाम तुम्हारो भाखूं ॥
राज भोगका मोहिं न साँसा। नहीं इन्द्र पदवी लौ आसा॥
चौरासीमें बहु दुख पायों। ताते शरण तिहारी आयों ॥
मुक्त होनकी मनमें आवै। आवागमनसों जीव डरावै ॥
रामभक्तिकी चाह हमारे। याते पकडे चरण तुम्हारे ॥
प्रेम प्रीतिमें हिरदा भीजै। यही दान दाता मोहिं दीजै॥

अपना कीजे गहिये बाहीं । धरिये शिरपर हाथ गोसाईं ॥
चरणदासको लेहु उबारे । मैं अण्डा तुम सेवनवारे ॥

दोहा-अण्डा ज्यों आगे गिरै, जब गुरु लेवे सेइ ।
करै बराबर आपनी, शिष्यहिको निस्सन्देह ॥३७॥
अपना करि सेवन करै, तीन भांति गुरुदेव ।
पंजा पक्षी कुंजवन, कछुवा दृष्टि जु भेव ॥ ३८॥ ॥
जो नै बिछुरै घडीभी, तो गंदा होय जाय ।
चरणदास यों कहत है, गुरुको राखु रिझाय॥३९॥
पितुसों माता सौगुणा, सुतको राखै प्यार ।
मनसेती सेवन करै, तनसों डाट रु गार ॥ ४० ॥
जो देवैं दुरशीश भी, होहो लगै अशीश ।
सेवन करि समरथ कियो, उनपर वारौं शीश॥४१॥
मातासों हरि सौगुना, जिनसै सौ गुरुदेव ।
प्यारे करैं औगुणा हरैं, चरणदास शुकदेव ॥ ४२ ॥
काचे भांडेसों रहैं, ज्यों कुम्हारको नेह ।
भीतरसों रक्षा करै, बाहर चोटैं देह ॥ ४३ ॥
दृष्टि पडे गुरुदेवकी, देखत करै निहाल ।
औरै गति पलटैं तबै, कागा होत मराल ॥ ४४ ॥
दया होय गुरुदेवकी, भजै मान अरु मैन ।
भोग वासना सब छुटै, पावै अतिही चैन ॥ ४५ ॥
जब सद्गुरु किरपा करैं, खोलि दिखावै नैन ।
जग झूठा दीखन लगै, देह परेकी सैन ॥ ४६ ॥

अष्टपदी-गुरु बिन और न जान मान मेरो कहो। चरणदास उपदेश विचारतही रहो ॥ वेदरूप गुरु होयके कथा सुनावई।

१ शाप ।

पंडितको धरि रूप कि अरथ बतावई॥ गुरु है शेष महेश तोहिं चेतन करै। गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु होय खाली भरै॥ कल्प वृक्ष गुरुदेव मनोरथ सब सरै। कामधेनु गुरुदेव क्षुधा तृष्णा हरै॥ गंगासम गुरु होय पाप सब धोवई। शशधर सम गुरु होय तपत सब खोवई॥ सूरजसम गुरु होय तिमिर सब लेवई। पार ब्रह्म गुरु होय मुक्तिपद देवई॥ गुरुहीको ध्यान नाम गुरुको जपौ। आपा दीजै भेंट पूजन गुरुही थपौ॥ समरथ श्रीशुकदेव कहा महिमा करौं। अस्तुति कही न जाय शीश चरणन धरौं॥

दोहा-हरि रूठे कुछ डर नहीं, तू भी दे छिटकाय।
गुरुको राखौ शीशपर, सब विधि करैं सहाय॥४७॥

अष्टपदी-गुरुको तजि हरिसेवा कभी नहिं कीजिये। बेमुं-खको[1] नहिं ठौर नरकमें दीजिये॥ गुरुनिंदक नहि मुक्त गर्भ फिर आवई। चौरासीलख भुक्ति महादुख पावई॥ प्रथम करै गुरु देखि परखि चरणौं परै। उनकी धारन ध्यान टेक उरमें धरै॥ गुरुको रामहिं जान कृष्णसम जानिये। गुरु नृसिंह अवतार जु वामन मानिये॥ गुरुको पूरण जान जु ईश्वर रूपही। सब कुछ गुरुको जान जु यह बात अनूपही॥ हरि गुरु एकहि जान यह निश्चय लाइये। दुबिधाहीको बोझ जु वेग बगाइये॥ धर्म पिता गुरु जान जु दृढता राखिये। लाज सकुचि करि कान ढीठता नाखिये॥ मेरा यह उपदेश हियेमें धारियो। गुरु चरणन मन राखि सेव तन गारियो॥ जो गुरु झिरकै लाख तौ मुख मोडियो। गुरुसों नेह लगाय सबनसों तोडियो॥ जो शिष्य सांचा होय तो आपा दीजियो। चरणदासकी सीख समझकर लीजियो॥ मोको श्रीशुकदेव यही समझाइयो। वेद पुराणनमाहिं जु योंही गाइयो॥

[1] निगुरा

दोहा-गुरु अस्तुति कह कहि सकै, चरणदास कह बुद्धि ।
भक्तोंकी अब कहत हौं, जो वै देवैं शुद्धि ॥ ४८ ॥

२-भक्तमहिमा

दोहा-भक्तनकी अस्तुति किये, तन मन हियो सिराय ।
कलिका मैल रहै नहीं, बुधि उज्ज्वल ह्वै जाय ॥४९॥
साधुनकी सेवा करौ, चरणदास चित लाय ।
जनम मरण बंधन कटै, जगत व्याधि छुटि जाय ॥५०॥

जो भक्तोंकी सेवा करै । यमके फन्दे नाहीं परै ।
जिन साधोंका दर्शन देखा । तिनका यमसों रहा न लेखा ॥
जो भक्तनको शीश नवावै । तन छूटै जब नहिं दुख पावै ॥
जो कोइ साधु संगमें रलै । जठर अग्निमें नाहीं जलै ॥
जो साधोंकी अस्तुति भाखै । भावै भक्ति प्रेमरस चाखै ॥
जो भक्तनसों प्रीति लगावै । वह निश्चय हरिको अपनावै ॥
जो भक्तोंकी वाणी गावै । समझै अर्थ परमपद पावै ॥
साधुसंग बिन गति नहिं होनी । क्या तपसी अरु क्या भयो मौनी ॥
चरणदास भक्तोंकी शरना । ह्वांई जीवन ह्वांई मरना ॥

३-भक्तलक्षण

दोहा-भक्तिभाव निर्मल दिशा, संतोषी निर्वास ।
मन राख नवधा विषे, और न दूजी आस ॥५१॥

दयावान दाता गुण पूरे । पैज धारणा वचनौ शूरे ॥
मुक्ति कामना फल नहिं चाहैं । ऋद्धि सिद्धि अरु त्यागैं लाहैं ॥
हानि लाभ जिनके नहिं टोटा । वैरी मित्र खरा नहिं खोटा ॥
मानऽपमान कछू नहिं तिनके । दुखसुख एक बराबर जिनके ॥
शुभ अरु अशुभ कछू नहिं जानै । राव रंकको ना पहिंचानैं ॥
कंचन काच बराबर देखै । जग व्योहार कछू नहिं लेखै ॥

हार जीत नहिं वाद विवादा । सदा पवित्र समज्ञ अगाधा ॥
हर्ष शोक जिनके नहिं कबहीं । लख चौरासी प्यारे सबहीं ॥
हिंसा अकस भाव नहिं दूजा । सब जीवनकी राखै पूजा ॥
चरणदास शुकदेव बतावे । ऐसे लक्षण साधु कहावे ॥

दोहा–भक्तनकी पदवी बडी, इन्द्रहुसे अधिकाय ।
तीन लोकके सुख तजे, लीन्हो हरि अपनांय ॥५२॥
अनन्य भक्त निष्काम जो, करै सोय चरणदास ।
चार मुक्ति वैकुण्ठलों, सबसे रहै निरास ॥ ५३ ॥

४–साधुमाहात्म्य

दोहा–प्रभु अपने मुखसे कह्यो, साधू मेरी देह ।
उनके चरणनकी मुझे, प्यारी लागै खेह ॥ ५४ ॥
आठ सिद्धि वै ले नहीं, कनक कामिनी नाहिं ।
मेरे सँग लागे रहैं, कभी न छोडै बाहिं ॥ ५५ ॥
सब तजिकर मोकों भजे, मोहिं सेती प्रीति ।
मैं भी उनके कर बिक्यो, यही जु मेरी रीति ॥५६॥
साधु हमारी आतमा, सबसे प्यारे मोहिं ।
नारद निश्चय कीजिये, साँच कहत हौं तोहिं ॥५७॥
जिनके कारण मैं रचौं, अद्भुत यह संसार ।
उनहींकी इच्छा धरूं, हर युगमें अवतार ॥ ५८ ॥
प्रमीका ऋणियां रहौं, यही हमारो सूल ।
चारि मुक्त दइ ब्याजमें, दै न सकौं अब मूल ॥५९॥
सर्वस दीन्हों भक्तको, देख हमारो नेह ।
निर्गुणसों सर्गुन भयो, धरी पशूकी देह ॥ ६० ॥
मेरे जन मोमें रहें, मैं भक्तनके माहिं ।
मेरे अरु मम सन्तके, कछु भी अन्तर नाहिं ॥६१॥

साधु सोवै तहँ सोय रहूँ, भोजन सँगही जेवुँ ।
जो वह गावै प्रेमसों, मैं हूं ताली देवुँ ॥ ६२ ॥
मम भक्ता जित जित फिरै, गवनै लागा जाँव ।
जहां तहां रक्षा करौ, भक्तवत्सल मो नाँव ॥ ६३ ॥
भक्त हमारो पग धरै, जहां धरूं मैं हाथ ।
लारे लागोही फिरौं, कबहुँ न छोडूं साथ ॥ ६४ ॥
मोको वश कियो जो चहै, भक्तनकी करै सेव ।
उनमें ह्वैकर मैं मिलौं, करौं बहुत ही हेव ॥ ६५ ॥
पृथ्वी पावन होत है, सबही तीरथ आदि ।
चरणदास हरि यों कहैं, चरण धरैं जब साधि॥६६॥
जिनकी महिमा, प्रभु करै, अपने मुखसों भाखि ।
तिनकी कौन बराबरी, वेद भरत है साखि ॥ ६७ ॥
जिनकी आशा करत हैं, स्वर्ग माहिं सब देव ।
कबहूं दर्शन पाय हैं, चरण कमलकी सेव ॥ ६८ ॥
अपने अपने लोकमें, सभी करैं उत्साह ।
साधू काया छोडकरि, गवन करै किस राह ॥६९॥
धनि नगरी धनि देश है, धनि पुर पट्टन गाँव ।
जहँ साधूजन उपजियो, ताके बलि बलि जाँव॥७०॥
भगत जु आवैं जगतमें, परमारथके हेत ।
आप तरैं तारैं परा, मँडैं भजनके खेत ॥ ७१ ॥
भवसागरसों तारि करि, लै जावैं बहु जीव ।
साधू केवट रामके, पार मिलावैं पीव ॥ ७२ ॥
काम क्रोध मद लोभ हनि, गर्व तजै जो साध ।
राम नाम हिरदै धरै, रोम रोम औराध ॥ ७३ ॥

साधू महिमा को कहै, शोभा अधिक अपार
रसना दोय हजारसों, शेषहु जावै हार ॥ ७४ ॥
अनन्य भक्ति करि प्रेमसों, जीति लिये गोविन्द ।
चरणदास हो वश किये, पूरण परमानन्द ॥ ७५ ॥

५-सतसंगति महिमा

दोहा-तपके वर्ष हजारहूं, सत्संगति घडि एक ।
तौभी सरबर ना करै, शुकदेव किया विवेक ॥७६॥

सत्संगति महिमा बड भाई । स्मृति वेद पुराणन गाई ॥
मुनि वसिष्ठ कहो याही भेवा । साधु संगको तरसैं देवा ॥
साधु संगको नारद जानै । सो वह पिछलौ जन्म पिछानै ॥
देखो संगतिकी अधिकाई । वालमीकि अरु शबरी गाई ॥
अजामील सतसंगति परिया । अनगिन पाप किये सब जरिया ॥
सत्संगति बहु पतित उधारे । अधम सरीखे मुक्ति पधारे ॥
जाट जुलाहा अरु रैदासा । संगति साधु हुआ परकासा ॥
साधुनकी संगति मुकताई । चरण दास शुकदेव बताई ॥

दोहा-जब जब दर्शन राम दें, तब माँगौं सत्संग ।
चाहौं पदवी भक्तिकी, चढै सु नवधा रंग ॥ ७७॥

कूवा सैना सदना नाई । बहुतक नीच भये उँच पाई ॥
जैसे ठार ठौरको पानी । सुरसरि मिलि भो गंगा रानी ॥
तैसे काठ लोहको तारै । ऐसे संगति मिलि भय पारै ॥
जैसे पारस लोहा लागा । सो वह कंचन भयो सुभागा ॥
देवल तीरथ बहु मग धावै । साधुसंग बिन गति नहिं पावै ॥
ढाका पात पानके साथा । संगति मिलि गयो भूपन हाथा ॥

त्यों गोविन्द सँग गाई कुबरी । सूवाके सँग गणिका उबरी ॥
हरिभगवानमें दीजै वासा । जन्म जन्म माँगै चरणदासा॥

दोहा-ऊंची पदवी साधुकी, महिमा कही न जाय ।
सुर नर मुनि जग भूपही, देखत रहे लजाय ॥७८॥

राग सारंग-करो नरहरी भक्तनको संग । दुख बिसरै सुख होय घनेरी तन मन पलटै अंग॥ह्वै निष्काम मिलो सन्तनसों नाम पदारथ संग । जिहि पाये सब पातक नाशैं उपजै ज्ञान तरंग ॥ जो वे दया करै तेरे पर प्रेम पिलावै भंग । जाके अमल दरश ह्वै हरिको नैनन आवै रंग॥उनके चरण शरणहीं लागो सेवा करो उमंग। चरणदास तिनको पग परशन आश करत है गंग॥

६-ईश्वर महिमा

दोहा-बिन होनी हरि करिसकै, होनी देहिं मिटाय ।
चरणदास करु भक्तिही, आपा देहु उठाय ॥७९॥

हरि चितवै सो सांची बाता । औरनसों नहिं टूटै पाता ॥
जो कछु चाहा सो उन करई ।अब चाहै सो भी सब सरई ॥
अग्नि माहिं तृण घास बचावै । घटमें सगरो सिंधु समावै ॥
पावक राखै पानी माहीं । जल राखै जहँ धरती नाहीं ॥
गिरिवर सागर माहिं तरावै । चाहै हलका काठ डुबावै ॥
सुइके नोके हस्ती काढै । मूल पांत बिन लकडी बाढै ॥
नरकी छाती दूध निकासै । उपजावै वह खेत अकासै ॥
चाहै गूँगे वेद पढावैं । अँधरे आँखें खोलि दिखावैं॥
सब लायक समरत्थ गुसाँई । चरणदास शुकदेव बताई ॥

दोहा-प्रभु चाहै सोई करे, ताकूं टोकै कौन ।
देखि देखि अचरज रहा, चरणदास गहि मौन॥८०॥

महल पवनपर रचै मुरारी । अग्निके माहिं करै फुलवारी॥
चाहै बिन बादल बरसावै । बिन सूरज दिन करि दिखलावै॥

खाली भरै भरे निघटावै । जो चाहै सोइ प्रगटावै ॥
पाथर पानी करै बहावै । छिनमें सगरो सिंधु सुखावै ॥
चाहै जलका थल करि डारै । राईकूं परबत करि भारै ॥
रंकनकूं करै छत्तर धारी । चाहै भूपन देइ उजारी ॥
जो चाहै सो आपहि करैं । औरनके शिर झूठे धरैं ॥
चरणदास शुकदेव जनावै । सांचे गुणावाद जो गावै ॥

दोहा—यह अस्तुति करतारकी, जिन रचिया संसार ।
अद्भुत कौतुक करि रह्यो, लीला अगम अपार॥८१॥

उपजावै पालै विनशावै । अनगिन चन्द सूर दरशावै॥
कोटिक अंड पलकमें करै । जब चाहै तब कुछ ना रहै ॥
जब फैले तब रूप अनेका । जब समिटै तब एकहि एका ॥
वटके बीजका खेलनहारा । एक बीजका सकल पसारा॥
तामें बीज अनंतहि देखा । गिनूं कहांलौं रंग न रेखा ॥
ऐसे हरि आपा विस्तारा । कहत सुनत देखतहू हारा ॥
अपरंपार पार नहिं पाऊं । अस्तुति करता मैं सकुचाऊं॥
समझि समझि मनमें रहि जाऊं । चरणदास हो शीश नवाऊं ॥

दोहा—लीलासिंधु अगाध गति, मोपै कही न जाय ।
चरणदास यों कहत है, शोचत गयो हिराय॥८२॥

कोटिक ब्रह्मा अस्तुति करहीं । वेद कहत प्रभु परे परेहीं ॥
कोटिक शम्भू करैं समाधा । जानि परै नहिं रूप अगाधा॥
कोटिक नारदसे यश गावैं । गुण अगाध कछु अन्त न पावैं॥
कोटिक ध्यानी ध्यान लगावैं । हरिके सो कछु रूप न पावैं ॥
कोटिक ज्ञानी कथैं वह ज्ञाना । समझ थकी उनहूं नहिं जाना ॥
कोटिक शारद करैं विचारा । बुद्धि थकी जब कहा अपारा॥
सुर नर मुनि वा भेद न लहिया। शोचि शोचि बकि २ थकि रहिया॥
निरगुण सरगुण कहा न जावै । चरणदास शुकदेव सुनावै ॥

दोहा—चरणदास वा रूपकी, पटतर दई न जाइ ।
राम सरीखे राम हैं, और बताऊं काइ ॥ ८३ ॥

वाकी अस्तुति कहां बखानूं । जैसा वह तैसा नहिं जानूं ॥
बुधि विचार करि हारा ज्ञाना । अनभै थकी नाहिं पहिंचाना ॥
आदि नअन्त मध्य नहिं जाका । दहिना बाँया पीठ न आका ॥
हरा पीत पुनि श्वेत न काला । नारी पुरुष न बूढा बाला ॥
रूप न रंग मिहीं नहिं मोटा । नया पुराना बड़ा न छोटा ॥
नाम रूप करियासूं न्यारा । नहिं हलका नहिं कहिये भारा ॥
वानी चार पर निरवाना । काहू विधि वह जाय न जाना ॥
पुष्प गंध नादनतैं झीना । गुरु शुकदेव सुनाय जु दीना ॥

दोहा—कौन लखै को कहिसकै, अचरज अलख अभेव ।
ज्ञान ध्यान पहुँचै नहीं, निर्विकार निर्लेव ॥ ८४ ॥

सुनत अचम्भा मोकूं आया । जाके वचन रूप नहिं काया ॥
निराकार नहिं ना आकारा । नहिं अडोल नहिं डोलन हारा ॥
पांच तत्त्व त्रैगुणते आगे । अद्भुत अचरज ध्यान न लागे ॥
नहिं परगट नहिं गूप न ठाऊं । समझसकूंनहिंथकिथकिजाऊं ॥
जैसो आगे मैं कहि आयो । फिर समझो वैसो नहिं पायो ॥
जो कुछ कहिया नाहीं नाहीं । सो सब देखा वाके माहीं ॥
सकल सर्वदा ह्वां पहिचानी । चरणदास शुकदेव बखानी ॥

दोहा--वामें गुण अनगिनत हैं, अपरंपार अगाध ।
देखौ परगटही भये, रूप नाम अरु नाद ॥ ८५ ॥

वृक्ष बीजका भेद बताऊं । भिन्न भिन्न परगट दिखलाऊं ॥
जो कोइ निरा बीजकूं बूझै । ताकूं वह निर्गुणही सूझै ॥
जब समझ तब सबगुणमाहीं । तामें डाल मूल फल छाहीं ॥
ऐसे पूरण ब्रह्म पिछानो । निराकार निर्गुण मत जानौ ॥

वे निरगुण सरगुण ते न्यारे । निरगुण सरगुण नाम विचारे॥
अकथ कथा कछु कथिय न जाई। जो भाषू सोई मुरखाई ॥
कोई कहौ सुनौ मन आनौ । वैसा नहिं निश्चय करि जानौ॥
बड बड ऋषि मुनि पंडित भारे। चरणदास सब खोजत हारे॥
दोहा—वहि निरगुण सरगुण वही, वही दोइसे न्यार ।
जो था सो जाना नहीं, शोचा बारम्बार ॥ ८६ ॥
अनन्त सकल लीला अनंत, गुण अनन्त बहु भाव ।
कौतुक रूप अनंत हैं, चरणदास बलि जाव ॥८७॥
नामभेद, करिया अनंत, धर अनंत अवतार ।
बीस चार तिनमें अधिक, कहै शुकदेव विचार ॥८८॥
राम कृष्ण पूरण कला, चौबीसोंमें होय ।
निरगुणसे सरगुण वही, भक्तों कारण दोय ॥ ८९ ॥

राग बिलावल—अलख निरंजन अगम अपार । एक अनेक भेष बहु कीन्हे सुन्दर रचना रची सँवार ॥ निरगुण हरि सरगुण हो खेलो अचरज लीना करि विस्तार । अपनो चरित आपही देखे ऐसो अद्भुत कौतुक धार ॥ रूप वराह पकरि हिरण्याक्षहि धरती लाये ताहि सिधार । यक्षपुरुष अरु दत्तात्रेयी अरु श्रीबद्रीपतिहि विचार ॥ सनत्कुमार ऋषभदेव बधू वराह पृथू मच्छ कूर्म उदार । हयग्रीव अरु हंस रूपही महाबली नरसिंह बलधार ॥ हरि परगट ह्वै छुटायो वामन कपिल सरस गुणसार । मन्वन्तर धन्वन्तर प्रगटे परशुराम रामचन्द्र मुरार । पूरण कलाईस तिहुँ पुरको कृष्ण प्रगट हो कंस पछार ॥ वेदव्यास अरु बोध कलंकी ये भये सब चौबीस अवतार ॥ युग युग माहिं आप परगट ह्वै दुष्ट दलन सन्तन रखवार । चरणदास शुकदेव श्यामकी बाँकी गतिको वार न पार ॥

दोहा-एक एकसों आगरो, महिमा कही न जाय ।
अनन्त रँगीले महलमें, आपहि बैठे आय ॥ ९० ॥

अनन्त रँगीले महल बनाये । तामें आप रामही आये ॥
राम रूप गुण न्यारे न्यारे । गिनत शारदा गणपति हारे ॥
मन्दिर रूप बहुत छबि सोहै । जहाँ तहाँ मेरा मन मोहै ॥
हरियर श्वेत पीत अरु लाले । पिसताकी ऊदें अरु काले ॥
बेलदार लहरा छबि बूटे । चीतमताले और तिखूंटे ॥
बूँद बूँद अवगंडे दारे । जानौ चित्तर हाय संवारे ॥
रँगा रंग बहु चित्तरकारी । कहूं कहाँलौ मो बुधिहारी ॥
दो पायें अरु पुनि चौपाये । बहु पाये कछु कहे न जाये ॥
वृक्षरूप अरु पक्षी नाना । कीट पतंगा थिरचर जाना ॥
जलमें मीन बहुत परकारे । चरणदास शुकदेव विचारे ॥

दोहा-थावर जंगम चर अचर, बहुत छबीली भाँति ।
राजस तामस सात्विकी, बहु अधीन बहुक्राँते ॥ ९१ ॥
वानर नर असुरा सुरा, यक्षगण गन्धर्व प्रेत ।
सबही महल बराबरी, सबही सेती हेत ॥ ९२ ॥

खिरकी नैन चावसों खोलै । मुख द्वारे नानाविधि बोलै ॥
बहुत भाँतिकी नाना बानी । चतुर कूट भोली अरु यानी ॥
कहिं अबोल बोल न आवै । पै सब महलन वह दरशावै ॥
साक्षात हरिहीकूं जानै । भवन भवनमें ताहि पिछानै ॥
काया क्षेतर ज्ञानी जानै । क्षेत्रज्ञ आतम रूप बखानै ॥
देही क्षर गीतामें गायो । अक्षर जीव खोल दिखलायो ॥
काया मन्दिर आप रमायो । ताते राम नाम धरवायो ॥
देह सँयोग राम कहलायो । चरणदास शुकदेव बतायो ॥

दोहा-सूरज चींटी आदि दै, लघु दीरघके माहिं ।
सबमें पोई आतमा, बाहर कोई नाहिं ॥ ९३ ॥
छोटे भांडेमें करै, छोटाही परकाश ।
बड जू भांडेमें करै, ज्यादा होय उकाश ॥ ९४ ॥
ज्ञानवन्तकूं मैं दियो, दीपकको दृष्टान्त ।
जो वह समझै चावसूं, मिटै तिमिर अरु भ्रान्त ॥९५॥
जैसेही है पिण्डमें, तैसेही ब्रह्मण्ड ।
भीतर बाहर रमि रह्यो, सात द्वीप नव खण्ड ॥९६॥

आप लखेते वाकूं पावै । जो पै सद्गुरु भेद बतावै ॥
ज्ञान दृष्टी सेती दरशावै । आपा मिटै ब्रह्म ठहरावै ॥
ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय जहँ नाहीं । ध्याता ध्यान ध्येय मिटि जाहीं ॥
जब हो एक दूसरा नासे । बन्ध मुकतके रहै न साँसे ॥
मृतक अवस्था जीवत आवै । करम रहित अस्थिर गति पावै ॥
तब कोइ मिन्तर वैरी नाहीं । पाप पुण्यकी परै न छाहीं ॥
हर्ष शोक सम होजा दोऊ । रक्षा करो कि मारो कोऊ ॥
कोउ हाथमें भोजन देजा । कोउ छीनकर यांही लेजा ॥
दोनों एक बराबर वाके । जग ब्योहार कछू नहिं जाके ॥
हरि बिन और पिछान न कोई । तिनके इच्छा रही न दोई ॥
ज्ञान दिशा ऐसे करि गाई । चरणदास शुकदेव बताई ॥

दोहा-ज्ञानदिशा आवन कठिन, विरला जानै कोय ।
ज्ञानदिशा जब जानिये, जीवत मृत्यक दोय ॥९७॥

७-वाचक ज्ञानी

वाचक ज्ञानी बहुतक देखे । ज्ञानी लक्ष कोइ लेखे लेखे ॥
ज्ञानी बिगडै विषयी होई । कथा एक अरु चालै दोई ॥

बुरे करम औगुण चित लावै । भले करम गुण सब बिसरावै ॥
विषय वासनाके रग रातो । झूठ कपट छल बल मदमातो ॥
इन्द्री वश मन हाथ न आवै । पाप करनसों नाहिं डरावै ॥
ज्ञान कथै अरु बाद बढावै । रहन गहनका भेद न पावै ॥
ब्रह्म व्रतका आवन भारी । चरणदास शुकदेव विचारी ॥
दोहा-उनतीसों लक्षण लिये, भक्त सहतहो ज्ञान ।
ज्ञानदिशा जब आय है, करै आतमा ध्यान ॥९८॥

८-नवधा भक्ति

दोहा-भक्तिदिशा अब कहत है, बिसरै आपा आप ।
चरणदास यों कहत है, छूटैं तीनों ताप ॥ ९९ ॥

अष्टपदी-नवधाभक्ति सँभारि अंग नौ जानिले । श्रवणन चिंतन और कीर्त्तन मानिले ॥ सुमिरण वन्दन ध्यान और पूजा करो । प्रभुसों प्रीति लगाय सुरति चरणन धरो ॥ होकरि दासहि भाव साध संगति रलो । भक्तनकी कर सेव यही मत है भलो ॥ आपा अर्पण देय धीर्य्य दृढता गहौ। क्षमा शील संतोष दया धारे रहो॥ यह जो मैंने कहा वेदका फूल है । योग ज्ञान वैराग्य सबनका मूल है ॥ प्रेमाभक्तिका तात पात तीनौं नसैं । धर्म अर्थ काम मोक्ष सकल तामें वसैं ॥ जो राखै मनमाहिं विवेक विचारसों। पावै पद निर्वाण बचै जग भारसों॥ कहै गुरू शुकदेव मायाके भावसों । चरणहिं दासा होय सुनौ बहु चावसों ॥

राग सोरठ-वा गौरी वा आसावरी

साधो नवधा भक्ति करो रे । कलियुगमें यह बडो पदारथ गहि गहि ताहितरो रे॥ जेजे यासों भये शिरोमणि तिनको नाम सुनाऊं । बढै कथा विस्तारै कहूँ तो याते सूक्षम गाऊं ॥ जन प्रहलाद तरो सुमिरणते वंदनसों अक्रूर । चरणकमलकी

सेवासेती लक्ष्मी रहत हजूर ॥ चन्दन चर्चतहूं पृथुराजा उतरो भवजल पार । बलि राजा तन अर्पण कीन्हों सदा रहै हरिद्वार ॥ परमदास हनुमत हूं उबरो उत्तम पदवी पाई । सखा सुभाव तरो है अर्जुन ताकी महिमा गाई ॥ मुक्त भयो है परीक्षित राजा सुन भागवत पुराना । श्रीशुकदेव मुनी से वक्ता हुए रू. भगवाना ॥ ज्ञान योग वैराग्य सबनसों प्रेम प्रीति है न्यारी । चरणदासने गुरु किरपासों सांची बात बिचारी ॥

९-प्रेमाभक्ति

दोहा-नवो अंगके साधते, उपजे प्रेम अनूप ।
रणजीता यों जानिये, सब धर्मनका भूप ॥ १०० ॥

सब मत अधिकी प्रेम बतावै । योग युगतसूं बडा दिखावै ॥
प्रेमहिंसूं उपजे वैरागा । प्रेमहिंसूं उपजै मन त्यागा ॥
प्रेम भक्तिसूं उपजे ज्ञाना । होय चांदना मिटै अज्ञाना ॥
दुर्लभ प्रेम जु हाथ न आवै । हरि किरपा करि दे तौ पावै ॥
प्रेम प्रीतिके वश भगवाना । सकल शास्तर कियौ बखाना ॥
किसी भक्ति हिय प्रेम जु जागे । तौ हरि दरशत रहै जु आगे ॥
प्रेमहिंसूं जगकूं उपजावै । निर्गुण सर्गुन हो हो आवै ॥
सकल शिरोमणि प्रेमहि जानौ । चरणदास निहचै मन आनौ ॥

दोहा-प्रेम बराबर योग ना, प्रेम बराबर ज्ञान ।
प्रेम भक्ति बिन साधिवो, सबही थोथा ध्यान ॥ १०१ ॥
प्रेम छुटावै जगतकूं, प्रेम मिलावै राम ।
प्रेम करै गति औरही, लै पहुँचै हरिधाम ॥ १०२ ॥

वह करै कागसूं हंसा । एक रहै पियाका संसा ॥
वह जात बरन कुल खोवै । अरु बीज विरहका बोवै ॥

जो प्रेम तनक चित आवै । वह औगुण सबै नशावै ॥
प्रेमलता जब लहरैं । मन बिना योगही ठहरैं ॥
कोई चतुर खिलारी खेलै । वह प्रेम पियाला झेलै ॥
जो धडपै शीश न राखै । सोई प्रेम पियाला चाखै ॥
तन मनसूं जो बौराई । वह रहै ध्यान लौलाई ॥
वह पहुँचै हरिकै पासा । यों कहैं चरणही दासा ॥

दोहा–प्रेमीजन हरि आपा हो, आपा निकसे नाहिं ।
गुरु शुकदेव दिखावई, समझ देखि मनमाहिं ॥१०३॥
हिरदे माहीं प्रेम जो, नैनो झलकै आय ।
सोइ छका हरिरस पगा, वा पग परसो धाय ॥१०४॥
गद्गद वाणी कंठमें, आँशू टपके नैन ।
वहतो विरहिनि रामकी, तलफत है दिन रैन ॥१०५॥
हायहाय हरि कब मिलै, छाती फाटी जाय ।
ऐसा दिन कब होयगा, दर्शन करै अघाय ॥१०६॥
बिन दर्शन कल ना पडै, मनुआँ धरै न धीर ।
चरणदासकी श्याम बिन, कौन मिटावै पीर ॥१०७॥
पीव बिना तो जीवना, जगमें भारी जान ।
पिया मिलै तो जीवना, नहिं तो छूटै प्रान ॥१०८॥
मुख पियरो सूखै अधर, आँखें खरी उदास ।
आहजु निकसै दुख भरी, गहिरे लेत उसाँस ॥१०९॥
वह विरहिनि बौरी भई, जानता ना कोइ भेद ।
अगिनी बैर हियरा जरै, भये कलेजे छेद ॥११०॥
अपने वश वह ना रही, फँसी विरहके जाल ।
चरणदास रोवत रहै, सुमिरि२ गुण ख्याल॥१११॥

बातनको विरहा लगो, ज्यों घुन लागो दार।
दिनदिन पीरी होत है, पिया न बूझे सार ॥ ११२ ॥
व नहिं बूझैं सारही, विरहिन कौन हवाल।
जब सुधि आवै लालकी,चुभत कलेजे भाल॥ ११३॥
पीव चहौ कै मत चहौ, वह तौ पीकी दास।
पियके रंग राती रहै, जग सो होय उदास ॥११४॥
पीपी करते दिन गया, रैनि गई पिय ध्यान।
विरहिनिके सहजें सधै, भक्तियोग अरु ज्ञान॥ ११५॥
विरहिनिके एक राम विन, और न कोई मीत।
आठ पहर साठौ घडी, पिया मिलनकी चीत॥ ११६॥
जाप करै तौ पीवका, ध्यान करै तो पीव।
पीव विरहिनिका जीव है,जी विरहिनिका पीव॥ ११७॥

इति भक्तिपदार्थ

१०-चारोंयुगवर्णन

सतयुग

कुंडलिया-सतयुग सांचा बोलते,परमहंसको ध्यान। सतवादी सत राखते, सत नहिं देते जान ॥ सत नहिं देते जान, प्रान जोपै तजि देही। निश्चय होती मुक्ति, दरशते रामसनेही॥ शुकदेव यही चरणदास सों, अबही सतयुग जान। संत बोले सतसों रहो, सतकी गहिये आन ॥ १ ॥

त्रेता

त्रेतामें तप साधते, आसन संयम धार। पांचौं इन्द्री रोकते जब मन जाता हार॥ जब मन जाता हार,खैंचि अनहदमें धरते। कै अपनोही इष्ट ध्यान ताहीको धरते। आप विसर्जन होय मुक्ति निश्चय कर पाते। चरणदास शुकदेव तपस्या चाल दिखाते॥२॥

द्वापर

कुं-द्वापर पूजा वंदन, प्रेमसहित जो होय। कहा राजसी मानसी पूजा कहिये दोय॥ पूजा कहिये दोय जैसी जाकै मनभावै। धारै नेम अचार, अंत ना चित्त डुलावै॥ हित करि पूजा कीजिये, द्वापरको यह भेव। चरणदास निश्चय करो, कहिया श्रीशुकदेव ३॥

कलियुग

कलियुग हरिगुण गाइये, गुणवादही सार। भजन करो मन मगनह्वै, भय अरु सकुच निवार॥ भय अरु सकुच निवार, जाति कुल गर्व बहावो। साज बाज लै संग, रामको गाय रिझावो। कथा कीरतनसो तरै, कलियुगकेही माहिं। शुकदेव कहि चरणदाससों, तारों गहि गहि बाहिं॥ ४॥

११-नाम अंगवर्णन

नाम महिमा

दोहा-प्रणऊं श्रीशुकदेवकूं, वाणी कहूं अगाध।
महिमा गाऊं नामकी, सब मिलि सुनियो साध।११८।
ज्योंकी त्योंहीं कहत हूं, कछू न राखूं भेद।
निश्चय आवै नामकी, छूटै सबही खेद॥ ११९॥
जन्म मरण यमदंडके, गर्भ वासकी त्रास।
नाम रटे सबही छुटै, लख चौरासी गास॥१२०॥
कई बार जो यज्ञ करि, योग करै चित लाय।
चरणदास कहैं नाम बिन, सभी अफल ह्वै जाय।१२१।
अष्ट धातुमें गुण नहीं, जो पारस कै माहिं।
तप तीरथ व्रत साधना, राम नाम सम नाहिं॥१२२॥
ज्यों सेमरका सुवना, ज्यों लोभीका धर्म।
अन्न विना भुस कूटना, नाम बिना यों कर्म॥१२३॥

छोड सबही वासना, हो बैठे निष्काम ।
चरणकमलमें चित धरै, सुमिरै रामहिं राम ॥१२४॥
ऐसे ह्वै जब संत हो, तब रीझै करतार ।
दर्शन दे अपना करै, कभी न छोडै लार ॥१२५॥
चार वेद किये व्यासने, अर्थ विचार विचार ।
तामें निकसी भक्तिही, राम नाम ततसार ॥ १२६ ॥
जिन कहिया शुकदेवकूं, सुनिया प्रेम प्रतीति ।
तिन जगमें परगट कियो, जैसी चहिये रीति ॥१२७॥
ब्रह्महत्या अरु नारिकी, बालक हत्या होय ।
राम नाम जो मन बसै, सबकूं डारै खोय ॥१२८॥
हिय आवत जग दुख टरै, कंठ आय अघ जाय ।
मुखसूं बोलै आयकरि, ताकी कौन चलाय ॥१२९॥
ऐसाही हरि नामहीं, मोहिं रामकी सौंहिं ।
जाकूं होवै परखही, सो समझे ह्यां लौहिं ॥१३०॥
बिन समझै पातक नशै, समझ जपै हो मुक्ति ।
चरणदास यों कहत है, जो कोइ जानै युक्ति ॥१३१॥
नाम लै जल पीजिये, नामहिं लै लेकर खाह ।
नामहिं लेकरि बैठिये, नामहि लै चल राह ॥१३२॥
जबलग जागै राम कहु, तन मनसूं यहि चीत ।
चरणदास यों कहत हैं, हरि बिन और न मीत॥१३३॥
तेरा तौ कोइ है नहीं, मात पिता सुत नार ।
ताते सुमिरौ रामकूं, हे मन बारम्बार ॥१३४॥
जिहि कारण भटकत फिरै, घर घर करत सलाम ।
तेरे तो वै हैं नहीं, ये मन सुमिरौ राम ॥१३५॥

जीवतही स्वारथ लगै, मूये देह जराय।
ऐ मन सुमिरो रामकूं, धोखेकाहि पराय ॥१३६॥
हाथी घोडे धन घना, चन्द्र मुखी बहु नार।
नाम विना यमलोकमें, पावै दुःख अपार ॥१३७॥
जबलग जीवै राम कहु, रामहिं सेती नेह।
जीव मिलैगो राममें, पडी रहैगी देह ॥ १३८ ॥
अचरज साधन नामका, भक्तियोगका जीव।
जैसे दूध जमायके, मथि करि काढा घीव ॥१३९॥
कु०-आठ मास मुखसूं जपै, सोला मास कँठ जाप।
बत्तिस मास हिरदै जपै, तनमें रहै न पाप ॥
तनमें रहै न पाप, भक्तिका उपजै पौधा।
मन रुक जावै जहां, अपरबल कहिये योधा ॥
शुकदेव कही चरणदाससूं, यही भेद ततसार।
बहुरू आवै नाभिमें, ताका कहूँ विचार ॥
दोहा--पांच वरष जप नाभिसों, रगरग बोले राम।
देह जीव निज भक्त हो, पहुँचे हरिके धाम ॥१४०॥
त्रिकुटीमें जप रामकूं, जहाँ उजाला होय।
स्वासा माहीं जपेते, द्विविधा रहै न कोय ॥१४१॥
गगन मँडलमें जाप करि, जित है दशवां द्वार।
चरणदास यों कहत हैं, सो पहुँचै हरिदरबार॥१४२॥
नासा अग्रे जाप करि, देखै नूर अगाध।
बहुतक अचरज अरु खुलै,चरणदास कहे साध।१४३।
नाम उठाकर नाभिसूं, गगन माहिं लै जाय।
जहाँ होय परकाशही, शुकदेव दिया बताय ॥१४४॥

मनही मनमें जाप करि, दर्पण उज्ज्वल होय ।
दर्शन होवै रामका, तिमिर जाय सब खोय॥१४५॥
कूक कूक कर नाम जप, छुटै सात अरु पांच ।
जासों मन ठहरा रहै, चरणदास कहैं सांच ॥१४६॥
सुरत माहिं जो जप करै, तनसूं न्यारा जौन ।
मिलै सच्चिदानन्दमें, गहैं रहे जो मौन ॥ १४७ ॥
सकल शिरोमणि नाम है, सब धर्मनके माहिं ।
अनन्य भक्त वहि जानिये, सुमिरण भूलै नाहिं।१४८॥
आन धरम मानै नहीं, आन देव नहिं ध्यान ।
ऐसे भक्त अनन्यकूं, कोई पावै जान ॥ १४९ ॥
पतिव्रता वह जानिये, आज्ञा करै न भंग ।
पिय अपनेके रँग रतै, और न सूनै ढंग ॥ १५० ॥
अपने पियकूं सेइये, आन पुरुष तजि देह ।
पर घर नेह निवारिये, रहिये अपने गेह ॥ १५१ ॥
आज्ञाकारी पीवकी, रहै पियाके संग ।
तन मनसूं सेवा करै, और न दूजो रंग ॥ १५२ ॥
रंग होय तौ पीवको, आन पुरुष विष रूप ।
छाँह बुरी पर घरनकी, अपनी भली जु धूप ॥१५३॥
अपने घरका दुख भला, परघरका सुख छार ।
ऐसे जानै कुलवधू, सो सतवन्ती नार ॥ १५४ ॥
पतिकी ओर निहारिये, औरनसे कह काम ।
सबै देवता छोडकरि, जपिये हरिका नाम ॥ १५५ ॥
खसम तुम्हारो राम है, इत उत झँख मत मारि ।
चरणदास यों कहत हैं, यही धारणा धारि ॥१५६॥

यह शिर नवै तो रामकूं, नाहीं गिरियो टूट ।
आन देव नहिं परसिये, यह तन जावो छूट ॥१५७॥
पतिव्रताको व्रत गहौ, व्यभिचारिणि अँग टार ।
पति पावै सब दुख नशैं, पावै सुक्ख अपार॥१५८॥
जब तू जानैं पीवही, वह अपनो करि लेइ ।
परम धाममें राखि करि, बाँह पकरि सुख देह॥१५९॥
यही सिखाये देतहूं, धारो हिरदय माहिं ।
ऐसा पौधा बोइये, ताकी बैठो छाहिं ॥ १६० ॥
सतवादी सतसूं रहो, सतही मुखसूं बोल ।
एक ओर हरिनाम रख, एक ओर जग तोल ॥१६१॥
सभी निचोरे कहतहूं, भक्ति करी निष्काम ।
कोटि तपस्या यही है, मुखसूं कहिये राम ॥१६२॥
रामनाम मुखसूं कहै, रामनाम सुख कान ।
रोम रोम हरिकूं रटो, ऐसी गहिये बान ॥ १६३ ॥
विद्या माहीं वाद है, तपके माहीं ऋद्धि ।
राम नाममें मुक्ति है, योगमाहिं यों सिद्धि ॥१६४॥
ताते त्यागौ वासना, राखो रामहिं नाम ।
कोटि बन्ध छुटि जायँगे, पहुँचौ हरिके धाम॥१६५॥
राम नाममें ये सबै, ऋद्धि सिद्धि औ मोक्ष ।
ऐसा इष्ट संभारिये, चरणदास कहि सोक्ष ॥ १६६ ॥
जाका किया सब बना, सात द्वीप नवखण्ड ।
चरणदास यों कहत है, तीन लोक ब्रह्मण्ड ॥१६७॥
तव कारण सब कुछ किया, नाना विधि सुखदीन ।
तैं वाकूं जाना नहीं, नाम न कबहूं लीन ॥ १६८ ॥

अब के औसर फिरि भयो, पाई मानुष देह।
चरणदास यों कहत हैं, राम नामहीं लेह ॥१६९॥

राग केदारा-सुनौ भाई नामकी महिमा। मुक्ति चारौं सिद्धि आठौं वसत है तहँमा॥वालमीक सो वनको वासी किये थे जिन पाप। भयो है सब ऋषि शिरोमणि जपो उलटो जाप॥ गणिकासी अति महापापिन सो पढावत कीर। नामके परताप-सेती कियो हरि पुर सीर॥ अजामीलसे पतित कामी वेश्यासों रति कीन। चढि विमानै गयों सुरपुर नाम सुत हित लीन॥ और बहुतै पतित तारे गिने कापै जाहिं। दान जप तप योग संयम नाम समतुल नाहिं॥ व्यास नारद शिव ब्रह्मादिक रटत जाकूं शेष। गुरु शुकदेव नामको चरणदासकूं उपदेश॥

कवित्त-नामके प्रताप नन्दलाल आप भये प्रभु, नामके प्रताप सुत दशरथको कहायो है। नामके प्रताप पैज राखी प्रहलादजूकी, नामके प्रताप दौरो द्वारकासूं धायो है॥ नामके प्रतापकी न महिमा मोपै कही जात, नामके प्रताप सब सन्तन सहायो है। सोई नाम वास अब आस लगो चरणदास, सोई नाम चार वेद विमल विमल गायो है॥ नामके प्रताप शबरी सुरनतैं सरस करी, नामके प्रताप अधम लोककूं पठायो है। नामके प्रताप अजामीलकूं विमान आयो, नामके प्रताप गज ग्राहसूं छुटायो है॥ नामके प्रताप सब दीननको दुःख हरो, नामको प्रताप शुकदेवजी दृढायो है॥ सोई नाम वास अब आस लगो चरणदास, सोई नाम चारवेद विमल विमल गायो है॥

१२-पंचप्रेतवर्णन

दोहा-नाम अंग महिमा अधिक, मोपै कही न जाय।
पांच प्रेत अब कहतहूं जाकूं सुनि चितलाय ॥१७०॥

योग तपस्या भक्तिकूं, ज्ञान बिगाडन पांच ।
जीवत दुख दै जगतमें, मुये नरक दै आंच ॥१७१॥
काम क्रोध मोहं लोभंसे, और पांचवाँ गर्व्व ।
राज करै वसुधा विषे, इन वश कीने सर्व्व ॥१७२॥

कामवर्णन १

काम बली वर्णन करूं, जिन मारे बलवन्त ।
जाका बकसी नारि है, जीते गुणी महन्त ॥१७३॥

नारीवर्णन

राग सोरठा-साधो नारि सबल रे भाई । नहिं मानै राम दुहाई॥बांदर ज्यों पकरि नचावै। हरिजीसूं नेह छुडावै ॥ दया धर्म सब खोवै। जब नैन कजल भरि जोवै ॥ जिनका चित चोरा रांडी । तिनकी जग थू थू भांडी ॥ इन सबही सरवस खोया । नरशीश पकरि करि रोया ॥ जनम पदारथ छीना । स्याहीका टीका दीना॥दोनों मुखसों खाया। फिर फिरकै गरभ दिखाया॥ काम कटक मैं सूरी । वह सॉवत कहिये पूरी ॥ बडे बडे योधा मारे। अरु बहुतक शूर पछारे ॥ गुरु शुकदेव बतावै। बटमारन तोहिं दिखावै॥चरणदास यह जानौ।तुम छलबल कलापिछानौ॥

नारी नैहरि सुमिरणसूं खोये। राजा परजा मुंडत चुंडत नैनकटाक्षन मोहे॥ राती चूनर चटक मटकले भूषणका काजल साधै । मुख मुसकावै मधुरी वानी प्यार प्रीति कर बांधै ॥ बहुतनको उन योग छुटायो बहुतनका तप छीनों । बहुतनकी उन भक्ति बिगारी अंग विषय रस दीनों ॥ बँधुवा करि बहु नाच नचायो फंदा मोह लगायो। याते सावधानही रहियो मैं तुमकूं समुझायो ॥ गुरु शुकदेव बतावै साधो निश्चय ठगिनी जानौ । चरणदास कहै हाथ न आवो नीके ताहि पिछानौ ॥

साधो पर तिरियासूं डरिये। जाके दरश परशके कीये जीवत नरकमें परिये॥ गौतम घरनी सुन्दरि सुनिकै इंद्रासन तजि आयो। जो गति भई जगतमें जानी भलो कलंक लगायो॥ शृङ्गी ऋषि वनमें तप कीन्हो सुरपति देखि डरायो। रंभा भेज हरो सत जाको सबही सेज सिरायो॥ देवत देवत नर जो हूये नारी देख लुभायो। ताको फल ऐसोही पायो अजहूं कुयश सुनायो॥ चरणदास शुकदेव गुरूने दे उपदेश बचाये। यती सती कोइ हाथ न आयो कामी पकरि नचाये॥

अरे नर परनारी मत तक रे। जिन जिन ओर तको डाथनकी बहुतनकूं गई भख रे॥ दूध आकको पात कटइया झाल अँगनकी जानौ॥ सिंह मुछारे विषकारेको ऐसे ताहि पिछानौ॥ खानि नरककी अति दुखदाई चौरासी भरमावै। जनम जनमकूं दाग लगावै हरि गुरु तुरत छुटावै॥ जगमें फिर फिर महिमा खोवै राख तन मन मैला। चरणदास शुकदेव चितावै सुमिरो राम सुहैला॥

दोहा–नर नारी सब चेतियो, दीन्हों प्रगट दिखाय।
पर तिरिया पर पुरुष हो, भोग नरकको जाय॥ १७४॥
पर नारी कै आपनी, दोनों बुरी बलाय।
घर बाहरकी आग ज्यों, देवै हाथ जलाय॥ १७५॥

काम जीतनके उपाय

दोहा–चटक मटक सब छोडदे, देही रूप बिगार।
देख न कोइ रीझि हैं, ना होवें लगवार॥ १७६॥
यही ढाल है जगतकी, लगै न शस्तर काम।
आठ अंग हैं कामके, तासूं रहु निष्काम॥ १७७॥

काम कानमें आय करि, फिर आवत है नैन।
बहुरि हियेमें आय करि, लगै बहुत दुख दैन॥ १७८॥

वह काम बुरा रे भाई। सब देवै तन बौराई॥
पंचों में नाक कटावै। वह जूती मार दिलावै॥
मुह काला गधे चढावै। बहु लोक तमाशे आवै॥
झिडका ज्यों डोलै कूता। सबहीके मनकूं ऊता॥
कोइ नीके मुख नहिं बोलै। शरमिंदा हो जगमें डोलै॥
वह जीवत नरक मझारी। सुन चेतो नर अरु नारी॥
काम अंग तजि दीजै। सतसंगतिही मरि लीजै॥
कहैं स्वामि चरणहीं दासा। हरि भक्तनमें कर वासा॥

दोहा-तन मन जारै कामहीं, चित करै डावाँडोल।
धरम करम सब खोयके, रहै आप हिय खोल॥ १७९॥

वह दया क्षमा को मारै। जत सतको पकरि पछारै॥
शुचि नेमको दूरि कढावै। मुख ऊपर धूरि उडावै॥
जग भीतर महिमा खोवै। पापोंकी माला पोवै॥
वह धीरज नाहीं राखै। वह मुखसों झूंठी भाखै॥
वह चाल चलै विपरीता। करि विषय भोगकी चीता॥
काम बली जहँ आवै। अरु बहुतक औगुण लावै॥
यह मैन खोटका पूरा। कोइ जीतै गुरुमुख शूरा॥
साधु भक्त वही गुनियां। जिन काम दुष्टको हनियां॥
चेत कही शुकदेवा। सब चरणदास सुनि लेवा॥

दोहा-सुनिकै जो चितमें धरै, फेरि चलै वह चाल।
खाँडा पकरै शीलका, काम हनै ततकाल॥ १८०॥

क्रोधअंग २

दोहा—क्रोध महा चंडाल है, जानत है सब कोय ।
जाके अंग वर्णन करूं, सुनियो सुरति समोय ॥१८१॥

क्रोधभूतके चरित सुनाऊं । भिन्न भिन्न परगट दिखलाऊं॥
क्रोध भूत जब तापर आवै । तनमनकी सब सुधि बिसरावै॥
नैना लाल वदन सब कारो । रोम रोम व्यापौ हत्यारो ॥
महा चंडाल नीच अति घोरी । अति विपरीत बुद्धिकरि ओरी॥
अपने हाथ आपको मारै । अपने कपडे आपहि फारै ॥
मुहडे झाग मरोडे हाथा । कहै बहकती फूहर बाता ॥
हाफै बहुत आपको गाली । जेंवत आवै पटकै थाली ॥
कबहुँ शस्त्रसों मारन लागै । कबहूं कूँयें पडने भागै ॥
भली कहै तेहि भोग सुनावै । बुरे भलेपर ईंट चलावै ॥
सबल देख शीला होजावै । निबल देख बहु दुन्दि मचावै॥
याका यतन करो मनभावै । चरणदास शुकदेव बतावै ॥

दोहा—जिहि घट आवै धूमसूं, करै बहुतही ख्वारि ।
पति खोवै बुधिकूं हतै, कहा पुरुष कहा नारि॥१८२॥

वह बुद्धि भ्रष्ट करि डारै । वह मारहि मार पुकारै ।
वह सब तनहिंसा छावै । कहिं दया न रहने पावै ॥
वह गुरुसे बोलै बेंडा । साधोंसूं डोलै ऐंडा ॥
वह हरिसों नेह छुटावै । वह नरक माहिं ले जावै ॥
वह आतमघाती जानौ । वह महा मूढ पहिचानौ ॥
सोंटोंकी मार दिलावै । कबहूंकै शीश कटावै ॥
वह नीच कभी ना कहिये । ऐसे सूं डरता रहिये ॥
वह निकट न आवन दीजे । अरु क्षमा अंक भर लीजे ॥

जब क्षमा आय किया थाना । तब सबही क्रोध हिराना ॥
कहै गुरु शुकदेव खिलारी । सुनु चरणदास उपकारी ॥

मोहअंग ३

दोहा–क्रोध अंग पूरो कियो, कहूं मोहका अङ्ग ।
जाहि लागे दुखदे घना, कबहूं छोडे सङ्ग ॥१८३॥
माया मोह बिछाइया, जाल सँभारि सँभारि ।
आय आय तामें फँसे, बहुत पुरुष बहु नारि ॥१८४॥
फँसे आयकरि चावसूं, लेन गया नहिं कोय ।
चरणदास यों कहत हैं, पछिताये कहा होय ॥१८५॥
छूटि सकै नहिं जालसूं, मिरगा यों अकुलाय ।
कूद कूद निकसो चहै, ज्यों ज्यों उरझत जाय॥१८६॥
मोह शहतसम जानिये, मक्खी सम जिय जान ।
लालच लागे जित फँसे, शीश धुनै अज्ञान ॥१८७॥
बन्दीखानो भवन है, सब दिन धंधे जार ।
मोह छुटावै राससूं, डारै नरक मँझार ॥१८८॥
लख चौरासी योनिमें, फिर वह भरमें जाय ।
ह्वाँसे निकसै कठिनसूं, कबहूं औसर पाय ॥१८९॥

तिरिया मोह महा बलदाई । मोह संतान सदा दुखदाई ।
मोह कुटुम्ब अरु भाई बंधा । समझै नहीं मूढ मति अंधा॥
देव भूत जिहि कारण धावै । ठग चोरी करि खोट कमावै॥
वस्तर भूषण वाहन मोहा । सब मिल किया जीवसूं द्रोहा॥
द्रव्य लाल अरु हीरा मोती । सब मिल मोह लगावैं गोती ॥
मोह महल धरती अरु गाऊं । बडा मोह जो अपना नाऊं ॥
जामें फँसे रंक अरु राजा । तिहि कारण धंधा दुख साजा॥
परकाजै बहुतै दुख पाया । अपना सबही मूल गवाँया ॥

बडे बडे खेद उठाये सबहीं। भूले ध्यान रामका जबहीं ॥
जीते मोह शूरिमा कोई। मिले रामकूं साधू सोई ॥
होय मुक्ति जग बहुरि न आवै। चरणदास शुकदेव बतावै ॥

मोह निवारणके उपाय

दोहा—मोह बडा दुखरूप है, ताकूं मार निकास।
प्रीति जगतकी छोड दे, जब होवै निरवास ॥१९०॥
जग माहीं ऐसे रहो, ज्यों, जिह्वा मुख माहिं।
घीव घना भक्षण करै, तौ भी चिकनी नाहिं ॥१९१॥
जगमाहीं ऐसे रहो, ज्यों अम्बुज शर माहिं।
रहै नारके आसरे, पै जल छूअत नाहिं ॥ १९२ ॥
ऐसा हो जो साधु हो, लिये रहै वैराग।
चरण कमलमें चित धरै, जगमें रहै न पाग ॥१९३॥
मोह बली सबसूं अधिक, महिमा कही न जाय।
जाको बांधो जग सबै, छूटै ना बौराय ॥ १९४ ॥

लोभ अंग ४

दोहा—लोभ नीच वर्णन करूं महापापकी खान।
मंत्री जाका झूठ है, बहुत अधर्मी जान ॥ १९५ ॥
तृष्णा जाकी जोय है, जो अन्धा करि देय।
घटी बढी सूझै नहीं, नहीं कालका भेय ॥ १९६ ॥
दम्भ मकर छल बगुल जो, रहत लोभके संग।
मुये नरक ले जाँयगे, जीवत करै उदंग ॥ १९७ ॥
दे है धर्म छुटाय, आन धर्म लेजाय।
हरि गुरुते वैमुख करैं, लालच लोभ लगाय॥१९८॥
चहूँ देश भरमत फिरै, कलह कलपना साथ।
लोभ काज उठ उठ लगै, दोउ पसारे हाथ ॥१९९॥

लोभी भक्त होय नहिं कहीं । साधु पुराण कहत हैं सबहीं ॥
लोभी सती न होवै शूरा । लोभी दाता सन्त न पूरा ॥
लोभी हितू न होवै सांचा । लोभी रहै जगतमें राचा ॥
लोभी रहै द्रव्यके माहीं । तन छूटै पर निकसै नाहीं ॥
लोभी करै जीवकी घाता । लोभी करै कपटकी बाता ॥
लोभी पाप न करता डरै । लोभी जाय कष्टमें परै ॥
लोभी बेचै अपना सीसा । लोभी डूबै बिसवै बीसा ॥
गुरु शुकदेव बतावै हमकूं । सो वह कथा कही मैं तुमकूं ॥
चरणदास कहैं लोभ न कीजै । हरिके पदपंकज मन दीजै ॥

दोहा-चींटी बांदर खगनकूं, लोभ बहुत दुख दीन ।
याकूं तजि हरिकूं भजै, चरणदास परवीन ॥२००॥
लोभ घटावै मानकूं, करै जगत आधीन
बोझ घटा भिष्टल करै, करै बुद्धिको हीन ॥ २०१ ॥
लोभ गये ते आवई, महाबली संतोष ।
त्याग सत्यकूं संग ले, कलह निवारण शोक ॥२०२॥
घट आवै सन्तोषही, काह चहै जग भोग ।
स्वर्ग आदिलौं सुख जिते, सबकूं जानै रोग ॥२०३॥
संतोषी निरमल दिशा, रहै राम लवलाय ।
आसन ऊपर दृढ रहै, इत उतकूं नहिं जाय ॥२०४॥
काहूसे नहिं राखिये, काहू विधिकी चाह ।
परम संतोषी हूजिये, रहिये बेपरवाह ॥ २०५ ॥
चाह जगतकी दास है, हरि अपना न करै ।
चरणदास यों कहत हैं, व्याधा नाहिं टरै ॥२०६॥

अभिमान अंग ५

दोहा-चार अंग पूरे किये, कहूं गर्व गुण गाय ।
बहुत सिकंडी मारिया, शिरपर छत्र फिराय ॥२०७॥

अभिमानी चढि करि गिरे, गये वासना माहिं ।
चौरासी भरमत भये, क्योंही निकसे नाहिं ॥२०८॥
अभिमानी मींजे गये, लूट लिये धन बाम ।
निर अभिमानी होचले, पहुँचे हरिके धाम ॥ २०९ ॥
चरणदास कहै आपा थपै, गिनै आपको पाँच ।
मान बडाई कारने, सहैं जगतकी आँच ॥ २१० ॥
करै बडाई कारने, परपंची छल धूत ।
अभिमानी फूले फिरैं ज्योंही मरघटका भूत॥२११॥

अभिमानी मुक्ति न होई । अभिमानी मति अपनी खोई॥
ऐंठ अकड अभिमानी माहीं । अभिमानी नीचा हो नाहीं ॥
बिन नान्हापन सुख नहिं पावै। आनँद पदकूं कैसे जावै ॥
झूठ कपट अभिमानी खेले । कंचन बर्तन माटी मेले ॥
भगल दंभ नितही मन माहीं । निकट सांच कभी आवै नाहीं॥
हूं हूं हूं करताही डोलै । काहूते सीधा नहिं बोलै ॥
इन लक्षण जीवत दुख पावै । नरक माहिं तन छूटै जावै ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । पूरा सो अभिमान नशावै ॥

दोहा-चरणदास यों कहत हैं, सुनियो सन्त सुजान ।
मुक्तिमूल आधीनता, नरकमूल अभिमान ॥२१२॥

रूपवन्त होकर गरवावै । कोई मोसम दृष्टि न आवै ॥
तरुणापा पाकर गरवाना । वह अंधरा होवै राना ॥
कहै धन मधिमें परवीना । सब मेरेही हैं आधीना ॥
कहै कुल अभिमानी सूचा । मैं सब जातिनमें हूं ऊंचा ॥
वह विद्या गर्व जु भारी । करै वाद विवाद अनारी ॥
अरु भूप करै अभिमाना । उन आपै हीकूं जाना ॥
उन काल नहीं पहिंचाना । सो मार करै घमसाना ॥

यम बाँधि पकरि लैजावैं। वे बहुतै त्रास दिखावैं॥
गुरु शुकदेव चितावै। तोहिं परगट नैन दिखावैं॥
जब कहा जाय अभिमाना। मेरा नीका सुन यह ताना॥
फिर डारै नरक मँझारी। सुनि चेतो अरु नर नारी॥
तौ मद मत्सरता तजि दीजै। साधोंके ही चरण गहीजै॥
हरि भक्ति करो चितलाई। जब सकल व्याधि छुटि जाई॥
कर जाति वरण कुल दूरा। हो सतसंगतिमें पूरा॥
जब मुक्त धामकूं पावै। फिर गर्भ योनि नहिं आवै॥
कहैं गुरु शुकदेव बखानौ। यह चरणदास मन आनौ॥

दोहा-मनमें लाय विचारिकूं, दीजै गर्व निकार।
नान्हापन जब जाय है, छूटै सकल विकार॥२१३॥

पांचौ उतरैं भूत जब, ह्वैहो ब्रह्म अरूप।
आनँद पदकूं पायहौ, जित है मुक्त स्वरूप॥२१४॥

पांच प्रेत जो ये कहे, सद्गुरुके परताप।
शील अंग अब कहतहूं, जासूं छूटै पाप॥ २१५॥

इतिपंचप्रेतवर्णन

१३-पंचप्रेतनिवारणमन्त्र

*

शीलअंगवर्णन

दोहा- अब मैं गाऊं शीलकूं, येहो संत सुजान।
नर नारी सबही सुनो, देदे चित बुधि कान ॥२१६॥
रूपगुणी कुलवंत जो, अरु होवे धनवन्त।
शील बिना शोभा नहीं, विष्टे नरक पडंत ॥२१७॥
शील विना जो तप करे, करे शील बिन दान।
योगयुक्ति करै शील बिन, सो कहिये अज्ञान॥२१८॥
शील बडोही योगहै, जो कर जानै कोय।
शीलविहीनो चरणदास, कबहुँ मुक्ति नहिं होय॥२१९॥
सब शुभ लक्षण तो विषे, शील न आया एक।
जप तप निष्फल जाहिंगे, चरणहिंदास विवेक॥२२०॥
पूजा संयम नेम जो, यज्ञ करै चितलाय।
चरणदास कहै शील बिन, सभी अकारथ जाय।२२१।
सोइ सती सोइ शूरमा, सोइ दाता अधिकाय।
शील लिये नितही रहै, तौ निष्फल नहिं जाय।२२२।
शील अंग ऊंचो अधिक, उनतीसौंके बीच।
जा घट शील न आइया, सो घट कहिये नीच॥२२३॥
शील न उपजे खेतमें, शील न हाट बिकाय।
जो हो पूरा टेकका, लेवे अंग उपजाय ॥ २२४ ॥
शील विना नरकै परै, शील विना यम दंड।
शील विना भरमत फिरै, सात द्वीप नव खंड ॥२२५॥
शील विना भटकत फिरै, चौरासीके माहिं।
पहिले होवै प्रेतही, यामें संशय नाहिं ॥ २२६ ॥

सब तजि सेवो शीलकूं, राम नाम लौलाय ।
जीवत शोभा जगतमें, मुये मुक्ति है जाय ॥२२७॥
जाको शील सुभाव है, जाकी दूर बलाय ।
ताकी कीरति जगतमें, सुन हो कान लगाय॥२२८॥
शील रहेते, सब रहै, जेते हैं शुभ अंग ।
ज्यों राजाके रहेते, रहै फौजको संग ॥ २२९ ॥
सत्य गया तौ क्या रहा, शील गया सब झाड ।
भक्ति खेत कैसे बचै, टूट गई जब बाड ॥ २३० ॥
ज्वानी शील न राखिया, बिगड गई सब देह ।
अब पछितावा क्या करै, मुखपर उडिया खेह॥२३१॥
शील गये शोभा घटै, या दुनियाँके माहिं ।
कूकर ज्यों झिडक्यो फिरै,कहिंभी आदर नाहिं॥२३२॥
शील गये गुरुसूं फिरै, हरिसों बेमुख होय ।
चरणदास कहँलौं कहैं, सर्वस डारै खोय ॥ २३३ ॥
धिक जीवन संसारमें, जाको शील नशाय ।
जगमें फिर फिर होत है, मुये ताचना पाय ॥२३४॥
शील कसैला आँवला, और बडोंके बोल ।
पाछे देवैं स्वाद वे, चरणदास कहि खोल ॥ २३५ ॥
शील निरोगा नींबसा, औगुण डारै खोय ।
पहिले करुवा दुख लगै; पाछे गुण सुख होय॥२३६॥
लाख यही उपदेश है, एक शीलकूं राख ।
जन्म सुधारो हरि मिलौ, चरणदासकी साख॥२३७॥
शीलवंतके चरणका, जो चरणोदक लेय ।
रोग दोष मिटि जायँ सब, रहै न यमका भेय॥२३८॥

आठ अंगसूं शीलही, जा घट माहीं होय।
चरणदास यों कहत है, दुर्लभ दर्शन सोय ॥२३९॥
शीलवंत दर्शन बडे, देखत पातक जाय।
वचन सुनें मन शुद्ध हो, खोटी दृष्टि सिराय ॥२४०॥
शील सरोवर न्हाई करि, करौ रामकी सेव।
यासम तीरथ और ना, कहिया गुरु शुकदेव ॥२४१॥
शील अंग पूरो कियो, महिमा अधिक अपार।
दया अंग वर्णन करूं, समझे छुटै विकार ॥२४२॥

दया अंगवर्णन

दोहा—परमारथमें दया बड, जो घट उपजै आय।
परगट हो निर्वैता, कर्म गाँठि खुल जाय ॥२४३॥
स्थावर जंगम चर अचर, या जगमें होय कोय।
सबही पै हित राखिये, सुखदानीही होय ॥२४४॥
भोजन करौ सँभाल करि, पानी पीजौ छान।
हरा वृक्ष नहिं तोडिये, कर्म बचै यों जान ॥२४५॥
औरौ बहुत विचारि ले, जामें लगै न कर्म।
यही तपस्या जानिये, यही दया यहि धर्म ॥२४६॥
इक इन्द्रीय दो इन्द्रियां, ती इन्द्री अरु चारु।
पंच इन्द्री लौ जीवकी, हिंसा अकस निवार ॥२४७॥
खावै वस्तु विचारिकै, बैठे ठौर विचार।
जो कुछ करै विचारि करि, किरिया यही अचार२४८॥
मनसों रहु निर्वैरता, मुखसूं मीठा बोल।
तनसूं रक्षा जीवकी, चरणदास कहि खोल ॥२४९॥
करुवा वचन न बोलिये, तनसूं कष्ट न देहु।
अपनासा जी जानिकै, बनै तो दुख हरि लेहु॥२५०॥

मुखसूं जो करुवा कहै, तनसूं देवै कष्ट।
यही जु हिंसा जानिये, दया धर्म जा नष्ट ॥२५१॥
दश इन्द्री मन ग्यारवाँ, करि विचार ले जान।
इनहीं सूं सुख दीजिये, चरणदास पहिंचान ॥२५२॥
काहू दुख नहिं दीजिये, दुर्जन हो कै मीत।
सुखदाई सब जगतको, गहो दयाकी रीत ॥२५३॥
कोमलता पर पीरता, सज्जनता निर्दोष।
सभी दयाके अंग हैं, इनते पावै मोष ॥२५४॥
दया ज्ञानका मूल है, दया भक्तिका जीव।
चरणदास यों कहत है, दया मिलावै पीव ॥२५५॥
दया नहीं तौ कुछ नहीं, सबही थोथी बात।
बाहर कथनी सोहनी भीतर लागी घात ॥२५६॥
छापे तिलक बनायके, माला पहिरी दोय।
दया बिना बगसम वही, साधरूप नहिं होय ॥२५७॥
दया न आई घटविषे, हीया बडा कठोर।
यह नगरी कैसे बसै, तामें हिंसा चोर ॥२५८॥
पंडिताई बहुतै करी, दया न राखी जीव।
छाँछि छाँछि तौ लेलई, डारि दया तत घीव॥२५९॥
तोहिं पण्डित मैं कह कहूँ, मूरख कै परवीन।
लिया न तैं मत सूपका, चलनीका मत लीन॥२६०॥
दया गहेते सब नशे, पाप ताप दुख द्वन्द्व।
ऐसी परम पुनीतकूं, तजै सो मूरख अन्ध ॥२६१॥
दया विना नर पतित है, दया विना नर दुष्ट।
दया विना सुनते बने, सबही थोथी गुष्ट ॥२६२॥

जन्म मरण छूटै नहीं, नाहीं कर्म्म, नशाहिं ।
दया बिन बदला भरै, चौरासीके माहिं ॥ २६३ ॥
काम क्रोध मोह लोभसे, गर्व आदि भजि जाहिं ।
चरणदास कहैं दया जो, घटमें पहुँचे आहिं ॥२६४॥
जितने वैरी जीवके, तिनमें रहैं न एक ।
चरणदास यों कहत है, दया जो आवै नेक ॥२६५॥
दुख भाजैं सुख हों घने, काया नगरी ढंग ।
हिंसा रानी जो भजे, लेकर अपनो संग ॥ २६६ ॥
धन्य दया धनि शीलकूं, जिनसे रीझे राम ।
गुरु शुकदेव बतावई, सबही सुधरैं काम ॥ २६७ ॥

इति पंचप्रेतनिवारणमंत्र

१४-अथ मायारूपवर्णन

राग भैरव

बैठा गुरुसूं चलता चेला । सुखी होय रहै रैन अकेला ॥
दया क्षमा रख राम सुहाती । बात कहैं करुवी नहिं ताती ॥
बिन जाचे उपदेश न दीजे । तरकीसूं चर्चा नहिं कीजे ॥
मौन गह थोरासा बोले । पलक न मिलैं नैन रहै खोले॥
दृष्टि राख नासाके आगे । सत्य वचन मीठामुख भाषे ॥
रसना उलट अकाश चढावै । बिनहीं बादल जल बरसावै ॥
पवन साधि मलकूं ठहरावै । कामिनि कनकरूप बिसरावै ॥
आसन अडिग सुरत अनहदमें । अन्तर खोल मिलै नहिं जगमें॥
चरणदास शुकदेव बतावै । ऐसा होय महन्त कहावै ॥

दोहा-जो बोलै तो हरिकथा, मौन गहै तो ध्यान ।
चरणदास यह धारणा, धारै सो सुज्ञान ॥ २६८ ॥

मायाकी अस्तुति करूं, होय रही संसार ।
अद्भुत लीला कर रही, शोभा अगम अपार ॥२६९॥
माया सकल पसार है, नाना रँग बहु क्रान्ति ।
जहँलग यह आकारही, चंचल मिथ्या भ्रांति॥२७०॥
जैसे सुपना रैनका, मुख दर्पणके माहिं ।
भासे है पर है नहीं, ज्यों तरुवरकी छाहिं ॥ २७१ ॥

यह माया सबहीको मोहै । होय न वश अस को जग है ॥
यह तौ बहुत सोहनी लागै । सबही नर नारिनको पागै ॥
कहिं चमक दमक बहुरूपा । अरु कहीं रंक कहीं भूपा ॥
अरु जहँ तहँ बहुत तमासे । वह भाँति भाँतिही भासे ॥
अरु जहँलग सकल संवादा । कोइ करै जु वाद विवादा ॥
अरु काम क्रोध मद लोभा । अरु मान बडाई शोभा ॥
अरु पाँचौं इन्द्री जानौ । सब मायारूप पिछानौ ॥
अरु पांच तत्त्व गुण तीनों । सो मायाहीकूं चीनों ॥
वह मकर पेच छल जानै । अरु पहर पहर बहुवानै ॥
अरु शुकदेव जनावै । सब माया खेल दिखावै ॥

दोहा-जेते सुख संसारके, सबही माया जार ।
तामें दो कणका धरै, एक द्रव्य इक नार ॥ २७२ ॥
लालच लागे चावसूं, गिरे आयकरि लोय ।
फँसे आपसूं आपही, गहि नहिं लाया कोय॥२७३॥
पांचौ इन्द्रीसों लखै, सो माया आकार ।
याही सेती सब भयो, जहँ लग है साकार ॥२७४॥

अरु मायारूप अनन्ता । कोई जानै साधू सन्ता ॥
कहा सुना अरु देखा । सब माया रूप विशेखा ॥

आठ सिद्धि नौ[1] माया । जहँ योगी तपी भुलाया ॥
अरु माया फंदे माहीं । सब जीव आइ फँसि जाहीं ॥
वे नरक माहिं दुख पावैं । यम छप्पन त्रास दिखावैं ॥
फिर भुगतै लख चौरासी । वे गरभ योनिके वासी ॥
वे पशू देश धरि धावैं । नहिं मुक्ति ठिकाना पावैं ॥
चरणदास कहैं नर चेतौ । तजौ मायाहीकूं हेतौ ॥

दोहा–जगत वासनाके तजै, मायाकी न बसाय ।
करम छुटै मिटि जीवता, मुक्तरूप हो जाय ॥२७५॥

१५–इन्द्रीवर्णन

मन

दोहा–फँसे न इन्द्री स्वादमें, चरणकमलमें ध्यान ।
पर आशा कोइ न रहै, लगैं न माया बान ॥२७६॥
सबसे अधिकी ज्ञान है, तासे ऊँचो ध्यान ।
ध्यान मिलावे पीवकूं, पावै पद निरवान ॥२७७॥
ध्याता ध्येय कैसे मिले, होंय न विचमें ध्यान ।
तीनों एक हुये विना, लहै न पद निरवान ॥२७८॥
इन्द्रिनके वश मन रहै, मनके वस रहे बुद्धि ।
कहौ ध्यान कैसे लगै, ऐसा जहां विरुद्धि ॥२७९॥
जित जित इन्द्री जात हैं, तित मनकूं ले जात ।
बुधि भी संगहि जात है, यह निश्चयकर बात ॥२८०॥
जित इन्द्री मनहू गया, रही कहासूं बुद्धि ।
चरणदास यों कहत हैं, करि देखो तुम शुद्धि ॥२८१॥
इन्द्री मनके वश करै, मनकर बुधिके संग ।
बुधि राखै हरिपद जहां, लागै ध्यान अभंग ॥२८२॥

---

[1] नौ निधि ।

इन्द्री मन मिल होत है, विषयवासना चाह ।
उपजै जैसे कामही, नारी मिल अरु नाह ॥२८३॥
न्यारे न्यारे तत रहैं, होत न कछू उपाध ।
जुदे राख मन इन्द्रियन, गुरुगम साधन साध ॥२८४॥
इन्द्रिनसूं मन जुदा करि, सुरत निरत करि शोध ।
उपजे ना विष वासना, चरणदास कर बोध ॥२८५॥
इन्द्री रोकेते रुके, और यतन नहिं कोय ।
मन चंचल रिझवार है, रसक सवादी सोय ॥२८६॥
चलो करै थिर ना रहै, कोटि यतन करि राख ।
यह जबहीं वश होयगा, इन्द्रिनके रस नाख ॥२८७॥
न्यारे न्यारे चहत हैं, अपने अपने स्वाद ।
इन पांचोंमें प्रीति है, कछू न वाद विवाद ॥२८८॥
दुर्जनके फूटे बिना, तेरी होय न जीत ।
चरणहिदास विचारि करि, ऐसी कहिये रीत ॥२८९॥
जुदी जुदी पांचो कहूँ, एक एकका भेद ।
जो कोइ इनकूं वश करै, सबही छूटै खेद ॥२९०॥

नेत्रइन्द्री १

यह इन्द्री आँख विचारो । सो देत महादुख भारो ॥
वह राग द्वेष उपजावै । अरु हरष शोक लै आवै ॥
सो रूप माहिं फँसि जावै । तन मनमें व्याधि उठावै ॥
वह देह औरके हाथा । करि डारै बहुत अनाथा ॥
वह फंदे माहीं डारै । अरु काम अगिनिमें जारै ॥
यह डोलै दौरी दौरी । कर चित बुधिकी गति औरी ॥
कोइ साधु शूरमा मोडै । जग सेती नैना तोडै ॥
कहै चरणदास सुनि लीजे । कछु याका यतन करीजे ॥

दोहा–दीपक त्रिया निहारि करि, गिरै पतंग ज्यों जाय।
कछू हाथ आवै नहीं, उलटो आप जराय ॥२९१॥

उन तन मन सभी जराया। कछु भोंदू हाथ न आया ॥
अरु विषय वासना फैला। जब छुटा रामका गैला ॥
तौ मुक्ति कहांसों होई। दिया जन्म पदारथ खोई ॥
अब क्या शिर मारै कोई। घरहीमें दुर्जन सोई ॥
यह दृष्टि सदाकी वैरी। जो सूरत बिगारै तेरी ॥
वह माया मोह लगावै। अरु चौरासी भरमावै ॥
शरम सकुच सब खोवै। अरु बीज कुबुधिका बोवै ॥
यह ठग चोरीकी बानी। अरु जार करम अगवानी ॥
यह पानप सभी घटावै। यमपुरके त्रास दिखावै ॥
कहै गुरू शुकदेवा। ये आँख महादुख देवा ॥

दोहा–ऐसी इन्द्री आँखकी, सो अपनी नहिं होय।
गुरु शुकदेव बतावई, चरणदास सुन लोय ॥२९२॥
दर्शन कीजे साधुका, कै गुरुका कर लोय।
जहँ तहँ ब्रह्महिं देखिये, दुबिधा दुर्मति खोय ॥२९३॥
वैरी मितर एकसा, एकै रूप कुरूप।
ऐसी होवै दृष्टिही, जब समझै मन भूप ॥२९४॥

श्रवण इंद्री २

सुन दूजै इन्द्री काना। सो गुरु परतापै जाना ॥
जब सुनै कामरस रीता। तब भूलै पढ सुन गीता ॥
मन उपजै काम तरंगा। तब होत ध्यानमें भंगा ॥
फिरि लोभ वचन सुन औरै। तब तृष्णा चहुँ दिशि दौरै ॥
कहिं द्रव्य हाथ लगि जावै। यों शोचि शोचि दुख पावै ॥
कहैं ठग चोरीकर लाऊं। कहिं गडा दबा हो पाऊं ॥

काहू सुनै जु दौलत बंधा । मनहीं मनमें रोवै अंधा ॥
यों उपजै अधिकी लोभा । जब बढै पापकी गोभा ॥
कहैं चरणहिंदास विचारी । सुन चेतो नर अरु नारी ॥
फिर सुनैं बडाई कुलकी । जब पुलक हँसत है मुलकी ॥
जो अपनी सुनै बडाई । जब अहं होत अकडाई ॥
फिर करन बडाई लागै । सोता ज्यों कूकर जागै ॥
जब उपजै बहु अभिमाना । अरु नेक न होवै नान्हा ॥
परनिन्दा बहुत सुहावै । नहिं और बडाई भावै ॥
अहंकार बडा मन माहीं । आधीन बिना गति नाहीं ॥
सुनि उपजै तामस अंगा । जब करै बहुतही दंगा ॥
मन क्रोध रूप हो जावै । उठ उठकर मारन धावै ॥
कभी सुनै मोहके बैना । लगै हर्ष शोक दुख दैना ॥
जब सुन कुटुँबकी नीकी । तब करि खुशी बहु जीकी ॥
कोइ कुटुँब माहिं दुख पावै । सुन रो रो नैन गवावै ॥
जो हिरन कान वंश हूवा । तौ तीर लगा करि मूवा ॥
शुकदेव कहैं सुन जानौ । सब कान विकार पिछानौ ॥

श्रवणका सत्कर्म

दोहा-मन दे सुनिये हरिकथा, सुनिये हरियश कान ।
ताहि विचार जु कीजिये, होय भक्तिका ज्ञान॥२९८॥

उपजै ज्ञान भक्ति अरु योगा ।सुनि सुनि उपजै राम वियोगा॥
उपजै प्रेम अनन्य उमाहा । होय उछाह दरशका चाहा ॥
सुनिसुनि उपजै लक्षण साधू । सुनि सुनि पावै भेद अगाधू॥
उपजै साधु संतकी सेवा । गुरुमुख होय सुनै नहिं भेवा॥
सुनि२ उपजै भय अरु लाजा । सोवै सकल सँवारन काजा ॥
सुनिसुनि यती सती होजावै। नान्हा हो अभिमान नशावै ॥

सुनि सुनि छूटै यमकी त्रासा । चौरासीमें लहै न बासा ॥
सुनि सुनि चार पदारथ पावै । आवागमनके बीज जरावै ॥
सुनि सुनि काग हंस हो जाई । चरणदास शुकदेव बताई ॥

दोहा-सुनि सुनि उपजै सुबुधिही, लागै हरिका रंग ।
सुनि सुनि उपजै कुबुधिही, खोटी उठै तरंग॥२९६॥
ऐसी इन्द्री कानकी, जाके मुगल सुभाव ।
कथा कीरतनहीं सुनौ, करि करि कोटि उपाव॥२९७॥
वचन सुनो गुरु साधुके, मनकूं लावो मोर ।
विषय वासनासूं निकसे, आवै हरिकी ओर॥२९८॥

जिह्वा इंद्री ३

दोहा-सरवन इन्द्री मैं कही, दोनों अंग दिखाय ।
जिह्वा इन्द्री कहत हैं, चरणदास चित लाय॥२९९॥
कुटिल जु इन्द्री जीभकी, चाहै षटरस स्वाद ।
या वश हो औगुण करै, जन्म जाय बरबाद॥३००॥

यह बहुत चटोरी कहिये । याहीतें डरते रहिये ॥
यह चोरीभी करवावै । यह पकड बन्धमें द्यावै ॥
करै याहि कारण जारी । यह करे बहुतही ख्वारी ॥
यह अमल खान सिखलावै । अरु गाली मार दिलावै ॥
अरु बहुतै झूठ बुलावै । हो मीत नरक ले जावै ॥
खेले याही कारण जूवां । दुनियाँमें फिट फिट हूवां ॥
ये पांचौ ऐब सुनाऊं । रसनामें सभी दिखाऊं ॥
यह महा अपरबल जानौ । अरु रणजीता हो भानौ ॥

दोहा-जिह्वाके जीते बिना, गये जन्म सब हार ।
चरणदास यों कहत हैं, भये जगतमें ख्वार ॥३०१॥

बंशी डारी तालमें, मछरी लागी आय ।
जिह्वाकारण जिव दियो, तलफि तलफि मरिजाय ३०२
तजा न जिह्वा स्वादकूं, वा सँग दीन्हें प्रान ।
जो कोइ ऐसा जगतमें, सो अज्ञानी जान ॥ ३०३ ॥
यासूं ले हर नामहीं, गुण वादही भाख ।
जो बोले तौ सांचही, नाहीं मुखमें राख ॥ ३०४ ॥
मीठा वचन उचारियो, नवता सबसूं बोल ।
हिरदै माहिं विचारि करि, जब मुख बाहर खोल ।३०५।
बिना स्वादही खाइये, राम भजनके हेत ।
चरणदास कहै शूरमा, ऐसे जीतो खेत ॥ ३०६ ॥
जिन जीता है जीभकूं, तिन जीती सब देह ।
कहै गुरू शुकदेवजी, मुक्ति धाम फल लेह ॥ ३०७ ॥
रसना जीतै भक्त जो, सो योगी सो साध ।
अगम पन्थ वहि पग धरै, पहुँचै देश अगाध ॥ ३०८ ॥

त्वचा इन्द्री ४

त्वचा सु इन्द्री कामकी, नितही खेलै दाव ।
पशुपक्षी असुरा नरा, फँसे आयकरि चाव ॥ ३०९ ॥
यह त्वचा सुमल मल मांजै । अरु काजल सुरमा आंजै ॥
यह तेल फुलेल लगावै । अरु चिकना गात बनावै ॥
अरु वस्तर भूषण पहिरे । कौरे अंजन मंजन गहिरे ॥
अरु सपरसकी विधि ठानै । सब याहीकूं सुख मानै ॥
अरु फँसे आयकरि दोऊ । अब निकसन कैसे होऊ ॥
हित गांठ पेंच गहि दीन्हा । दोउ नेह वचन बहु कीन्हा ॥
अरु एक एकनै बाधा । वह समझै नाहीं आधा ॥

अब शीश धुनैं पछितावैं। दोउ चले नरकूं जावैं॥
कहै चरणदास नहिं जानौ। तुम औगुण ना पहिचानौ॥

दोहा-त्वचा स्वाद सब वश भये, फँदे जगतके माहिं।
जो कोई निकसो चहै, सोभी निकसै नाहिं॥३१०॥
धोखेकी हथिनी लखी, आयो गज ललचाय।
खंदक माहीं रुकि गयो, शीश धुनै पछिताय॥३११॥
कछू हाथ आयो नहीं, परो फन्दमें जाय।
मैन महावत वश भयो, शिरमें अंकुश खाय॥३१२॥
जङ्गलमें आनन्दसूं, बहुतै केलि कराय।
अब तौ द्वारे सूतके, परो बन्धमें आय॥ ३१३॥
ऐसेही यह नर फँसो, देखि कामिनी रूप।
जन्म गँवायो दुख भरो, पड़ो अविद्या कूप॥३१४॥
करी न हरिकी भक्तिही, गुरुसेवा तजि दीन।
सुनी न हरिकी गुणकथा, सतसंगत नहिं कीन॥३१५॥
फिर ऐसो कब होयगो, पावै मानुष देह।
अब तौ चौरासी विषे, जाय कियो उन गेह॥३१६॥
जीतो इन्द्री त्वचाकी, कहिया श्रीशुकदेव।
यासे तपही कीजिये, चरणदास सुन लेव॥ ३१७॥

शीत उष्णका दुख नहिं मानै। कोमल सकत एक करि जानै॥
तपसूं काया उमर गवाँवै। अष्ट सुगन्ध निकट नहिं जावै॥
आन त्वचा स्पर्श नहिं करै। काम अगिनि हियमें ना जरै॥
काया ताबन करनी ठानै। यही तपस्या मनमें आनै॥
त्वचा सु इन्द्री जीतो ऐसे। मैं यह भेद बतायो जैसे॥
गुरु शुकदेव बतावै सबही। चरणदास कर तनसूं तपही॥

दोहा-त्वचा सुइन्द्री वश किये, छूटै काम कलेश।
यत शत शील सन्तोषसूं, लगै न माया लेश॥३१८॥

नासिका इन्द्री ५

दोहा-त्वचा अंग पूरो कियो, कहूं नासिका अंग ।
ता बस अलिसुत जी दियो, जाको कहूं प्रसंग॥३१९॥
वास आस गुंजत फिरौ, बैठो कमल मँझार ।
सूर छिपेसे मुँदि गयो, अब शिर दैदै मार ॥३२०॥
कुँजर आयो तालपै, जल पीवनके काज ।
प्यास बुझी करने लगो, खेल करनको साज॥३२१॥
खेल करत कमलही गह्यो, लीन्हो ताहि उपारि ।
फेरि दियो मुख माहिंहीं, चाबि गयो दे जाड॥३२२॥
ऐसेही ये नर फँसे, परे काल मुख जाय ।
चरणदास यों कहत हैं, चले जन्म गवाँय ॥३२३॥
सुगँध ओर हरषै नहीं, दुरगन्धै न रिसाय ।
ऐसी जीतै नासिका, मन भँवरा ठहराय ॥ ३२४ ॥
समझनकूं तुक एक है, भूलनकूं तुक लाख ।
गुण औगुण इन्द्री कहे, सो तू मनमें राख ॥ ३२५ ॥
जो इन्द्रिनके वश भयो, बांधो नरकै जाय ।
चौरासी भरमत फिरै, गर्भयोनि दुख पाय ॥३२६॥
जो इन्द्रिनके वश भयो, पावै ना आनन्द ।
बार बार जग माहहीं, छूटै ना सम्बन्ध ॥ ३२७ ॥
भक्ति माहिं चित ना लगै,सबही बिगडै काम ।
जो इन्द्रीके वश भयो, ताको मिलै न राम ॥३२८॥
चरणदास यों कहत हैं, इन्द्री जीतन ठान ।
जगभूलै हरिकूं मिलै, पावै पद निर्वान ॥ ३२९ ॥

इन्द्री जीतै सो ब्रह्मज्ञानी । इन्द्री जीतै सोई ध्यानी ॥
इन्द्री जीतै सो हरिदासा । अमर लोकमें पावै वासा ॥

इन्द्री जीतै सोई सिद्धा । अष्टकला अरु पावे ऋद्धा ॥
इन्द्री जीतै सोई शूरा । इन्द्री जीतै सो जन पूरा ॥
इन्द्री जीतै सो सतवन्ता । इन्द्री जीतै गुणी महन्ता ॥
इन्द्री जीतै राम रिझावे । इन्द्री जीतै सब कुछ पावे ॥
इन्द्री जीतै सो संन्यासी । इन्द्री जीतै सोइ उदासी ॥
इन्द्री जीतै सब फलदायक । इन्द्री जीतै सब कुछ लायक ॥
इन्द्री जीतै छुटै विदेशा । या जगमें कछु लगै न लेशा ॥
इन्द्री जीतै परम सुखारा । निश्चय पहुँचे हरि दरबारा ॥
इन्द्री जीतै सो रणजीता । इन्द्री जीतै आतम मीता ॥
इन्द्री जीतै ध्यान लगावै । सो निश्चय ईश्वर ह्वै जावै ॥
इन्द्री जीतै मिलै भगवंता । इन्द्री जीतै जीवनमुक्ता ॥
चरणदास सुन कहैं शुकदेवा । इन्द्री जीतै सो गुरुदेवा ॥

मनका कार्य

दोहा-मन इन्द्रिनके वश भयो, होय रह्यो बेढंग ।
आपा बिसरो जग रलो, हुवो जो नाना रंग ॥३३०॥
आवै तरंग क्रोधकी, होत युवाको रूप ।
काम लहर कबहूं उठै, ताके होत स्वरूप ॥३३१॥
लोभ कामना जब उठै, जभी लोभ रँग होय ।
मोह कल्पना के उठै, मोह वरण हो सोय ॥३३२॥
मनहीं खेलै खेल सब, मनहीं कर अभिमान ।
मनहीं यह जग ह्वै रहो, अब सुनु मनका ज्ञान ॥३३३॥

कबहूं यह मन होवै गिरही । कबहूं यह मन होवै विरही ।
कबहूं यह मन होवै रोगी । कबहूं यह मन होवै शोगी ॥
कबहूं यह मन होवै नारी । कबहूं यह मन राखै ख्वारी ॥
कबहूं यह मन दोरा डोलै । कबहूं यह मन टेढा बोलै ॥

कबहूं यह मन कुलका ऊंचा । कबहूं यह मन नकटा बूंचा ॥
कबहूं यह मन दुन्दि मचावै । कबहूं क्षमा शील घर आवै ॥
कबहूं यह मन होवै दाता । कबहूं करै सूमसी बाता ॥
चरणदास कहैं मनकूं जानौ । ऐसी विधि मनकूं पहिंचानौ ॥

दोहा—बहुरूपी बहुरंग या, बहुत रंग बहु चाव ।
बहुत भांति संसारमें, करि करि घने उपाव ॥३३४॥

यह मन राजा होवै भोगी । यह मन त्यागी होवै योगी ॥
यह मन होवै हरिका भक्ता । यह मन होवै योग रु युक्ता ॥
यह मन होय विवेकी ज्ञानी । यह मन तपिया जपिया ध्यानी ॥
यह मन करै दयाकी बातैं । यह मन करै जीवकी घातैं ॥
यह मन यती सती अरु शूरा । यह मन काशी पण्डित पूरा ॥
यह मन तीरथ वरत उपासी । यह मन ठकुरानी अरु दासी ॥
यह मन होवै देवी देवा । या मनका कोइ लहे न भेवा ॥
यह मन प्रेमी नेमी जनहीं । चरणदास कहै सब कुछ मनहीं ॥

दोहा—या मनके जाने बिना, होय न कबहूं साध ।
जगत वासना ना छुटै, लहै न भेद अगाध ॥३३५॥
तैं मनकूं जाना नहीं, करी न याकी सार ।
चौरासी छूटै नहीं, उपजा वारंवार ॥३३६॥

मनजीतनेके उपाय

मनकूं सत्संगति ले जावौ । कानो हरियश कथा सुनावो ॥
भाँति भाँतिके रंग ललचावै । तौ हरिके रँग क्यों न रँगावै ॥
तौ याको ज्ञानीही कीजै । जक्त और जाने नहिं दीजै ॥
कै कीजै हरिहीका ध्यानूं । राम भक्तिमें याकूं सानूं ॥
कै कीजै यह योगी पूरा । याहि सुनावो अनहद तूरा ॥
या मनकूं कीजै वैरागी । याकूं कीजै सर्वस त्यागी ॥

जग रँग उतरि ब्रह्म रँग लागै । जाते कर्म भर्म भय भागै ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । मन फेरिनकी राह दिखावै ॥

दोहा—मनने आयु गवाँइया, ज्ञान बुझाया दीव ।
करम लगा भरमत फिरो, मिला न अपना पीव ३३७॥
दौरि दौरि रस ओरही, होय रहा कंगाल ।
नातरु आगे भूप था, ऊंचा बडा दयाल ॥ ३३८ ॥
पांचौ इन्द्री स्वादमें, भयो निपट आधीन ।
राज बडाई सब नशी, भयो मूढ मति हीन ॥३३९॥
सरकि जाय विष ओरही, बहुरि न आवै हाथ ।
भजन माहिं ठहरे नहीं, जो गहि राखू बाथ ॥३४०॥
मन निश्चल आवै नहीं, निकसि निकसि भजि जाय ।
चरणदास यों कहत हैं, काहू की न बसाय ॥३४१॥
पचि हारे ज्ञानी तपी, रहे बहुत शिर नाय ।
मन परेतसूं डर लगै, ले डूबै मझधार ॥ ३४२ ॥
यह मन भूत समान है, दौडे दांत पसार ।
बाँस गाडि उतरै चढै, सब बल जावै हार ॥३४३॥
ज्यों आतममें मन धरै, होय जहां लौलीन ।
ठहरि रहै फिरि ना चलै, सकल विकल होक्षीन ३४४॥
भजे तौ जानि न दीजिये, घेरि घेरि करि लाव ।
यह मनकूं परचाय करि, ध्यानहिं माहिं लगाव ॥३४५॥
और कहौं विधि दूसरी, सुनियो चित्त लगाय ।
रामनाम मनसूं जपै, चंचलता थकि जाय ॥३४६॥
पवन रुकै जब मन थकै, और दृष्टि ठहराय ।
ऐसी साधन साधिये, गुरुगम भेद मिलाय ॥३४७॥

इन्द्री रोंके मन रुके, अरू उत्तम विधि एहु ।
चरणदास यों कहत हैं, यह साधन करिलेहु ॥३४८॥
इन्द्रिनकूं मन वश करै, मनकूं वश करै पौन ।
अनहद वशकर वायकूं, अनहदकूं लै तौन ॥३४९॥
याको नाम समाधि है, मन तामें ठहराय ।
जन्म जन्मकी वासना, ताकूं दग्ध कराय ॥३५०॥
इन्द्री लपटै मन विषै, मन लपटै बुधि माहिं ।
बुधि लपटै हरि ध्यानमें, फेरि होय लै जाहिं ॥३५१॥
दग्ध वासना होय जब, आवागमन नशाय ।
कहै गुरू शुकदेवजी, मुक्तरूप ह्वै जाय ॥ ३५२ ॥

१६-असत्यका वर्णन

मनके सगरे भेदही, जाको दियो जिताव ।
चरणदास यों कहत हैं, झूठ सांचको न्याव ॥३५३॥
जो कोइ बोलै झूठही, ताकूं लागै पाप ।
जन्म जन्म छूटै नहीं, दुखदे तीनों ताप ॥ ३५४ ॥

बोलै झूठ महा अपराधी । धर्म छुटै उठि लागै व्याधी॥
झूठा सौ सौ सौगँध खाय । झूठा लेवै कर्म लगाय ॥
झूठा करै बिराना बुरा । झूठा लेवैं जगतमें गिरा ॥
झूठेकी परतीत न होई । झूठा बोल न बोलै कोई ॥
झूठा हरिकी भक्ति न पावै । झूठा घोर कुण्डमें जावै ॥
झूठेकूं लागै यम मार । झूठा चौरासीमें ख्वार ॥
झूठ वचनका भारी दोष । झूठकी होय गती न मोष ॥
झूठेके नाहिं गुरू न राम । झूठेकूं नाहीं विश्राम ॥
चरणदास शुकदेव बतावैं । झूठें सबी नरककूं जावैं ॥

दोहा-झूठेके मुँह दीजिये, नोसादरका बाप ।
डरा करै सकुचा रहै, वह शरमिंदा आप ॥३५५॥

झूठेकूं हत्यारा जानौ । झूठेको ठग चोर पिछानौ ॥
झूठा कुटिल शराबी होय । झूठा कहिये कामी सोय ॥
झूठहीको जानौ ज्वारी । समझि देखि सबही नर नारी॥
सकल ऐब झूठेमें पाऊं । एकएक क्या खोल दिखाऊं ॥
पांचौ खोट सबनके राजा । सो मैं कहे चितावन काजा॥
झूठ पापकी कहिये खानी । सो वह करै पुण्यकी हानी ॥
सबही अवगुण झूठे माहीं । चरणदास शुकदेव बताहीं ॥

१७-सत्यवर्णन

दोहा-साँच बिना साधू नहीं, कबहुँ न मिलि हैं राम ।
सांच विना गति नालहै, पावै ना निजधाम ॥३५६॥
सत सत मुखसूं बोलिये, सतही चलिये चाल ।
सतही मनमें राखिये, सतही रहिये नाल ॥३५७॥
सांचेकूं ग्रह ना लगै, सांचेकूं नहिं दाग ।
सांचे शाप न लागई, सब दुख जावै भाग ॥३५८॥
बडी तपस्या सांच है, बडा बरत है सांच ।
जासों पाप सभी जरैं, लगै न गर्भकी आंच ॥३५९॥
जाका वचन मुडै नहीं, सांचे सब व्यवहार ।
चरणदास त्रयलोकमें, कभी न आवै हार ॥३६०॥

सांचेके मनहींमें राम । सांचा करै न छलके काम ॥
सांचा होकर सुमिरण करै । आप तरै औरन लै तरै ॥
सतवादीकी पति है सांच । ताकूं लगै न दिवकी आंच ॥

सांचे चोर चुराया घोडा । परमेश्वर ताका रँग मोडा ॥
और चोर चोरीसूं गया । सांच प्रताप अचम्भा भया ॥
और सांच परताप अनंता । सबही जानै साधू संता ॥
लाख बातका एकहि जोड । सांचा पुरुष सबन शिरमोड ॥
आवै सांच परम सुख पावै । चरणदास शुकदेव सुनावै ॥

दोहा–सांचेकी पदवी बडी, दुष्ट साधके माहिं ।
दोनों अस्तुतिही करैं, निन्दक कोई नाहिं ॥३६१॥

१८–गुरुमुखवर्णन

दोहा–गुरू कहै सो कीजिये, कर सो कीजे नाहिं ।
चरणदासकी सीख सुन, यही राख मनमाहिं ॥३६२॥
कथा सुनी व्रतहू किये, तीरथ किये अघाय ।
गुरुमुखके होये बिना, जपतप निष्फल जाय ॥३६३॥

गुरुमुखलक्षण

अब गुरुमुखके लक्षण गाऊं । जुदे जुदे करि सब समुझाऊं ॥
इनकूं समझ धरे हिय कोई । पूरा गुरुमुख कहिये सोई ॥
प्रथमहिं गुरुसों झूंठ न बोले । खोटी खरी करै सब खोले ॥
दूजे गुरुको पय न लगावै । निश्चय गुरुके चरण मनावै ॥
तीजे आज्ञाकारी जानौ । इन लक्षण गुरुमुखी पिछानौ ॥
जो कोइ गुरुका लेवै नाम । ताको निहुरि करै परणाम ॥
जो कहुँ देखै गुरुका बाना । ताकूं जानै गुरू समाना ॥
चरणदास शुकदेव बखानै । गुरुभाईकूं गुरुसम जानै ॥

---

१ भक्तमालमें देखो घाटभक्तिकी कथा । सर्वोत्तम भक्तमाल रामरसिकावली "श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्–प्रेस बंबई तथा "लक्ष्मीवेंकटेश्वर" स्टीम् प्रेस कल्याणसे मिलेगा ।

दोहा-गुरुभाईकूं पूजिये, धरिये चरणन शीश।
चरणोदक फिरि लीजिये, गुरुमत विश्वा वीश।३६४।

जो कहुँ गुरुका बस्तर पावै। हिये लगाय चूक दृग ध्यावै॥
गरूदेशका मानुष जावै। दे परिकर्मा बलि बलि जावै॥
कहां दया करि दर्शन दीन्हें। मेरे पाप भये सब क्षीन्हें॥
जो अपने गुरु द्वारे जइये। देखत पौरि बहुत हरषइये॥
द्वांईसूं दण्डवत जु कीजे। दर्शन करि करि सर्वस दीजै॥
फिर ठाढो रहै जोरे हाथा। बैठे तब आज्ञा दे नाथा॥
जो बोले सो मनमें धरिये। अपने अवगुण सबही हरिये॥
चरणदास शुकदेव बतावै। ऐसा गुरुमुख राम रिझावै॥

१९-साधुमाहात्म्य

दोहा-साधुनकी निंदा बुरी, मत कोइ कीजो भूल।
दुनियामें दुख पाइ है, रहे नरकमें झूल॥ ३६५॥

साधुका निन्दक तन मन दुखी। साधुका निन्दक हो ना सुखी॥
निन्दक साधु दरिद्री होय। निन्दक डारै सर्वस खोय॥
साधुका निन्दक नरक मँझार। निश्चय खावै यमकी मार॥
साधुका निन्दक पूरा पापी। साधुका निन्दक डूबै आपी॥
मूरख होय सो निन्दा करै। साधु संतकूं अवगुण धरै॥
साधुका निंदक श्वानसमान। साधुका निंदक शूकर जान॥
साधु रामकी कहिये देह। निंदकके मुखमाहीं खेह॥
चरणदास निन्दा तजि दीजे। भक्तनकी अस्तुतिही कीजे॥

दोहा-साधुनकी अस्तुति किये, हरिकी अस्तुति होय।
भक्तनकी निन्दा किये, प्रभुकी निन्दा सोय॥३६६॥

२०–मोह छुड़ावन अंगवर्णन

कु०–भक्ति दृढावनकूं कहै, नानाही परसंग ।
शुकदेव कृपासों अब कहूं, मोह छुटावन अंग ॥
मोह छुटावन अंग, कोई हियमाहीं धारै ।
कुटुंब जानिसूं छूटि लगै, हरिचरणौ लागै ॥
चरणदास यों कहत है, उपजे मन वैराग ।
जगत नींदहींसूं खुलै, चौथे पनमें जाग ॥
दोहा–गुरू पूजि जग छोडिये, भवसागरके द्वन्द्व ।
साधुनकी संगति करौ, तजौ जाति कुल बंद ।३६७।
बन्धु नारि सुत कुटुंब सब, यमकी फाँसी जान ।
तोहिं छुटावै रामसूं, इनका कहा न मान ॥ ३६८ ॥
खैंचि पकडि ह्वां राखि है, जहां मोहका जाल ।
जीवत दुख बहु भांतिके, मुये नरक ततकाल ।३६९।
या प्राणीकूं ठग लगै, सकल कुटुंब परिवार ।
तिनमें दो बलवन्त हैं, एक द्रव्य इक नारि ॥३७०॥
नारि किये दुख बहुत हैं, बन्धन बधै अनेक ।
जो सुख चाहै जीवका, तिरियाकूं मत पेख ॥३७१॥
द्रव्यमाहिं दुख तीनि हैं, यह तो निश्चय जान ।
आवत दुख राखत दुखी, जात प्राणकी हान॥३७२॥
ताते इनकी प्रीति मन, उठै तभी निरवार ।
ये दुर्जन दुखरूप हैं, ऐसो करो विचार ॥ ३७३ ॥
जो कोई इनमें पगै, तिनसों छूटै राम ।
चरणदास यों कहत हैं, क्यों पावै हरिधाम ॥३७४॥
हेरि फेरि धनको करत, बितै पहर इक रात ।
तीन पहर निशिके रहैं, खोवै नारी साथ ॥ ३७५ ॥

नारिके फैलावको, दीखै ओर न छोर ।
द्रव्यमाहिं तृष्णा रहै, चाहै लाख करोर ॥३७६॥
द्रव्य जोरि मरि जाय जब, हो बैठे तहँ नाग ।
नारीमें जो चित रहै, ह्वै है कूकर काग ॥ ३७७ ॥
ऐसेही भरमत फिरै, लख चौरासी देह ।
कनक कामिनीकूं तजै, जबलग नाहीं नेह ॥ ३७८ ॥
मूरख त्याग न करि सकै, ज्ञानवंत तजि देह ।
चौंकायल मृग ज्यों रहै, कहीं न साजै गेह ॥३७९॥
जो कोइ छोडै कुटुँबकूं, ऐसी कर पहिचान ।
जैसे छूटै बन्धसूं, यम जोरासूं जान ॥ ३८० ॥
जीवत यम तौ कुटुँब है, घेरि घेरि दुख देय ।
ऐसे मानुष देहकूं, लूटैही नित लेय ॥ ३८१ ॥
कै ठग सबकूं जानिये, कै धाडी कै चोर ।
रणजित कहै तू देख ले, लूटत हैं निशि भोर॥३८२॥
बाहर कलकल करत हैं, भीतर लावहिं लाव ।
ऐसो बांधौ खैंचकरि, छुटै हाथ नहिं पाव ॥३८३॥
जाल तौंक गलमें पडा, ममता बेरी पांय ।
रसरी मूसख नेहकी, लीन्हें हाथ बँधाय ॥ ३८४ ॥
डारि दियो अज्ञानमें, परो परो बिललाय ।
निकसनकूं जबही चहै, कुतका मोह लगाय ॥३८५॥
रखवारे जहँ पांच हैं, इन्द्रिनके रस जान ।
तबही देह भुलायकै, जो कुछ उपजै ज्ञान ॥ ३८६ ॥
कुटुँब और इन पांचकूं, एक मतोही जान ।
प्राणीकूं जगमें फँसा, चहै खान अरु पान ॥ ३८७ ॥

ये सब स्वारथी ही लगैं, इनका सगा न कोय ।
जो शिर मारै धरणि पर, कल्प कल्प करि रोय ।३८८।
मात पिता सुत नारिकी, इनकी उलटी रीति ।
जगमें देह फँसायकै, करिकै प्रीतिहि प्रीति ॥३८९॥
जैसे वधिक बिछायकै, जाल माहिं कण्डार ।
प्रीति करै पक्षी गहै, पाछे करै जु ख्वार ॥ ३९० ॥
जैसे ठग बहु प्यार करि, भोलापनही देह ।
पहिले लड्डू खवायकै, पाछे सरवस लेह ॥ ३९१ ॥
हितसूं हरिण बोलायकै,गोली मारै तान ।
चरणदास यों कहत है, ऐसे इनकूं जान ॥ ३९२ ॥
जलमें वंशी डारिया, अटकाया जहँ मांस ।
मछरी जानै हित कियो, लखो न अपनो नाश।३९३।
भोंदू यह गति ना लखी, पडो कुमतिके धंध ।
ज्योंकी त्यों सूझी नहीं, किया मोहने अंध ॥३९४॥
सब ठग यह देखी नहीं, कपट हेत नहिं जान ।
इनहींमें मिलकर चलौ, समझौ ना अज्ञान ॥३९५॥
अब इनके छल कहतहूं, समझे होय उदास ।
जान ना ह्वाई रहै, कहै चरणही दास ॥ ३९६ ॥

अब इनके छल कहि समझाऊं । भिन्न भिन्न परगट दिखलाऊं॥
पिता कहै तुम पुत्र हमारे । बहुत भरोसे मोहिं तुम्हारे ॥
अब तुम ऐसी विद्या पढो । अपने कुलमें ऊंचे चढो ॥
सत संगतिमें कभी न जइये । अपने घरमें चित्त लगइये ॥
हमतो हैं दुनियाके कूते । जाति वर्णमें होहिं सपूते ॥
कृत्य करो पालौ सुत वामा । कथा कीरतनकूं क्या कामा ॥
अब तुम ठौर हमारी हूजे । हमने किये सो तुमहू कीजै ॥

ऐसी बुद्धि बडाई दीन्ही । इनहू हिरदैमें धरि लीन्ही ॥
चरणदास कहैं देखो प्यारा । मुये नरक जीवतही ख्वारा ॥

दोहा-पिता बुद्धि ऐसी दई, रहिये कुटुँब मँझारि ।
जो कुछ है सो जगतमें, धन सम्पति सुत नारि॥३९७॥
हरिकी राह भुलाय करि, दीन्हो कुटुँब चिताय ।
ताते दुख जगमें घने, चौरासी भरमाय ॥३९८॥

अब सुन माताहूकी बातैं । अपना जानि खियावै तातैं॥
द्रव्य काज उद्यमहीं कीजे । लै माताकी गोदी दीजै ॥
करै कमाई सोइ सपूता । नाहीं तौ वह पूत कपूता ॥
नारीकूं भूषण पहिरावो । सुत पुत्रीको ब्याह रचावो ॥
पूजो पित्तर देवी देवा । सकसल कुटुँबकी कीजै सेवा॥
अपने कुलको न्योति जिमावो । ताते बहुत बडाई पावो ॥
बहु विधि स्वारथही सिखलावै । परमारथकी राह भुलावै ॥
बार बार जगमें उरझावै । ऐसे तौ नितही चलि आवै॥
जितका तित ह्वांईरखि लीन्हा । चरणदास कहैं जान न दीन्हा॥

दोहा-माताहूने प्यार करि, बहुत दिया शिरभार ।
यही जो नीको धारिये, महल द्रव्य सुत नार ॥३९९॥

अब नारीकी गति सुनि लीजे । तामें चित कबहूँ नहिं दीजे ॥
छलबलकरि वश अपने राखै । मधुर वचन रसनासों भाखै॥
कहै कि शिरके छत्र हमारे । हम तौ लागी शरण तुम्हारे॥
तुम तौ बहुतै लागो पियारे । मोकों तजि मत हूजो न्यारे॥
ऐसे कहि कहि बांधा चाहै । आठौं अंग कामके बाहै ॥
वस्तर भूषण देह सिंगारै । नानाविधि करि रूप सँवारे॥
करे कटाक्ष बहुतही भारै । वश करनेको टोना डारै ॥
काजल भरी आँखकूं जोहै । अंग विषे रस दै दै मोहै ॥
ह्वांसूं निकसन कैसे पावै । चरणदास शुकदेव सुनावै ॥

दोहा-तिरियाहीके जालमें, आय फँसे जो कोय ।
तलफि तलफि ह्वाई रहै, निकसिसके नहिं कोय ॥ ४०० ॥

सुत पुत्री वनिताकूं जानौं । समधान यासूं पहिंचानौं ॥
और बँधे बहुतै बँधवारा । नाई ब्राह्मण बहु परिवारा ॥
सेढ मशानी देवी भूत । ग्रह नक्षत्रहु लगै अऊत ॥
चौथ अहोई लागै सौन । तिरिया कारण साजौ भौन ॥
औरौ बहुत बखेडे जान । नारीसे तोहीं पहिंचान ॥
महा अपरबल दुख तेहिं माहीं । मरिकै चौरासीमें जाहीं ॥
ताते हूजे वेगि उदास । समुझि तजौ तिरियाकी आस ॥
श्रीशुकदेवहि चरणहिं दासा । सभी कुटुँब हैं नरक निवासा ॥

दोहा-सुतकी बोली तोतली, करै चोचली चाय ।
मन मोहैं बाँधै घनो, छूटन कौन उपाय ॥ ४०१ ॥
हँसि गोदीमें आयकरि, बहुत बढावे नेह ।
तामें घने विकार हैं, अन्तकाल दुख देह ॥ ४०२ ॥
मोह लगा मरजाय जब, तन मन लागै आग ।
चरणदास यों कहत हैं, सुख चाहै तो त्याग ॥ ४०३ ॥
जिहिं कारण चिन्ता लगै, जबलग घटमें प्रान ।
हरि गुरु हिये न आवई, यही जु पूरी हान ॥ ४०४ ॥
तन छूटै सुतमें रहै, एक न तेरी आस ।
जनम जु शूकरको लहै, मुये नरकही जास ॥ ४०५ ॥

कुटुँब बंध ऐसे करि जानौ । फाँसीगर तिनकूं पहिंचानौ ॥
तोकूं डारै नरक मँझारा । ताते होहिं सबनसे न्यारा ॥
बहुतक दुर्जन हैं घट माहीं । तू उनकूं जानत है नाहीं ॥
है वैरी तू जानत मीता । स्वपनेहू इनकी नहिं चीता ॥
काम क्रोध अरु लोभहु मोहा । सबही राखैं तासूं द्रोहा ॥

जिनसे गर्व मच्छरता मारी । जगत बडाई तिनकी नारी ॥
आपा लिये सदाहीं रहै । टेढे वचन झूंठ बहु कहै ॥
इनके संग घनेही दुष्टी । तेरे तनमें रहें अदृष्टी ॥
नितही करै अकारज तेरा । चरणदास कहैं या विधि घेरा॥
दोहा-बहु वैरी घटमें वसै, तू नहिं जीतत कोय ।
निशिदिन घेरेही रहैं, छुटकारा नहिं होय ॥ ४०६ ॥
जो कहुँ निकसी बाहरै आवै । अरु विरक्तका रूप बनावै ॥
कुटुँब छोडि उपजे वैरागा । जगत रहा चरणोंसे लागा ॥
कछू वासना मनमें धँसी । जबहीं लोक बडाई हँसी ॥
पुष्ट भयो आपा अभिमान । सहजहि आया मोह दिवान॥
सबही संगी लिये बुलाय । या विरक्तकूं घेरो आय ॥
ताकूं बांधि मुरंडा कीन्हा । फेरि कुटुम्बके माहीं दीन्हा ॥
कुटुँब मित्र गाढा करि बाँधा । बडी बडी आँडि ऐसा आंधा॥
चरणदास कहैं घरमें आया । घटके दुर्जन वाहि बँधाया ॥
दोहा-कुनबेमेंसे निकसि करि, फिर कुनबेमें जाय ।
निश्चय नरकी होयगा, दुनियामें दुख पाय॥४०७॥

एक दृष्टांत

एक तपोवनमें जा रहा । शीत उष्ण पावस शिर सहा॥
सूखे पातों किया अहारा । छूटे सबही जग व्यवहारा ॥
रहै ध्यानमें निशिदिन लागा । हरिके चरण कमलमें पागा॥
महिमा सुनि राजा तहँ आया। दै परिकरमा शीश नवाया ॥
हाथ जोरि ठाढो फिरि भयो । तपसी मुख ना बैठन कह्यो ॥
ठाढे भये बार बहु भयी । तब राजाने मनमें कही ॥
यह तपसी है बहु अभिमानी ।मो आवन महिमा नहिं जानी॥
ऐसी कहि मन माहीं ऐंठा । आपहि आप भूप वह बैठा ॥

दोहा-जो हरिके रंगमें रंगे, भूपनसूं क्या काम ।
चरणदास कुछ भय नहीं, ना कुछ चहिये दाम।४०८।

तपसी कछू न मुखसूं भाषा । राजा उठि चढि मारग लागा॥
क्रोध भरा महलनमें आया । खोटा मनमें मता उपाया ॥
पातुरि भेजि वाहि अजमाऊं । भेद झूंठ सांचेको पाऊं ॥
जबहीं पातुरी लई बुलाई । ये बातैं वाकूं समुझाई ॥
कहै पातुरी आज्ञा दीजै । देखि तमाशा वाका लीजै ॥
आयसु लै पातुरी घर आई । प्रथमैं लौंडी एक पठाई ॥
वा तपसीका लावो भेद । कौन वस्तुसे वाको हेत ॥
कहाँ सु भोजन करै अहारा । छुटै भजनसूं कौनी बारा ॥
बाँदी गई भेद सो लाई । पातुरिकूं सब बात सुनाई ॥

दोहा-झारै जा मुख धोयकै, फिरि तलावमें न्हाय ।
चरणदास फल पात जो, गिरै पडेही खाय॥४०९॥

पातुरि सुनि मनमें डरपाई । कैसे वाकूं वश करुं जाई ॥
बिन वश किये भूप नहिं रीझै । काढि नगरसूं बहुतै खीझै ॥
ताते मकर पेंच कछु कीजै । तपसी काम नरकमें लीजै ॥
जो कहुँ इच्छा नेकहु पइये । छलबल करि वा मदन जगइये॥
यह विचारि पातुरि जब कियो । नाना विधि भोजन करिलियो॥
गई तहां तपसी अस्थाना । वह तौ करत हतो हरि ध्याना ॥
बैठ रही धीरज उर धारी । जबलग उठै ध्यान निरवारी॥
उठे ध्यानते आँखैं खोली । करि दण्डवत नारि यों बोली॥
पुत्र नहीं हमरे घरमाहीं । जिस कारण दर्शनकूं आई ॥
यह कहि भोजन आगे राखा । तपसी भोजन लिया न भाखा॥
वा दिन तौ योंही उठि आई । अंगुली टिकन ठौर नहिं पाई ॥
दूजे दिन गइ बहुत सबारा । न्हाकर आये थे उहि बारा ॥

कहा कि भोजन हमारा कीजै । हमरे नैननको सुख दीजै ॥
तपसी कहै न चित्त डोलाऊं । सूखे पात और फल खाऊं ॥
पातुरि कहै दूरसूं आई । तुम तौ दयावंत सुखदाई ॥
यही मान मेरो तुम राखो । बहुत नहीं अंगुली भरि चाखो ॥
कहि कहि वचन वाहि पघिलाया । अंगुली भरि भोजन चटवाया ॥
चाटत चाटत चाटत रहा । रणजित कहै यों मन बहि गया ॥

दोहा–पातुरिने कर जोरि करि, बहुरो वचन सुनाय ।
एक बार अरु लीजिये, इन्द्रीजित ऋषिराय ॥४१०॥

फिरि भारी अंगुली भरि लीन्हा । बहरो मुखके माहीं दीन्हा ॥
अंगुली टिकन काम करि आई । घर आकर बहुतै हुलसाई ॥
फिर ह्वां दिना चार ठहराई । उत नहिं गई यही मन आई ॥
पातुरि चतुर ढीलकूं गई । तपसी कही कहां तुम रही ॥
जबहीं पातुरि प्रीति पिछानी । अपनी कला पैठती जानी ॥
वा दिन व्यंजन कछू न लाई । बहुविधि भोजन बात सुनाई ॥
घर ठाकुर सेवा चित लाऊं । नानाविधिके भोग लगाऊं ॥
लै आज्ञा निज भवन पधारी । चरणदास कहै छल कियो नारी ॥

दोहा–तपसीकूं जीतन कियो, टेक बाँधि करि वाद ।
हौरै हौरै लायहूं, या जिह्वाके स्वाद ॥ ४११ ॥
नानाविधिके स्वाद करि, लै गइ वाही पास ।
कह्यो कि यह परसाद है, लीजै कोई ग्रास ॥४१२॥

ठाकुरको परसाद है जु लीजै । याको नाहीं कबहुँ न कीजै ॥
नाहीं किये होय अपराधा । तुम तौ कहिये पूरे साधा ॥
कछूक पातुरि वचन सुनायो । कछूक तपसीके मन आयो ॥
डारो हाथ थारके माहीं । ज्यों ज्यों खात सराहत जाहीं ॥
पातुरि कहो सदा लै आऊं । जो जो ठाकुर भोग लगाऊं ॥

यामें कछू दोष नहिं लागै । तन मनका सब पातक भागै ॥
वाकूं वश करिकै घर आई । सखियनकूं यह कथा सुनाई ॥
कामदेवकी सौगंध खाऊं । तपसी बँधुवा करि दिखलाऊं ॥

दोहा-रसना स्वादहि वश किये, मनमें जीतन बाद ।
कभी आप बांदी कभी, पहुँचायो परसाद ॥४१३॥

कबहूं वा तपसी ढिग आवै । नानाविधिके भोजन खावै ॥
कबहूं भेजै बांदी हाथा । कहिये छुट्टी मोहिं न नाथा ॥
वह जानै मम सेवा करै । यह तो भजन तपस्या हरै ॥
एक दिना पातुरि ह्वां गई । हाथ जोरि भाषत यों भई ॥
कहौं कि मेरे भवन पधारो । करो पवित्तर जूँठनि डारो ॥
लावनकी बहु बात बनाई । सो तपसीके मन नहिं भाई ॥
ह्वांई रही टोना सो कीन्हों । तपसीको मन वश करि लीन्हों ॥
दूजे रसकी कला दिखाई । मोह बडो अरु आँख लजाई ॥
भोर भये फिर बात सुनाई । छलबल करि घरही लै आई ॥
चरणदास तपसी नहिं जानी । अजहूं ठगनी ना पहिंचानी ॥

दोहा-घरमें ला बहु सुख दिया, दिना आठही राखि ।
तपसीहू वा वश भयो, पांचनसूं रस चाखि ॥४१४॥

इन्द्रीवश पातुरि घर आया । अपने तपका तेज घटाया ॥
सिमटा मन भया फूटकफूटा । लागा ध्यान रामका छूटा ॥
देखौ घरके वैरी किया । पकड बांधि औरै करदिया ॥
फिरि पातुरि राजा पै गई । तपसी ठगन बात सब कही ॥
नेक नेक सब कहि समझाई । तब राजाकूं हाँसी आई ॥
योंहीं कही वेगि लै आवो । वाकी सूरत हमैं दिखाओ ॥
फिरि पातुरि उलटीही धाई । तपसीकूं इक बात सुनाई ॥
राजा दर्शन करन बोलावै । जित सेती खानेकूं आवै ॥

वाकूं चलिकरि दरशन दीजे । किरपा प्यार बहुतही कीजै॥
हम तौ उनकी सदा कहावैं । नित उठि करि मुजरेको जावैं॥
ह्वां तौ अपना घरही जानौं । उठिये चलिये सकुच न मानौं॥
पाछे तपसी आगे बाला । ऐसे राजा दुआरे चाला ॥
जा राजाकूं दई अशीशा । राजा बैठे नायो शीशा ॥
हँसकरि कही जु किरपा कीन्हा । यह नगरी अपनी करि लीन्हा ॥
घर बैठे हम दर्शन पाये । वै धनि हैं जो तुमको लाये ॥
तपसी कही धन्य तुम राजा । बहुतनको सारत हौ काजा ॥
तुम्हरो तेज देखि हम चीन्ही । तुमहुँ तपस्या आगे कीन्ही ॥
बिना तपस्या राज न पावै । वेद पुराणनमें यों गावै ॥
हमहूं दर्शन तुम्हरे पाये । तपसी कहि यों वचन सुनाये॥
भूपति बहुत अचम्भा कीन्हा । बहुत द्रव्य पातुरिको दीन्हा॥
फिर राजा तपसीसूं बोला । खोट हियेका सबही खोला ॥
एक दिना हम तुम ढिग धाये । वनमें तुम्हरे दर्शन पाये ॥
ठाढ रह्यो हौं बहुती बारा । ना तुम बोले नैन उघारा ॥
आज द्योस ऐसा हद कीन्हा । ह्याईं आ तुम दर्शन दीन्हा ॥
यह सुनि तपसी शोचि विचारा । तबहीं पातुरिसूं भयो न्यारा ॥
वेगहि उठि जंगलकूं गया । चरणदास कहै रमता भया ॥

दोहा-जो इंद्रिनके वश भयो, यही हाल ह्वै जाय ।
पछतावा मनमें रहै, करै हाय दुख हाय ॥ ४१९ ॥

पांचौ चोर महा दुखदाई । सोया जगमें देह फँसाई ॥
तन मनकूं बहु व्याधि लगावैं । कायिक वाचिक पाप चढावैं॥
करम लगा बहुतै भरमावैं । यमके छप्पन वास दिखावैं ॥
फिर चौरासी माहिं फिरावै । जठर अग्निमें ताहि तपावै ॥
जन्म मरण भारी दुख देवै । मानुष देहका सर्वस लेवै ॥

तीन लोकमें डोलै हाला । सुरपुर मृत्यु औ पाताला ॥
कैसे मुक्ति धामकूं पावै । जो इंद्रियनके वश हो जावै ॥
छूटै जब गुरु किरपा करैं । चरणदासके शिर कर धरैं ॥

दोहा–स्वारथकेहीं सब सगे, कुटुम्ब मित्र कुल गोत ।
परमारथ समझावई, जो दयालु गुरु होत ॥ ४१६ ॥
परमारथमें दुख मिटै, कलह कलपना जाय ॥
स्वारथमाहीं सुख नहीं, तामें चित न लगाय ॥४१७॥
स्वारथमें चिन्ता घनी, जो ह्वांकर हो गेह ।
बिना आगकी चितामें, जीवत जरि है देह ॥४१८॥
चिन्ता घटमें नागिनी, ताके मुख हैं दोय ।
निशिदिन खाये जात है, जान सकै नहिं कोय॥४१९॥
ता घट चिन्ता नागिनी, जा मुख जप नहिं होय ।
जो टुक आवै याद भी, उहीं जाय फिरि खोय॥४२०॥
चिन्ताहीसूं लगत है, चरणदास उर आग ।
तहां ध्यान हरि चरणको, कैसेही अब लाग॥४२१॥
जगत वासनाके विषे, घर चिन्ताका जान ।
जगकी आशा छोडिकरि, हरि सुमिरणही ठान।४२२।
आशा नदीमें चलै, सदा मनोरथ नीर ।
परमारथ उपजै बहै, मन नहिं पकडै धीर ॥ ४२३ ॥
धीर विना नहिं ध्यान है, निश्चल जप नहिं होय ।
जो चाहै हरिभक्तकूं, जगत वासना खोय ॥ ४२४ ॥
जबलग जगसूं प्रीति है, तब लग दुख अपार ।
भय भारी चिन्ता घनी, भवन पिछानौ दार॥४२५॥
जगसूं छुटि बाहर परै, उसी समय सब चैन ।
उपजै आनँद परमहीं, तहँ कुछ लेन न दैन ॥४२६॥

रहै एक हरिभक्तिहीं, बाधा सब छुटि जाहिं ।
जबै राम अपनो करैं, वेगहि पकरैं बाहिं ॥४२७॥

तातै सुन मन मेरे मीत । जक्त छुटनकी राखो चीत ॥
ऐसा अवसर फिरि नहिं पावै । काहे मानुष देह गँवावै ॥
संगी तेरा नहिं धन धाम । तू क्यों पचै मूढ बेकाम ॥
पिछली गई तासकूं रोय । आगे रही योंहि पत खोय ॥
इक इक घरी अमोलक जान । चेत चेत मत होय अजान ॥
अपने घरका करो सँभाल । ललकारत आवत है काल ॥
यातै कीजै यही विचार । डारि सिदौसी जग जंजार ॥
शुकदेव कहैं सुन चरणहिं दास । हरिके चरणकमल कर वास ॥

दोहा—यामें ढील न कीजिये, यह विचार मन आन ।
चरणदास यों कहत है, यह गो यह मैदान ॥४२८॥
आयुर्दा यों जात है, ज्यों तरुवरकी छांह ।
चेत सितांबी भक्तिमें, तजो जगतकी बाह ॥४२९॥
तूही पकरो जगतने, तैंहीं पकरो आय ।
ज्यों नलिनीको सूवटा, धोखे पकडो जाय ॥४३०॥

जैसे बांदर आपहि फँसिया । समझवान मन माहीं हँसिया ॥
मूठ चनोंकी जो वह तजता । तो काहेकूं फँसा जु रहता ॥
ज्यों कांटेसूं मच्छी लागी । आपहिं आई चली अभागी ॥
सरुवरमें तरुवरकी छांहीं । अजया देखि गिरी वा माहीं ॥
जैसे पक्षी जाल मँझारा । आपहि आय फँसा बजमारा ॥
खन्दकमें हाथी आ परिया । लेनगयो कोउ आपहि गिरिया ॥
बाजत बीण मृगा चलि आया । पकर कौन चंचलकूं ल्याया ॥
योंहीं तुम अपनी गति जानौ । आपहिं बँधे यही पहिचानौ ॥
ऐसे जगने तोहिं नहिं पकडा । चरणदास कहैं योंहीं जकडा ॥

१ जल्दी

दोहा—छोड जगतकी वासना, यही जु छुटन उपाव ।
ये मन ऐसी धारिये, अबहीं नीको दांव ॥४३१॥
अबकी चूके चूक है, फिर पछितावा होय ।
जो तुम जक्त न छोंडिहो, जन्म जायगो खोय ॥४३२॥
जगमाहीं न्यारे रहो, लगे रहो हरि ध्यान ।
पृथ्वी पर देही रहै, परमेश्वरमें प्राण ॥४३३॥
ज्यों तिरिया पीहर बसै, सुरति पियाके माहिं ।
ऐसे जन जगमें रहैं, हरिकूं भूलै नाहिं ॥४३४॥
ज्यों किरपण बहु दामहीं, गाडि जिमीके नीच ।
सदा वाही तकतो रहै, सुरति रहै ता बीच ॥४३५॥
तन छूटै हो सरपही, जा बैठे वा ठौर ।
जहां आशा तहँ वास है, कहूं न भर्मै और ॥४३६॥
चित रहै गोविंदके विषे, जगमें सहज सुभाय ।
तन छूटै हरिकूं मिलै, चरणकमल लपटाय ॥४३७॥
जग त्यागो वैराग लै, निश्चय मनकूं लाव ।
आठ पहर साठौ घरी, सुमिरन सुरति लगाव ॥४३८॥
सबसूं रहु निरवैरता, गहो दीनता ध्यान ।
अन्त मुक्तिपद पाइहो, जगमें होय न हान ॥४३९॥
चरणदास यों कहत हैं, बडी दीनता जान ।
औरनकी तो क्या चलै, लगै न माया बान ॥४४०॥
दया नम्रता दीनता, क्षमा शील संतोष ।
इनकूं लै सुमिरण करै, निश्चय पावै मोष ॥४४१॥
ये सब लक्षण राममें, प्रगटत देखैं मोहिं ।
जो वे आवैं तुझविषे, प्यार करैं हरि तोहिं ॥४४२॥

हरिसूं प्रीति लगायकै, सबसों लेहि उठाय ।
रहै सदा इक रामहीं, और सकल मिट जाय॥४४३॥
मिटतेसूं मत प्रीति कर, रहतेसूं कर नेह ।
झूठेकूं तजि दीजिये, सांचेमें करि गेह ॥ ४४४ ॥
सांचा हरिका नाम है, झूठा यह संसार ।
शुकदेव कहै चरणदास हो, सुमिरण करौ विचार॥४४५॥
दश इंद्रिनकूं खैंच करि, अभय अमर फल चाख ।
सहजहि सुमिरण होत है, तामें मनकूं राख ॥४४६॥
मानसरोवर देहमें, मुक्ताहल जो श्वाँस ।
चुगिये हंस स्वरूप है, खुलै कर्म्मकी गांस ॥४४७॥
अजपाको यहि अर्थ है, बिना जपेही होत ।
कछुवाकी ज्यों सिमट करि, तहां लगावो गोत॥४४८॥
आवतहीकूं देखिये, जातेकूं जो निहारि ।
ऐसे सुरत लगाइये, चरणदास हिय धारि ॥४४९॥
सक्कारे तन सींचिये, हक्कारे सुख होय ।
ऐसे सुमिरण सत्तकूं, जानै बिरला कोय ॥ ४५० ॥
नाभिहिसेती उठत है, फिरि तामाहिं समाय ।
याको भेद अपार है, सद्गुरु देहि बताय ॥ ४५१ ॥
नाभि नासिका माहिं करि, घाल हिंडोला झूल ।
उपजे अति आनन्दही, रहै न दुखका मूल ॥४५२॥
ब्रह्म सिंधुकी लहर है, तामें न्हान सजोय ।
कलिमल सब छुटि जायँगे, पातक रहे न कोय ॥४५३॥
अरसठ तीरथ तो विषे, बाहर क्यों भटकाव ।
चरणदास यों कहत है, उलटाही घर आव ॥४५४॥

श्वासा सँभल विचारि करि, तहां करो विश्राम ।
जाते हरिही हरि कहौ, आवत कहिये श्याम ॥४५५॥
श्वासा लेवै नाम बिन, सो जीवन धिक्कार ।
श्वास श्वासमें राम जप, यही धारणा धार ॥४५६॥
उलट पलट जप रामही, टेढा सीधा होय ।
याका फल नहिं जायगा, कैसेही लो कोय ॥ ४५७ ॥
खाते पीते नाम ले, बैठे चलते सोय ।
सदा पवित्तर नाम है, करै ऊजला तोय ॥ ४५८ ॥
नीचनकूं ऊँचा करै, ऊंचनको कर देव ।
देवनकूं हरिही करै, रहै न दूजा भेव ॥ ४५९ ॥
भरमत भरमत आइया, पाई मानुष देह ।
ऐसो अवसर फिरि कहां, नाम शिताबी[1] लेह ॥४६०॥
कै घरमें कै बाहरे, जो चित आवै नाम ।
दोनों होहिं बराबरी, कै जंगल कै ग्राम ॥ ४६१ ॥
करै तपस्या नाम बिन, योग यज्ञ अरु दान ।
चरणदास यों कहत हैं, सबही थोथे जान ॥४६२ ॥
अधिकी ऊंचा नाम है, सब करणीका जीव ।
अष्टादश अरु चारिका, मथिकरि काढा घीव ॥४६३॥
चारों युगमें देखि ले, जिन जपिया जिन नाव ।
टेक पकरि आगे धँसे, परा न पीछे पाव ॥ ४६४ ॥
जैसी गति उनकी भई, गावत साधु पुरान ।
वैसी तेरी होयगी, यह निश्चय करि जान ॥ ४६५ ॥
दुख धन्धेकूं छोडि करि, कलह कल्पना त्याग ।
शुकदेव कहि चरणदासकूं, रामभजनमें लाग ॥४६६॥

१ जल्दी ।

हरिके गुण माला करौ रसना ऊपर लाव ।
किया कियाही देखि करि, ताहि सराहत जाव ॥४६७॥
देखि देखि देखत रहो, अस्तुति मुखसूं भाख ।
वाकी चतुराई सबै, लेकरि मनमें राख ॥ ४६८ ॥
वैसा तो रँगरेज ना, वैसे छीपी नाहिं ।
वैसा कारीगर नहीं, या दुनियाके माहिं ॥ ४६९ ॥
अजब अजब अचरज किये, अद्भुत अधिक अपार ।
जल थल पवन अकाशमें, देखो, दृष्टि उघार॥४७०॥
सृष्टि बाग माली रचौ, भाँति भाँति गुलजार ।
रीझरीझ शिर दीजिये, एहो निरख बहार ॥ ४७१ ॥
कबहूं जग परगट करै, कबहूं करै अलोप ॥
नानाविधि बाजी करै, आप रहत है गोप ॥४७२॥
बाजीगर बाजी रची, सब गति पूरण साज ।
किये तमाशे बहुतही, तोहिं दिखावन काज॥४७३॥
देखी होय परसन्नहीं, तू वाको गुण मान ।
चरणदास जो बुद्धि है, अधिक सुघरता जान॥४७४॥
बहुत प्यार तोपे करै, तू नहिं जानत सार ।
वाहि भुला योंहीं रहै, नेक न करै सँभार ॥ ४७५ ॥
राम बिसारो आदिसूं, लियो द्रव्य अरु नार ।
याहीते भरमत फिरो, तन धरि वारंवार ॥ ४७६ ॥
गई सु गइ अब राखिले, एहो मूढ अयान ।
निष्केवल हरिकूं रटौ, सीख गुरुकी मान ॥४७७॥
सोवनमें नहिं खोइये, जन्म पदारथ पाय ।
चरणदास ह्वै जागिये, आलस सकल गँवाय॥४७८॥

सोवनहीमें हानि है, जागनमें बहु लाभ ।
बुद्धि उज्ज्वलही होत है, मुखपर चढै जु आभ॥४७९॥
दिनकूं हरि सुमिरण करौ, रैनि जाग करि ध्यान ।
भूँख राखि भोजन करौ, तजि सोवनकी बान॥४८०॥
चारि पहर नहिं जगि सकै, आधी रातसु जाग ।
ध्यान करो जपही करो, भजन करनकूं लाग॥४८१॥
जो नहिं श्रद्धा दो पहर, पिछले पहरे चेत ।
उठ बैठे रटना रटै, प्रभुसूं लावहि हेत ॥ ४८२ ॥
जागै ना पिछिले पहर, ताके मुखडे धूल ।
सुमिरै ना करतारकूं, सभी गँवावै मूल ॥ ४८३ ॥
जागै ना पिछिले पहर, करै न आतमध्यान ।
ते नर नरकै जाइँगे, बहुत सहैं यमसान ॥ ४८४ ॥
जागै न पिछिले पहर, करे न गुरु मत जाप ।
मुँह फारे सोवत रहै, ताको लागै पाप ॥ ४८५ ॥
पिछिले पहरे जागिकरि, भजन करै चितलाय ।
चरणदास वा जीवकी, निश्चय गति है जाय॥४८६॥
पिछिले पहरे जागि करि, भरि भरि अमृत पीव ।
विषय जक्तकी ना रहै, अमर होय करि जीव॥४८७॥
जन्म छुटै मरणा छुटै, आवागमन छुटि जाय ।
एक पहरकी रातसूं, बैठा हो गुण गाय ॥ ४८८ ॥
पहिले पहरे सब जगै, दूजे भोगी मान ।
तीजे पहरे चोरही, चौथे योगी जान ॥ ४८९ ॥
मरयादाकी यह कही, क्या विरक्त परमान ।
आठै पहर साठा घरी, जागे हरिके ध्यान ॥४९०॥

जे कोइ विरही रामके, तिनकूं कैसी नींद ।
शस्तर लागा नेहका, गया हियेको बींद ॥ ४९१ ॥
तिनसे जग सहजै छुटा, कहां रंग कहँ भूप ।
चले गये घर छोंडिके, धरि विरक्तका रूप ॥४९२॥
जिनको मन बिरकत सदा, रहो जहाँ चित होय ।
घर बाहर दोउ एकसा, डारी दुविधा खोय ॥४९३॥
सोये हैं संसारसूं, जागे हरिकी ओर ।
तिनकूं इक रसही सदा, नहीं सांझ नहिं भोर ॥४९४॥
उनकूं नींद न आवई, राम मिलनकी चीत ।
सोवै ना सुख सेजपै, तजिकै हरिसों मीत ॥४९५॥
कैसे वे हरिसूं मिले, जिनके ऊंचे भाग ।
कैसे वे हरि त्यागिकै, रहे जगतसूं लाग ॥ ४९६ ॥
सोवन जागन भेदकी, कोइक जानत बात ।
साधूजन जागत तहां, जहां सबनकी रात ॥४९७॥
जो जागे हरिभक्तिमें, सोई उतरै पार ।
जो जागे संसारमें, भवसागरमें ख्वार ॥ ४९८ ॥
कै जागत हूका भरा, कै जागा वश काम ।
कै जागा जग टहलमें, लाग रहो धन धाम ॥४९९॥
ऐसे जन्म गँवाय दिया, महामूढ अज्ञान ।
चौरासीमें फिरि चलै, मनका कहा जु मान ॥५००॥
सद्गुरु शरणै आयकरि, कहा ना मानै एक ।
ते नर बहु दुख पाइहैं, तिनकूं सुख नहिं नेक॥५०१॥
सद्गुरु चरणौ ना लगे, किया न हरिका खोज ।
सो खर कूकर शूकरा, अरु जंगलका रोझ ॥५०२॥

पेट भरे भर सोइया, ते नर पशू समान ।
परनारी कै आपनी, तिनको नाहीं ज्ञान ॥ ५०३ ॥
जैसा तैसा खाय करि, पेट भरे भरि लेह ।
पडकर सोवै भोरलों, सो शूकरकी देह ॥ ५०४ ॥
हरि चरचा बिन जो बकै, सो कूकरकी भूस ।
कह रणजित वह साँझला, खाय धूसही धूंस ॥५०५॥
जो पावै सोई चरै, करै नहीं पहिचान ।
पीठ लदै हरि ना जपै, ताकूं खरही जान ॥ ५०६ ॥
रोझ जान वा देहकूं, ताकूं नहीं विचार ।
फिरै बिना मर्य्यादही, बताहु करै अहार ॥ ५०७ ॥
बहुता किये अहारही, मैली रहै जु बुद्धि ।
हरिके निर्मल नामकी, कैसे आवै शुद्धि ॥ ५०८ ॥
सूक्षम भोजन खाइ करि, रहिये ना परि सोय ।
ऐसी मानुष देहकूं, भक्ति बिना मत खोय ॥५०९॥
जन्म चलोही जात है, ज्यों कूवेमें लाव ।
दौरत मृगकी छाँवको, नेक नहीं ठहराव ॥ ५१० ॥
समझ शिताबी भक्ति ले, नेक न ढील लगाव ।
आपा हरिकूं दे चुको, याको यही उपाव ॥ ५११ ॥
जगका कहा न मानिये, सद्गुरुसों लै बुद्धि ।
ताकूं हियमें राखिये, करो शिताबी शुद्धि ॥ ५१२ ॥
गुरुसेती सद्गुरु बडे, परमेश्वरके रूप ।
मुक्ति छांह पहुँचाय दें, जगत छुटावै धूप ॥५१३॥
कु०—पहिला गुरु दाई कहूँ, दूजे माई जान ।
तीजा गुरू खिलावडी, चौथा पिता पिछान ॥

चौथा पिता पिछान, पांचवें पाधा जानौ ।
कनफूका गुरु छठा, तास पूजा दे मानौ ॥
सतवां सद्गुरु जानिये, जगसूं करैं उदास ।
मुक्ति धाम सोइ देत हैं, कहैं चरणहिदास ॥
दोहा-गुरु मिलते ऐसे कहै, कछू लाय मोहिं देह ।
सद्गुरु मिल ऐसे कहै, नाम धनीका लेह ॥ ५१४ ॥
कनफूका गुरु जगतका, राम मिलावन और ।
सो सद्गुरुको जानिये, मुक्ति दिखावन ठौर ॥५१५॥
गलियारे गुरु फिरत हैं, घर घर कंठी देत ।
और काज उनकूं नहीं, द्रव्य कमावन हेत ॥ ५१६ ॥
सद्गुरु डंका देत हैं, भक्ति रामकी लेहु ।
पहिले हमकूं भेंटही, शीश आपनो देहु ॥ ५१७ ॥
सो सद्गुरु शुकदेव हैं, समझि हियेमें राखि ।
तिनके शरणै आव मन, चरणदास कहे भाखि ।५१८।
यह सिगरो उपदेशही, मैं आपनकूं कीन ।
सो मनकूं आपा घना, कहीं होय आधीन ॥ ५१९ ॥
सद्गुरुसूं मांगौ यही, मोहि गरीबी देहु ।
दूर बडप्पन कीजिये, नान्हाही करि लेहु ॥ ५२० ॥
जनक परमगुरु देवजी, सुनु सद्गुरु शुकदेव ।
यही अर्ज मैं करत हूं, मोहि साधु करिलेव ॥५२१॥
चारों युगके भक्तजन, तुमहो सुखके धाम ।
चरणहिंदासा होयकै, तुम्हें करूं परणाम ॥ ५२२ ॥
आदि पुरुष किरपा करौ, सब अवगुण छुटिजाहिं ।
साधहोन लक्षण मिलैं, चरणकमलकी छाहिं ॥५२३॥
तुम्हरी शक्ति अपार है, लीलाको नहिं अन्त ।
चरणदास यों कहत हैं, ऐसे तुम भगवन्त ॥ ५२४ ॥

छप्पय-रच्यो आपमें जगतरूप, नारायण कीन्हों ।
दूजे लक्ष्मी भई बहुरि, पानी रँग भीन्हों ॥
नाभिकमल फिरि भयो, जहां ब्रह्माजी उपजे ।
विधिकी त्रिकुटी माहिं, तहां शंकरजी निपजे ॥
चारि वेद अरु विष्णु है; सकल जगत छिनमें कियो ।
निराकार आकारसों, चरणदास जिहिं मन दियो ॥

कवित्त-वही तो अडिग्ग राम चौथे पद वास जाको, वही तौ अडिग्ग राम मथुरामें आयो है। वही तौ अडिग्ग राम योगी जाको ध्यान धरै, वही तौ अडिग्ग राम सीतापति पायो है॥ वही तौ अडिग्ग राम सभी ठाम रमि रह्यो, वही तौ अडिग्ग राम संतन सहायो है। वही तौ अडिग्ग राम चरणदास चेरो जाको, वही तौ अडिग्ग राम काया खोजि पायो है ॥ मायाभ्रम फंद देख साधनको संग पेख, रामको पहिरि भेख कंचन तन ताव रे। मनकूं पहिंचान ज्ञान एकाएकी सबै जान, नादके गहेते तू अनहद बजाव रे ॥ उलटि पलटि काया बीच चारों कर दूर, ऐसी विधि मेरुपै समीरकूं चढाव रे ।कहैं चरणदास गगन मध्य करो वास, जहां नहीं शीत उष्ण निर्भय पद ध्याव रे॥

दोहा-दुर्योधन रावण गये, अरु यादव परिवार ।
चरणदास थिर कोइ नहीं, होय मिटै संसार ॥९२९॥

कवित्त-भोरसो बिहानो जाव ढरैगी दुपहरीसी, समझ विचारि देखि चली आवे रात है । भवँत सुचान काल तेरेपर तकि रहो, छिन पलकी खब्र नाहिं करे आय घात है ॥ दारा सुत द्रव्य सब सपनको सुख भयो, जानहुगे जभी जब छूटि जाय गात है । कहै चरणदास अब तजै क्यों न विषय वास, पानी माहिं नाव जैसे आयु चली जात है॥कुमारगसूं भाज और लाज खोटे करमनसूं, चौरासीके त्राससूं मूढ क्यों न लज रे। साधुनके संग बैठि धमहूकी नाव लेटि, गुरुहूको ज्ञान राखि

प्रेम भक्ति सज रे ॥ छूटे जब नारी यम देवै दुख भारी डारैं, नरक मँझारी आवागमन क्यों न तज रे। कहे चरणदास तजै क्यों न विषय वास, रामके सँवारे अब रामराम भज रे ॥

सवैया

भूलि रहो जगमें जडता वश, दारा सुता सुत प्रीति बढावै। इनसूं मन बाँटि रहो गृहबीच सो, अन्तसमैं कोइ पास न जावै॥ आनि गहै यमजाम तेरो सबही, मिलि प्रीतम राम बतावै। चरणदास कहै चेतौ नर मूरख, राम बिना कोइ काम न आवै॥

कवित्त–धावै भस्म देवनकूं भीतनके लेवनको कोई संग साथी नाहिं भीर परे तेरा है। परसता है चण्डकी भूत अरु शीतलाकूं, भजे क्यों न रामनाम कटै यम बेरा है ॥ भैरौं अरु बराही पाखंड पूजा सभी करैं, है सब हरि किन्हूं नैनन न हेरा है ॥ चरणदास कूर सब सन्तनको चेरो कहैं, ऐसा जग अन्धा जानि कर्मनने घेरा है ॥

दोहा–यंतर टोना मूंड हलावन, और कीमियाँ झूठ।
चरणदास कहैं सब भग लहै, यह जग लीन्हा लूट ५२६

कवित्त–भूतन सेवे सो भूतनमें जाय मिलै, जादूको सेवै सो चमार ताकी माईसूं। देवतोंकूं सेवै तौ देवलोक बास लहै, औषधीकूं सेवै तो मिलाप रावराईसूं ॥ कीमियां सेवै तो खराब होय दुनियामें, ऐसे धन खोवै जो सुनावै नहिं भाईसूं। कहै चरणदास हम इतनेकूं मानैं नाहिं, देखी सबी छाँडि मान लगो है कन्हाईसूं ॥

कु०–पारा मारा ना मरे, गंधक होय न तेल।
केते पचि पचि मरिगये, शिरमें मिट्टी मेल ॥
शिरमें मिट्टी मेल भटक करि जन्म सिरायो।
जडी बूटिकूं फिरै कहीं, कुछ हाथ न आयो ॥

बौरे हरि क्यों न भजै, काहे जन्म सिरायो ।
चरणदास कीमियां झूठो, गुरु शुकदेव सुनायो ।
अरिल्ल-सात पांचकी सेवत जो लगि एकसूं ।
साधनकी करिसेव मुँडोमत भेषकूं ॥
भेषी माहिं अलेख यही तू जानियो ॥
चरणदासकी सीख निश्चय करि मानियो ॥
दोहा-आपै भजन करै नहीं, औरे मने करैं ।
चरणदास कहैं वे दुष्ट नर, भर्मभर्म नरकै परैं ॥५२७॥
औरनकूं उपदेश करि, भजन करैं निष्काम ।
चरणदास वे साधुजन, पहुँचे हरिके धाम ॥५२८॥
शून्य शहर हम बसत हैं, अनहद है कुलदेव ।
अजपा गोत विचारिले, चरणदास यहिभेव ॥५२९॥
भक्ति पदारथ उदयसूं, होय सभी कल्याण ।
पढैं सुनैं सेवन करैं, पावैं पद निर्वान ॥५३०॥
भक्ति पदारथ मैं कही, कछु इक भेद बखान ।
जो कोइ समझै प्रीतिसूं, छूटै यमदुख सान ॥५३१॥
पाठ करै मनमें धरै, बहुरूं करै विचार ।
कहै गुरु शुकदेवजी, उतरै भवजल पार ॥ ५३२ ॥
जयजय श्रीशुकदेवजी, तुम्हैं करूं परणाम ।
तुम प्रसाद पोथीकही, भये जो पूरण काम ॥५३३॥
हिरदयमें शीतल हुये, तपनि गई सब दूर ।
या बाणीके कहते, कायर मन भयो शूर ॥५३४॥
चन्दन चरचै पुष्प धरि, बहुरि करै परणाम ।
कथा बांचि सबही सुनै, कहा पुरुष कह वाम ॥५३५॥
कहै सुनै जो प्रेमसूं, वाकूं राखै याद ।
चरणदास यो कहत हैं, बनिहो पूरे साध ॥५३६॥
इति भक्तिपदार्थ वर्णन॥ १३ ॥

अवधूताय नमः



मनविक्तकरनगुटकासार १४



दोहा–नमो नमो श्रीव्यासजी, सद्गुरु परमदयाल ।
ध्यान किये आशा नशै, लगै न जगत बयाल॥१॥

अष्टपदी–नमो नमो शुकदेव तुम्हैं परणाम है। तुम किरपासों आप मिलैं घनश्याम है॥ तुम्हरी दयासों होय जु पूरण योग है। तनकी व्याधा छुटै मिटै मन रोग है॥तुव किरपासों ज्ञान पदारथ पावई। उपजै सार विचार असार छुटावई॥ तुम्हरी दयासों होय भक्ति निस भोर है। हिय सरोवर उठत जु प्रेम हिलोर है॥ तुम किरपा वैराग दूर लगि आवई। सकल वासना छूटि परमपद पावई॥ सब गुणदायक लायक परमदयाल हौ। मम हिरदयमें आय भेद सबही कहौ॥ मोसे कछु नहिं होय जू तुम विन नाथ जू। नितहि रहै तुव हाथ जु मेरे माथजू॥ अरज करै रणजीत सुनो गुरुदेवजी। मो मुख सेती भाषि कहौ सब भेवजी॥

दोहा–एकादश भागवतमें, जाकी यह मति जान ।
दत्तात्रेयीने कह्यो, राजा यदुसों ज्ञान॥ २॥

अब मैं भाषा कहत हौं, तुमहीं करो सहाय ।
ज्योंकी त्यों मुखसे निकसि, पूरीही ह्वै जाय ॥ ३ ॥
सुनियो ज्ञानी सन्तजन, रहन गहनकी चाल ।
जो कोइ लै हिरदय धरै, होवै तुरत निहाल ॥ ४ ॥
चरणदास हौं कहत हौं, परमारथके काज ।
जो अंग श्रीभागवतमें, साधु होनके साज ॥ ५ ॥
गुरु शुकदेव प्रतापसों, कहूं विचार विवेक ।
दत्तात्रेयीने किये, चौबीसों गुरु देख ॥ ६ ॥
कुं०-एकं दिना यदुभूपही, खेलन गये शिकार ।
तहां नगरके निकट जो, ह्वां थी अधिक उजार ॥
ह्वां थी अधिक उजार, एक अवधूता लेटे ।
मूरति पुष्ट प्रसन्न, जक्तके भय सब मेटे ॥
राजा देखि प्रणाम करि, पूछा शीश नवाय ।
पाये आनँद कहां तुम, मोंसे कहो सुनाय ॥
दोहा-बोले दत्तात्रेय तब, सुन हो भूप विशाल ।
चौबिस शिक्षा गुरु किये, तासों भये निहाल ॥७॥
कुं०-पृथ्वी पवन अकाश है, नीर अग्नि शशि भान ।
कपोत गुरु अजगर लखो, और सिंधुको जान ॥
और सिंधुको जान, पतंगा भँवरा कहिये ।
माखी हाथी मृगा मीन, अरु पिंगला लहिये ॥
चील्हू बाल कन्या कहूं, तीर बनावनहार ।
साँप माकरी भृंग जो, चौबीसौं अरु उर धार ॥
दोहा-भिन्न भिन्न अब कहत हौं, जुदो जुदो विस्तार ।
ताको सुनि करि चेतियो, चरणदास नर नार ॥८॥

अष्टपदी-दत्तात्रेयकी बात सकल अब गायहौं। बीच चारि गुरु किये ताहि समुझायहौं ॥ जिस कारण जिस हेतु जु उन ऐसी करी। जो जो शिक्षा लई समझ हिरदय धरी ॥ जासों भजै मन रोग जक्त ब्याधा नसी। उपजि परम संतोष क्षमा हिय आवसी ॥ भये परम आनन्द परमपद पाइया : जीवन्मुक्ता होयके चाह उठाइया ॥ सोई कहूं अब साध सबै सुनि लीजिये। शुकदेव परीक्षितसों कहो सांच पतीजिये ॥ दत्तात्रेय अवतार श्रीभगवानके। राजा यदुसों बोलि वचन भाषत भये ॥ हमने गुरू चौबीस करे संसारमें। तिनको ज्ञान विचार कहूं निर्धारमें ॥ पहिले गुरुकी शरण गही बहु प्रीतिसों। उन दीनो उपदेश मंत्र जो रीतिसों ॥

दोहा-सद्गुरुने किरपा करी, धरो हाथ मम शीस।
यही कही सुमिरण करौ, ध्यान करो जगदीश ॥१॥

अष्टपदी-काया छीजत देखि यही मनमें धरो। विरथा खोवन आयु नेम तपको करो ॥ गहि विरक्तकी रीति तभी गृहको तजो। रामभक्तिको चाव हमारे मन रचो ॥ जगसों रहो उदास वास हरिपद जहां। छुटि छुटि जावैं ध्यान न मन लागे तहां ॥ बालक गारीं देइ कोई बोलै नहीं। शिरपै धारै खेह सोई बेकाजहीं ॥ हँसि हँसि ताली पीट जु हमरे संग लगैं। मैंहू चलो उठाय तौ वे आगे भगैं ॥ ताते निशि दिन क्रोध आपने मन धरूं। हरि सुमिरण गो भूल जक्तमें यों फिरूं ॥ अब शिक्षा गुरु कियो चौबीसौं भेदही। सो अब वर्णन करूं छुटे सब खेदही ॥ तिनसों सीखी चाल सभी उरमें धरी। चरणहिं दास होय सुरती आनन्द भरी ॥

पृथ्वी १

दोहा-पहिले गुरु पृथ्वी किया, तीन सीख लेइ तास ।
गिरिवर तरुवर मही जो, भयो चरणको दास ॥१०॥

अष्टपदी-पहिले पृथ्वी गुरू हमरो जानिये । ताते लइ मति तीन सांच हिय आनिये ॥ पहिले पर्वत एक मही ऊपर लखा । जा निकटे जाय जु चढि बैठा शिखा ॥ कोई ऊपर चढ़ि जाय कोई आवै तले । जल वरषै ना बहै पवन सो ना हिले ॥ वा पर्वतकी सीख बुद्धिमें मानियां । देह लोभ दिय त्याग जु थिरता आनियां ॥ क्रोध दियो बिसराय जो तामस डारई । कहौ दुर्वचन कोउ क्यों न मारई ॥ क्रोध लोभ जो होय करै मन भंग है । कैसे सुमिरण होय लगै हरि रंग है ॥ क्रोध लोभ छुटि जाय यह रहन अगाध है । पर्व्वतके सम होय जो निश्चय साध है ॥ वृक्ष कहूं अब जान जाकी मति पाइया । कहै चरणको दास जो चित्त लगाइया ॥

दोहा-तरुवरने काया धरी, परमारथके हेत ।
कोऊ बैठे छाँहमें, कोऊ कारज लेत ॥ ११ ॥

अष्टपदी-दूजे देखे वृक्ष धरणि ऊपर भले । उनहूंकी लई सीख गयो उनके तले ॥ मन न हुती यह बात जु परकाज करूं । या प्राणीके काज नहीं करतो फिरूं ॥ जब आई यह रीति वृक्षकी दृष्टिमें । मैं लीन्ही सोइ धारि भली विधि सृष्टिमें ॥ कोई बैठे छाँह कोई डारी हनै । कोई ले फल फूल वृक्ष कछु ना भनै ॥ परमारथके काज वृक्ष देही धरी । सकल जीव व्योसाय कही मनसकरी ॥ जो विरक्तसों काज कोई अपनो कहै । वाको नाटै नाहिं सभी शिरपर सहै ॥ काहूको कछु काज जो कायासों

करै । यह शिक्षा भलि भाँति वृक्षकी मन धरै ॥ तीजे शिक्षा और महीकी धारिया । चरणहिं दासा होय अहंको मारिया ॥

दोहा–कोई खोदै नींवको, कोई खोदै कूप ।
अरु ऐसे कारज किते, ऐसो धरो स्वरूप ॥ १२ ॥

अष्टपदी–काहूको वह भलो बुरोहू ना कहै । ऐसे विरक्त रहै सभी सुख दुख सहै ॥ हरिसुमिरणमें मगन सदा आनँद रहै । भलो बुरा नहिं मान एकता दृढ गहै ॥

पवन २

दूजे गुरु कियो पवन सीख लइ जासुकी । दोय भाँति पहिचान हिये धरि तासुकी ॥ इक दिन बागके माहिं सहजही मैं गयो । देखन लाग्यो फूल जाय ठाढो भयो ॥ पुष्पनसों लगि पवनवास मोहिं आइया । जबहीं कीन्हों ज्ञान वास सब माइया ॥ वह तौ अतिहि सुगन्ध हर्ष उपजावई । फिर आई दुर्गन्ध बहुत अनखावई ॥ गन्धहिसों लगि पवन आप गन्धहि भई । पुन आई बिन गन्ध शुद्ध निर्मल बही ॥ वाको देखि स्वभाव यही मन आइया । चरणहिं दासा होय अंग उपजाइया ॥

दोहा–एक दिना इच्छा करी, भिक्षा माँगी जाय ।
अपनी श्रद्धा उन दियो, भोजन करमें लाय ॥ १३ ॥

अष्टपदी–वाकी अस्तुति नाहिं कछू मुखते कही । फिर गयो दूजे द्वार दई भिक्षा नहीं ॥ जाकी निंदा नाहिं कछू उचारिया । अस्तुति निंदा त्यागि यही जु विचारिया ॥ जिन कछु दीन्हों नाहिं नहीं औगुण धरो । जो कछु पहिले आयो सोइ भोजन करो ॥ जो कहुँ अपने काज गयो भलि ठांवहीं ॥ गरहण कीन्हों नाहिं रंग नहिं लावहीं ॥ जो गयो भोंडी ठौर बुरो नहिं जानिया ।

आतमरूप सँभाल जहाँ मन आनिया॥सबहीसों निर्लेप सबनके माहिं हूं । सहज भवनमें आय सहज करि जाहि हूं॥ परालब्ध जो पाय ताहि भोजन कियो । ना तौ करि परणाम बैठि योहीं रह्यो ॥ जिह्वा लौहीं जान स्वाद भोजन सभी । इकरस सबही होय उदर जावै जभी॥अब आयो सन्तोष कल्पना सब गई। चरणहि दास भयो जभी यह मति लई ॥

आकाश ३

दोहा–तीजे गुरु आकाशको, कीन्ह्यो सभी सँभार ।
जाकी मतिके लेतही, पायो ब्रह्म-विचार ॥ १४ ॥

अष्टपदी–तामें बरसै मेह और आंधी चलै । बिजली चमकै वामहिं और पावक जलै ॥ सदा रहै निर्लेप और निर्मल रहै। सबही जग वा माहिं आप निर्लम्ब है॥पवन हलावै नाहिं अग्नि जारै नहीं । ताहि न भिजावै नीर मरै मारै नहीं ॥ लघु दीरघ नहिं होय पुरुष नहिं नार है । नाहिं सूक्षम नहिं भार वार नहिं पार है ॥ शब्द उठै बहु भाँति वही जो अबोल है। उतपति परलय माहिं सदा जो अडोल है ॥ यह नभ ब्रह्म समान लखे दृष्टांत है । निरखि हियेकी आँखि गयो सब भ्रांत है॥ भाँडे कनकके होहिं चांदिके देखिया । कांसी पितलके होय मट्टीके देखिया॥सब माहीं आकाश एकही जानिया । यौं घट घटमें ब्रह्म सकल पहिचानिया ॥ थिर चरहीके माहिं अस्थावर जंगमें।न्यारा अरु सब बीज भली विधि रंगमें ॥ जो बर्तन गयो फूटि रहो आकाशहू । ऐसेहि काया विनशि रहै नित ब्रह्मजू॥ नित्य अनित्य विचार तभी निश्चय भई। पायो आत्मज्ञान सभी दुबिधा गई ॥ ना काहूसे वैर नाहिं काहूसे प्रीति है। नाकाहू दुख देहुँ नहीं सुख रीति है ॥ काहूसे नहिं डरूं न काहु सँग

लगूँ। काहूकी शरण न जावँ न काहूसे भगूं ॥ कहै श्रीशुकदेव विवेक विचारसों। दत्तात्रेयी कह्यो असे यदुराजसों॥ यह शिक्षा आकाशसों लीन्ही जानिकै।चरणहिदासभयो यही मत मानिकै॥

नीर ४

दोहा—चौथे गुरु किय नीरही, जाको सुनिय प्रसंग।
आप सदा उज्ज्वल रहै, मिलि जावैं सब रंग ॥१५॥

अष्टपदी—जल ज्यों निर्मल होय सदा बिरकत वही। तजै न शीतल अंग वसै नितही मही ॥ गृही संग जो चलै बाट कबहूं कहीं। मनसों न्यारा रहै लेप लागै नहीं॥ ऐसो रखै विचार जैसे वरषा समैं।जल मैला ह्वै जाय खेह सँगही रमैं॥ संगति गुणसों होय जु गँदला आपही। जाडेमें ह्वै शुद्ध लगै नहिं पापही॥ समझो यों चितमाहिं संगको गुण यहै। निर्म्मल नीर स्वभाव सदा उज्ज्वल रहै॥ संसारीके संगसों जब मन फिरगयो। तब नारायण रूप ध्यान आनँद लयो॥ कछू मैल मन माहिं कबहुँ व्यापै नहीं। जल अरु साधू भाँति एक जानौ तहीं ॥ जो कुचील कछु होय सो जलसों धोइये। वाको कीजे शुद्ध मैल सब खोइये॥ साधू ऐसा होय ज्ञान मुख उच्चरे। श्रोताके सब पाप ताप व्याधा हरे॥ तातेही उपदेश भक्तिका कीजिये। नीच ऊंच मत देख वृक्ष ज्यों सींचिये॥मीठे शीतलनीरको यह गुण लीजिये। मीठा सबसों बोलि परमसुख दीजिये॥ गुरु शुकदेव प्रतापसों जल गुण गाइया। चरणहिं दास होय न मनता आइया॥

अग्नि ५

दोहा—पंचम गुरु कियो अग्निको, समुझि निहारि निहारि।
उत्तम मध्यम जार दे, राखै कछु न विचारि ॥१६॥

अष्टपदी-ब्रह्मणहूं करै होम शूद्र जापै करै। दोऊ करै पवित्र युगलके अघ हरै॥ ऐसे साधूलोक जहां भोजन करैं। वाको पावन करैं पाप सबहीं हरैं॥ गृही जु सेवा करै आश ऐसी धरै। विरकत भोजन किये पाप निश्चय जरै। धान्य हमारो खाय जु साधूजन कभी। हमरे प्राछत जाहिऔर व्याधा सभी॥ साधूजन जो होय अग्निके भांतिही। सकल पाप करै छार जु वाकी कांतिही॥ सदा गुप्तही रहै प्रगट किये होत है। ऐसो साधू भेद छिपावे जोत है॥

चन्द्रमा ६

छठवाँ गुरू कियो चन्द सदा इक सम बहै। काला घटै अरु बढै मावस लग ना रहै। पूनोंको सब होहिं कला भरपूरही। चांदनि सब जगमाहिं विराजत नूरही॥ शशि मण्डल इक भाँति रहै नाहीं घटै। योंहीं आतमरूप चरणदासा रटै॥

दोहा-उतपति परलय देहको, घटै बढै दुख होय।
आतम इक रस जानिये, अविनाशी है सोय॥ १७॥

अष्टपदी-ताते कियो विचार यह काया ना रहै। जन्म मरण नहिं होय कलाके ज्यों यहै॥ परमातम इक भाँति सदाही जानिये। घटै बढै वह नाहिं यों मनमें आनिये॥ काया छोटी होय बडी पुनि होत है। कबहूं हो मन मगन कभूं रोवै वहै॥ आतमहीं नित जानि जु कायामें रहै। वही सदा इक भाँति कोई ज्ञानी लहै॥ ताते श्रीभगवानको सबठां पेखिकै। मन माहीं वैराग फिरताहू देखिकै॥

सूर्य ७

सतवें गुरू किया सूरजु शिक्षा दो लई। आठ महीने किरणि नीर सोखत वही॥ चार मास वह आप फेरि वरषा करै। वा जलको कछु मोह नहीं मनमें धरै॥ ऐसे साधु होय जु कछु

कोई देत है। वाको आछी भाँति सोई वह लेत है ॥ मोह न कबहूं करै जु कोई कछु चहै । चरणहिं दासा जानि सोई यह गति लहै ॥

दोहा-लेते कछु हरषै नहीं, देते दुख नहिं होय ।
ऐसे निर्लोभी रहै, चरणदास है सोय ॥ १८ ॥

अष्टपदी-दूजे जो प्रतिबिम्ब सूरको देखिये । जल भांडोंके माहिं सबन अवरेखिये ॥ खोजिकै देखो वाहि सूर तौ एक है। घटघटमें प्रतिबिम्ब विचारि अनेक हैं ॥ ना काहूसे बैर प्रीतिहू ना करै । सूरज एक निहारि सकल घट छबि धरै॥ऐसेही निर्मोह सदा निर्लेप है। वाको साधू जान सो ऐसी विधि रहै ॥

कपोत ८

अठवें कियो कपोत गुरू मैं विचारिकै । निर्मोहित मन भयो तभी जु निहारिकै ॥ उठी एक मनमाहिं नारि सुत कीजिये । जगमें ह्वै निश्चिन्त बहुत सुख लीजिये ॥ सहज बागके माहिं जाय ठाढो भयो । द्रुमपै एक कपोत कपोतिनिको लह्यो ॥ ता ऊपर उन गेह आपनो साजिया । प्रीति सुख मानि सकल दुख भाजिया ॥

दोहा-करि विचार मनमें धरी, धन्य भाग सुख होय ।
हम समान या जगतमें, और न दीखै कोय ॥१९॥

अष्टपदी-भयो कपोतिनी गर्भ अण्ड द्वै वा दिये । प्रीतिसों सेवन किये फूटि द्वै सुत भये ॥ केतिक दिवसन माहिं पंख निकसे सभी । उडिकै बैठन लगे डार ऊपर तभी ॥ निरखत बहु सुख मानि कपोत कपोतिनी । हमरे अति बडभाग दियो यह सुख धनी ॥ एक रहे घरमाहिं जु रक्षा धारने । दूजे बनमें जाय जीविका कारने ॥ वनसे चूगा लाय बचन-मुख डारई।

वाते उनकी क्षुधा सकल निरवारई ॥ जन्म सुफल मन जानि रैन दिन यों रहै ।वसुधामें कछु शोच न हियमाहीं लहै ॥ इक दिन कह्यो कपोत कपोतिनि साथही । ये बच्चा अब बडे भये सब गातही ॥ एतौ रहैं गृहमाहिं दोऊ हम वन चलैं । चूगा लावैं बहुत करैं भोजन भलैं ॥ ह्वै करि निस्संदेह दोऊ वनको चले । कहैं चरणहीं दास चुगन लागे भले ॥

दोहा-पाछे वधिक जु आइया, दीनो जाल बिछाय ।
पकरनकी मनमें करी, बैठ्यो घात लगाय ॥ २० ॥

अष्टपदी-दोऊ गे वनमाहिं वधिक इक आइया । उन बच्चनको देखिकै जाल बिछाइया ॥ तापर किणका डारि आप छिपि रह्यो । बच्चन चूगा देखि भेद कछु ना लह्यो ॥ यह कण कारण मात पिता वनको रमैं । सो पायो यहि ठौर चुगैं क्यों ना हमैं॥दोऊ उतरे तहां जबै मुख डारिया । तब वहि वधिकने जाल फंदको मारिया॥आय कपोतिनी जबै शब्द नाहीं सुनौ । घरमें पाये नाहिं शीश तबहीं धुनौ ॥ बच्चन कारण शब्द कियो हंकारिकै । बोले पिंजर माहिं जु वचन निहारि के ॥ देखि कपोतिनि जालमें यह मन आनियां । अपना जीवन अफल जगतमें जानियां ॥ तनमें अति दुख पाय कल्पना बहु करी । कहैं चरणहीं दास बुरी आशा धरी ॥

दोहा-जाल माहिं मोसुत फँसे, जाय परौं वा ठौर ।
विकल होय चाली तबै,कियो विचार न और॥२१॥

अष्टपदी-मोह फंदवश होय जालमाहीं परी । वाहूको गहि बधिक पिंजर माहीं धरी॥आयो बहुरि कपोत लख्यो सुत बालहू। इन बिन कैसे जिऊं मरौं बेहालहू ॥ परो जालके माहिं बहुत दुख मानिकै।चारौ गहिले चलो वधिक सुख जानिकै॥राजा मो

मन हुती जु सत दारा कहूं। निरखि लई यह सीख बहुरि नहिं चित धरूं॥ वाको कीन्हो गुरू यह कौतुक देखिकै। हरि सुमिरणमें पगो रहूं जु विशेषिकै॥ मोह महा दुखरूप सकल बिसराइया। लिये रहूं वैराग परमसुख पाइया॥ सदा रहूं निर्बंध द्वन्द्व सब भाजिया। चरणकमलको ध्यान हियेमें साजिया॥ तहां वसों निशि भोर अंत नाहीं वहूं। चरणहिं दासा होयकै निजआनंद लहूं॥

अजगर ९

दोहा–नववाँ गुरु अजगर कियो, लियो परम संतोष।
पराब्ध दृढ करि गही, रहा राग नहिं शेष॥२२॥

अष्टपदी–जिहि करण गुरु कियो कहूं कारण सभी। जासों रहौं दृढ बैठि आयो धीरज तभी॥ आगे भिक्षा काज ध्यान तजि डोलतो। कोऊ देतो भीख कोऊ दुर्बोलतो॥ जो कोउ भोजन दियो मगन होतो तहां। जो कोऊ नाहीं दियो क्रोध करतो तहां॥ अजगर इक दिन लखो जहां उतपति भयो। निशिदिन ह्वांई रह्यो कहूं नाहीं गयो॥ आय अचानक मृगा सिंह वा मुख धँसैं। चौपाये यों आय तासु मुखमें फँसैं॥ जो वह जागत होय उन्हैं मुखसों गहै। तिनको भोजन करै उदर योंही भरै॥ पराब्ध जो होय सोई ह्वां आरहै। परो रहै वहि ठौर सभी दुख सुख सहै॥ वाकी लीनी रहनि बहुत सुख पाइया। चरणहिं दासा होय अधीर गवाँइया॥

दोहा–जबसों पर आशा तजी, गृहीद्वार नहिं जाँव।
लगो रहौं हरि ध्यानमें, सहज मिलैं सो खाँव॥२३॥

अष्टपदी–मन राखो प्रभु ध्यान सदा आनँदमें। ज्ञान दिशा अब भई रहो नहिं द्वन्द्वमें॥ याचक घर घर फिरै न भिक्षा पावई। साधनको मनमाहिं भोजन हरि ख्वावई॥ जब भई ऐसी समझ

निचल बुधि आइया। जहँलग जिह्वा स्वाद सभी जु गँवाइया॥ स्वादी अरु बिन स्वाद जो भोजन आवई। सबही करूं अंगीकार सुरुचिसों पावई ॥ सूखो गीलो होय ज भूनो हो कछू । ताको फेरो नाहिं सभी लेकर भछूं ॥ जो कछु आवै नहिं ह्वांई बैठो रहूं । परालब्धही जानि बुरो भलो ना गिनूं ॥ सकल विकल नहिं होय न आशा अछु कही। नारायणके ध्यान रहूं लागो वही ॥ अजगर कीसी वृत्ति निरी मेरी रही। चरणहि दासा होय भक्ति दृढ करि गही ॥

सिंधु १०

दोहा-दशवें गुरु कियो सिंधुको, कहुँ सोई परसंग ।
लीन्हे समझ विचारिकै, जाके तीनौ अंग ॥ २४ ॥

अष्टपदी-खारी नीर स्वभाव सदा इक रस वही । मीठी सरिता बहुत चली आवैं बही ॥ मिलि नहिं फिरै स्वभाव तासुको जानिये । ऐसे विरकत रहै जगतमें मानिये॥ बहुतै होय गँभीर थाह नहिं पावई। ऐसा साधू जानि राम मन भावई॥ वर्षाऋतुकी नदी मिलैं बहु वादसों । घटै बढै वह नाहिं रहै मर्यादसों ॥

पतंग ११

एकादश जो पतंग कहूं मैं सुनायकै। देखि दीपकी ज्योति गिरो है आयकै ॥ दीन्हों आप जराय हाथ कछुना लगो । समुझि कामिनी रूप सो मैं दूरी भगो॥ ज्ञान जाय अरु नरक परै इस रीतिसों । सुन्दर रूप निहारि करो मत प्रीतिसों ॥

भँवरा १२

दोहा--फूल फूल पर बैठिकै, उदर भरै तिस नाल ।
सो भँवरा गुरु बारवां, लई जु वाकी चाल ॥२५॥

अष्टपदी—भिक्षा कारण मांगन घरघर जात हो। कोऊ देतो आनि कोऊ जु रिसात हो ॥ ताते भिक्षा भवँर कि यह उरमें लही। सूक्षम सबहीं पुष्पसों उन रसना गही ॥ तब मैं कियो विचार इकट्ठो लेनते। देनहारको दुःख बहुतही देनते ॥ नेक नेकही लेहु बहुत घर जायकै। उदर पूरणा करूं जु आनँद पायकै ॥ जितना होय अहार सोई अब लेतहौं। बासी नेक न राखि न काहू देतहौं॥ अलिसुतकी यह रीति भूख भरि खावई। और दिनाके काज न नेक बचावई ॥ फूलनको रस चाटि नहीं उनसों बँधै। ऐसे विरकत रूप जगतमें ना फँधै॥ चरणहिं दासा होय त्याग मन राखई। राजासों इहि भांति ऋषीश्वर भाखई॥

मधुमक्खी १३

दोहा—देखि दशा माखीनकी, तजो सकल संग्रेह।
मिटि दुविधा निर्भय हुये, भई सुखारी देह ॥२६॥

अष्टपदी—सेरहूं शहतकी माखी ताहि पिछानियाँ। सब वृक्ष-नको मीठो इकठाँ आनियाँ ॥ जब छत्ता भयो पूर किसीने तोरिया। सब रस लीन्हों काढिकै वाहि मरोरिया॥ बहुत भयो उन कष्ट जु वै भागी फिरीं। बहुत मरीं वहि ठावँ बहुत सिसकैं गिरीं ॥ ताते माखी गुरू हिये माहीं धरो। कोउ जक्तकी वस्तुको संग्रह ना करो ॥

हाथी १४

चौदहवें हाथी जानि कामवश होयकै। आपा आप बँधाय जन्म दियो खोयकै ॥ इक गज मातो हुतो जंगलके बीचही। अति बलवंत विशेषि कोऊ वा सम नहीं ॥ वा ढिग हस्ती और कोइ नहिं जात हौ॥ मानुष पशु जिया योनि कहूं कह बातहौ॥ वाकी आई बात जु राजापै चली। इक कुंजर वनमाहिं रहत है

अति बली ॥ भूपति आज्ञा दई पकरि वा लीजिये । जामें आवै हाथ यतन सोइ कीजिये ॥

दोहा–पीलवान आज्ञा लई, खोदी खंदक जाय ।
चरणदास तहँ छल कियो, दीन्हों घास बिछाय॥२७॥

अष्टपदी–भगलकी हथिनि बनाय सवाँरी बुद्धिसों । खंदक ऊपर धरी खडी करि शुद्धिसों ॥ जल पीवनके काज जु हस्ती आइया । वा हथिनिको देखिकै अधिक लोभाइया ॥ जब हथिनीकी ओर चलौ मतिहीन ही । सपरस इच्छा धारि परो खंदक मही ॥ निकसन कैसे होय बहुत लंघन करे।अति दुर्बल तन भयो पराक्रम सब हरे ॥ तब वापर चढि बैठ महावत आयकै । बाहर लायो काढि जु ताहि सधायकै ॥ फिरि राजाके पास खडो कियो लायकै । अंकुश शिरके माहिं जु बेडी पायकै ॥ शीशधुनै पछिताय वै आनँद कित गये । जो सुख वनके माहिं सभी स्वपना भये॥ सदा हुतो निर्बंध आय बंधन बंधो । कहै चरणही दास काम फंदन फँधो ॥

दोहा–सपरसकी इच्छा किये, भया जु ऐसा हाल ।
पशु पक्षी नर नारिही, फँसे कामके जाल ॥ २८ ॥

अष्टपदी–भाषत दत्तात्रेय जु साधूजन कभी । कामिनी ओर निहारि करै सपरस तभी ॥ हस्तीकेसो हाल साधुको होय है। सुमिरण ज्ञान रु ध्यान जु सबही खोय है । जो कहै हम हैं साधु कोइ भार्य्या कहा । चूमैं हमरे चरण तासु होय है कहा॥चरणन चूमैं आय हाथ धरि पायपै । साधू मन चलि जाय स्पर्श सुख पायकै॥ वाको सुख उर धारि करैं इक कामिनी । वाते पुत्र कलत्र बहुतही यामिनी। वनमें तप अरु योग जु करतो निशि दिना । सो सबही गो भूलि नहीं सुख इक क्षना॥ ताते हस्ती गुरु हियेमें

धारिया। कामिनिको परसंग सकल निर्वारिया॥काठकी पुतली होयकै कागजमें रची। चरणहिं दासा होय सोभी देखन तजी॥

मृग १५

दोहा-पन्द्रहवाँ गुरु मृग कियो,ताकी गति सुनि लेहु।
औगुणहींको छोडि करि; गुणहींमें चित देहु ॥२९॥

अष्टपदी-मृग देखो वनमाहिं ताकी मति आनियां। जीव दियो वहि ठौर सोई हम जानियां॥ वधिक बजाई बीण राग गावन लगो। सरवण सुनि वह हिरण रीझि आयो भगो॥ पहुँचो पारधि पास बाण उन मारिया। ता दिन रागको चाव सकल निर्वारिया॥ जो विरक्त सुनै राग जु रस शृंगारको। ऐसेहि होवै ख्वार नरकमें जाय सो॥ सुनिये गुण गोपाल चरित कर्तारको। जासों दुख छुटि जाय ये माया जारको॥ तासों उपजै ज्ञान ध्यान दृढ करि गहै। पावै पद निर्वाण जहां सुखसों रहै॥निश्चयही तू जान जु मैंने यह कही। चंचलता गइ छूटि जु बुधि निश्चल भई॥ ना नारी री राग नाच बिसराइया। चरणहिं दासा होय चरण चित लाइया॥

मछली १६

दोहा-कहूं सोलवीं मीनकी, बुरी जीभकी स्वाद।
जो कोई यामें फँसे, लगै बहुत उठि व्याध ॥३०॥

अष्टपदी-सोलहों गुरु सुन मीन जो ऐसे देखिया। वा मच्छीको एक वधिक अवरेखिया॥थोरो मांस लगाय जु बंशी साथही। जलमें दी छुटकाय डोर गहि हाथही॥ जिह्वा स्वादके काज मीन वह खाइया। गई उदरके माहिं हिये अटकाइया॥तीक्षण कांटा लोह हियेको फारिया॥ताही क्षण वह मीन प्राण तजि डारिया॥ ताते मच्छीगुरु हिये माहीं करो। जिह्वाको कछु स्वाद नहीं

मनमें धरो॥ जो विरक्तको स्वाद जीभको चाहिये। बहुत भाँति दुख होय नहीं सुख पाइये॥ जिह्वा स्वादके काज गृही घर जाय है। आछो भोजन पाय तौ रुचिसों खाय है ॥ भोंडी भोजन होय तौ नाक चढावई। हरि सुमिरणको त्यागिकै जित तित जावई॥ ताते साधूलोग नहीं घर घर फिरैं। जिह्वाको कछु स्वाद नहीं चितमें धरैं॥ऐसो भोजन खाय लखै ज्यों औषधी।सबही रोग नशाहिं रहै काया शुधी॥चीकन भोजन खाय नींद बहु आवई। ध्यान भजनकी रीति सकल बिसरावई ॥ सब इन्द्रिनके माहिं जो जिह्वा वश करै। जो आवै सोई खाय कभूं भूखो रहै॥जो जिह्वा वश होय तो इन्द्री वश सबै। जो रसना वश नाहिं तौ सब परबल तबै॥ चीकन भोजन खाय तौ इन्द्री सब जहां। अतिही ह्वै बलवन्त करैं औगुण तहां॥षटरसहीके स्वादसो नारी वश भये। जगमाहीं दुख पाय मुये नरकै गये॥ मनमें देखि विचारि गुरू कियो मीनहूं। जासों लीनी साख इन्द्री भई क्षीनहूँ॥ सबही स्वाद भुलाय शरण हरिकी लई। चरणहि दासा होय सुरति निर्मल भई॥

पिंगला १७

दोहा-सत्रहवाँ गुरु पिंगला, लीन्हों जासों ज्ञान।
आशा तजि निर्मल भयो, लगो रहू हरिध्यान॥३१॥

अष्टपदी-गुरु सत्रहवाँ जान हमारो पिंगला। पर आशा दइ छाँडि रहूं आनँद मिला॥इक दिन राजा जनक विदेहीके नगर। गया अचानक लखो पिंगलाको बगर। पिंगला उठि परभात यथाविधि न्हाइया। भूषण वस्तर पहिरि सुगन्ध लगाइया॥ घरके द्वारे बैठि जु बाट निहारई। कोऊ दे बहु द्रव्य सु ह्यां पग धारई॥ मारगमें नर देखि यही आशा करै। आवत जानै

ताहि खुशी हियमें धरै ॥ जब वह आयो नाहिं दुखी मनमें भई। कबहूं आश निराश ऐसही निशि अई ॥ ऐसे सब दिन बीति गयो यहि भाँतिही। मनमें भई मलीन आइ पुनि रातिही ॥ काया आलस धारि जु घर भीतर गई। पलँगा बैठी जाय जहां भलि सेजही॥बिछे बिछौना श्वेत फूल तापर धरे। लेटी तहँ मग जोय नैन निद्रा भरे ॥ कबहूं उठि जा द्वार कभूं जा भीतरै। कहै चरणहीं दास नींद नाहीं परै ॥

दोहा-आशाकी डोरी बँधी, क्षण घरमें क्षण द्वार।
थिरता ना संतोष बिन, दुखी पिंगला नार ॥३२॥

अष्टपदी--ऐसे आधीरात गई जब बीतिकै। कोऊ आया नाहिं सु ह्वां कछु प्रीति कै ॥ पिंगला उपजो ज्ञान हिये परकाशही। उदय भयो संतोष लोभ गयो नाशही ॥ वर्ष सहस दश माहिं जु तप कोऊ करै। हिरदै निर्मल होय सभी कलिमल हरै ॥ ऐसो ज्ञान उजास पिंगलाको भयो। तब उन हिरदै माहिं वचन ऐसो कह्यो ॥ हीन हमारे भाग जन्म योंही गयो। मनुष रूपसों काम क्रोध लोभै छयो ॥ ताते जिविका आश हियेमें चाहिया। परमातम भगवानसों प्रीति न लाइया ॥ सदा विराजत निकट दूरि नहिं होत है। सब विधि पूरण काम सकल जग ज्योति है ॥ सबहीको नित देत खान अरु पानई। चरणहिं दासा होय सोई यह जानई ॥

दोहा--लख चौरासी योनिमें, सबको भोजन देय।
सदा वही पालन करै, अपनो नाम न लेय ॥३३॥

अष्टपदी मनुषरूप जो देय एक दिन खानको। दूजे दिन वह बहुत घटावै मानको ॥ नारायणसों भक्ति जो जगको

सुख चहै। ऐसे वाको देय सदा इक रस रहै॥ जाके लीन्हे नाम सकल पातक नशैं। कथा जु उनकी सुनै हिये आनँद लशैं॥ ऐसो हरि बिसराय मनुषको चाहिया। विरथा जन्म गवाँयकै सुख नहिं पाइया॥ काया है इक गेह हाड अरु माँसको। नाडी गुणसों बांधि रखो है तासको॥ चाम रु लोहू पीव तहां नव द्वार हैं। सदा बहतही रहत यही जु विचार है॥ विष्ठा मूत जो होय या गेहके माहिंहीं। ऐसे घरसों भोग मुदित मन चाहहीं॥ ऐसे विरथा आयु सकल जु गवाँइया। हरिके चरणनदास नहीं जु कहाइया॥

दोहा--अब उरमें ऐसी उठी, करूं भक्ति चित लाय।
चरणकमलमें मन धरूं, जासों नेह उठाय॥३४॥

अष्टपदी--अब करूं भक्ति उपाय जु हरि मन भाइया। ताते लेहुं रिझाय परमगुण गाइया॥ जैसे लक्ष्मी सेव करी मन लायकै। कीन्हे महा परसन्न सिरीपति धायकै॥ ऐसे मन भगवानसों अपनो लायहौं। पावैं पुरुष निधान प्रीतिकै भायहौं॥ लक्ष्मी करी जु भक्ति पुराणनमें कहैं। नारायण दई ठौर सदा हियमें रहैं। मैंहूं ऐसी भक्ति करूं अति प्रेमसों। करूं महापरसन्न अधिकही नेमसों॥ आजके दिनसे आश मनुषकी त्यागिकै। राखुं प्रभुकी आश चरणहीं लागिकै॥ जो कछु हरि मोहिं देयँ सोइ निर्दोष है। करूं भजन भगवन्त तासुसो मोष है॥ मनुषरूप कहा वस्तु जु आशा कीजिये। बहुत वहाँलौं देत जहांलौं लीजिये॥

दोहा--दुखमें काम न आवई, मुये न संगी कोय।
चरणदास यों कहत हैं, ये संसारी लोय॥३५॥

अष्टपदी--जब वह मृत्यक होय नहीं कछु हेत है। हरि जु सदाही संग सभी सुधि लेत है॥ मनुष आपनी नाहिं जु इच्छा

करिसकै। औरनको कह देय मूर्ख योंही तकै॥ पगला कहो यह ज्ञान मुझे क्यों आइया। नीके काजन माहिं न चित्त लगाइया॥ तीरथ वर्त्त न साधू दर्शन देखिया। हौं तिरिया बुरे कर्मकि चाल विशेपिया॥ परमेश्वरकी दयासों यह पहिंचानिये। और बात कछु नाहिं हियेमें आनिये॥ जो कोइ कहै आज कछू धन ना लयो। कोई आयो नाहिं ज्ञान ताते भयो॥ आगेहू बहु दिवस कोई नहिं आइया। कीन्हें लंघन बहुत द्रव्य नहिं पाइया॥ ज्ञान कबौं नहिं भयो आज जानत नहीं। कौन भाग बड मोर भयो परगट नहीं॥ कहैं गुरू शुकदेव जु उन नहिं जानिया। दत्तात्रेयके दर्शसों कुमति भुलानिया॥

दोहा-पिंगला आई घर विषे, छोंडि मनुषकी आश।
सुखी होय सोवन लगी, जब वह भई निराश॥३६॥

अष्टपदी-मनमें किय सन्तोष सकल दुख मिटि गये। छोडी जगकी आश हिये आनँद छुये॥ यों कहैं दत्तात्रेय राजासों यही। वाकी मैं लइ सीख सोई दृढ करि गही॥ गृही द्वार नहिं जाँव न माँगौं कछु कहूं। ताते सुखि रु शान्त सदा बैठो रहूं॥ उद्यम करूं कछु नहिं वासना त्यागिकै। आनँद तन मन मोहिं बहुत अनुरागिकै॥ मनुष दुखी वह होय रहै आशा लिये। काम क्रोध अरु लोभ मोह उतपति किये॥ जो आशा मन आय कबौं वह ना भई। क्रोध भयो उत्पति यही मनसा ठई॥ काहूते इक वस्तु कछू जु मँगाइया। वाने दीन्हीं नाहिं क्रोध उपजाइया॥ वाते कीन्हों वैर अधिक रिस ठानिया। नारायणके ध्यान सुरति नहिं आनिया॥ यह शिक्षा लइ मानि पिंगलासे तभी। जगकी छोडी आश भये कारज सभी॥

चील्ह १८

दोहा-चील्ह अठारहों गुरु कियो, मिटो सकल सन्देह ।
रही अकेलो संग तजि, करो न कछु संग्रह ॥३७॥

अष्टपदी-जब गृहसेती निकसि वैरागी हम भये । तब हमरे मनमाहिं जु ये कारज छये ॥ दो भाजन सँग होहिं एक जल पीजिये । दूजे भाजन माहिं खानको लीजिये ॥ इक चादर कौपीन दोय हू चाहिये। ताते ओढि नहानकी युक्ति बनाइये॥ करिकै जब अस्नान ध्यान करने लगो । मनमें चित्यो कोऊ कौपीनहि लै भगो ॥ समझो यह मनमाहिं बहुत अधिकारते। अन्त महादुख होय मोह उरधारते ॥ ऊंची पदवी पाय बहुरि नीचे परै। जब वह संथुत जाय घनो मनमें झुरै ॥ जो कोइ रहै इकन्त अकेलोई सहै । ताहि उदरको शोच कछू नाहीं रहै। दशविश सौ जो साथ अधिक दुख लहत है। आप अकेलो रहै परमदुख सहत है ॥ सकल विकल विसराय जु आनँद पावई। चरणहि दासा होयकै बोझ बगावई ॥

दोहा-उडती देखी चील्हको, पंजे माहीं मांस ।
बहु पक्षी घेरे फिरैं, लेन न देवैं श्वास ॥ ३८ ॥

अष्टपदी-पक्षी सभी लोभाहिं मांसको देखिकै । वाको मारैं चोंच जु लोभ विशेषिकै॥ कोई नोचै पंख कोइ मस्तक भनै। वह दुख पावै बहुत समझि मूँडी धुनै॥ मैं काहूसे वैर प्रीति नहिं मानिया॥ या भक्षणके काज कष्टही जानिया ॥ मांस दियो छिटकाय जुदो पक्षी भये । वा भक्षणके पास सभी दौरे गये॥ वह बैठी मन मुदित जु पंख पसारिकै। दीन्ह्यो दुख बिसराय व्याधा टारिकै ॥ वा दिनते लइ सीख जु संग्रह ना करौं। कछु ना राखौं पास नग्न तन मैं फिरौं॥ जहँ चाहूँ तहँ जाँव भजन

आनन्दमें । कछु मन चिंता नाहिं छुटो मन बन्धते ॥ काहू वस्तु न शोच कोई लै जायगो॥चरणहिं दासा होय ध्यान हरि पायगो॥

बालक १९

दोहा-बाल गुरु उन्नीसवों, ताके लिये स्वभाव ।
नहीं मान अपमान है, लोभ न कछू उपाव ॥३९॥

अष्टपदी-बालक माहीं नहीं मान अपमानहूं। लोभ जु वामें नाहीं रहै अजानहूं ॥ मारै कोई वाहि रोष वह ना करै । करै जु फिरि वह प्यार बाल हँसि हँसि परै॥ निन्दा अस्तुति दोय कभी नहिं धारही । वैर प्रीतिको अंग कछू न विचारही ॥ जो मणि बहुते मोलकीवासे लीजिये।खेल खिलौना फूलको पलटैदीजिये॥ मणिको लोभ न करत कछू नहिं भापई। चितको अपने खेलके माहीं राखई ॥ जो कोउ नारी पकरि हिये सो लागई । बालक अरु वा नारिको काम न जागई। नगन जु बालक फिरत लाज नहिं आवई॥ ज्यों भावै त्यों रहै कोइ न चलावई। क्रिया कर्म अरु सकुच कछू वाके नहीं।ठाकुर अरु चरणदास कछू जानै नहीं॥

दोहा--बोले दत्तात्रेयजी, राजासो यह बैन ।
इक दिन बालककी सबै, देखी अपने नैन ॥ ४० ॥

अष्टपदी--भाषैं दत्तात्रेय बालगति देखिकै। वाकेलिये स्वभाव समी जु विशेषिकै॥ जो कहुँ हमसों प्रीति बहुत आदर कियो। काहू गारी काढि बहुत झिडको दियो ॥ दोनों एक समान और नहिं व्यापई। बैठूं सहज स्वभाव उठूं फिर आपई॥ जो कीन्हो भोजन दियो चाटि ह्वांई लियो। करहीको कर पत्र जहाँ पानी पियो ॥ अष्टधातुको लोभ त्यागि सबही कियो । कैसोहि बस्तर देहु छांडि तितही दियो ॥ ज्यों बालक निज खेलमें आनन्दसों रहै। त्यों परमातम संग कछू दुखहू न है ।

तुरिया पद निर्वाण मातु समही कहूं। ताकी गोदी माहिं सदा सुखसों रहूं ॥ चरणहिं दासा होयकै गर्व नशाइया। छोटापनके अंग सबै तबै आइया ॥

कन्या २०

दोहा--कन्या गुरु कियो बीसवाँ, समुझि विचारिकै देखि।
रहौं अकेलो तभीसों, पायों यही विवेक ॥ ४१ ॥

अष्टपदी--पुण्य तू बिसवो जान गुरु कन्या कियो। वाको मत अनुराग हिये माहीं लियो ॥ इक नगरीके माहिं एक दिन हम गये। इक ग्रहचारीके गेह जाय ठाढे भये ॥ स्यानी कन्या तासु जु घरमाहीं हुती। मात पिता कोइ काज गमन कीन्हो तभी ॥ करन सगाई आय लोगबैठे तहीं। या कन्याकी करैं सगाई आजहीं ॥ कन्या कीन्हो शोच यही कैसे कहूं। मात पिता कहिं गये अकेली मैं अहूं ॥ ऐसे मात और पिता चिंता मनमें करैं। भोजनको कछु नाहिं जु हम आगे धरैं ॥ कन्या करिकै शोच ये वचन उचारिया। मात पिता गये न्हान अभी पग धारिया ॥ आवो बैठे खाट रसोई खाइये। भोजन होत सवार कहीं नहिं जाइये ॥ वाके गृह कछु नाहिं धान थोरे हुते। कूटन लागीं ताहि सोई अपने मते ॥ चूरी हाथके माहिं बहुत करकन लगी। फिरि समझी मन माहिं शोच माहीं पगी॥यों समझै ये लोग कछू गृहमें नहीं। भोजन कारन धान जु कूटति है तहीं ॥ चूरी डारी फोरि दोय तहँ राखिया। तऊ न खरको गयो शब्दही भाषिया ॥ दूजी दइ बिगसाय एकही रहगई। तब खरका नहिं होय कुटत निर्भय भई ॥ वादिन कन्या गुरू जु हमने चित धरा। साधु अकेलो रहै सदा आनँद भरा ॥ धर्म-शालाते निकसि शिष्यको साथलै॥ कबहूं उपजै क्रोध शिष्य

भाषै यहै॥आप नहीं लियो बहुत हमैं थोरो दियो। गुरुको चहिये टहल शिष्य रूठै गयो ॥ गुरु कहै कछू और शिष्य औरै कहै। झगडैं आपस माहिं प्रीति थिर ना रहै ॥ दोउमें कलकल होय शान्ति नहिं आवई। बिना अकेले रहे चैन नहिं पावई ॥ पशुपक्षी नर नारि संग नहिं लीजिये। दूजे- हीको साथ सभी तजि दीजिये ॥ छूटै सकल कलेश ध्यान लागै भलो। चरणहिं दासा होय रहै हरिसों मिलो ॥

तीर बनानेवाला २१

दोहा—गुरु कीन्हों इक्कीसवों, ताहि तीरगर जान।
चरणदास यों कहत हैं, वासों सीखो ध्यान ॥४२॥

अष्टपदी—पुनि इकीसवों गुरू तीरगर हम कियो। ताते ध्यानको भेद सीख हियमें लियो॥इक दिन नगरी माहिं तीरगर हाटमें।ठाढो भयो तहँ चलतही बाटमें ॥ वह तौ बनावत तीर आपनी जानमें । और कछू सुधि नाहिं पगो वा ध्यानमें॥ वाके आगे होय भूप इक आइया ।हस्ती अरु दल साज निशान बजाइया॥ भयो मुहूरत एक मनुष तहँ आइकै ।भूप गयो इस राह बुझो जु सुनायकै॥वह तौ साजत तीर यही उत्तर दियो। हम तौ जानत नाहिं नहीं दर्शन कियो॥भाषत दत्तात्रेय जु हम वासों कह्यो।राजा सँग बहु भीर शब्द दुन्दुभि भयो॥बहुत कटक लिये साथ जु भूप सिधारिया। तैं काहे नहिं सुनो न दृष्टि निहारिया ॥उन यों उत्तर दियो तीरके ध्यानहीं । सुरति रही तेहि माहिं याते नहिं जानहीं ॥ वाको कीन्हो गुरू हियेमें धारिकै। मन हरि चरणन पास रखूं निर्धारिकै। दृष्टि मना अरु बुद्धि जहां जु लगाइया।ऐसो कहिये ध्यान विरले कहुँ पाइया॥

दोहा--ध्यान करै दृग मूँदि करि, जो कोई नर नार ।
खटका सुनि पलकैं खुलैं, मन चल बारंबार ॥४३॥

अष्टपदी--वह नहिं कहियत ध्यान जो खुलि जात जातहै । निश्चल लागै ध्यान जु पूरी बात है॥ध्याता ध्यानके बीच ध्यान ध्येय माहिं है। तीनों एकहि होहिं विघ्न कछु नाहिं है ॥ मन हरिचरणन पास कायकी सुधि नहीं । भूख प्यास कछु नाहिं ध्यान लागत तहीं॥ मन गयो औरै ठाँव ध्यान जो लाइये। सो वह डिगि डिगि जाय न थिरता पाइये॥जब नारायण साथ मगन मन ह्वैगयो ।सब कारज गयो भूलि कछू सुधि ना रह्यो॥ जैसे भाषत लोय समाधी पुरुषको। दिन बीतैं दस बीस नहीं सुधि बुधि कहूं॥कहिये यही समाधि वासना सब जरैं।कोटिन मध्ये एक ध्यान ऐसो धरैं ॥ सोइ चरणको दास सोई योगी सहै । सोइ साधक सोई सिद्ध जु विस्वे बीस है ॥

दोहा--ध्यानी ध्यान लगायकै, रहै राम लव लाय ।
आपा बिसरै हरि मिलै, बहुरि न उपजै आय॥४४॥

अष्टपदी--तनकी सुधि बिसराय कछू सुधि ना रहै । या विधिसे जो करै ध्यान ताको कहै । हलचल ध्यान जो करै सो हरिसों ना मिलै । अफल ध्यान सोइ होय जो मन क्षण क्षण चलै ॥ तीर बनावनहार गुरू हमने कियो । तातै यह उपदेश हिये माहीं लियो ॥ ऐसे मनको साधि प्रभू चरणन धरै । ह्वांई रहै चितलाय जु इत उत ना फिरै ॥

सांप २२

बाइसवों गुरु सांप हमारो जानिये । तातै लीन्ही सीख यही पहिंचानिये ॥ सदा अकेलो रहै कबौं घर ना करैरैनि जहाँ कहुँहोय वहीं वह बसि रहै ॥वाकी देखि रहनि जु मनमें

लाइया । सदा रहूं निर्बंध न मन्दिर छाइया ॥ उपजौ मोह न लोभ नहीं मन दाग है। चरणहिं दासा भयो द्वेष नहिं राग है॥

दोहा--बँधा जु पानी गांदला, चलता निर्मल होय ।
दोनों रीति विचारिकै, भली होय सो लेय ॥४५॥

मकरी २३

दोहा--तेइसवों मकरी गुरू, उगिलि तार भखि जाय ।
ऐसे जग परकाश करि, प्रभु ले आप लुकाय॥४६॥

अष्टपदी--तेइसवों गुरु जान हमारो माकरी । आपसों काढै तार रहै वामो खरी ॥ फिरि वह तार समेटि लेय उरमें धरै । यों हरि लीला जानिये कौतुकसों करै ॥ वसुधाको उपजाय करै पालन जभी । फिरि सब लेय मिलाय आप माहीं तभी॥जैसे मकरी तारसों जाल बनाइया। फिरि आपन वा बीचमें सहज समाइया ॥ जब चाहै वह जाल उदरमें लै धरै । मक्षी जालमें फँसे सो नाहीं ऊबरै॥भाषै दत्तात्रेय मुक्ति जो चाहिये । हरि उतपति क्षय करनकि शरनमें आइये ॥ जन्म मरण भय मानि भक्तिमें पागिये। जगके जालसे छूटि वेगहि भागिये । लीजे त्यागि वैराग चरणहिं दास हो । हरियश हरिगुण गाय तजो जगवास हो ॥

भृङ्गी २४

दोहा--भृंगी मिलि भृंगी भवै, सुनो हतो यह बैन ।
अब मन आई सांचही, देखा अपने नैन ॥ ४७ ॥

अष्टपदी--चौबीसवों गुरु कियो जु भृंगी जानिकै।वासों निश्चय भई हियेमें आनिकै ॥ सुनी हुती यह बात जु कोई हरि भजै। निशि दिन मन ह्वां लायकै प्रभुसेवा सजै॥सो नारायण रूप आप ह्वै जात है । यामें संशय नाहिं सांच यह बात है॥ मन

ठहरत ना द्वुतीय बात सुहावनी। सेवक जो कोइ होय सो क्यों होवै धनी ॥ भृंगीको हम लखो कीट इक आनिकै। राखो उन गृहमाहिं आपनो जानिकै ॥ आपन बाहर बैठि ताहि सम्मुख कियो। केतक दिवसन माहि वह भृंगी करि लियो ॥ भृंगी रूपको देखिकै भृंगी ह्वै गयो। ताते भृंगी गुरू हमारे मन छयो ॥ जैसे करै कोई ध्यान सो वा सम होत है। नहीं रहै चरणदास रहै ब्रह्मज्योति है ॥

दोहा--चौबीसों पूरे किये, समझि समझि करि देखि।
ह्वै विरक्त जगमें रहूं, लगै न माया रेखि ॥ ४८ ॥
फिरि अपनी काया लखी, रही न जासों प्रीति।
थके जु इन्द्री स्वादही, सहज गई सब रीति ॥४९॥

देह

अष्टपदी--भाषैं दत्तात्रेय गुरू इक देह है। पहिले मोको हौ तो अधिक सनेह है ॥ देखो क्षण क्षण देह क्षीण ह्वै जातही। उठि सुखके काज भला कुछ खातही॥ बहुत चाव करि आप कछू भोजन कियो। दूजे दिन वहि भांति घनोही दुख दियो॥ इक दिन वस्तर विमल बनाये लायकै। फिरि वस्तरके काज फिरूं दुख पायकै ॥ जितनो कियो उपाय काय सुख काजही। कबहू सुख ना भयो फिरत बेलाज ही ॥ इक दिन एक उपाय जु सुखको धारिया। दूजे दिन वही दुःख बहुत विस्तारिया ॥ और लखी इक बात यह काया आपनी। अपनी होवै नाहिं विचारीही घनी ॥ मूरख जानै नाहिं सु याही भेदको। होवै ना चरणदास सहै बहु खेदको ॥

दोहा--बालपने अरु तरुणमें, और बुढापे माहिं।
तीनों पनमें देह यह, कबहुँ आपनी नाहिं ॥ ५० ॥

अष्टपदी–बालकपनमें हाथ बाप अरु मायकै। तरुणापनमें फँसे त्रिया कर जायकै ॥ वृद्ध अवस्था–माहिं पुत्रके हाथही। पुनि जब मृत्यक होय अगिनी जारै तहीं॥जो योहीं रहि जाय पशू आदिक भषैं । देह न अपनी होय जान माहीं लषैं ॥ वा दिनते सुख काज नहीं श्रम धारिया । परालब्ध जो आय उदरमें डारिया॥ कायाते इक काज भलो पुनि होत है ।हरिकी प्रापत होय जु ज्ञान उदोत है ॥ मृत्यू जबहीं होय यह काया ना रहै ।भारेकैसो गेह जीव काया लहै॥ जबहीं आवै काल नहीं ठहरायगो । खर्चैं जो बहु द्रव्यन क्षण रहि जायगो॥ जबहीं समुझो ज्ञान देहको जीयमें। भयो विरक्त विचार आपने हीयमें॥ लई सीख चौबीस देहहितं त्यागिकै। कीन्हों हरिको ध्यान बहुत अनुरागिकै ॥ दत्तात्रेय ये वचन कहे बहु चावसों ।पुनि तीर्थनको गये भक्तिके भावसों॥ राजा सुनि यह ज्ञान हियेमें धारिया। हरिसों सुरति लगाय सकल दुख टारिया॥ चरणहिं दासा होय परम सुखही लियो। तनको जगमें राखि जु मन हरिको दियो ॥।

दोहा–दत्तात्रेयीने कहे, जो राजासे बैन ।
सो मैं भाषामें कियो, समझो पावो चैन ॥ ८१ ॥

अष्टपदी--चौबीसोंके माहिं होय उपदेश दै। सद्गुरु वाहि उबारि किये सब दूरि भै॥उनहींके परताप चौवीसों समझही। आई घटके माहिं जु उज्ज्वल बुद्धिही॥ चौबीसों तन धारि जु अंग बताइया। जासों भयो कल्यान अधिक सुख पाइया॥ ऐसे हैं गुरुदेव ये निश्चय जानिये।सकल विकल सब छोडि गुरूही मानिये ॥ गुरुहीके परसाद मिलें नारायणा । जन्म मरण बँध

छूटि होय पारायणा ॥ समरथ श्रीगुरुदेव शीशपर राखिये। भव सागरकी व्याधि सकलही नाखिये ॥ कहैं मुनी शुकदेव चरणही दासको। वहीं जु पावै चौथे परम निवासको ॥

दोहा--गुरु समान तिहुँ लोकमें, और न दीखै कोय।
नाम लिये पातक नशैं, ध्यान किये हरि होय॥९२॥
गुरुहीके परतापसों, मिटै जगतकी व्याध।
राग द्वेष दुख ना रहै, उपजै प्रेम अगाध ॥ ९३ ॥
गुरुके चरणनमें धरो, चित बुधि मन हंकार।
जब कछु आपा ना रहै, उतरै सबही भार ॥९४॥
मन विरक्तके करनको, कीन्हों गुटकासार।
पढै सुनै चितमें धरै, भवसागर हो पार ॥ ९५ ॥

इति मनविरक्तकरनगुटकासारवर्णन ॥ १४ ॥



श्रीब्रह्मज्ञानसागरप्रारंभ १५

*

दोहा–जैसे है शुकदेवजी, जानत सब संसार ।
भगवत मत परगट कियो, जीव किये बहु पार॥१॥
तिन मोपै किरपा करी, दियो ज्ञान विज्ञान ।
सो शिख तुमसों कहत हौं, छूटै सब अज्ञान ॥२॥
शिष्य सुनो अब कहत हौं, परम पुरातन ज्ञान ।
निगुरेको नहिं दीजिये, ताते तपकी हान ॥ ३ ॥

कुं–मोक्ष मुक्ति तुम चहत हो, तजो कामना काम ।
मनकी इच्छा मेटि करि, भजौ निरंजन नाम ॥
भजौ निरंजन नाम, तत्त्व देह अध्यास मिटावो ॥
पंचनके तजि स्वाद, आपमें आप समावो ॥
जब छूटै झूठी देह, जैसेके तैसे रहिया ॥
चरणदास यह मुक्ति, गुरूने हमसे कहिया ॥

दोहा–देह मरै तू है अमर, पार ब्रह्म है सोय ।
अज्ञानी भकटत फिरै, लखे सो ज्ञानी होय ॥४॥
देह नहीं तू ब्रह्म है, अविनाशी निरवान ।
नित न्यारो तू देहसों, देह कर्म सब जान ॥ ५ ॥
डोलन बोलन सो बनो, भक्षण करण अहार ।
दुख सुख मैथुन रोग सब, गरमी शीत निहार ॥६॥

जाति वरण कुल देहकी, मरति मूरति नाम ।
उपजै विनशै देहसों, पांच तत्त्वको ग्राम ॥७॥

पंचतत्त्व १

दोहा--पावक पानी वायु है, धरती अरु अरु आकाश ।
पंचतत्त्वके कोटमें, आय किया तैं वास ॥ ८ ॥

तीन गुण २

दोहा-पांच पचीसौ देह सँग, गुण तीनों हैं साथ ।
घट उपाधिसों जानिये, करत रहै उत्पात ॥ ९ ॥

तमोगुण

दोहा-तामस अरु हिंसा करै, वचन चलन विपरीति ।
आलस अरु निन्दा करै, तामस गुणकी रीति ॥१०॥
दम्भ कपट छल छिद्र बहु, खोटे सब व्यवहार ।
झूठ वचन ऐंठो रहै, तामसके गुण धार ॥ ११ ॥

रजोगुण

दोहा-मान बडाई नाम ना, सिद्धि चहै भजि राम ।
भोजन नाना स्वादके, राजस गुणके काम ॥ १२ ॥
खेल तमासे राजसी, अरु सुगन्धकी वास ।
आपनको ऊंचो गनै, औरनकी करि हास ॥ १३ ॥

सत्त्व गुण

दोहा-दया क्षमा आधीनता, शीतल हिरदय धाम ।
सत्य वचन गुण सात्त्विकी, भजन धर्म निष्काम १४
दुखी न काहूको करै, दुख सुख निकट न जाय ।
समदृष्टी धीरज सदा, गुण सात्त्विकको पाय ॥१५॥

ग्रहण करनेयोग्य गुण ३

दोहा-राजससों तामस बढै, तामससों बुधि नाश ।
रजगुण तमगुण छाँडिकै, करो सतोगुण बास ॥१६॥

सतगुणमें मन थित करो, करि आतमसों नेह ।
आतम निर्गुण जानिये, गुण इन्द्री सँग देह ॥ १७ ॥
सात्त्विक राजस तामसी, त्रैगुणते संसार ।
तीन पांचको नाश है, माया ब्रह्म विचार ॥ १८ ॥
अहंतत्त्व ओंकार भो, जिनते तीनों देव ।
जिनके परे जु आतमा, अगम अगोचर भेव ॥१९॥
उपजै सो माया सभी, विनशि नेकमें जाय ।
छल माया सो कहत है, सुपना सकल विहाय॥२०॥
निराकार अद्वैत अचल, निरवासी तू जीव ।
निरालम्ब निर्वैर सो, अज अविनाशी सीव ॥२१॥

ज्ञान इंद्री ४

जिह्वा इंद्री नीरकी, नभकी इंद्री कान ।
नासा इंद्री धरणिकी, करि विचार पहिंचान ॥२२॥
त्वचासो इंद्री वायुकी, पावक इंद्री नैन ।
इनको साधै साधु जो, पद पावै सुख चैन ॥ २३ ॥

पृथ्वीकी प्रकृति ५

चाम हाड नाडी कहौं, रोम जान अरु मांस ।
यह पृथ्वी परकृति है, अन्त सबनको नास ॥ २४ ॥

पानीकी प्रकृति ६

रक्त बिन्दु कफ तीसरो, मेद मूत्रको जान ।
चरणदास प्रकृती इते, पानीसों पहिंचान ॥ २५ ॥

अग्निकी प्रकृति ७

निद्रा संगम आलकस, भूख प्यास जो होय ।
चरणदास पांचौ कही, अग्नि तत्त्व सो जोय ॥२६॥

वायुकी प्रकृति ८

बल करना अरु धावना, उठना अरु संकोच ।
देह बढै सो जानिये, वायु तत्त्व है शोश ॥ २७ ॥

आकाशकी प्रकृति ९

काम क्रोध मोह लोभ भय, तत्त्व अकाशको भाग ।
नभकी पांचौ जानिये, नित न्यारो तू जाग ॥२८॥

प्रकृतिविचार १०

रोम गगन नाडी पवन, मांस अग्निका अंश ।
त्वचा नीरसों जानिये, अस्थि महीको वंश ॥ २९ ॥
कफाकाश बिंदु वायुसों, रक्त अग्निसों बूझ ।
मूत्र नीर रणजीत भन, मेद पृथ्वीसों सूज ॥ ३० ॥
नीर व्योम सपरश पवन, आलस अग्नि पिछान ।
प्यास नीर रणजीत भन, भूख महीसों जान ॥३१॥
उठना तौ आकाशसों, बल करना है वायु ।
बढनि अग्नि धावन उदक, संकोचन महिं आयु॥३२॥
लोभ जु नभका अंश है, काम वायुका भाग ।
क्रोध अग्नि जल मोह है, भय पृथ्वीका लाग॥३३॥

ब्रह्म ११

पांच पचासों एकही, इनके सकल स्वभाव ।
निर्विकार तू ब्रह्म है, आप आपको पाव ॥ ३४ ॥
निराकार निर्लिप्त तू, देही जान अकार ।
आपन देही मान मत, यही ज्ञान ततसार ॥ ३५ ॥
शस्त्र छेदि तिहिं सकै नहिं, पावक सकै न जारि ।
मरै मिटैं सो तू नहीं, गुरुगम भेद निहारि ॥ ३६ ॥

जलै कटै काया यही, बनै मिटै फिरि होय ।
जीवअविनाशी नित्य है, जानै बिरला कोय ॥३७॥
जरा मरण धर्म देहको, भूख प्यास धर्म प्राण ।
सकल विकल मन जानिये, स्वाद सुइंद्री जान ॥३८॥
आँख नाक जिह्वा कहूं, त्वचा जान अरु कान ।
पाँचौ इंद्री ज्ञान हैं, जानै सन्त सुजान ॥ ३९ ॥
जो जो इनसों जानिये, निश्चय ना ठहराय ।
कहै सुनै चाखै लखै, सो सोई मिटि जाय ॥ ४० ॥
इंद्री जानि सकै नहीं, मन बुधि लहै न ताय ।
ज्ञान दृष्टि पहिचानिये, वासों वाको पाय ॥ ४१ ॥

कर्म इन्द्री

दोहा–गुदा लिंग मुख तीसरो, हाथ पाँव लखि लेह ।
पांचों इन्द्री कर्म हैं, यह भी कहिये देह ॥ ४२ ॥
देह मिटत है सुपन ज्यों, जीव रहत है नित्त ।
देह कर्म विसराय करि, आतमसों कर हित्त ॥४३॥

साधन

दोहा–मनै जीतै इन्द्री गहै, चित्त स्थिर जब होय ।
आतमसों परचो रहै राखै सुरति समोय ॥ ४४ ॥

पृथ्वी

दोहा–पृथ्वी काल जे ठौर है, मुखै जानिये द्वार ।
पीरो रँग पहिचानिये, पीवन खान अहार ॥ ४५ ॥

जल

दोहा–जलको वासा भाल है, लिंग जानिये द्वार ।
मैथुन कर्म अहार है, रंग सफेद निहार ॥ ४६ ॥

अग्नि

दोहा-पित्तेमें पावक रहै, नैन जानिये द्वार ।
लाल रंग है अग्निको, मोह लोभ आहार ॥ ४७ ॥

पवन

दोहा-पवन नाभिमें रहत है, नासा जानि दुवार ।
हरो रंग है वायुको गंध सुगन्ध अहार ॥ ४८ ॥

आकाश

दोहा-आकाश शीशमें वास है, श्रवण दुवारे जान ।
शब्द कुशब्द अहार है, ताको श्याम पिछान ॥ ४९ ॥

तीन शरीर

दोहा-कारण सूक्षम लिंग है, अरु कहियत अस्थूल ।
शरीर तिनसों जानिये, मैं मेरी जड मूल ॥ ५० ॥

अवस्था चार

दोहा-जाग्रतका अस्थूल है, स्वप्ने लिंग शरीर ।
कारण जान सुषुप्ति है, तुरिया साक्षी वीर ॥ ५१ ॥
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति औ, तुरी अवस्थ विचार ।
परा पश्यन्ती मध्यमा, वैखरि वाणी चार ॥ ५२ ॥

वाणी

दोहा-जाग्रत वासा नैनमें, स्वप्न कण्ठ अस्थान ।
जान सुषुप्ती हियेमें, नाभि तुरिय मन तान ॥५३॥
नाभि मध्य वाणी परा, हिये पसंती सुख्य ।
कंठ मध्यमा जानिये, कहूं वैखरी मुख्य ॥ ५४ ॥
चित बुधि मन हंकार जो, अन्तःकरण सुचार ।
ज्ञान अग्निसों जारिये, आतम तत्त्व विचार ॥५५॥

अन्तःकरण

दोहा–जलसों मन निश्चय कियो, भयो वायुसों चित्त।
अहंकार भो अग्निसों, बुद्धि पृथ्वीसों मित्त ॥ ५६ ॥

पंच विषय

शब्द स्पर्श रु गंध है, अरु कहियत रसरूप।
देह कर्म तनमात्रा तू, कहियत निहरूप ॥ ५७ ॥
शब्द गुण आकाशका, सपरश गुण है बाय।
पृथ्वीका गुण गंध है, सो यह प्रगट दिखाय ॥५८॥
रूप अग्निका गुण कहूँ, रसगुण जलका जान।
रणजीत बतावै खोलिकरि, ए शिष ले पहिचान॥५९॥

इन्द्रियोंकी उत्पत्ति

दोहा–श्रवण मुख सु इन्द्री भई, तत्त्वाकाशसों दोय।
त्वचा हाथइंद्री युगल, वायु तत्त्वसों होय ॥ ६० ॥
पावकसे इंद्री युगल, भये नैन अरु पाँव।
जलसों जो इंद्री भई, लिंग रसना दो नाँव ॥ ६१ ॥
गुदा नासिका दो भई, पृथ्वीसों पहिचान।
चरणदास यह कहत हैं, एक कर्म इक ज्ञान ॥६२॥
राजससों इन्द्री भई, तामससों तत्व पांच।
सात्विकसों चारों भये, चरणदास कहैं सांच ॥६३॥
तीनों गुणसे है परे, सो आतमको रूप।
सो वह दृष्टि न आवई, अगम अगोचर गूप ॥६४॥

चौबीस तत्त्व

दोहा–दश इन्द्री तन पांच हैं, तन्मात्रा भी पांच।
चारों अन्तःकरण हैं, ये चौबीसों बांच ॥ ६५ ॥

---

१ अन्तःकरण, मन बुद्धि, चित अहंकार।

पन्द्रहको अस्थूल हैं, नौको लिंग शरीर ।
कारण झीनी वासना, तुरिया निर्मल धीर ॥ ६६ ॥
जाग्रतमें चौबीस हैं, स्वप्नेमें नौ जान ।
सुषुप्तिमें सब लीन ह्वै, ये अँग जडके मान ॥ ६७ ॥
तुरिया इकरस आतमा, निर्मल अचल अनाद ।
घटै बढै उपजे नहीं, तहाँ न वाद विवाद ॥ ६८ ॥
घटै बढै उपजै मिटै, जडको यही स्वभाव ।
सो सब कौतुक कर रही, नाना किये उपाव ॥६९ ॥
चेतन ज्योंकी त्यों सदा, सदा अकर्त्ता जोय ।
सब कर्मनसों रहित है, आतम ऐसो होय ॥ ७० ॥
काहूते उपजो नहीं, वातै भयो न कोय ।
वह न मरै मारै नहीं, राम कहावै सोय ॥ ७१ ॥
योग युगत करि खोजिले, सुरति निरति करि चीन ।
दश प्रकार अनहद बजै, होय जहां लवलीन ॥ ७२॥

दश वायु

दोहा–तीन बंध नौ नाटिका, दश बाईको जान ।
प्राणापान समान है और, और कहत उदान॥७३॥
व्यान वायु अरु किरकिरा, कूरम बाई जीत ।
नाग धनंजय देवदत, दश बाई रणजीत ॥ ७४ ॥

नाडी तीन

दोहा–नवो द्वारको बंधकरि उत्तम नाडी तीन ।
इडा पिंगला सुषुमना, केलि करै परवीन ॥ ७५ ॥

प्राणायाम

दोहा–करतै प्राणायामके, पावै आतम बेख ।
अनहद ध्वनिके बीचमें, देखै शब्द अलेख ॥७६॥

पूरक करि कुंभक करै, रेचक पवन उतार ।
ऐसे प्राणायाम करि, सूक्षम करै अहार ॥ ७७ ॥
धरती बन्ध लगाय करि, दशौ वायुको रोक ।
मस्तक प्राण चढायकै, करैं अमरपुर भोग ॥ ७८ ॥
पांचौ मुद्रा साधिकै, पावै घटको भेद ।
नाडी शक्ति चढाइये, षट चक्करको छेद ॥ ७९ ॥
नासा ध्यान दृष्टि भृकुटीमें, सुरति श्वासके माहिं ।
आतम देखो जात है, यामें संशय नाहिं ॥ ८० ॥
योग युक्ति कै कीजिये, कै आतमको ध्यान ।
आपा आप विचारिये, परम तत्त्वको ज्ञान ॥ ८१ ॥

वर्णविचार

दोहा—शूद्र रु वैश्य शरीर है, ब्राह्मण औ रजपूत ।
बूढा बाला तू नहीं, चरणदास अवधूत ॥ ८२ ॥

आत्मज्ञान

दोहा—काया माया जानिये, जीव ब्रह्म है मित्त ।
काया छुटि सूरति मिटै, तू परमातम नित्त ॥८३॥
पाप पुण्य आशा तजौ, तजौ मान अरु थाप ।
काया मोह विकार तजि, जपै सु अजपा जाप ॥८४॥
आप भुलानो आपमें, बँधो आपही आप ।
जाको ढूंढत फिरतहो, सो तू आपहि आप ॥ ८५ ॥
इच्छा दुई बिसारिकै, क्यों न होय निरवास ।
तू तौ जीवन्मुक्त है, तजौ मुक्तिकी आस ॥८६॥
आपा खोजै आप लखि, आप अपनको देख ।
चरणदास नहिं तू ब्रह्म है, तूही पुरुष अलेख ॥८७॥

जैसे कछुवा सिमिटिकै, आपहिं माहिं समाय ।
तैसे ज्ञानी श्वासमें, रहै सुरति लवलाय ॥ ८८ ॥

सब घट रमो सो राम है, आदि पुरुष निर्गम्य ।
लख चौरासी योनिमें, एक समानो सम्य ॥ ८९ ॥

दृष्टि मुष्टि आवै नहीं, रूप न देखो जाय ।
बिन सूरति बिन नामको, घट घट रहो समाय॥९०॥

छप्पय-इच्छा दुई कर दूर आप तू ब्रह्म ह्वै जावै ।
और सो द्वितीया कौन तासुकी शीश नवावै ॥
माला तिलक बनाय पूर्व अरु पश्चिम दौरा ।
नाभि कमल कस्तूरि हिरण जंगल भो बौरा ॥
चरणदास लखि दृष्टि भरि एक शब्द भरपूर हैं ।
निरखि परखि ले निकट ही कहन सुननको दूर हैं ।
झूठीसी यह दृष्टि जगत सब झूठो दरशै ।
मूरख जानै सत्य तासुसों फिरि फिरि परशै ॥
चंद सूर थिर नहीं नहीं थिर पौन न पानी ।
त्रैदेवा थिर नहीं नहीं नहीं थिर माया रानी ॥
नव नाथ चौरासी सिद्ध जो चरणदास थिर ना रहै ।
ब्रह्म सत्य सर्वज्ञ है आत्म विचार क्यों ना गहै ॥

दोहा-जो मुखसेती बोलिये, अरु सुनियत है कान ।
जो आँखिनसों देखिये, सबही माया जान ॥९१॥
एकै सब तन रमि रह्यो, चेतन जडके माहिं ।
माया दर्शत है सभी, ब्रह्म लखत है नाहिं ॥९२॥
जैसे तिलमें तेल है, फूल मध्य ज्यों वास ।
दूध मध्य ज्यों घीव है, लकडी मध्य हुतास ।

थावर जंगम चर अचर, सबमें एकै होय ।
ज्यों मनिकोंमें डोरि है, बाहर नाहीं कोय ॥ ९४ ॥
एक डोरि मनिका गुहै, अवरण वरण निहारि ।
आतम तौ निररूप है, नित्य अनित्य विचारि॥९५॥
माया यही स्वभाव है, उदय होय छिपि जाय ।
चंचल चपल सुहावनी, ओला ज्यों गलि जाय॥९६॥
परमातम तौ नित्य है, ताको आदि न अंत ।
सदा अचल चंचल नहीं , सब गुण रहत अनन्त॥९७॥
सत चेतन आनन्द है, आदि अन्त मधि हीन ।
आदि अन्त आकार को, सो तू झूठो चीन ॥९८॥
सूरति नाम अकार है, ज्यों भूतनको नाच ।
मृग तृष्णाको नीर है, निकट गये नहिं सांच ॥९९॥
चितवत सांचीसी लगै, खोज किये मिटि जाय ।
दीखै है पर है नहीं, कौतुकसों दरशाय ॥ १०० ॥

शिष्य वचन

ब्रह्म बिना खाली नहीं, धरबेको इक पाँव ।
मायाको कहँ ठौर है, सद्गुरु मोहिं बताव ॥१०१॥
निर्विकार तौ ब्रह्म है अद्वै अचल अपार ।
आइ माया कहांते, सद्गुरु कहौ विचार ॥ १०२ ॥

गुरुवचन

आप ब्रह्म माया भयो, ज्यों जल पाला होय ।
पाला गलि पानी भयो, ऐसे नाहीं दोय ॥ १०३ ॥
झूठी माया सो कहैं, ज्ञानी पंडित लोय ।
भर्म भूल सांची लगै, समझै सांच न होय ॥१०४॥

सोनेको गहनो गढै, कहन सुननको दोय ।
गहनो ना सोनो सबै, नेक जुदो नहिं होय ॥१०५॥
झूठ सांच दोनों वहै, झूठ मिटै इक सांच ।
नाम मिटै सूरत मिटै, भूषणको लग आंच ॥१०६॥
जाको माया कहत हैं, सो तू नेक निकास ।
जैसे हींग कपूरकी, नेक जुदी करवास ॥ १०७ ॥
जल समान तौ ब्रह्म है, माया लहर समान ।
लहर सबै वह नीर है, लहर कहै अज्ञान ॥ १०८ ॥
खेल खिलौना खाँडके, कीजे लाख पचास ।
सकल खिलौना खाँड है, ऐसे गहु विश्वास ॥१०९॥
दास खिलौना खाँडके, भाजन राखे खाँड ।
विन विनशेभी खाँड है, विनशि जाय तौ खाँड॥११०॥
माटीके भांडे भवै, सूरति अरु बहु नाम ।
विगसि फूटि माटी भई, बासन कहु केहि ठाम॥१११॥
ऐसेही माया नहीं, समझि देखु मन माहिं ।
जो दीखै सो ब्रह्म है, रेचक माया नाहिं ॥ ११२ ॥
इच्छा मेटै दुइ तजै, एकै मन विश्राम ।
ब्रह्मज्ञान विज्ञान है, समझ परमपद धाम ॥ ११३॥

सवैया

श्वास उसाँस चलै जब आवहि, है जु अखण्ड टरै नहिं टारो
भीतर बाहर है भरिपूर सो, ढूंढौ कहां नहिं नाहिं न न्यारो॥
दास कहै गुरुभेद दियो भ्रम, दूरि भयो जु हुतो अति भारो॥
दृष्टि अदृष्टि जु रामको देखत, राम भये पुनि देखन हारो॥

भगवद्ध्यान

दोहा–आप आपमें आप है, खेलौ बहु विस्तार ।
द्वितिया तौ कछु है नहीं, एकहि एक निहार॥११४॥

कहिं नारायण नाभि है, कहीं ब्रह्म कहिं वेद ।
कहिं शंकर गिरजा कहीं, कहीं अभेदहिं भेद ॥११५॥
कहिं ऋषि मुनि कहिं देवता, कहीं सिद्ध कहिं नाथ ।
आपनको आपै खडो, कहूं न नावै माथ ॥ ११६ ॥
कहिं आसन कहिं तप करै, कहीं ज्ञान कहिं योग ।
कहीं दुखी कहिं सुख भयो, कहीं रोग कहिं भोग ११७
कहिं नारी कहिं नर भयो, कहिं बालक कहिं बाल ।
कहिं मँगता दाता कहीं, कहीं सुखी कंगाल ॥११८॥
कहीं वृक्ष कहिं फल भयो, कहीं फूल कहिं बीज ।
कहीं मूल शाखा भयो, कहिं माली कहिं सींच॥११९॥
कहिं मालिनि कहिं मालती, कहिं फुलवा कहिं नार ।
कहीं महल खिडकी भयो, दीपक कहिं उजियार१२०
कहीं बाग क्यारी भयो, कहीं भँवर गुंजार ।
कहीं घटा कहिं बिज्जुली, दादुर मोर बहार ॥१२१॥
कहिं पर्वत जंगल भयो, कहिं वारिद कहिं वारि ।
कहिं वडवानल अग्नि है, धारो तेज अपार ॥१२२॥
मानसरोवर भयो कहिं, मोती कहीं मराल ।
कहिं सरिता धीवर कहीं, कहीं मीन कहिं जाल १२३
कहीं कथा श्रोता कहीं, कहीं कीरतन रूप ।
कहीं त्याग वैराग लै, कीन्हो संत स्वरूप ॥ १२४ ॥
कहिं पृथ्वी कहिं वृक्ष हो, कहिं गोपी कहिं ग्वाल ।
कहीं प्रेमके रूप है, कहिं प्रेमी कहिं ख्याल ॥१२५॥
कहिं कालिंदी निकट हो, कहिं वृन्दावन धाम ।
कहिं कुंजै अति सोहनी, कहीं युगल लयो नाम१२६

कहिं सुगन्ध शीतलपवन, कहिं बंशीबट ठाँव ।
कहीं चरणही दास है, बार बार बलि जाँव ॥१२७॥
कहीं कन्हैया है खडो, एक पाँव अँग मोर ।
कहिं मुरली अधरन धरी, बाजत है घनघोर ॥१२८॥
कहीं मुकुट कुण्डल भयो, अलकैं कहीं कपोल ।
कहिं ललचौं हैं नैन हैं, नासा मुकुट सडोल ॥१२९॥
कहीं धुकधुकी कंठ है, कहिं मोतियनकी माल ।
कहिं बाजू नवरत्नके, नटवर मदन गोपाल ॥१३०॥
कहीं कडा कहिं कर भयो, कहिं पहुँची जहँगीर ।
रतन चौक गूंठी भयो, लागी संग जँजीर ॥१३१॥
कहीं बादलो जर्द है, नीमो है गयो अंग ।
कहिं बद्धी गल जिद है, कहीं साँवरो रंग ॥१३२॥
कहिं पैंजनि कहिं पग भयो, कहीं चरणको दास ।
कहीं आपही नख भयो, शशि समान परकास ।१३३
आप आपमें आप है, आप आपनमें आप ।
आप अपनमें जपत है, आप आपनो जाप ॥१३४॥
अविनाशी नाश नहीं, नाशै न कबहूं होय ।
तत्त्व स्वरूपी एक है, कभी होय नहिं दोय ॥१३५॥
आप ब्रह्ममूरति भयो, ज्यों बुदगल जलमाहिं ।
मूरति विनशै नाम सँग, जल विनशत है नाहिं१३६॥
बुदगल देखो जल सबै, बुदगल कहूं न होय ।
कहबेको दूजो कहो, जल बुदगल नहिं दोय ॥१३७॥
भयो नेकम बुलबुलो, नाच कूद मिटि जाय ।
निराकार रहिजायगो, मूरति ना ठहराय ॥१३८॥
निराकार आकार धर, खेलौ कै इकबार ।
स्वप्नो है है मिटि गयो, रहो सारको सार ॥१३९॥

आप आपमें खेल मचायो । ज्यों पानी बुदगल ह्वै आयो॥
ऐसे ब्रह्म धरी है काया । आपहि पुरुष आपहि माया॥
आप नारायण लक्ष्मी भई । नाभि कमल अरु आपहि दई॥
आपहि धरती आपहि पानी । आपहि रुद्र चतुर विज्ञानी॥
ह्वै नारायण विष्णु कहायो । शेषनाग ह्वै शेषनाग पठायो॥
तेतिस कोटि देवता भयो । ऋषिमुनि कोटि अठासी छयो॥
चारों युग आपहि भयो लोका । पापपुण्य आपहि भयो शोका॥
आपहि फूल शूल अरु वारी । आपहि पुरुष आपही नारी॥

दोहा-जल थल पावक राम है, राम रमो सब माहिं ।
हरि सबमें सब राममें, और दूसरो नाहिं ॥ १४० ॥

दश अवतार आप धरि आयो। सेवक साहब आप कहायो ॥
आपहि गिरिवर आपहि तरुवर। आपहि हंस आपही सरवर ॥
आपहि चारि वर्ण षट दर्शन । पूजै आप आपही पर्शन ॥
आपहि ध्यानी आपहि प्रेमी । आपहि योग भोग अरु नेमी॥
चरणदास शुकदेव बतायो । अपनो भेद आपही गायो ॥
तारा मण्डल आप अकाशा । आपहि चन्द सूर परकाशा ॥
जैसे जल तरंग ह्वै आई । उलटि फेरि जलमाहिं समाई॥
आप आपमें स्वप्न उठायो । आपहि स्वप्न आप ह्वै आयो॥
ना कछु गयो नहीं कछु आयो । अपनो भेद आप ही पायो ॥
ना कछु मिलै कटै नहिं छीजै । ना कछु उठै चलै नहिं भीजै ॥
स्वप्नो मिटि भया एकाकारा । ज्ञानी अबही ल्योह निहारा ॥
नहीं सूक्ष्म अस्थूल न भारी । रूप रंग नहि है परकारी ॥
वार पार कछु दीखत नाहीं । कबसों है अरु कबसों नाहीं ॥
कहा कहौं कछु कहन न आवै । गूँगो स्वप्नो कहा बतावै ॥

वारापार पार नहिं पायो । ढूँढत ढूँढत आप भुलायो ॥
कहत कहत मैं गयो हिराई । अब मोपै कछु कह्यो न जाई॥

दोहा–हद कहूं तौ है नहीं बेहद कहौं तौ नाहिं ।
हद बेहद दोनों नहीं, चरणदास भी नाहिं ॥१४१॥

जग स्वप्नो सो ह्वै गयो, गयो पेखनो गाँव ।
जब जागो तब मिटि गयो, चरणदास नहिं नाँव।१४२॥

छप्पय–तब न चन्द नहिं सूर नहीं नभमें तारागण ।
नहिं धरती नहिं शेष नहीं अगती पारायण ॥
तब न रूप नहिं नाम नहीं त्रैगुण त्रैदेवा ।
तब न ब्रह्म नहिं जीव नहीं साहब नहिं सेवा ॥
रणजीत मीत नहिं वैर तब निर्गुण सर्गुण ना हुता॥
तब न वेद वाणी नहीं नहिं ज्ञानी नहिं पंडिता ॥
जो श्रवणनसों सुनै और मुख सेती बागै ।
जो कछु देख नैन और सोवै अरु जागै ॥
औ आवै दुर्गन्ध गन्ध नासाके माहीं ।
यह सब झूठो जान कछू ठहरत है नाहीं ॥
अरु चरणदास उपजै नशै विनशै नहिं संसार कहुँ।
ब्रह्म सत्य सर्वज्ञ है सु झूटो दरशै स्वप्न यहुँ ॥

दोहा--ब्रह्म विना खाली नहीं, सरसों सम कहुँ ठोर ।
स्वप्नोसो जग देखिये, स्वप्न भयो मन मोर ॥१४३॥
शुद्ध ब्रह्म है रैनि सम, जगत दिवाली दीव ।
ज्यों तरंग जलमें उठै, ब्रह्मबीच ये जीव ॥ १४४ ॥

वार न जाको पाइये, पार परे नहिं चीन ।
ऐसे सिन्धु अथाहमें, जगत जानिये मीन ॥ १४५ ॥

ब्रह्मबीच ये जीव सब, फिरत रहत आधीन ।
जैसे सागर सिन्धुमें, नानारूपी मीन ॥ १४६ ॥
जैसे लहरि समुद्रकी, उठत रहत तेहि माहिं ।
विन इच्छा विन भावना, ह्वै ह्वै मिटि मिटि जाहिं।१४७।
औंडो सीव गँभीर हैं, विन इच्छा विन दोय ।
निजस्वभाव जग होत है, मिटि २ फिरि२होय॥१४८॥
धरतीमें लीकट खिंचै, उठि नहिं आवै हाथ ।
ब्रह्म सत्य जग झूठ है, ह्वै ह्वै मिटि मिटि जात॥१४९॥
जगत ब्रह्ममें यों दिपै, ज्यों धरतीपर रेख ।
रेख मिटै धरती रहै, ऐसे ही जग देख ॥ १५० ॥
झूठ सांच दोउ नाम हैं, झूंठ मिटै थिर सांच ।
ज्यों लोहा पावक मिलो, लोह रहे मिटि आंच।१५१।
ज्यों सोवत स्वपनो उठो, दृष्टि खुली जब नाहिं ।
जग स्वप्नोसो ह्वै मिटै, समुझि देखु मन माहिं।१५२।
देखनको अति निकट है, कहबेको बहु दूरि ।
एकै ब्रह्म अखण्ड है, सकल रह्यो भर पूरि ॥१५३॥
अद्वै अचल अखण्ड है, अगम अपार अथाय ।
नहीं दूर नहिं निकट है, सद्गुरु दियो बताय॥१५४॥
भूल हुती जब दो हुते, अब नहिं एक न दोय ।
अटक उठी धोखो मिटो, आपनहू गयो खोय॥१५५॥

छप्पय–जहां गुरू नहिं शिष्य जहां नहिं साहब दासा ।
जहां गुफा नहिं योग जहां नहिं गगन निवासा ॥
जहां नहीं तप दान जहां नहिं देवल पूजा ।
जहां ब्रह्म नहिं जीव जहां नहिं एक न दूजा ॥

चरणदास मिलि मिटि गयो सो अचरज ऐसो न सूझिया
कौन सुने कासों कहै सो आप आप नहिं दूजिया ॥

दोहा—अपरम्पार अपार है, आदि अनादि अडोल ।
पुरुष पुरातन ब्रह्म है, बिन काया बिन बोल॥ १५६ ॥

अगम अगोचर अजर अनन्ता । अद्वैरूप अगम भगवन्ता ॥
निराकार निर्भय निर्वाना । परमेश्वर परमात्मा प्राना ॥
अर्ध उर्द्ध वह नहीं गोसाईं । नहिं बाहर नहिं मध्यम माहीं ॥
नहीं जीव नहिं सीव सहाई । श्वेत श्याम नहिं है अरुणाई॥
है जैसो तैसो ही राजै । आपन माहिं आपही गाजै॥
नहीं नाँव नहिं भावन भारी । है अखण्ड नहिं खंडित कारी॥
है सर्वज्ञ सत्य विज्ञाना । अभेद अछेद अकत्थ सुज्ञाना ॥
ज्योंका त्यों जैसेका तैसा । नहिं ऐसा नहिं कहिये वैसा॥

दोहा—नीचे नीचे अन्त ना, ऊपर ऊपर ऊप ।
बाँयें बाँयें हदना, दहिने दहिने गूप ॥ १५७ ॥
नहीं नीच ऊपर नहीं, नहिं दहिने नहिं वाम ।
मध्य नहीं आकार ना, निराकार नहिं नाम॥ १५८॥
निर्गुण ना सर्गुण नहीं, उपजै ना मिटि जाय ।
सब कुछ है अरु कुछ नहीं, सदा ब्रह्म थिरथाय १५९॥
जहां सांच जहँ झूठ है, जहां झूठ जहँ सांच ।
झूठ सांच दोनों नहीं, तहँ कुछ शीत न आंच॥ १६०॥
बंध नहीं मुक्तौ नहीं, पाप पुण्य भी नाहिं ।
उतपति ना परलय नहीं, नहीं नहीं भी नाहिं॥ १६१॥
इन्द्री ना निग्रह करौं, मन नहिं जीतूं ताहि ।
भूलौं ना चेतौं नहीं, मैं नहिं खोजौं वाहि ॥ १६२ ॥

योग नहीं युगता नहीं, नहीं ज्ञान नहिं ध्यान ।
बुधि विचार पहुँचै नहीं, तहँ कछु लाभ न हान॥१६३॥
जैनधर्म शिवशक्ति ना, स्वर्ग नरक नहिं वास ।
षट दर्शन चौवर्ण ना, नहीं करम संन्यास ॥१६४॥
सिद्ध नहीं साधक नहीं, नहीं तिमिरि नहिं भान ।
शून्य नहीं बेशून्य ना, नहीं तत्त्व विज्ञान ॥१६५॥
धर्म कर्म अरु मोह ना, अरु नाहीं वैराग ।
ज्योंका ज्यों सो भी नहीं, नहीं दुखी अनुराग॥१६६॥

ब्रह्मज्ञान विन मिटै न दोई । ब्रह्मज्ञान बिन मुक्त न होई ॥
दान यज्ञ तप नाना भोगा । ब्रह्मज्ञान बिन सबही रोगा ॥
कलह कल्पना मनमें दोष । ब्रह्मज्ञान बिन ना संतोष ॥
तिमिरि अविद्या सबही भागै । ब्रह्मज्ञानमें जो तू जागै ॥
मत मारग मिलि भर्म बढावै । पक्षपात लै सब भरमावै ॥
गुरु बिन ब्रह्मज्ञान नहिं पावै । गुरु बिन तत्त्व कौन दरशावै॥
गीता अरु वेदान्त बतावै । सामवेद भी योंही गावै ॥
ब्रह्मज्ञानमें निश्चय आवै । जीवन्मुक्ता सोइ कहावै ॥

दोहा-तू नाहीं सब राम है, वेद भेदकी सीख ।
एक रमैया रमि रह्यो, सकल अंड व्यापीक॥१६७॥
सिद्ध स्वरूपी ब्रह्ममें, ज्यों पाला सब लोक ।
पाला गलि पानी भवै, कछू न निकसै फोक॥१६८॥
उलझेको सुलझायकै, कई जन्मको सूत ।
चरणदास निर्भय भये, आशा तजि अवधूत॥१६९॥

कवित्त-स्वर्गहू न चाहिये जो होम यज्ञ दान करौं, इंद्र आदि भोगनको चितते उठायो है।ऋद्धिहू न चाहिये जो जक्तमें बडाई चलै, सिद्धिहू न चाहि सब साधन विसरायो है॥जातिहू

न चाही जो कुलकी मर्य्याद चलूं। चारि वर्ण एक योंही वेदनमें गयो है ॥ कासों कहैं मुक्त और बंध तौ न सूझे कहूं, कहै चरणदास आप आपन लौ लायो है ॥

सवैया

आदिहु आनँद अन्तहु आनँद, मध्यहु आनँद ऐसेही जानो।
बंधहु आनँद मुक्तहु आनन्द, आनँद ज्ञान अज्ञान पिछानो ॥
लेटेहु आनँद बैठेहु आनँद, डोलता आनँद आनँद आनो।
दास विचारि सबै कछु आनँद, आनँद छाँडिकै दुख न ठानो।१।
आदिहु चेतन अन्तहु चेतन, मध्यहु चेतन माया न देखी।
ब्रह्म अद्वैत अखंड निरालँब, और न दूसरो आनन्द पेखी ॥
सिंधु अथाह अपार विराजत, रूप न रंग नहीं कुछ रेखी।
दास नहीं शुकदेव नहीं, तहँ ना कोइ मारग ना कोइ भेखी ॥२॥
भक्षत हैं नहिं भक्षत भोजन, पीवत हैं नहिं पीवत पानी ॥
डोलत हैं परसों नहिं डोलत, बोलत हैं नहिं बोलत बानी ॥
रूप अनेक ब्योहारमें देखत, निश्चय मध्य कछू नहिं आनी ॥
दास बताय दियो शुकदेवने, ऐसे रहैतेहि जानिये ज्ञानी ॥३॥
सोवत है नहिं सोवत नीन्द सो, जागत है नहिं जाग दिखानी।
योग करैं न करैं कछु साधन, ध्यान करैं न करैं कछु ध्यानी।
बाक्य विशाल करैं चरचा, न करैं चरचा नहिं होय विरानी।
दास बताय दियो शुकदेवने, ऐसे रहै तेहि जानिये ज्ञानी ॥४॥

कवित्त-मंदिर क्यों त्यागे अरु भागै क्यों गिरिवरको, हरि जीको दूर जानि कलपै क्यों बावरे। साधन बतायो अरु चारिवेद गायो सब, आपनको आप देखि अन्तर लौ लावरे ॥ ब्रह्मज्ञान हियो धरो बोलतेका खोज करों, माया अज्ञान हरो

आपा बिसराव रे । जैहैं जब आप धाप कहा पुण्य कहा पाप, कहै चरणदास तू निश्चय घर आव रे ॥

अथ ब्रह्मज्ञानी लक्षणवर्णन

ज्ञानपरीक्षा--निरालंब १ निर्भ्रम २ निर्वासिक ३ निर्विकार ४।
विचारपरीक्षा--निर्मोहता १ निर्बंध २ निर्हिंसक ३ निर्वाण ४।
विवेकपरीक्षा--सावधान १ सर्वंगी २ सारग्राही ३ संतोषी ४ ।
परमसंतोषपरीक्षा अयाच १ अमानी २ अपक्षीक ३ स्थिर ४ ।
सहजपरीक्षा-निष्प्रपंच १ निहतरंग २ निर्लिप्त ३ निष्कर्म ४ ।
निर्वैरपरीक्षा--सुहृत् १ सुखदायी २ शीतलताई ३ सुमति ४।
शून्यपरीक्षा-शीलवंत १ सुबुद्धी २ सत्यवादी ३ ध्यानसमाधी ४

जामें ये लक्षण होयँ ताको ब्रह्मज्ञानी कहिये और जामें ये लक्षण न होयँ ताको वाचकज्ञानी वितंडा जानिये ॥

दोहा-जनक गुरू शुकदेवजी, चरणदास शिष होय ।
आपा रामहि राम हैं, गई दुई सब खोय ॥१७०॥
ब्रह्मज्ञान पोथी कही, चरणदास निर्वार ।
समझै जीवन्मुक्त हो, लहै भेद ततसार ॥ १७१ ॥

इति ब्रह्मज्ञानसागर ॥ १५ ॥



शब्दवर्णन १६



गुरुस्तुति १

मंगलाचरण

दोहा–ब्रह्मरूप आनन्द घन, निर्विकार निर्लेव ।
मङ्गल करण दयालजी, तारण गुरु शुकदेव ॥ १ ॥
सतियनमें तुम सत्य हौ, शूरनमें हौ वीर ।
यतियनमें तुम यती हौ, श्रीशुकदेव गँभीर ॥ २ ॥
पतित उधारण तुम लखे, धर्म्म चलावन भेव ।
संकट सकल निवारिये, जै जै श्रीशुकदेव ॥ ३ ॥
चिंता मेटन भवहरण, दूरि करण जग व्याध ।
गुरु शुकदेव कृपा करौ, चरण लगे सब साध ॥४॥
दाता चारौं वेदके, श्रीशुकदेव दयाल ।
चरणदास पर हूजिये, वारंवार कृपाल ॥ ५ ॥

राग कल्याण–नमो शुकदेव हो चरण पखारणम्।द्वंद संकट हरण करणसुख मंगल परम आनन्द घन पतितके तारणम् ॥ नाव तक त्याग वैराग है मुक्तिलौं तीनहू गुणनते निर्विकारम्। महानिष्कामऔर धाम चौथे रहो सिद्धि चेरी भई फिरै लारम्॥ ज्ञानके रूप अरु भूप सब मुनिनमें दयाकी नाव किये जीव पारम्।उदै भागौत मति भान परगट कियो तिमिरि कियो दूर अरु धर्मधारम् ॥ मोह दल जीति अनरीतिके खण्डनं भक्तिके

दृढ करन भवविडारम् । चरणदासके शीशपर हाथ नितही रहै यही मांगौं गुरु बारबारम् ॥

चरणोंके चिह्नका मङ्गलाचरण २

दोहा–दश चिह्न दहिने चरण, बांये हैं दश एक ।
जिनके निश्चय ध्यानते, कटै जो विघ्न अनेक ॥६॥
श्रीशुकदेव आज्ञा दई, चरणदास उच्चार ।
सो अब वर्णन करत हूँ, शब्दमाहिं विस्तार ॥ ७ ॥

राग कल्याण–चरण चिह्न चितलाव फेरि तेरा जन्म न होगा
परम झलक छबि निरखि नैनभरि अंकुश मन अटकाव ॥
अम्बर छत्र कुलिश जो राजत ध्वजा धेनु पदभाव ।
शंख चक्र अरु कलश सुधाह्रद तासूं चित उरझाव ॥
स्वस्तिक जम्बूफलकी शोभा जासों सुरति लगाव ।
अर्द्धचन्द षटकोन मीन बुन्द उर्ध रेख लखि चाव ॥
अष्टकोन तिरकोन विराजै धनुष बाण उरधाव ।
कोटि काम नख ऊपर वारूं नूपुर सुन्दर पाव ॥
श्रीशुकदेव चिह्नपद बरणे सो तू हियमें लाव ।
चरणदासहित राखि भोरनिशि बारबार बलि जाव ॥

आरती राग ३ ॥ भैरव

मंगल आरती या विधि कीजै । हर्ष पाय आनँदरस पीजै ॥
प्रथमैं मंगल गुरुकी जान । जिनसूं पायो पद निर्वान ॥
ज्ञान भानु परगट कियो भोर । मिटिगइ रैन तिमिरि घनघोर ॥
दुतिये मंगल श्रीगोपाल । भक्ति बछल बहुपतित उधार ॥
राम कृष्ण पूरन अवतार । दुष्टदलन सन्तन रखवार ॥
तृतिये मंगल प्रभुजीके साध । मानसरोवर मता है अगाध ॥
तिनकी संगति उठिगयो शंसा । काग पलटि गति है गय हंसा ॥
चौथे मंगल श्रीभागोत । घट उजियार करनकूं ज्योत ॥

पाप ताप दुख मेटनहारी । जिहिं नौका चढि उतरौ पारी ॥
पँचवें मंगल श्रीशुकदेव । तन मनसूं करि उनकी सेव ॥
चरणहिंदास चरण चितलायो । मंगलचार भयो जस गायो ॥
मंगल आरति कीजे प्रात । सकल अविद्या घट गइ रात ॥
सूरज ज्ञान भयो उजियारा । मिटिगयेऔगुनकुबुधिविकारा
मनके रोग शोक सब नाशै । सुमति नीर शुभ जलज प्रकाशै ॥
भै अरु भरम नहीं ठहराई । दुविधा गई एकता आई ॥
जाति वर्ण कुल सूझै नीके । सब सन्देह गये अब जीके ॥
षट घट दरशै दीन दयाला । रोम रोम सब होगइ माला ॥
दृष्टि न आवै दुख जगजाला । काग पलटि गति भये मराला ॥
अनहद बाजन बाजन लागे । चोर नगरिया तजि तजि भागे ॥
गुरुशुकदेव कि फिरी दोहाई । चरणदास अन्तर लवलाई ॥

भोरकी ध्वनि ४ ॥ राग भैरव

आरति आदि पुरुषकी कीजै । साधौअगमअपारअचलमनदीजै
अद्भुत आरती ॐकारा । त्रैदेवा ह्वै जगत पसारा ॥
पहिले मच्छरूप हरि धारो । वेद लाय शंखासुर मारो ॥
रई मँद्राचल बासकनेती । चौदह रत्न मथे दधि सेती ॥
रूप वराह धारि हरि धाये । हिरण्याक्ष हनि धरती लाये ॥
खंभ फारि हिरणाकुश मारो । नरसिंह ह्वै प्रहलाद उबारो ॥
वामनह्वै करि बलि छलि लीन्हे । तीनि लोक तीनों पग कीन्हें ॥
परशुराम भै शस्तर धारे । क्षत्री सबै निकछ करिडारे ॥
रामरूप रावन दल मलिया । लंका राज विभीषण मिलिया ॥
कृष्णरूप भै कंस पछारो । दर्शन दे व्रज सकल उधारो ॥
बुद्धिरूप अचरज गति तेरी । कौतुक देखि थकी बुधि मेरी ॥
निष्कलंक निर्लिप्त निरासा । संभल सुरति लियो जहँ वासा ॥

हरि हैं एक रूप बहु धारे । निराकार आकार नियारे ॥
दश अवतार आरती गाऊं । निरभय होय अभय पद पाऊं॥
चरणदास शुकदेव बतायो । निर्गुण हरि सर्गुण ह्वै आयो ॥
आरति रमता रामकि कीजे । अन्तर्द्धान निरखि सुख लीजै॥
चेतन चौकी सतको आसन । मगन रूप तकिया धरि दीजै॥
सोहं थाल खैंचि मन धरिया । सुरति निरति दोउ बीता बरिया॥
योग युगतिसूं आरति साजी । अनहद घंट आपसूं बाजी ॥
सुमति साँझकी बिरिया आई । पांचपचीस मिलि आरति गाई॥
चरणदास शुकदेवको चेरो । घटघट दर्शै साहब मेरो ॥
आरति करत हँसै मन मेरो । वारपार कछु दिखै न तेरो ॥
अमर अडोल निरीक्षण भेखा । त्रैगुण रहित रूप नहिं रेखा ॥
चेतन आनँद नित निरधारा । निराकार निर्लिप्त नियारा ॥
निराकार आकार विराजति । निरगुण अरु सर्गुण तेरी गति॥
हाथ पाँव अरु शीश घनेरे । कैसे आरति करूं प्रभु मेरे ॥
सोहं बाती घीव अखण्डा । एकहि ज्योति बलै ब्रह्मण्डा ॥
तुही थाल तुहि आरति साजै । तुहि घंटा तुहि झाँझर बाजै॥
चरणदास शुकदेव लखायो । सुरति थकी पै पार न पायो॥
गगन मँडलमें आरति कीजै । उत्तम साज सकल सजि लीजै॥
सुखमन अमृत कुम्भ धरावै । मनसा मालिनि फूल चढावै॥
घीव अखंडा सोहं बाती । त्रिकुटी ज्योति जलै दिन राती॥
पवन साधना थाल करीजै । तामें चौमुख मन धरि लीजै ॥
रवि शशि हाथ गहौ तिहिमाहीं। खिन दहिनो खिन बायें लाई ॥
सहसकमल सिंहासन राजै । अनहद झाँझरि नितही बाजै॥
इहि विधि आरति सांची सेवा । परमपुरुष देवनको देवा ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । ऐसी आरति पार लँघावै ॥

ऐसी आरति करि हुलसावै । दे परिकरमा शीश नवावै ॥
तनको थालअरुमनकोचौमुख। ज्ञान ध्यानकी बाती लावै ॥
भक्ति भावको घी भरि तामें। जगमग जगमग ज्योति जगावै॥
अर्ध उर्ध हितसूं करि फेर । रचना रचैं फूल वर्षावैं ।
सुरति मृदंग अरु निरति तँबूरा। झैगड झैगड झाँझ बजावैं ॥
ताल बिना मुरचंग शंखध्वनी । प्रेम मगन है हरिगुण गावैं ।
सोरन कलशा जलकी राखै । धूप रु अगर सुगन्ध धरावैं ॥
या विधिसों शुकदेव श्यामकी । गाय आरतीको फल पावै ।
युगलकिशोर निरखि नैननसों।चरणदास सखि बलि बलि जावै॥

राग विभास

या विधि गोविंद भोग लगावो। भक्तवछल हरि नाम कहावो॥
बेर भीलनीके तुम पाये । देखि ऋषीश्वर सकल लजाये॥
जैसे साग बिदुर घर पायो । दुर्योधनको मान घटायो॥
भक्त सुदामाके तंदुल लीन्हे ।कंचन महल अधिकसुख दीन्हे॥
ज्यों कर्मांकी खिचरी खाई । नेह लियो सब शुचि बिसराई॥
तुम्हरी विभो प्रभु तुम्हरेहि आगे। हमसूं दीननकूं कहलागे॥
प्रेम प्रीतिसूं भोजन कीजे । बचै सीथ संतनकूं दीजे ॥
चरणदास भरि राखी झारी । अँचवो हरि शुकदेव मुरारी ॥

भोगके आगेकी ध्वनी ५ ॥ राग—काफी

जै जै पारब्रह्म परधान । जाकूं पावै गुरुके ज्ञान ॥
ब्रह्म पुरुषको धरो स्वरूप । सो तो कहिये अधिक अनूप॥
जै जै ॐ और त्रैदेव । जै जै दश औतार अभेव ॥
जै जै बृन्दावन निज धाम । जै जै गोकुल अरु नँदग्राम ॥
जै जै गोपी जै जै ग्वाल । जै जै सदा बिहारीलाल ॥
जै जै कुंजगली नंदलाल । मोरमुकुट मुरली बनमाल ॥

जै जै राधे कृष्ण मुरार। जै जै व्यास देव उचार ॥
जै जै महा विदेह जनकजी। जै जै श्रीशुकदेव दयाल ॥
इनको नाम जपै जो कोय। प्रेम भक्ति पावत है सोय ॥
चरणदास शुक बास लहैं। हरि चरणनके पास रहैं ॥

गुरुदेवका अंग ६ ॥ राग कल्याण

सद्गुरु पांचौं भूत उतारो

जन्म जन्मके लागेहि आये दै मंतरअब तिन्हैं बिडारो ॥
काम क्रोध मोह लोभ गर्भने मन बौराय कियो आप भायो॥
जिनके हाथ परो जिय मेरो घेरा घेरी बहुत दुख पायो॥
एक घरी मोहिं छोडत नाहीं लहरि चढायकै बहुत निवावो।
कपि ज्यों घर घर द्वार नचावै उत्तम हरिको नाम छुटावो ॥
अबके शरणि गही है तुम्हरी चरणहिदास अजाने।
किरपा करि यह व्याधि छुटावो गुरु शुकदेव सयाने ॥

राग धनाश्री-अब मैं सद्गुरु शरणौ आयो ॥

बिन रसना बिन अक्षर वाणी ऐसोहि जाय सुनायो॥
काम क्रोध मद पाप जराये त्रैविध ताप नशायो।
नागिनि पांच मुई सँग ममता दृष्टसूं काल डरायो ॥
किरिया कर्म अचार भुलानो ना तीरथ मग धायो।
समझौ सहज वचन सुनि गुरुके भर्मको बोझ बगायो॥
ज्यों ज्यों जपूं गरक हौं वामें वह मो माहिं समायो।
जग झूंठो झूंठो तन मेरो यों आपा नहिं पायो ॥
वाकूं जपै जन्म सोइ जीतै सोहं शुद्धि बतायो।
चरणदास शुकदेव दया या सागर लहरि समायो ॥

राग सौरठा-गुरुदेव हमारे आवो जी ॥

बहुत दिनोंसे लगो उमाहो आनँद मंगल लावोजी ॥

पलकन पंथ बहारूं तेरो नैनन पीर पग धारोजी ।
बाट तिहारी निशिदिन देखूं हमरी ओर निहारोजी ॥
करौ उछाह बहुत मन सेती आँगन चौक पुराऊंजी ।
करूं आरती तन मन वारूं बारबार बलि जाऊंजी ॥
दै परिकर्मा शीश नवाऊं सुनि सुनि वचन अघाऊंजी ।
गुरु शुकदेव चरणहूं दासा दर्शन माहिं समाऊंजी ॥
हो अँखियां गुरु दर्शनकी प्यासी ।

इकटक लागी पंथ निहारूं तनसूं भई उदासी ॥
राति दिना मोहिं चैन नहीं चिन्ता अधिक सतावै ।
तलफत रहूं कल्पना भारी निश्चल बुधि नहीं आवै ॥
तन गयो सूक हूक अति लागी हिरदय पावक बाढी ।
खिनमें लेटी खिनमें बैठी घर अँगना खिन ठाढी ॥
भीतर बाहर संग सहेली बात नहीं समझावै ।
चरणदास शुकदेव पियारे नैनन ना दर्शावै ॥

राग भैरव

गुरु विन मेरे और न कोय । जगके नाते सब दिये खोय ॥
गुरुही मातु पिता अरु बीर । गुरुही सम्पति जीव समीर ॥
गुरुही जाति वरण कुल गोता । जहां तहां गुरु संगी होता ॥
गुरुही तीरथ वरन हमारा । दीन्हें और धरम सब डारा ॥
गुरुही नाम जपौं दिन रैन । गुरुको ध्यान परम सुखदैन ॥
गुरुके चरणकमल करि बास । और न राखूं कोई आस ॥
जो कुछ चाहैं गुरुही करैं । भावै छांह धूपमें धरैं ॥
आदि पुरुष गुरुहीकूं जानूं । गुरुही मुक्तीरूप पिछानूं ॥
चरणदासके गुरु शुकदेव । और न दूजा लागै लेव ॥

भक्ति अंग वर्णन ७॥ राग करखा

राखिय लाज महाराज गोपालजी दीनजन शरणआयोतिहारी।
लगोमोहध्यानदृढचरणहीकमलमेंकीजियेकिरपासुनिहोविहारी
विषय जंजार रस स्वाद घेरो घन्यो पांचहू चोर दुख देई भारी।
नीच बहु दुष्ट बलवान पच्चीस ठगतकैंनिशि द्योस हिये घातडारी
पकरि गजराजकूं ग्राह खैंच्यौ तबै टेर दे हेर कीन्ही पुकारी।
गरुडतजिधाय आयेछुटायो तुरतहरि हियेव्याधतनविपतिटारी
ध्रुवअचलकियोप्रहलादकूंदर्शदियोकियो हनुमानसूंप्रीतिभारी
भीलिनीअरुकामीअजामिलसेअधमअतिपतितगणिकाउबारी
पांडु सुतहूं बचाये जरत अग्निसूं द्रौपदी चीर बाढो अपारी।
नामदेव सैन पीपा कबीरा सदन नरसियादास मीरा उधारी॥
कोटिअनगनभक्ततारिदियेतिनकोमैंकहोंमेरीसुरतिक्यों बिसारी
तो बिना कहां जाउं कहीं ठौर ना तेरेही द्वारको हूं भिखारी॥
सकल संशयहरण तूही तारणतरणश्यामशुकदेव गिरिधरमुरारी
चरणदास रणजीतको आसरो तूहीहै आप तौ जान लीजै सँभारी
साधौ सोई जन शूर जो खेतपैं मड़ रहै भक्तिमें दानमें रहै ठाढा।
सकल लज्जा तजै महा निरभै गजै पैजनी शान जिन आय गाडा।
भये बहुबीर गम्भीर जे धीर मत सबनको यह कहत ग्रन्थ होई।
तिनविषे कछू इक नाम वर्णन करूं सुनो हो सन्त दे चित्त सोई
पितासों रूठि ध्रुव पांचही वर्षको टेक गहि भक्तिके पन्थ धायो।
छल भयो ना डिगो टेक पूरी भई जीति मैदान हरिदर्श पायो॥
हटो प्रहलाद हरिनाम छाडो नहीं बापने त्रास दै बहु डिगायो।
टेक जब ना टरी राम रक्षा करी दुष्ट मारिकै जन जितायो॥
कबीर दादू घने पहिरि बख्तर बने नामदेव सारिखे बहुत कूदे।
सन सदना भक्त बलि पीपा बडो रामकी ओरकूं चले सूधे॥

मलूक जैदेव राज श्राहकी कलकी धरे शूरदास मुख नाहिं मोडा।
ध्यान बन्दूकमें प्रेम रञ्जक जमा मीर माधो चला कुदाय घोडा॥
दासमीरामिली प्रेमसम्मुखचलीछोडिदईलाजकुल नाहिंमाना।
और शबरी मढी तोडि ऊंची चढी दौर करमा चली प्रेम जाना॥
श्रीशुकदेव रणजीत सांवत कियो लडे कलियुगविषे खम्भ गाडे।
बहुत सेना लिये ललक हूहू किये चरणहीं दास सँग नाहिं छांडे

राग काफी-हो जगके करतार तेरी कहा अस्तुति कीजे ।
तूही एक अनेक भयो है अपनी इच्छाधार ॥
तूही सिरजै तूही पाले तूही करे सँहार ।
जित देखूं तित तूही तू है तेरा रूप अपार ॥
तूही राम नारायण तूही तूही कृष्ण मुरार ।
साधौंके रक्षाके कारण युग युग ले औतार ॥
तुही आदि अरु मध्य तुही अन्त तेरा उजियार ।
दानव देव तुहीसूं प्रगटे तीन लोक विस्तार ॥
जल थलमें व्यापक है तूही घटघट बोलनहार ।
तो विन और कौन है ऐसो जासों करो पुकार ॥
तूही चतुरी शिरोमणि है प्रभु तूही पतित उधार ।
चरणदास शुकदेव तुही है जीवन प्राण अधार ॥
तव गुण करूं बखान यह मेरी बुद्धि कहां है ।
चतुर्मुखी ब्रह्मा गुण गावैं तिनहुं न पायो जान ॥
गुण गावत शंकर जब हारे करने लागे ध्यान ।
गुण अपार कछु पार न आयो सनकादिक कथ ज्ञान॥
गुण गावत नारदमुनि थाके सहसमुखनसूं शेश ।
लीलाको कछु वार न पायो न परिमाण न भेश ॥

शक्ति घनी अनगिनत तुम्हारी बहुतरूप बहु नाँव ।
जबहिं बिचारूं हियमें हारूं अचरज हेरि हिराँव ॥
अति अथाह कछु थाह न पाऊं शोच अचक रहि जाँव ।
गुरू शुकदेव थके रणजीता मैं कहु कौन कहाँव ॥

राग परज—रामगुण कोई न जाने हो ।

शेष महेश गणेश अरु ब्रह्मा रहे थकाने हो ॥
सुरति निरति बुधि गम नहीं सब देव लुभाने हो ।
सनकादिक नारदहू हारे कौन बखाने हो ॥
योगी जंगम ऋषि मुनि तपसी सुर ज्ञाने हो ।
ध्यान लगावैं अन्त न पावैं गये हिराने हो ॥
पशू मनुष कहा कहि सकैं विषैरस लपटाने हो ।
चरणदास शुकदेव दया यह बात पिछाने हो ॥

राग काफी—रामारामा जी साईं

अलख निरंजनरूपा । तूही एक अनेक स्वरूपा ॥
तेरी ज्योति सकल जग छाई । तू घटघट रहो समाई ॥
तूही आदि अनादि कहावै । ब्रह्मादिक पार न पावै ॥
अब गत अविनाशी जाना । निरगुण सरगुण पहिचाना ॥
बहुविधिके भेष बनावै । सिरजै पालै बिनशावै ॥
अचरज कौतुक विस्तारा । जन कारण ले औतारा ॥
तूही है देवनको देवा । सनकादिक लहैं न भेवा ॥
चाहै सो करै पलमाहीं । तूही व्यापक है सब ठाहीं ॥
तूही ज्ञानी गुणी अपारा । पूरण परमातम प्यारा ॥
हैं गुण बहुत कहां लौं गाऊं । विनती करि शीश नवाऊं ॥
शुकदेव गुरू बतलाया । चरणदास शरण तेरी आया ॥
रामारामा जी० ।

सुनि लीजै विनती मेरी । मैं शरण गही है तेरी ॥
तैं बहुतै पतित उधारे । भवजलसूं पार उतारे ॥
हौं सबको नाम न जानूं । अब कोइ कोइ भक्त बखानूं ॥
अंबरीष सुदामा नामा । सो पहुँचाये निज धामा ॥
ध्रुव पांच बरषको बाला । तेहि दर्शन दियो गोपाला ॥
प्रहलाद टेक सुत राखी । यों जानत हैं सब साखी ॥
शबरीके फल तुम खाये । त्रयलोचनके घर आये ॥
पाण्डुनकी करी सहाई । द्रौपदीकी लाज बचाई ॥
गणिकाहू पार लखाई । करमाकी खिचरी खाई ॥
मीरा तुम्हरे रंग भीनी । नरसीकी हुंडी लीनी ॥
धनाको खेत जमायो । तैं साग विदुर घर खायो ॥
कबिराके बालध लाये । सब काज किये मन भाये ॥
सदनासे सेना नाई । तैं बहुत किये मुकताई ॥
ग्राहसों गज जाय छुडायो । तैं मोकूं क्यों बिसरायो ॥
सनकादिक ब्रह्मा ध्यावैं । तेरा शेष आदि यश गावैं ॥
तेरा वेद पार नहिं पाया । जिन नेति नेति बतलाया ॥
मैं काम क्रोधने घेरा । ममताकी डर डर झेरा ॥
मोह लोभके फंदे परिया । तेरा नाम बिसरि दुख भरिया ॥
अब तुमही करो निबेरा । मोहिं जानि चरणको चेरा ॥
मैं पापी महासंतापी । अपराधी बहुत कलापी ॥
तुम छांडि कासुपै जाऊं । यह दुख कौने समझाऊं ॥
शुकदेव गुरू मैं पाया । जिन तेरहि नाम बताया ॥
चरणदास आपनो कीजै । मोहि भक्तिदान वर दीजै रामा ॥

राग रामकली—पतित उधारन विरद तुम्हारो । जो यह बात सांच है हरिजी तौ तुम हमको पार उतारो ॥ बालपने अरु तरुण

अवस्था और बुढापे माहीं। हमसे भई सभी तुम जानौ तुमसे नेकहुँ छानी नाहीं ॥ अनगिन पाप भये मनमाने नख शिख अवगुण धारी। फिरि फिरिकै तु शरणै आयो अब तुमको है लाज हमारी॥शुभ करमनको मारग छूटो आलस निद्रा घेरो।एकहि बात भली बनि आई जगमें कहायो तेरो ॥ चेरो दीनदयाल गुपाल विश्वंभर श्री शुकदेव गुसाईं। जैसे और पतितघन तारे चरणदासकी गहिये बाहीं ॥१॥ अर्ज सुनो जगदीश गुसाईं। ग्रह नक्षत्र अरु देव बिसारो ॥ चरण कमलकी आयो छाईं। सत विश्वास यही हिय धारो॥तोहिं न भूलों एकघरी। इत उतसे मन खैंच लियो है काहूसे कछु नाहिं सरी॥अब चाहो सो करो प्रभु तुमहीं द्वार तुम्हारे सुरति अरी। भावै नरक स्वर्ग पहुँचावो भावै राखौ निकट हरी ॥ अपनी चाह रही नहिं कोई जबसूं तुम्हरी आस धरी। आन भरोसो छोंडि दियो है सकल विकल सब छार करी॥यह आपा तुमहींको दीयो मेरी मो मैं कछु न रही।आदि पुरुष शुकदेव सुनोजी चरणदास यों टेरि कही ॥२॥

राग विभास—अबकी करो सहाय हमारी। दुष्टदलन अरु भक्त बचावन ऐसी साखि तुम्हारी॥जिन प्रहलाद असुर गहि बांध्यो लीन्हो खड्ग निकारी। हिरणाकुश हनि दास उबारो नरसिंहको तनु धारी॥खैंचि ग्राह गज बोरन लागो राम कहो यक बारी।सुनत पुकार पयादेहि धाये तजिके गरुडसवारी॥ द्रौपदी—लाज उबारण कारण आये सभा मँझारी। दीनानाथ लई सुधि वेगहि बाढो चीर अपारी॥ जिन जिन शरण गही संकटमें कहा पुरुष कह नारी। चारौं युग हरि करी सहाई

१—रवि. चन्द्र, भौम, बुध, बृहष्पति, शुक्र,शनि, राहु, केतु ये नवग्रह ।

रक्षक भये मुरारी ॥ गुरु शुकदेव बतायो तोकों सन्तनकी रखवारी । चरणदास थकि द्वारे तेरे गुण पौरुष दियो डारी ॥१॥

राग धनाश्री—अब तुम करो सहाय हमारी ॥ मनके रोग होगये दीरघ तनके बडे विकारी । तुमसों बैद और को दूसर जाहि दिखाऊं नारी ॥ सञ्जीवन मूल अमर मूल हो जासों सोहै दया तुम्हारी। क्रिया कर्मकी औषधि जेती रोग बढावनवारी। दीजै चूरण ज्ञान भक्तिको मेटो सकल व्यथा री । जनके काज पयादै धावत चरणकमल पर वारी ॥ मैं भयो दास अधीन तुम्हारो मेरी करो सँभारी । जो मोहि कुटिल कुचालि जानिके मेरी सुरति बिसारी ॥ चरणदास शुकदेव है तेरो दुष्ट हँसैंगे भारी । हरिजी संकट बेगि निवारो। जनकूं भीर परी है भारी चक्र सुदर्शन धारो॥ कंस निकन्दन रावण गञ्जन हिरणाकुश गहि मारो। दुष्टदलन अरु भक्त उबारण जन प्रहलाद उबारो॥ पांचो पाण्डव राख लिये हैं कौरवदल संहारो। जिन जिन द्वेष कियो सन्तनसों सोइ सोइ हनि डारो॥ निरभय भक्ति करें जन तेरे ऐसो समय विचारो । चरणदासके घटमें वैरी तिनको क्यों न बिदारो ॥

राग विभास—राखोजी लाज गरीबनिवाज। तुम बिन हमरे कौन सँवारे सबही बिगरे काज ॥ भक्त बछल हरिनाम कहावो पतित उधारणहार । करो मनोरथ पूरण जनको शीतल दृष्टि निहार ॥ तुम जहाज मैं काग तिहारो तुम तजि अनत न जाऊं। जो तुम हरिजी मारि निकासौ और ठौर नहिं पाऊं ॥ चरणदास प्रभु शरण तिहारी जानत सब संसार । मेरी हँसी सो हँसी तिहारी तुमहू देखि विचार ॥

राग विलावल—प्रभुजी शरण तिहारी आयो। जो कोइ शरण तिहारी नाहीं भर्मि भाम दुख पायो॥ औरनके मन देवी देवा मेरे

मन तुहि आयो । जबसों सुरति सँभारी जगमें और न शीश नवायो ॥ नरपति सुरपति आश तिहारी यह सुनि करि मैं धायो । तीरथ बरत सकल फल त्यागे चरणकमल चितलायो॥ नारद मुनि अरु शिव ब्रह्मादिक तेरो ध्यान लगायो । आदि अनादि युगादि तेरो यश वेद पुराणन गायो ॥ अब क्यों न बांह गहो हरि मेरी तुम काहे विसरायो। चरणदास कहैं करता तूही गुरु शुकदेव बतायो ॥

राग केदारा-अबकी तारिहौ बलबीर।चूक मोसों परी भारी कुबुधिके सँग सीर ॥ भवसागरकी धारा तीक्षण महागँधीलौ नीर । काम क्रोध मद लोभ भँवरमें चित न धरत अब धीर ॥ मच्छ जहां बलवन्त पांच हू थाह गहर गंभीर। मोह पवन झकोर दारुण दूर पै लवतीर ॥ नाव तौ मँझधार भरमी हिये बाढी पीर । चरणदास कहै कोई नहीं संगी तुम बिना हरि हीर ॥

राग सोरठ-अब जग फन्द छुटावोजी हौं तौ चरणकमलको चेरो । परो रहूं दरबार तिहारे संतन माहिं बसेरो ॥ विना कामना करूं चाकरी आठौं पहरे नेरो । मन सब भक्ति क्रिया करि दीजै मोहिं यही बहुतेरो ॥ खानेजाद कदीमी कहिये तुही आसरो मेरो। झिड़क बिडारौ तहू न छाँडौं सेवा सुमिरण तेरो ॥ काहू और आन देवनसों रहो नहीं उरझेरो । जैसे राखौ त्योंहीं रहहू कर लीजौ सुरझेरो ॥ तेरे घर बिन कहूं न मेरो ठौर ठिकानो डेरो । मोसे पतित दीनको हरिजी तुमही करो निबेरो ॥ गुरु शुकदेव दयाकरि मोकूं ओर तिहारी फेरो । चरणदासको शरणै राखो यही इनाम घनेरो ॥

राग बिलावल-तुम साहब करतार हो हम बन्दे तेरे । रोम रोम गुनहगार हैं बकसो हरि मेरे ॥ दशौ दुवारेमें लहैं सब गन्दम

गन्धा । उत्तम तेरो नाम है बिसरो सो अन्धा ॥ गुण तजिकै औगुण किये तुम सब पहिंचानौ । तुमसों कहा छिपाइये हरि- घटकी जानो॥रहम करो रहनामत यह दास तिहारो । भक्ति पदारथ दीजिये आवागमन निवारो ॥ गुरु शुकदेव उबारलौ अब मेहर करीजै । चरणहिंदास गरीबको अपना कर लीजै ॥

राग रामकली-चारि वरणसों हरिजन ऊंचे । भये पवित्तर हरिके सुमिरे तनके उज्ज्वल मनके सूचे ॥ जो न पतीजै साखि बताऊँ शबरीके जूँठे फल खाये । बहुत ऋषीश्वर ह्वांई रहते तिनके घर रघुपति नहिं आये ॥ भिलनी पाँव दियो सरितामें शुद्ध भयो जल सब कोई जाने। मन्द हतो सो निर्मल हूवो अभिमानी नर भये खिसाने ॥ ब्राह्मण क्षत्री भूपहुते बहु बाजो शंख श्वपच जब आयो । बालमीकि यज्ञ पूरन कीन्हो जयजयकार भयो यश गायो ॥ जाति वरण कुल सोई नीको जाके होय भक्ति परकासा । गुरु शुकदेव कहत हैं तोको हरिजन सेव चरणहीदासा ॥१॥ सब जातिनमें हरिजन प्यारे। रहनी तिनकी कोई न पावै तनसों जगमें मनसों न्यारे ॥ साखि सुनौ अँबरीष भूपकी दुर्वासा जहँ आयो। लगो शराप देन राजाको चक्रसुदर्शन जारन धायो ॥ प्रभुजी आये दुर्योधनके गृह वह मनमें गरवायो । नाना विधिके व्यंजन त्यागे साग विदुरघर रुचिसों पायो ॥ सतयुग त्रेता द्वापर कलियुग मान सन्तन को राखो । भक्तों वश भगवान सभाहीं वेद पुराणनमें यों भाखो॥ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र घर कहीं होय क्यों न वासा। धनि कुल वह शुकदेव बखाने यह तुम सुनो चरणहीदासा॥२॥

राग कान्हरा-धनि वे नर हरिदास कहाये। रामभक्ति दृढही करि पकरी आन धर्म सबही बिसराये ॥ आठ पहर गलतान

भजनमें प्रेम मगन हियमें हुलसाये । आप तरै तारै औरनको बहुतक पापी पार लगाये॥ प्रभु दर्शन बिन और न आशा अर्थ धर्म्म काम अरु मोक्ष न चाहै। आठौ सिद्धि फिरैं सँग लागी नेक न देखैं नैन उठाये ॥ तिनको ऋषि मुनि जाप करत हैं हरि हरिजन दोउ सँगही गाये। ऊंची पदवी इन्द्रहुते देवन देखि अधिक ललचाये ॥ कहैं शुकदेव चरणहीं दासा धनि माता ऐसे जन जाये। जीवत शोभा जगमें पाई तन छूटै हरि माहिं समाये ॥

राग सोरठ—मोको कछु न चहिये राम।तुम बिन सब ही फीके लागैं नाना सुख धन धाम॥ आठ सिद्धि नौ निद्धि आपनी और जननको दीजे। मैं तौ चेरो जनम जनमको निजकरि अपनो कीजे १ स्वर्ग फलनकी मोहिं न आसा । ना वैकुंठ न मोक्षहि चाहौं चरणकमलके राखौ पासा॥ भक्ति न छांडौं मुक्ति न मांगौं सुन शुकदेव मुरारी। चरणदासकी यही टेक है तजौं न गैल तुम्हारी ॥

राग भैरव--वह पुरुषोत्तम मेरा यार। नेह लगा टूटै नहिं तार॥ तीरथ जाउं न बर्त्त करूं । चरणकमलको ध्यान धरूं ॥ प्राण पियारे मेरेहि पास। बन बन माहिं न फिरूं उदास ॥ पढ़ूं न गीता वेद पुराण । एकहि सुमिरौं श्रीभगवान ॥ औरनको नहिं नाऊं शीश । हरिही हरि हैं विस्वे बीश ॥ काहूकी नहिं राखूं आस। तृष्णा काटि दहे है फाँस ॥ उद्यम करूं न दाखूं राम । सहजहिं ह्वै रहै पूरण काम ॥ सिद्धि मुक्ति फल चाहौं नाहिं । नितहि रहूं हरि संतन माहिं ॥ गुरु शुकदेव यही मोहिं दीन । चरणदास आनँद लवलीन ॥

सन्त महिमा ८

राग भैरव--यों कहैं हरिजी दया निधान। सन्त हमारे जीवन प्रान॥ सन्त चलै जहँ सँगही जाँव। सन्तको दीयो भोजन खाँव ॥

सन्त सुलावै जित रहुँ सोय। सन्त बिना मेरे और न कोय ॥ संत हमारे माई बाप। सन्तहिको मन राखूं जाप॥सन्तको ध्यान धरौं दिन रैन। सन्त विना मोहिं परै न चैन ॥ सन्त हमारी देही जान ।सन्तहिंकी राखूं पहिंचान॥ सन्तकी सकल बलइया लेवँ। सन्तकूं अपनो सर्वस देवँ ॥ सन्तहि हेत धरूं अवतार। रक्षा कारण करूं न बार॥सुख देऊं दुख सब निरवार। चरणदास मेरोपरिवार॥

राग सोरठ–भक्तजन सो हरिके मन भावै। निष्कामी अरु प्रेम हियेमें अनन्य भक्ति चितलावै ॥ आन देव जो मोती बरषै तौ नाहीं पतियावै। प्रभुके चरणकमलके ऊपर भँवर गयो लिपटावै ॥ सिद्धि न चाहै ऋद्धि न मांगै दर्शनको ललचावै। मुक्ति आदि दे चाह न कोई आशा सकल गँवावै ॥ रोमहिं रोम पुलकी सब देहीं गोविन्दके गुण गावै। गद्गद वाणी कंठ उसाँसै नैनन नीर ढरावै ॥ परमेश्वर मिलनेकी लहरैं इक आवैं इक जावैं। कहैं शुकदेव चरणदासाही हरिहू कंठ लगावैं ॥

राग बिलावल--हमारे चरणकमलको ध्यान। मूरख जगत भर्मता डोलै चाहत जल असनान ॥ सब तीरथ वाहींसों प्रगटे गंगा आदिक जान। जिन सेवन सब पातक नाशैं नित होवै कल्यान॥सो कत गिरही वाने धारी है सब ही अज्ञान। हरिसों हीरा छांडि दियो है पूजै काच पषान ॥ हरि चरणनकी महिमा जानैं हैं वे संत सुजान। भोंदू नर मायाके चेरेको इनको कह पहिंचान॥ चरणदास शुकदेव गुरूने दीन्हो अंजन ज्ञान। हरिसों प्रीतम सूझ परा है बिसरि गयो सब आन ॥

राग नट व बिलावल सारंग--हमारे रामभक्ति धन भारी। राज न डांडै चोर न चोरै लूटि सकै नहिं धारी॥ प्रभु ऐसे अरु राम रुपैया मुहर मुहब्बत हरिकी। हीरा ज्ञान युक्तिके मोती

कहा कमी है जरकी ॥ सोना शील भंडार भरे हैं रूपा रूप अपारा । ऐसी दौलत सतगुरु दीन्ही जाका सकल पसारा॥ बांटो बहुत घटै नहिं कबहूं दिन दिन ड्योढी ड्योढी । चोखा माल द्रव्य अति नीका बट्टा लगै न कौडी ॥ साह गुरू शुकदेव विराजै चरणदास बन जोटा । मिलि मिलि रंक भूप हो बैठे कबहुँ न आवै टोटा ॥

राग नट बिलावल-जो नर हरि धनसों चित लावै । जैसे तैसे टोटा नाहीं लाभ सवाया पावै ॥ मन करि कोठी नाव खजानों भक्ति दुकान लगावै । पूरा सतगुरु साझी करिकै संगति वणिज चलावै ॥ हुंडी ध्यान सुरति लै पहुँचै प्रेम नगरके माहीं । सीधा साहूकारी सांचा हेर फेर कछु नाहीं॥ जित सौदागर सबही सुखिया गुरु शुकदेव बसाये । जन रंजीत बिलमि रहे ह्वांई योनी-पंथ न आये ॥

राग देवगन्धार-मनुवाँ रामके व्योपारी । अबकै खेप भक्तिके लादी वणिज कियो तैं भारी ॥ पांचौ चौर सदा मग रोकत इनसों कर छुटकारी । सतगुरु नायकके संग मिलि चल लूट सकै नहिं धारी ॥ दो ठग मारग माहिं मिलैंगे एक कनक इक नारी । सावधान हो पेंच न खइयो रहियो आप सँभारी॥हरिके नगरमें जा पहुँचोगे पैहौ लाभ अपारा । चरणदास तोको समझावै ये मन बारंबारा ॥

राग सोरठ-हरि पावनकी गति न्यारी है ।कष्ट तपस्या पढन लिखनसूं ढूंढत मूढ अनारी है॥अडसठ तीरथ भरमत डोले देह गई सब हारी है ।निरजल बर्त्त किये बहु भाँती आश फलनकी धारी है॥ तप करनेको बन जा बैठे कीन्ही त्वचा उघारी है । पौनअहारीतनहूं गारौ दर्शै नाहिं मुरारी है॥विद्यापढि पढि पंडित

हूवा अर्थ करै बहु भारी है। अभिमानी ह्वै जन्मगँवायोभयोन प्रेम खिलारी है ॥ सांचि भक्ति विन हरि नहिं रीझैं बहुत गये शिर मारीहै॥चरणदास शुकदेव श्यामपर तनमनसूं बलिहारी है॥१॥ सुन राम भक्ति गति न्यारी है। योग यज्ञ संयम अरु पूजा प्रेम सबनपर भारी है॥ जाति वरणपर जो हरि जाते तो गणिका क्यों तारी है । शबरी सरस करी सुर मुनिते हीन कुचील जो नारी है ॥ दुश्शासन पति खोवन लागो सबही ओर निहारी है।होय निराश कृष्ण कहँ टेरी बाढो चीर अपारी है॥टेढी लौंडि कंस राजाकी दीन्हों रूप करारी है । एकसूं एक अधिक ब्रजनारी कुबिजा कीन्ही प्यारी है ॥ पांचौं पांडुन यज्ञ सजो है सगरी सजी सवारी है।बालमीकि बिन काज न हो तो बाजो शंख मुरारी है। साधोंकी सेवामें राजो भूपकी सुरति बिसारी है। सैन भक्तके कारण हरिजी वाकी सूरत धारी है। दास कबीरा जाति जोलाहा ब्राह्मण मिलकी ख्वारी है। बनिजारा हो बालिध लाये ताकी करी सँभारी है॥ साखि सुनो रैदास चमारा सो जगमें उजियारी है। कनक जनेऊ काढि दिखायो विप्र गये सब हारी है॥अजामील सदना तिरलोचन नाभा नाम अधारी है। धन्ना जाट काल अरु कूवा बहुत किये भव पारी है॥ प्रीति बराबर और न देखे वेद पुराण विचारी है। चरण-दास शुकदेव कहत हैं ता वश आप मुरारी है॥ २॥

राग गौरी-आवो साधो हिलमिल हरियश गावैं। प्रेमभक्तिकी रीति समझ करि हितसों राम रिझावैं॥गोविन्दके कौतुक लीला गुण ताको ध्यान लगावैं।सेवा सुमिरण वंदन अर्चन नौधासों चित लावैं॥अबकी औसर भलो बनो है बहुरि दाँव कब पावैं। भजन प्रताप तरैं भवसागर उर आनन्द बढावैं॥सतसंगतिको

साबुन लेकर ममता मैल बहावैं। मनको धो निरमल करि उज्ज्वल मगनरूप ह्वै जावैं॥ताल पखावज झांझ मँजीरा मुरली शंख बजावैं। चरणदास शुकदेव दयासूं आवागमन मिटावैं॥

राग बिलावल-करिले प्रभुसों नेहरा मनमाली यार। कहा-गर्व मनमें धरै जीवन दिन चार॥ ज्ञानवेलि गहु टेककी दया क्यारी सवाँर।यतसत दृढको बीजहि बोवै तासु मंझार॥ शील क्षमाके कूपको जल प्रेम अपार।नेम डोलभरि खैंचिकै सींचो बाग विचार॥ छल कीकरकूं काटकैं बाँधो धीरज बार।सुमति सुबुद्धि किसानको राखो रखवार॥धर्म गिलेल जु प्रीतिकी हित धनुष सुधार।झूठ कपट पक्षिनकूं तासों मार बिडार॥भक्तिभाव पौधा लगे फूलै रङ्गफुलवार। हरिरस माता होयकै देखै लाल बहार॥सतसंगति फल पाइये मिटै कुबुद्धि विकार।जब सतगुरु पूरा मिलै चाखै अमृतसार॥ समझावैं शुकदेवजी चरणदास सँभार। तेरी कायामें खिलै साँचौ गुलजार॥

राग मंगल-सोई सुहागिन नारी पियामान भावई। अपने घरको छोडि न परघर जावई॥ अपने पियको भेद न काहू दीजिये।तन मन सुरति लगायके सेवा कीजिये॥पतिकीआज्ञा चाल पाल पियको कहो। लाज लिये कुलवंत यतनहीसूं रहो॥ धनि धनि ह्वै जगमाहिं पुरुष बहु हित धरै।सबसे नायक होय जो सर्वरको करै॥ पियको चाहौ रूप शृंगार बनाइये। पतिव्रता कुल दोयमें शोभा पाइये।नौधा बस्तर पहिरि दया रँगलाल है। भूषण क्षलनधार विचित्तर बाल है। रंग महल निर्दोष ह्वां झिल मिल नूर है।निर्गुण सेज बिछाय सभी करि दूर भै॥ मन्दिर दीपक बाल बिना बाती घीवकी। सुघर चतुर गुणराशि लाडिली पीवकी॥ कहैं गुरु शुकदेव यो

बालम मोहिये । चरणदास ले सीख प्रेम समोइये ॥ १ ॥
परमसुखी सोइ साधु जो आपानाथ पै । मनके रोग मिटाय
नाम निर्गुण जपै ॥ परनिन्दा परनारि द्रव्य नाहीं हरै ।
जिन चालन हरि दूरि बीज अन्तर परै॥क्षण नहिं बिसरै राम
ताहि निकटै तकै । हरि चर्चा बिन और वाद नाहीं बकै॥ झूठ
कपट छल भगल ये सकल निवारिये। यत सत शील सँतोष
क्षमा हिय धारिये ॥ काम क्रोध मद लोभ बिडार न कीजिये।
मोह ममता अभिमान अकस तज दीजिये॥सब जीवन निर्वैर
त्यागि वैराग ले । तब निरभै ह्वै सन्त भाँति काहू न भै॥काग
करम सब छोडि होय हंसागता । तृष्णा आश जलाय सोई
साधूमता ॥ जगसूं रहै उदास भोग जित ना धरै । जब रीझै
करतार दास आपनो करै॥कहै गुरू शुकदेव जो ऐसा हूजिये ।
चरणहिंदास बिचार प्रेममें भीजिये॥२॥ राधेकृष्ण राधेकृष्ण
राधेकृष्ण गाव रे। या देहीको कहा भरोसो पल पल छिनछिन
छीजत आवरे ।कहा अभिमान करै माया यह धोखासा जान
बावरे। मानुष जन्म भाग्यसों पायो बहुरि न ऐसो कबहूं दाँवरे॥
भवसागर जो उतरो चाहै सतसंगतिकी चढले नाव रे।ज्ञानबली
गहि पार मुक्ति हो निश्चय तत्त्वपदारथ पाव रे॥सतयुगमें सतही
सत कहते त्रेता तप करते तन ताव रे। द्वापर पूजा राजमानसी
कलियुग कीर्त्तन हरिहि रिझाव रे॥ ताते सब तजि हरिही हरि
भजि निशिदिन चरणकमल चित लाव रे। चरणदास शुकदेव
बतावे श्याम मिलनको यही उपाव रे॥३॥जगमें दो तारणको
नीका । एक तो ध्यान गुरूका कीजे दूजे नाम धनीका॥कोटि
भांति करि निश्चय कीयो संशय रहा न कोई ।शास्त्र वेदपुराण
टटोले जिनमें निकसा सोई॥ इन्हींके पीछे सब जानौ योग

यज्ञ तप दाना। नौविधि नौधा नेम प्रेम सब भक्ति भाव अरू ज्ञाना ॥ और सबै मत ऐसे मानो अन्न बिना भुस जैसे। कूटत कूटत बहुतै कूटा भूख गई नहिं तैसे॥ थोथा धर्म वही पहिचानौ तामें ये दो नाहीं। चरणदास शुकदेव कहत हैं समझि देखु मन माहीं॥ ४ ॥

राग आसावरी-साधौ भक्ति नफा करि लीजे। दिन दिन काया छीजे॥ मकर तजे तो मथुरा मनमें कपट तजे तो कासी। और तीर्थ सबही जग न्हाया नाहिं छुटी यमफांसी॥ भाल तले तिरवेणी राजे बिरले जन कोइ न्हावै। सुगुरा होय सो नित उठि परशै निगुरा जान न पावै॥ काया मन्दिरमें हरि कहिये वेद पुराण बतावैं। इत उत भूले लोग फिरत हैं धोखेको शिर नावैं॥ यंतर टोना मूँड हलावन ताकूं सांच न मानौ। जिये सार असार गह्यो है तापर भयो सयानौ॥ चरणदास शुकदेव कहत हैं निज करि मूल गहीजे। पारब्रह्म जिन सृष्टि उपाई ता ओरी चित दीजै॥

राग बिलावल-नमो नमो श्रीरामजी देवनके देवा। शिव नारद सनकादि लौं कोइ लहै न भेवा॥ एजी निर्गुणनसों सरगुण भये कौतुक विस्तारे। साधुनकी रक्षा करी दानवदल मारे॥ दशरथ सुत भूले कहै कोइ जानत नाहीं। इकशत अंड दिखाइया अपने मुखमाहीं॥ गोराने परचो लियो सियवेष बनायो। देखे रूप अनन्तही जब मन बौरायो॥ आदि निरंजन एक तू दूजा नहिं कोई। शुकदेव कह्यो चरणदासको नित सुमिरो सोई॥ १ ॥ नमो नमो गोविन्दजी हूं दास तिहारो। चौरासी दुख सब हरो आवागमन निवारो॥ कर्मनको प्रेरो फिरूं नहिं पायो नेरो। अबके ऐसी कीजिये दीजै चरण बसेरो॥ पतित उधारण तुम सुने वदनमें गाये। अजामील गणिका तारी ले पार सुगाये॥ एजी

गुरु शुकदेव बताइया गही तुम्हारी आस । आन धर्मके छोडिकै भयो चरणहींदास ॥ २ ॥

राग जैजैवन्ती–आदि तो सनातन ओई अज अविनाशी है साईं । जाको नहिं वारपार निर्गुनको सत्त्वसार तासों भयो जग सब आप निर्वासी है ॥ अद्वै निराकार जानौ सतचिदानन्द मानौ पुरुषको रूप धरि माया परकासी है । नेति नेति वेद कहै अस्तुति माहिं सदा रहै भेद कछु नाहीं लहै थकथक जासी है ॥ योग ध्यान आवै नाहीं ज्ञानसों न गहो जाई भक्तोंके हिये माहीं सदा जो विलासी है । सन्तौं हेतु देह धरै आयके सहाय करै पृथ्वीको दुःख हरै घटघटवासी है ॥ ऐहो चरणदास जन वासों क्यों न लावो मन शुकदेव कृपा घन खोल दई गांसी है ॥ १ ॥ साँवरो सलोना प्यारो मेरे मन भायो है माई । कहा कहूं शोभा वाकी तीन लोक माया जाकी शेषहूकी रसना थाकी पारहू न पायो है ॥ निरगुण निराकार कोऊ कहा जानै सार सन्तोंकी सहाय काज देह धरि आयो है । ब्रजहूमें कौतुक कीन्हे सन्तनको सुख दीन्हें मुरली बजाय गाय रीझिकै रिझायो है ॥ योगी जाको ध्यान लावैं ब्रह्मा अरु वेद गावैं याको तौ यशोदा माता गोदमें खिलायो है । चरणदास साखी परशुदेव कृपा कीन्हीं बांकोसो बिहारी एक पलमें दिखायो है ॥ २ ॥

बधाई ॥ राग मलार–बधाई सबही ब्रज सोहाई । मुदित भये वसुदेव देवकी मनमें अति अधिकाई ॥ पहुँचे जाय महरि घरमाहीं काहू भेद न जानों । यशुमति रानी बालक जन्मों सबने योंकर मानों ॥ घर घर मंगलचार भये हैं बन्दनवार बँधाई । नूतन बस्तर पहरि पहरिकै नारि सबै घिरि आईं ॥ करि कौतूहल मिलि मिलि गावति करैं उछाह घनेरा । याचक भीर बहुत भई द्वारे बजत

दमामें भेरी॥जिस लायक देखा सो दीन्हा करि शुश्रूषा भारी। इक आवत इक जात बिदा हो देत आशीशहमारी॥धनि गोकुल धनि पौरि भवन धनि आये हैं जगदीशा। शिव ब्रह्मादिक ध्यान धरत हैंलख ईशन को ईशा॥दुष्टदलन सन्तन सुख काजे लीन्हो है अवतारा।चरणदासशुकदेवकहत हैं जगपति सिरजन हारा॥१॥

नन्दघर कौतुक करत नवीने। जो जो वचन किये थे आगे सो अब पूरण कीने॥भक्तवछल करतार गुसाईं धरि आये अव-तारा। रक्षा कारण साधु ऋषिनकी भूमि उतारण भारा॥ जब जब भार बढत पृथ्वीपर तब तब होत सहाई। मर्यादा पुरुषो-त्तम येही बिगरी सबै बनाई॥ निरगुणसों सरगुण वपु धारैं कष्ट निवारण काजे। योगेश्वर जेहि ध्यान लगावैं नाम लिये अघ भाजें॥ भाग बडे यशुमति रानीके दर्शन दीन्हें आई। चरण-दास शुकदेव कहत हैं सुर मुनि करी बधाई॥ २॥ जगपति देखि महरघर आये।बालचरित्र सही दिखलावन आनँद अधिक बधाये॥ तप कीन्हों थो नन्द यशोदा पिछले जन्म अघाई। बर मांगो थो हम सुत होके खेलो भवन मँझाई॥ वचन न मोडा आय विराजे भक्तोंवश सुखदाई।जो जो चाहा सो दीया हूये कुँवर कन्हाई॥ संग लिये सामीप मुक्तिको व्रजमें आवन कियो है।सुख उपजायो नर नारिनको दर्शन आय दियो है॥ जब जब प्रगटे चारों युगमें सत कलि द्वापर त्रेता। चरणदास शुकदेव कहत हैं सन्तनहीके हेता॥३॥ सखीरी आज गोकुल भाग बडाई।दर्शन दे वसुदेव देवकी नन्दघर प्रगटे आई॥भादौं मास बदी बुध आठैं ग्रह नक्षत्र बहु नीके। यशुमति रानी गोर सिरानी भये मनोरथ जीके॥ भयो उछाह स्वरगके माहीं देव सभी हर्षांये।अपने अपने बैठि विमानन पुष्प बहुत वर्षांये॥

यह धरती परफुल्ल भई है फूल उठा बनसारा। कालिन्दीको बडो उमाहो करि हैं लाल बिहारा॥ किरपा सागर होय उजागर मर्यादा बँध बाँधन। चरणदास शुकदेव कहत हैं कारण अपने साधन ॥ ४ ॥ सखी री सुनि देख अभी मैं आई। यशुमति रानी बालक जायो यह तोहिं आनि सुनाई॥ नायन डोलैं हँसि हँसि बोलैं घर घर कहत बधाई। भयो उछाह सकल गोकुलमें बात भई मन भाई॥ सुन सुन आपसमें मुसकाने देन बधाई लागे। भूषण बस्तर लगे सँवारन नरनारी रसपागे॥ बनसों रह गये नँदद्वारे ग्वाल सभी हरषाये। बडी पौरिके आगे याचक गावनहींको आये॥ मैं घर जाऊं बनकर आऊं तुमहू देह शृँगारो। साथ चलैंगी जाय मिलैंगी होइहै कौतुक भारो॥ श्रीशुकदेवका मुँह देखैंगी करि हैं अधिक हुलासा। ऐसो कहि वह भवन सिधारी भनै चरणही दासा॥५॥

राग हिंडोलनो-झूलत हरिजन सन्तभक्ति हिंडोलने राम रमा दृढ खम्भ रोपे प्रेमडोरी लाय। टेक पटरी बैठि सजनी अति आनन्द बढाय॥ ध्यानके जहँ मेघ बरसैं होय उमँग हुलास। गुर्मुखी जहँ समझ भीजैं पूरण हरिके दास॥ बुद्धि विवेक विचारि गावैं सखी सहेली साथ। अगम लीला रटैं सजनी जहां ब्रह्मविलास॥ परमगुरु श्रीजनक झूलैं झूलैं गुरु शुकदेव। चरणदास सखी सदा झूलैं कोई न पावै भेव॥

राग हेली-और न मेरे कोय हेली। प्राणपियारे लालजी रोम रोम वेई रमे री अरी हेली। तन मन व्यापक सोय जित देखों तित लालको री अरी हेली। दूजा नाहीं और आदि अन्त है लालजी सर्वमयी सब ठौर देशकाल सब लाल है री अरी हेली॥ अर्ध ऊरध है लाल दहिने बायें लालजी दशों दिशामें लाल

सोवतहीमें लालहै री अरी हेली। जाग्रतहीमें लाल माहिं सुषोपति लालजी तुरियाहीमें लाल ज्ञान ध्यान सब लाल हैं री अरी हेली॥ लालही गुरु शुकदेव चरणदास है लालकी विरला जानै ॥१॥ जो होवै हरीदास हेली एते कुल तारै वही। फल न मुक्ति चाहै नहीं री अरी हेली भक्ति करै निर्वास॥ बीस चार कुल दादकेरी अरी हेली बीस नानाके जान॥ सोलह कुल ससुरारके द्वादश सुता बखान बहिनीके ग्यारह तेरे री अरी हेली दश भूवाके पार। मौसीके कुल आठही वेद कहत हैं चार॥ अष्टादश यों कहैं री अरी हेली कहैं साधु अरु सन्त। चरणदास शुकदेव भी कहैं कमलको कन्त॥२॥ छूटे जाल जञ्जालहेली। चरणकमलके आसरे भर्मभूत सबही छुटैरी अरी हेली॥ सौन नक्षत्र नाल जन्तर मन्तर सब छुटैरी अरी हेली। छूटे बीर मशान मूठडीठ अब ना लगै नहीं घातको बान॥ शनीश्वर बल अब ना चलै री अरी हेली नहीं राहु अरु केतु। मंगल बृहस्पति ना दहैं नहीं भोग उन देतु॥ ज्योति बाल परसो नहीं री अरी हेली मानूं न देवी देव। सतगुरु मोहिं बताइया साँचो झूठो भेव॥ अठसठ तीरथ न फिरूं री पूजूं न पाथर नीर। श्रीशुकदेव छुटाइया जन्म मरणकी पीर॥ निश्चल हो हरिकी भई री अरी हेली सुमिरूं निर्मल नावँ। अनन्य भक्ति दृढ करि गही मारग आन न जावँ॥ गोविंद तजि और न भजै री अरी हेली जाके मुँहडे छार। चरणदास यों कहत हैं राम उतारै पार॥३॥

सुमिरणका अंग ९

राग काफी—कहा कहि तोहिं पुकारूं करतार हमारे। नाम अनन्त अन्त नहिं जाको बहुगुण रूप तिहारे॥ अजर १ अमर २ अविगत ३ अविनाशी ४ अलख ५ निरञ्जन ६ स्वामी ७।

पुरुष पुरातन ८पुरुषोत्तम ९प्रभु १० पूरण अन्तरयामी ११॥
कृष्ण १२ कन्हैया १३ विष्णु १४ नारायण १५ज्योतीरूप १६
विधाता १७। अपरमपार १८मुकुन्द १९मुरारी२०दीनबन्धु
२१ व्रजनाथा २२॥ यादवपति २३जगदीश२४चतुर्भुज २५
निर्भय२६सर्वप्रकाशी२७। पारब्रह्म २८ प्राणनको दाता २९
सबठां घटघटवाशी३०॥ निर्विकार ३१ परमेश्वर ३२ गिरि-
धर ३३ माधव ३४ गोविंद प्यारा ३५। कमलनैन ३६ केशव
३७ मधुसूदन३८ सबमें ३९ सबसे न्यारा ४०॥हृषीकेश ४१
मुरलीधर४२ मोहन ४३ॐ ४४ अखिल४५ अयोनी ४६।
भगवत४७ वसुदेव ४८ भगवाना ४९ ज्ञानी ५०ध्यानी ५१
मौनी५२॥दीनानाथ५३गोपाल५४ हरी५५हरि५६गरूडध्वज
५७ घनश्याम ५८। भक्तवछल ५९ अरु देवकीनन्दन ६०
करता सब विधिकाम ६१ ॥आदि प्रधान ६२ माधुरी मूरति
६३धरणीधर ६४ बलवीरा ६५। नन्दनँदन६६ अरु यशुदा-
नन्दन६७सुन्दर श्याम शरीरा६८॥ परशुराम६९नरसिंह ७०
विश्वंभर ७१ अचल ७२ अखण्ड ७३ अरूपी७४। ईश७५
अगोचर ७६ और जगतगुरु ७७परमानँद७८ बहुरूपी७९॥
करुणामय ८० कल्यान ८१ अनंता ८२ दयासिंधु ८३
बनवारी ८४। धारणशंखचक्र ८५रुक्मिणिपति ८६ आनँद-
कन्द८७बिहारी ८८ ॥ परमदयाल ८९ मनोहर ९० नरहरि
९१ कृपानिद्धि ९२ फलदाता ९३। कंसनिकन्दन ९४ रावण
गंजन ९५ जगपति ९६ लक्ष्मीनाथा९७॥जगन्नाथ९८॥ अरु
बद्रीनाथा ९९ निरगुण १०० सरगुणधारी १०१ ।दामोदर
१०२ रघुवर१०३सीतापति रामा १०४ कुंजबिहारी १०५ ॥
दुष्टदलन१०६सन्तनको रक्षक१०७सकलसृष्टिको सोई १०८।

दुःख हरणके कौतुक अनगिन शेष पार नहिं पाई ॥ सौ अरु आठ नामकी माला जो नर मुख उच्चारै। अपने कुलकी सारी पीढी एक रु सौको तारै॥ गुरु शुकदेव मन्त्र निज दीन्हो रामनाम ततसारा। चरणदास निश्चय सो जप करि उतरो भवजलपारा ॥

राग केदार—हरिको सुमिरि संकट हरन। कोटि कष्ट निवारि टारन जगपति पोषण भरन॥ भक्तिपूरण देखि निश्चल अननव बाधों परन। अग्नि प्रह्लाद राखो दियो नाहीं जरन ॥ गिरि शिखरसों डारि दीन्हों लगो करुणा करन। दीन जानि संभार लीन्हो कियो ठाढो धरन ॥ खम्भ बाँधो खड्ग काढो दुष्ट लागो अरन । अब बता तेरो राम कित है गहौ वाकी शरन ॥ ढीठ हो प्रहलाद भाष्यो डारि शंका डरन। मोमें तोमें खड्ग खम्भमें मध्य नारी नरन ॥ खम्भ फटकर भये परगट धरो नरसिंह वरन । असुर मारो जन उबारो पुष्प बरषे सुरन ॥ मोहिं गुरु शुकदेव कहिया सेव सोई चरन । चरणदास उपासना दृढ होय तारण तरन ॥

राग अलहिया—सुमिरु मन राम नाम ततसार । जिन जिन सुमिरो नाम सो उबरे भवसागरसों पार ॥ वेद पुराण और षट्माहीं तारणको यहि योग । जोपै पांचौ प्रेत निवारै अरु इन्द्रिनके भोग ॥ साधन संयम पूजा अर्चन और करै तपदान । नाम समान न फल काहूमें करि देखी पहिचान ॥ जो जप करै धरै हिरदैमें आशा सकल बिडार। तीन लोकमें धनि धनि होवै शोभा अगम अपार ॥ सबधर्मन परधान नाम है सब इष्टन शिरमौर । निश्चय पकड रहो याहीको सकल बिकल तजि दौर ॥ तामें ज्ञान भरोही देखै पावै ब्रह्म विचार । गुरु शुकदेव दियो दृढ मोकूं चरणहिंदास सँभार ॥

राग बिलावल-अब तू सुमिरणकर मन मेरे। अगले पिछले अबके कीये पाप कटैं सब तेरे॥ यमके दंड दहन पावककी चौरासी दुख प्रेरे। भर्म कर्म सबही कटि जैहैं जगत व्याध उरझेरे॥ पैहैं सकल मुक्ति गति आनँद अमरहिं लोक बसेरो। जन्मैं मरै न योनी जावै या जग करै न फेरो॥सुमिरन साधनमाहिं शिरोमणि जो मणि सुमिरण जानै। काम क्रोध मद लोभ जरावैं हरि विनु और न मानै॥ गुरु शुकदेव लोभ दियो है बिन सुमिरण जिह्वा करि लीजे। चरणदास कहै घेरि घेरिकर अर्ध ऊर्ध मन दीजै॥

राग केदार-अरे मन करो ऐसो जाप। कटै संकट कोटि तेरे मिटै सगरे पाप॥चेते चेतन खोज करले देख आपा आप। कागसों जब हंस होवै नामके परताप॥ ध्यान आतम सुरति राखौ छुटैं तिरगुण ताप। सुरति माला सुमिरि हिरदै छोड सकल संताप॥ पराभक्ति अगाध अद्भुत विमल अरु निष्काम। चरणदास शुकदेव कहिया बसै निजपुर धाम॥

राग भैरौं-राम राम राम राम राम राम गावो। मनके रोग सकल बिसरावो॥ नाम प्रताप शिला जल तारी। सोई नाम जपो नर नारी॥ नाम लेत प्रल्हाद उबारो। परगट है हिरणाकुशमारो॥ पतित अजामिल सब जग जानै। नाम लेत चढि गयो विमानै॥ सुवा पढावत गणिका तारी। नाम लेत निजधाम सिधारी॥ सोई नाम नारदमुनि गायो। वेदव्यास मुख प्रगट जनायो॥ हरिके नामको करो विचारा। सतसंगति मिलि उतरौ पारा॥ शिव ब्रह्मादिक नाम उपासी। आठ सिद्धि नौ नामकि दासी॥ गुरु शुकदेवने नाम बतायो। चरणदासहरिसोंचितलायो॥

राग बिलावल-रामनाम चारौ वेदको कहियत है टीको। पाप ताप दुख द्वंद्वकूं मेटनकूं नीको ॥ एजी जेहि सुमिरे रक्षा करी प्रहलाद उबारो। निर्गुणसों सर्गुण भयो जानत जग सारो॥ एजी जप तप संयम योगमें सबहुन पर भारी।नाम लिये सबही तरैं बालक नर नारी ॥ जो हिरदै दृढ कर गहै सोइ हरिदर्शन पावै। चौरासी बन्धन कटैं आवागमन नशावै॥ गुरु शुकदेव दया करी हरिनाम बतायो। चरणदास आधीनके निश्चय मन आयो॥१॥ सांचा सुमिरण कीजिये जामें मीन न मेख।ज्यों आगे साधुन कियो वाणीमेंही देख॥ टेक गहो दृढभक्तिकी नौधा हिय धारि। सन्तनकी सेवा करो कुलकानि निवारि॥जासों प्रेम ऊपजै जब मुक्ति दरशाय। आगे पीछेही फिरै प्रभु छोडि न जाय॥ चारिमुक्ति बाँदी भवै सिद्धि चरण नमाहिं।तीरथ सब आशा करैं अघ देख नशाहिं॥कहैं गुरु शुकदेव चरणदास गुलाम। ऐसो साधन धारिये रहिये निष्काम ॥२॥ ऐसा सुमिरण कीजिये सुनिहो मन मेरे। रसना राम उचारिये कर माला फेरे॥निन्दा अकस न रखिये काहू दुख नहिं दीजे। सन्तनसूंसनमुख रहो गुरुसेवा लीजे॥भूखे भोजन दीजिये प्यास नीर पियावो। सबसे नीचा ह्वै चलो अभिमान नशावो॥ सतसङ्गतिमें मिले रहो गुरुमतसूं रहिये। आन धर्म नहिं चालिये यमदण्ड न सहिये ॥ तामसकूं विष ज्यों तजौ शुकदेव बतावै। चरणदास हरिहरि जपै मुकती ह्वै जावै॥३॥ थोथे सुमिरण कहा सरे। मनके रोग शोक नहिं खोये हिंसा डूब अकस जरे॥ नारी सुतसूं मोह कियो है नेक न हरिके प्रेम अरे। कुल नाते परिवार सँभारे साधनकी नहिं टहल करे॥ माला तिलक सुधारि सँवारे राखत छलबल मकर घने। अन्तर और निरन्तर औरै सिंह गऊ मुख रहत बने ॥ ऐसी भक्ति मुक्ति नहिं पावै करम

लगै अरु नरक परै । यमके दण्ड दहन पावककी जनम मरण यों नाहिं टरै ॥ लक्षण प्रेम सहित जप कीजै भीतर बाहर उघर नचे । चरणदास शुकदेव कहत हैं हरि रीझैं जग व्याधि बचे ॥४॥ माला फेरे कहा भयो । अन्तरके मनको नहिं फेरा पाप करत सब जन्म गयो ॥ परनिन्दा पर नारि न भूलो खोट कपटकी ओर नयो । काम क्रोध मद लोभ न खोये ह्वै रह्यो मूरख मोहमयो ॥ दुनिया साँच समझ घर कीन्हो धन जोरनको परन लयो । दया धर्म दोउ मारग छोडे मँगतनको नहिं दान दयो ॥ गुरुसों झूठ भगल साधनसों हरिको नाहीं नेह जयो। चरणदास शुकदेव कहत हैं कैसे कहियो मुकति हयो ॥५॥

राग हेली-और उपसन कोय हेली टेक हमारे नामकी। आन शरण जाऊँ न हेरी अरी हेली होनो होय सो होय ॥ योग यज्ञ तप नामहींरी अरी हेली नाम नक्षत्तर बार । सकल शिरोमणि नाम है तन मन डारूं वार ॥ अडसठ तीरथ नाम थी री अरी हेली नाम हमारे । नामहीसूं राडी रहूं नाम हमारे प्रेम ॥ मरत हमारे नाम री अरी हेली इष्ट हमारे नाम । अर्थ धर्म्म फल नामहीं नाम मुक्तिको धाम ॥ पढन लिखन सब नामहीं री अरी हेली नाम गरही सब देव ।जो कछु है सो नामहीं नाम हमारो भेव ॥ राम नाम शुकदेव दियो री अरी हेली सो राखो मन माहिं। चरणदासके नामहीं इह समतुल कछु नाहिं॥

सगुण उपासना अंग १० ॥ रासशब्दोंके-

दोहा-धन सतगुरु शुकदेवजी, मेरी करी सहाय ।
निज वृन्दावन धामकी, लीला दई दिखाय ॥ १ ॥
अब कछु कौतुक रासको, वर्णत हैं चरणदास ।
लाल लाडिली कृपासों, पावे निज वृजवास ॥ २ ॥

राग रास बिहागरा—नृत्य करत छबिसों बनवारी। टेरि लई सबही व्रजवनिता मुरली मधुर बजाय बिहारी ॥ सुनत श्रवण धुनि होय प्रेमवश व्याकुल भईं सुन्दरि सुकुमारी। गृहके काज लाज तजि पियकी उठि धाईं तनुसुरति बिसारी॥आय गवन छहूं राग मिलि पांच पांच इक इककी नारी । आठ आठ इक इकके बेटा मूरतवन्त स्वरूप महारी॥तालवीण मुरचंग मँजीरा तनन तनन तँबुरा गति न्यारी । तधिन तधिन धिन बजत पखावज घुंघुरू झनकझनक झनकारी॥इक इक गोपियनके सँग इक इक सुन्दर वेष धरो गिरधारी । ऐसो रच्यो रासको मण्डल मध्य राधिका कृष्णमुरारी॥ गावत प्रीति बढाय परस्पर मान करत पियसों पियप्यारी।लेत मनाय लाडिलो प्यारो हँसि हँसि बिहरत दै दै तारी ॥ ततथेई ततथेई थईथई ततथेई उरप तुरप सांगीत उचारी।नटवररूप करो मनमोहन शेष थको वरणत शोभारी॥ भये चकित सुर मुनि ऋषि किन्नर बाढी रैनि शारद उजि-यारी। चरणदास शुकदेव श्यामकी अद्भुत लीलापै बलिहारी॥

राग भैरों रास—देख सखी री रासरच्यौ साँवर बिहारी । ब्रह्मा शिव इन्द्र शेष नारदसे थकित भये ऐसे कवि कौन करै वरणत उपमा री॥सोहै शिर मुकुट और कुण्डल छबि तिलक भार किंकणीकटि पीताम्बर नूपुर झनकारी। बहुत नारी सुघर सखी राधाजू चन्द्रमुखी ललितादिकसहचरीशृंगारसोंसवाँरी॥ कोऊ तबूँरा कोउ मुरचंग कोऊ बजावै गतिमृदंग कोउ ताल देत कोऊ सुर उठान भारी॥बंशीमें करत गान बाँकीसी मधुर तान श्यामा जब करत मन श्याम लै मनारी॥कबहूंकर जोर दोऊ नाचत हैं नवकिशोर कबहूं हरि नृत्य करत कबहूं पिय प्यारी। ता ता ता ता ता ता थेई ह्वै रही बाढी निशि शरद देखि

हरिकी नृतकारी ॥ गउवन तृण छाँडि दियो बछरन पय नाहिं पियो मुरली धुनि सुनत मोहे मुनिजन व्रतधारी । शुकदेवजी गुरुको चरणदास सब ऊपर नाम करै रासको बिलास दियो परगट दरशा री ॥

रास । राग बिहागर-रासमें निरत करत बनवारी । मुदित मनोहर रंग बढावत संग वृषभानु दुलारी॥मोरमुकुट छबि शीश विराजत नाक बुलाक सुधारी।कर मुरली कटि काछनि काछे अलकैं घूँघुरवारी॥ राधाजूके शीश चंद्रिका नीलाम्बर जरतारी । गावैं सखी श्याम श्यामा संग नखशिख रूप उजारी ॥ ताधिना ताधिना धिना बजत पखावज ताल बीण गति न्यारी। ठनन ठनन ठन नूपुरकी धुनि झनन झनन झनकारी ॥ थेई थेई थेई थेई नचत दोऊ मिलि बिहँसि बिहँसि मुसकारी । चरणदास शुकदेव दयासूं पायो दरश मुरारी ॥ रामकलेवा ॥ राग भैरों-नृत्यत गोपाललाल तत्तत ताथेई । नख शिख शृंगार किये राधा गल बाँह दिये सखिया सँग नाचत स्वर ताल दान देई ॥ तननन तूबर गिड गिड धुधकधू मृदंग ताल झम झम झ झांझ बजत बीन बाँसुरी । झनन झनकार होत पायल ठनकार राग गावत कल्याण और नट धनाशिरी ॥ कबहूं लै कान्हरां अलाप कभू सोरठको परज अरु बिहाग रु केदारा आसावरी । कबहूं कै बीभास मालसिरी ललित रामकली भरहूं बिलावल धुनि ध्रुपदको चाव री॥सुन्दर बहुवेष धरे रासको विलास करे मुनिजन मन हरे बढो आनँद उहे ठांई । अद्भुत छबि कहा कहूं किरपा शुकदेव चहूं चरणदास होय रहूं चरणकमल माहीं ॥

रास राग पंचम–सखी दोऊ रसिक प्रीत पिय प्यारी मिलि खेलत हैं रास छबि कहि न जाई। एककी एकसों सरस शोभा बनी निरखि सब सुरमुनि रहे लुभाई ॥ कोऊ कर बीन लै सुघर सुर ताल दै गावत संगीत रीझत रिझाई। थुंकना थुंगना धुधक धूधूकत बजत मिरदंग गति यति सुहाई ॥ तार मुरचंग सुरसप्तसों मुरलिका मधुर धुनि चतुर सारंग बजाई । नचत दोउ भावसों अधिक बहु चावसों तत्तथई थेई गति लगावई ॥ कबहूं पिय प्यारी जू मान करैं लालसों कबहु भुज गहि पिया ले मनाई । धरत सुन्दर डगन बजत नूपुर पगन हँसत दोऊ लसत दिये गरबाहीं ॥ बढ़ी निशि शरदकी कौन वर्णन करै शेष हू सहस मुख रहे थकाई। कहै चरणदास शुकदेव किरपा करी ध्यानके माहीं लीला दिखाई ॥

दोहा–बस री बैरन बाँसुरी, तूही ब्रजके माहिं ।
लगी रहत पिय मुख जु तू, पल छिन छाँडत नाहिं८
जब तू बाजत तानसूं, ऐ बंसी बड भाग ।
कसक उठै जियरा जलै, तन मन लागी आग ॥९॥
हमरे पिय तैं वश किये, करत अधर रसपान ।
कहा टोना कीन्ह्यो जु तैं, बर पाये भगवान ॥१०॥
ब्रह्मा भूले वेदधुनि, शंकर छोडो ध्यान ।
रणजित कह सुनि बाँसुरी, इन्द्र तजो अभिमान११
छैल छबीलो लाडिलो, रंग रंगीलो लाल ।
चरणदासके मन बसो, बंशीधर गोपाल ॥ १२ ॥

राग काफी–मोहन प्यारेकी बंशी बाजै री। हमकूं जरावत विरह अग्निसों जब अधरनपै राजै री ॥ लालनमुख लागी रहै निशिदिन नेक न नाहिंन लाजै री । तनक बांसकी बनी

बँसुरीया गरब भरी अति गाजै री ॥ तैं वश कियो शुकदेव हमारो सुनत कलेजे दाझै री। चरणदास कहैं अब कहा कीजै तुही भई सिरताजै री ॥१॥ वंशीवारेसों नेहरा कीन्हो री। काहूको कछु कहो न मानूं यह तन मन वहि दीन्हो री ॥ भर्मत भर्मत बहुतै हारी भटक भटक जग बीनो री। आन देवसों काज न मेरो सांचो प्रीतम चीन्हो री॥ शोभाको सागर गुणको आगर कुँवर किशोर नवीनो री। नवल लाडिलो मोहन सोहन सोई बर बर लीन्हो री ॥ प्रभुको छाँड भजूं औरनको तौ कहियो बुधिहीनो री ॥२॥ वा मुरलीयाने हेली मेरे प्राण हरे। जब बाजत पियके मुख लागा सुनि धुनि तनुकी सुधि बिसरे ॥ ऐसो जप तप कहा कियो है मोहन सोहन लाल बरे। जाके रसवश भये श्यामजी ता बिन पलछिन कल न परे॥ तीन लोक बिच धूम मचाई सुर मुनि ऋषिके ध्यान टरे। चरणदास शुकदेव दया-सों मनवांछित सब काज सरे॥३॥ या मुरलियाके बोल मेरे हिये कसकै। बाजत मान गुमान गरब ले करि राखो हरिको वशकै॥ बाँकी तान वा ज्यों लागत चुभत कलेजेमें धसकै। नेक न होत पियासों न्यारी अधरनके रसको चसकै॥ कहा करूं कुछ यतन न दीखै कोइ उपाय न होय सकै। चरणदास शुकदेव पियारे कबहूं बोलैंगे हँसकै ॥४॥ बंशीवारे तू साडी गली आय जावो। तेरे कारण भई बावरी टुक मुख छबि दिखला जावो॥ व्याकुल प्राण धरत नहिं धीरज तनकी तपनि सिरा जावो। चरणदास तलफत दर्शन बिन शुकदेव दुःख मिटा जावो ॥५॥

राग परज—तुम्हारे रूप लोभानी हो। जात बरण कुल खोयके भई प्रेम दिवानी हो ॥ खान पान सुधि सब गई और अकबक बानी हो। तुम्हरे चरणकमल मन मेरो रहो लिपटानी हो ॥

सुंदर सूरत मोहनी मेरे नैन समानी हो । तुम बिन चैन नहीं दिन राती सुनि पिय जानी हो ॥ दरश दिखावो सांवरे जब हिये सिरानी हो । नातर वह गति है है हमरी मीन ज्यों पानी हो ॥ शुकदेवो दुख सब हरो काहे बिसरानी हो । चरणदास यह सखी तिहारी मिलजा छानी हो ॥

राग बिहागरा-सुधि बुधि सब गइ खोय री मैं इश्क दिवानी। तलफत हूँ दिन रैनि सखीरी जैसे जल बिन मीननी॥ बिनदेखे मोहिं कल न परत है देखत आँख सिरानी।सुधि आये हियमें दौ लागै नैनन वर्षत पानी ॥ जैसे चकोर रटत चन्दाको जैसे पपीहा स्वाती।ऐसे हम तलफत पिय दर्शन विरह व्यथा इहि भाँती ॥ जबसे मीत बिछोहा हूवा तबते कछू न सुहानी । अंग२ अकुलता सखीरी रोम२मुरझानी॥ बिन मनमोहन भवन अँधेरो भरि भरि आवै छाती । चरणदास शुकदेव मिलावो नैन भये मोहिं घाती ॥१॥ भईहूं प्रेममें चूर हो मोहिं दरशन दीजै। हूं तो दासी तिहारी मोहन वेगि खबरिया लीजै ॥ ज्ञान ध्यान और सुमिरण तेरो तुव चरणन चित राखूं। तेरो नाम जपूं दिन राती तुवबिन और न भाखूं॥ तनु व्याकुल जिय रूंधोहि आवत परी प्रीति गल फाँसी । तुम तो निठुर कठोर महापिय तुमको आवै हाँसी ॥ विरह अग्नि नख शिखसूं लागी मनमें कल्पन भारी । गिरोहि परत तनु सँभलत नाहीं रहत भवनमें डारी॥ कै विष खाय तजों यह काया कै तुम्हरे सँग रहसूं । चरणदास शुकदेव बिछोहा तेरीसूं नहिं सहसूं ॥ २ ॥

राग कान्हडा-तुम बिन अतिव्याकुल भइया । मोहूंको दर्श दिखाव रे मोहन प्यारे चितवन नैन हँसन दशननकी अटक रही हिय मइयाँ॥ वह लटकन मटकन चटकन पर मोरमुकुटकी

छबि छइयाँ। अधर मधुर मुरली सुर गावत टेरी बुलावत गइयाँ॥ हाहा खाऊं शीश नवाऊं और परौं तोरि पइयाँ। वारीहूं बारी मुख ऊपर दोउ कर लेहुँ बलइयां॥ अब धीर रहो नहिं रञ्चक हो शुकदेव गुसइयां। चरणदास भई प्रेम बवारी आनि गहौ क्यों न बहियां॥

राग परज-तुम कैसे जीऊं प्यारे नँदनलाल। भूख प्यास कछु लागत नाहीं तनुकी सुधि न सँभाल॥कल न परत पल पल अकुलावों छिन छिन छिन बेहाल। विरहव्यथाको रोग बढो है पीर महा विकराल॥कहरी कहूं कितै जाऊं री सजनी कौन मेटै जंजाल।लटक चलन बाँकी चितवनकी चुभत कलेजे भाल॥भइ ऐसे यह दूबरी सूझ परो नसजाल।तलफत हूं हियमें दौ लागी नैना बरत मशाल॥ चरणदास यह सखी तिहारी हो शुक-देव दयाल।आप कृपा करि दर्शन दीजै कीजै वेगि निहाल॥

राग बिलावल-लागी री मोहनसों। आनि कानि कुलकी तजि दीन्ही कोउ कैसी बात कहो री॥ श्याम सलोनेके रँग-राती मगन भई कोइ परी ठगो री। निरखत छबि तनुकी सुधि बिसरी प्रेम प्रीति रसमें भइ बोरी। ऐसो रूप उजारो प्यारो शोभा वर्णत शेष थको री। तीन लोक ब्रह्माण्ड सकल सब जाकी मायासों दरशो री॥ कानन कुण्डल गल माल बिराजै शीश मुकुट माथे तिलक फबो री। नखशिख भूषण करलिया लकुटी काँधे सोहै पीत पिछौरी॥ कल न परत निशि दिन बिन देखे रोम रोम मेरे वही रमो री। कान्ह सुजान सदा सुखदाई चरणदासके हिये बसो री॥

राग झंझोटी-आया मेरा मोहन मदनगोपाल। मानो रङ्क अष्ट सिधि पाई निरखत भई निहाल॥ बलि बलि जा दिया अंगन

समादिया मोहिं दरश दियो लाल। कोटि भानु छबि मुखपर वारूं बेंदी सोहै भाल ॥ अद्भुतरूप अनूप साँवरो सुन्दर नैन विशाल। घूंघरवारी अलकैं झलकैं चिकने लंबे बाल॥ चितवत तीखी भौंह मरोरत करलिये वेणु रसाल। गावत तान आनि बांकीसों चलत अनोखी चाल॥ श्रीशुकदेव दयाके सागर नटनागर नँदलाल। चरणदासको किरपा करिकै रीझ दई उरमाल ॥

राग काफी—लटकरी चालपै मैं वारी वारी जादिया। रैन दिना सानूं ध्यान तुम्हारो मन वच कहूं दीबादिया ॥ कुण्डल कान मुकुट शिर सोहै शोभा अधिक सुहादिया । अलबेली छबि बाँके नैना निरखत नैन लुभादिया॥ जब बाजी प्यारे तेरी बंशी खान पान बिसरादिया। भूलगई घर काज साज सब लाज छार उठ आ दिया॥ चरणदास हम भई बावरी फूली अंग न समादिया । राखि शरण शुकदेव पियारो चरणकमल लिपटा दिया ॥१॥ कोई समझावोरी मोहनलालकूं॥ ग्वालबाल सबही सँग लेकर सूने घर धँसि आवै। याकी घाली मोरी आली माखन रहन न पावै॥ लेकर मटुकी चट दे झटकै गटकै माखन सारो। चटपटचाट पोंछ धरि पटकै नट ज्यों सटकै प्यारो ॥ जबहीं जाँव गगरिया भरने ठाढौ रहै बिहारी। आगे आकर कांकर मारै भीजै मोरी सारी॥जो अपने घर बैठि रहूं तो अंगना धूम मचावै। जो कबहूंकै सोऊं सजनी स्वपनेमें दर्श दिखावै॥ मेरे पीछे लागो आली जित जाऊं तित डोलै। कहँ लगि कहूं ढीठता वाकी बात अटपटी बोलै॥ बांको छैल महा अलबेलो प्रगटचो है बृजमाहीं। चरणदास शुकदेव पियारो सदा रहै या ठाहीं॥२॥ कोइ आनि मिलाओ री श्याम सुजानको॥नन्ददुलारो मोहन सोहन अजब अनोखो छैला। मदनगोपाल मुकुन्द मुरारी मेरो

जीवन प्रान री॥ नैनन नींद न आवै सजनी कल न परै दिन रैना। व्याकुल भई फिरत हूं बौरी भूली खान रु पान री॥ जो कोउ हितु ह्वैहै मेरो आली लालनकी सुधि लावै। दर्श दिखाय हरै सब बाधा मोको दे जीदान री। छिन छिन छिन गति और होति है लागो बिरहको बान री। चरणदासकी पीर मिटावो सुन्दर सुखके निधान री॥ ३॥

राग सोरठा—हमारे घर आये हो सुन्दर श्याम। तनकी तपन मिटी देखतही नैनन भयो अराम॥ अँगन लिपाऊं चौक पुराऊं फूल बिछाऊं धाम। आनँद मंगल चार गवाऊं होय पूरन काम॥ अब जागे सखि भाग हमारे मन पायो विश्राम। चरणदास शुकदेव पियाकूं हितसों करूं प्रणाम॥१॥ सो अब घर पाया हो मोहन प्यारा। लखो अचानक अज अविनाशी उघरि गये दृग तारा॥ झूम रहो मेरे आँगनमें टरत नहीं कहुँ टारा॥ रोम रोम हिय माहीं देखो होत नहीं छिन न्यारा॥ भयो अचरज चरणदास न पइये खोज कियो बहु बारा॥२॥ वह घरी कौनसी लागै मोरे नैना। छोटि उमर भोलापन भारी जानूं एक न बैना॥ जब लागे तब कछू न जानी अब लागे दुख दैना। चरणदास शुकदेवकूं देखै जब पावै सुख चैना॥ ३॥

राग मलार—सो विथा मोरी जानत हो अकि नाहीं। नख शिख पावक विरह लगाई बिछुरन दुख मन माहीं॥ दिन नहिं चैन नींद नहिं निशिकूं निश्चल बुधि नहिं मेरी। कासूं कहूं कोउ हितू न हमारो लगन लहरि हरि तेरी॥ तन भयो क्षीन दीन भये नैना अजहूं सुधि नहिं पाई। छतिया धरकत कर्क हियेमें प्रीति महा दुखदाई॥ जल विन मीन पिया विन बिरहिनि इन धीरज कहुँ कैसी। पक्षी जरै दव लगी बनमें मेरी गति

भइ ऐसी ॥ तलफत हूं जिय निकसत नाहीं तनुमें अति अकुलाई । चरणदास शुकदेव विना यों दर्शन द्यौ सुखदाई ॥

राग सोरठ–हमारे नैना दर्श पियासे हो । तन गयो सूखि हाय हिय बाढी जीवतहूं वहि आशा हो ॥ बिछुरन थारो मरण हमारो मुखमें चलै न ग्रासा हो । नींद न आवै रैनि विहावै तारे गिनत अकाशा हो ॥ भये कठोर दर्द नहिं जाने तुमकी नेक न सांसा हो । हमरी गति दिन दिन औरे ही विरह वियोग उदासा हो ॥ शुकदेव पियारे मत रहु न्यारे आनि करो उर बासा हो । रणजीता अपना करि जानो निज करि चरणन दासा हो ॥१॥ ऊधोजी कहां रहे भगवान । हम जानी काहूने मोहे मोहन चतुर सुजान ॥ तबसूं नैनन नींद न आवै धीरज धरत न प्रान । उमँगि उमँगि हियरो हुलसत है वह सुन्दर मुसकान ॥ योग कथा तुम काह सुनावो हमकूं नाहीं ज्ञान । प्रेमकी रीति अनोखी चोखी कापै होत बखान ॥ ऐसो हितू न कोऊ दीखे जाय सुनावै कान ॥ बाढी व्यथा विरहकी तनुमें सुधि लो कृपानिधान ॥ आवो दर्श दिखावो प्यारे देहु हमें जी–दान । चरणदास शुकदेव श्याम बिन तजौं खान अरु पान ॥ २ ॥

राग सारंग–ऊधो क्या जानै हमरे जीवकी । चातक बूँदे चकोर चंदकूं ऐसे हमको पीवकी ॥ नेह कमान बिछुरनके खैंची मारि गये हरि तीरकी । भाल वियोग हिये बिच खटकै सुधि न लई या पीरकी ॥ चरणदास सखि निशि दिन तलफैं ज्यों मछली बिन नीरकी । कहैं कुछ और करैं कुछ औरैं आखिर जात अहीरकी ॥

रेखता–फरजन्द नन्दजीका दिल बीच भावँदा । बरपाय खूब नूपर सुन्दर सुहावँदा ॥ वह साँवला सलोना महबूब यार

मन । आहिस्ता लटक चाल मटक मेरे आवँदा ॥ टीका संदलक खैंचिकै माथे पै अदासों। बरसर बिराजै अफर हीरे जरावँदा ॥ कुण्डल झलकते हैं दरहरदो गोशमें। आवाज बाँसुरीकी शीरी बजावँदा ॥ नीमा जरीका गलमें कटि काछनी बनी है। पीरे डुपट्टेवाला बीरे चवावँदा ॥ करता है नृत्य नादर घुँघरूकि झनकसों। तत्तत्तात थेई थेई गति लगावँदा ॥ नैनोंकी आन तानिके अबरू कमानसूं पलकोंके प्रेम तरी कलेजे चुभावँदा ॥ घायल किया है मेरे तई उसके इश्कने। शुकदेव चरणदासके जियमें समावँदा ॥

राग हिंडोला-हिंडोला झुलत नन्दकुमार। जोडी युगलकिशोर बिराजै नान्ही परत फुआर॥ कंचन खंभ जडित हीरनसों नग लागे ता माहिं। पटुली अधिक अनूपम सोहै डोरी सुरंग सुहाहिं॥ चहूँ ओर बदरा घिरि आये उमड घुमड घहराहिं। गरजत मत पवन झकझोरत दामिनि दमक डुराहिं॥ गावत गीत मलार सहेली मिलि मिलि दै दै तार। झोहिंटा देत विशाखा ललिता आनँद बढो अपार॥ बोलत मोर पपीहा कोयल दादुर हंस चकोर। हरि भूमि ऋतु भई सुहाई भौंर करत अतिशोर॥ भीजत रंग रंगीलो प्यारो शोभा कही न जाय। चरणदास शुकदेव श्यामकी दोउ कर लेत बलाय॥ १॥

झूलत कोइ कोइ संत लगन हिंडोलने। पौन उमाह उछाहै धरती शोचत साबन मास। लाजके जहां उडत बगले मोर हैं जगहास॥ हरष शोक दोउ खंभ रोपे सुरत डोरी लाय। विरह पटरी बैठि सजनो उमँग आवै जाय॥ सकल विकल तहाँ देत झोटे विपति गावनहार। सखी बहुतक रंगराती रंगी पांचौं नार॥ नैन बादल उमँगि बरसैं दामिनी दमकात। बुद्धिको ठराव

नाहीं नेहकी नहिं जात ॥ शुकदेव कहै कोई बली झूलै शीश देत अकोर । चरणदास भये बौरे जात वरण कुल छोर॥१॥

हेली-मो विरहिनकी बात हेली विरहिनि होई सोइ जानिहै। नैन बिछोहा जानती री अरी हेली विरहै कीन्हो घात॥या तनकूं विरहा लगो री अरी हेली ज्यों घुन लागो काठ । निशिदिन खाये जात है देखूं हरिकी बाट॥हिरदैमें पावक जलै री अरी हेली तपि नैना भये लाल।आंशू पर आंशू गिरै यही हमारो हाल॥ प्रियतम बिन कल ना परै री अरी हेली कलकल सब अकुलाहिं।डिगी परूं सत ना रहो कब पिय पकरैं बाहिं ॥गुरु शुकदेव दया करैं री अरी हेली मोहि मिलावैं लाल। चरणदास दुख सब भजैं सदा रहूँ पति नाल ॥१॥ तरसैं मेरे नैन हेली राम मिलन कब होयगो।पिय दर्शन बिना क्यों जिऊं री अरी हेली कैसे पाऊं चैन ॥ तीरथ व्रत बहुतै किये री अरी हेली चित दै सुने पुरान।बाट निहारतही रहूं छाँड दई कुल कान ॥ लगी उमाहेही रहूँ री अरी हेली सुधि नहिं लीनी आय।यह यौवन योंहीं चलो चालो जन्म सिराय॥विरहा दल साजे रहै री अरी हेली छिन छिनमें दुख देह । मन लालनक वश परो भई भाखसी देह गुरु शुकदेव कृपा करोजी अरी हेली दीजै विरह छुटाय। चरणदास पियसूं मिलैं शरण तुम्हरी धाय॥२॥तनकूं कछु न सुहाय हेली प्रीति लगी घनश्यामसूं।जो सुख हैं संसार केरी अरी हेली सो सब दिये बहाय॥ भवन तजो अरु धन तजो री अरी हेली तजी कुलनकी रीत । मान बडाई सब तजी रहा एकहरि मीत॥भूख प्यास निद्रा तजी री अरी हेली तजि दियो वाद विवाद।राग रोष दोऊ तजे तजो पांचको स्वाद॥बहुत डरे सकुचीरहै री अरी हेली कहै न काहू बात। लगी रहै हरिध्यानमें

ऐसे रैनि बिहात ॥ श्री शुकदेव भले कहीरी अरी हेली बारम्बार सँभार । चरणदास हो श्यामकी वही निबाहन हार ॥ ३ ॥
मो मन कछु न सुहाय हेलीप्रीतिलगीप्यारेलालसूं।हँसि हँसिकै टोना कियो री अरी हेली दै गयो मुरली गहाय॥ जबहीं सूं चेटक लगो री अरी हेली ढूंढूं कुंजनमाहिं।बौरी हो दौरी फिरूं वह छबि दीखे नाहिं ॥ मोहिं मिलावै सांवरो री अरी हेली ताके बलि बलि जाँव। जन्म जन्म दासी रहूं कबहूं न छोडो पाँव॥ है कोई पूरी रामकीरी अरी हेली मोहिं बतावै ठौर । जहाँ विराजे श्यामजी वह बडभागी पौर॥ चरणदास घायल भई री अरी हेली मोहन मारो बान । श्रीशुकदेव दिखाइये मेरे जीवन प्रान ॥४॥ वह छबि करूं बखान हेली जा छबिसों नैना लगे। हितू देखि तोसूं कहूं री अरी हेली और पावैं जान ॥ मोर मुकुट माथे दिये री अरी हेली कुण्डल शरवण माहिं।अलकैं बल खाई रहैं योगी देखि लुभाहिं ॥ भौंहन मधि बेंदा दिये री अरी हेली सुन्दर नैन विशाल।मोती नासा सोहना अरू वैजन्ती माल॥नीमों अंग पीरो खुभो री अरी हेली घूमघूमारो फेर । लाल लराऊं पाँवमें मो मन राखत घेर ॥ पहुँचनमें पहुँची कडेरी अरी हेली अँगुरिन मुँदरी छाप । अधरनपै मुरली धरे गावत रीझत आप॥चरणदास तिनकी भई री अरी हेली तन मन डारो वार । गुरू शुकदेव सराहिया बुरो कहो परिवार ॥५॥
बंशीबटकी छाहिं हेली लाल लाडिली मैं लखे। दोउ खडे गावैं हँसेरी अरी हेली अरू डारे गलबाहिं॥मोर मुकुट माथे दियो अरी हेली सुंदर नैन विशाल।पीताम्बर पट सोहनो कर मुरली उर माल ॥ वाके विराजै चंद्रिका री अरी हेली लील वसत जरतार । नख शिख भूषण सोहने अरू फूलनके हार॥ गुरू

शुकदेव बताइया री अरी हेली जब हम लिये पिछान।
चरणदास तिनकी भई लगौ रहै वहि ध्यान ॥ ६ ॥

सन्त शूरमाका अंग ११

दोहा—संत समान न शूरमा, कह रणजीत विचार।
टेक कहैं सम्मुख चलैं, बांधि प्रेम हथियार ॥१३॥

राग सोरठ—ना कोई सन्त समान है शूरा। मोह सहित सब सेना मारी ऐसो सावँत पूरा ॥ क्षमाकि ढाल गही कर अपने बांधे सत तरवारा। कर्म धर्मके दलको पेलै पलपल बारंबारा॥ सुरतको तीर हृदयको तरकस ध्यान कमान बनावै। प्रेम हाथसूं खैंचन लागै चोट निशाने लावै ॥ बुद्धि विवेक कटारी बांधै वचन विलासकि बरछी। सतपुरुषोंके हियरे बांधै कहि कहि बतियां तिरछी ॥ चितमें चाव चौगुनो उनके सुन सुन अनहद तूरा। अगम पंथसों पग न डिगावै होय जाय चकचूरा ॥ मनहु हुलास आश धर पीकी सुनत खेतमें धावै। चरणदास शुकदेव कहत हैं अमरलोक पद पावै ॥

राग सोरठ वा आसावरी—साधू पै जग है सोइ शूरा। काके मुखपर नूर है जब बाजै मारू तूरा ॥ कलँगी अरू गजगाह बनावै इनका परम दुहेला। सावँत वेष बनाय चलत है यह नहिं सहज सुहेला॥ या बानेको नेम यही है पग धरि फिरि न उठावै। जो कछु होय सो आगेहि आगे आगेको ही धावै॥ रणमें पैठि झडाझड खेलै सन्मुख शस्तर खावै। खेत न छोडै ह्वाई जूझै तबहीं शोभा पावै ॥ गुरु शुकदेव दियो है हेला ऐसा होय सो आवै। चरणदास बाना संतनका तो लै शीश चढावै ॥१॥
साधो टेक हमारी ऐसी। कोटि यतन करि छूटै नाहीं कोउ करौ अब कैसी ॥ यह पग धरो सँभाल अचल हो बोल चुके सोइ

बोले। गुरु मारगमें लेन न दीन्हो अब इत उत नहिं डोले॥ जैसे शूर सती अरु दाता पकरी टेक न टारैं। तन करि धन करि मुख नहिं मोडैं धर्म न अपनो हारैं॥ पावक जारो जलमें बोरो टूकटूक करि डारो। साध संगति हरि भगति न छाँडूं जीवन प्राण हमारो॥ पैज न हारूं दाग न लागै नेक उत्तरै लाजा। चरणदास शुकदेव दयासूं सब विधि सुधरे काजा॥२॥

राग सारंग-हमारे राम नामकी टेक टारी ना टरै। लाख करो कोइ कोटि करोजी काहूतै कुछ नाहिं सरै॥ ज्यों कामीकूं तिरिया प्यारी ज्यों लोभीको दाम। अमलदारकूं अमल पियारो ऐसे हमहूं राम॥ दुष्ट छुटावैं गहि गहि पकरों हारिलकी लकडी भई। अब कैसे करि छूटै मोसों रोम रोम तन मन मई॥ ज्यों प्रहलाद पैज दृढ कीन्हीं हिरणाकुशसे बहु अरे। उबरो संत असुर गहि मारो परगट हो हरि आ खरे॥ गुरु शुकदेव सहाय करी है अब पग पाछे क्यों परैं। चरणहिदास वचन नहिं मोडे शूर सती मूपै टरैं॥१॥ साधो टेक गई जाको सब गयो। लाज गई अरु काज गये सब वचन धर्म कछु ना रह्यो॥ जगमें हांस फांस हियमाहीं कायरपन यों दाहि गयो। अब पछिताये होत कहा है वह पान पतेरो बहि गयो॥ पैज तजी मुख कारो हूवो धिक धर्म जीवन तासुको। बोझ गयो ओछकी संगति यह प्रताप कुबासको॥ चरणदास शुकदेव कहै यों टेकन देवो शिर देवो। बारबार नरदेह न पाइये अपयश जगमें क्यों लेवो॥

राग सोरठ-साधौ वेष वही जामें टेक है। टेक नहीं तौ कहा भरोसा टेक बिना नर ते कहै॥ टेक विना कैसी सतवंती टेक बिना सब नहिं शूरमा टेक बिना दाता भी नाहिं टेक बिना नहिं योगी बूबना॥ टेक विना नहिं भक्ता हरिको टेक बिना नहिं सिद्धि है।

टेक बिना सब भर्मत डोलैं टेक बिना नहिं रिद्धि है ॥ साधु सन्त अरु वेद कहत हैं टेक पकरि चढु धामकूं। चरणदास शुकदेव बतावैं टेक मिलावै रामकूं ॥१॥ साधो जो पकरी सो पकरी। अब तो टेक गही सुमिरणकी ज्यों हारिलकी लकरी॥ ज्यों शूराने शस्तर लीन्हों ज्यों बनियेने तावरी। ज्यों सतवंती लियो सिंधौरा तार गह्यो ज्यों मकरी ॥ ज्यों कामीकूं तिरिया प्यारी ज्यों किरपिनकूं दमरी। ऐसे हमकूं राम पियारे ज्यों पालकको ममरी॥ ज्यों दीपककूं तेल पियारो ज्यों पावककूं समरी। ज्यों मछलीकूं नीर पियारो बिछुरे देखै यमरी ॥ साधौंके सँग हरिगुण गाऊं ताते जीवन हमरी। चरणदास शुकदेव दृढायो और छुटी सब गमरी ॥२॥ अरे ले गुरुके वचन चित धर रे। छिन छिन तेरी आयु घटत है वेगि संभारो घर रे ॥ शील क्षमायत दृढ करि राखो गर्व गुमान निवारो। पाँचौ इन्द्रिय वश करि अपने मन गनीमको मारो॥ काया कोटि बुहारि युक्तिसूं सिंहासन धरिये। तापर बैठि अमर पदवी लै राज अभैपुर करिये॥ सबपर अमल चलै अब तेरो तो सम और न कोई। सेवक साहिब लोहा कञ्चन बूँद समुन्दर होई॥ विघ्न कलेश आपदा नाशै निर्मल आनँद पावै। चरणदास शुकदेव दयासूं रहनिगहनिसमुझावै॥३॥ जब गुरु शब्द नगारे बाजैं। पांच पचीसों बडे मवासी सुनिकै डंका भाजैं॥ दृढ दस्तक ले ज्ञान सजावल जाय नरकके माहीं। हरिके धाम भजन करि मांगैं चित्त चौधरी पाहीं॥ कानोगोय लोभके खोटे छलबल पाहीं झूठे। काम किसान रु मोह मुकद्दम सबै बांधि करि लूटे॥ तृष्णा आमिल मदको मातो पकरि गांवसूं काढै। मन राजाको निश्चल झण्डा प्रेम प्रीति हित गाढै॥ सुबुधि दिवान शीलको बकसी यतको हाकिम भारी।

धर्म कर्म सन्तोष सिपाही जाके आज्ञा कारी ॥ साँच करिन्दा औ पटवारी धीरज नेम विचारै। दया क्षमा अरु बडी दीनता पूरी जमा सँभारै॥ मगन होय चौकस कण करिकै सुमति मेवडी मापै। दर्शन द्रव्य ध्यानको पूरण बांटा पावै आपै॥ श्रीशुकदेव अमल करि गाढो सूबस देश बसावै। चरणदासहू तिनको नायब तत परवाना पावै ॥४॥ जो नर इक छत भूप कहावै। सत- सिंहासन ऊपर बैठे यतही चँवर ढुरावैं॥ दया धर्म दोउ फौज महालै भक्ति निशान चलावैं।पुण्य नगारा नौबति बाजे दुर्जन सकल बलावै॥ पाप जलाय करै चौगाना हिंसा कुबुधि नशावै। मोह मुकद्दम काढि मुल्कसों लावै राग बसावै॥ साधन नायब जित तित भेजै दे दे संयम साथा।राम दुहाई सिगरै फेरै कोई न उठावै माथा॥ निर्भय राज करै निश्चल ह्वै गुरु शुकदेव सुनावै। चरणदास निश्चय करि जानौ बिरला जन कोइ पावै॥ ५॥

राग कल्याण—वह राजा सो यह विधि जानै। काया नगर जीतिबो ठानै॥ काम क्रोध दोउ बलके पूरे मोह लोभ अति सावंत शूरे॥ बल अपनो अभिमान दिखावै। इनको मारि राह गढ धावै। पांचौ थाने देह उठाई। जब गढमें कूदे मनराई॥ ज्ञान खड्ग लै द्वन्द्व मचावै। कपट कुटिलता रहन न पावै॥ चुनि चुनि दुर्जन सब हनि डारै। रहते पहते सकल बिडारै॥ मनसों ब्रह्म होय गति सोई। लक्षण जीव रहै नहिं कोई॥ अचल सिंहासन जब तू पावै। मुक्तिखवासी चँवर ढुलावै॥ आठौं सिद्धि जहां कर जोरैं। सौहीं ताके मुख नहिं मोरैं॥ निश्चल राज अमल करै पूरा। बाजे नौबत अनहद तूरा॥ तीन तीस अरु कोटि अठासी। वैभी सब तेरी करैं खवासी॥ गुरु शुकदेव भेद दियो नीको। चरणदास मस्तक कियो टीको॥ रणजीता यह रहनी पावै। थोथी करनी कथनि बहावै॥

योगका अंग १२

राग करखा—साधो गुरु दया योग इहविध कमायो। मूलको शोधि संकोच करि शंखिनी खैंचि अपान उलटो चलायो॥बंध पर बंध जब बंध तीनों लगैं पवन भइ थकित नभ गर्जि आयो। द्वादशा पलटि करि सुरति दो दल धरी दशौं परकार अनहद बजायो॥ रोक जब नवनको द्वार दशवें चढो शून्यके तखत आनँद बढायो। सहस दल कमलको रूप अद्भुत महा अमीरस उमँग आ झरि लगायो॥ तेज अति पुञ्ज परलोक जहँ जगमगे कोटि छबि भानु परकाश लायो। उनमनी और चित हेत करि बसि रहो देखि निज रूप मनुवां मिलायो॥काल अरु ज्वाल जग व्याधि सब मिटि गई जीवसों ब्रह्मगति वेगि पायो। चरणदास रण जीत शुकदेवकी दयासों अभयपद परशि अविगत समायो॥१॥ साधो पिण्ड ब्रह्मांडकी सैल गुरु गम करी परशि या युक्तिसों अलख राई। सहजही सहज पग धरा जब अगमको दशौं परकार झागड बजाई॥ खोलि कपाट अरु वज्रद्वारे चढो कलाके भेद कुञ्जी लगाई। पहलके महलपर जाय आसन किया दूसरे महलकी खबरि पाई॥ तीसरे महल पर सुरति जा बसि रही महल चौथे दुही अमी गाई। पांचवें महलपर साधु कोइ पाइ है महल छठवां दिया गुरु गुबाई॥ सातवें महलपर कोटि सूरज दिपै आठवें महल अविगति गोसाईं। रूप अद्भुत तहां देखि अचरज जहां देखियादरशतब विपति जाई॥ शुकदेवकी सहासों धारण गहासों आपने पीवके भवन आई। चरणदास आपा दिया प्रेम प्याला पिया शीश सदके किया पूजि पाई॥२॥ साधो परसिया देश जहँ भेश नाहीं। घाट तिस लखि जहां बाट सूझै नहीं सुरतिके चांदने सन्त जाई॥ चन्द्र षोडश दिपै गंग उलटी बहैं सुखमना

सेस पर लम्ब दमकै। तासुके ऊपरै अमीका ताल है झिलमिलि ज्योति परकाश झमकै ॥ चारि योजन परे शून्य स्थान है तेज अति शून्य परलोक राजे । द्वार पश्चिम धसे मेरुही दण्ड हो उलटि कर आय छाजै बिराजै॥ नूर जगमग करै खेल अगाध है वेदहू कहे नहि पार पावैं। गुरुमुखी जाय हैं अमरपद पाय हैं शीशकी लोभ तजि पन्थ धावैं ॥ तीन सुन छेदि रणजीत चौथे बसै जन्म अरु मरण फिरि नाहिं होई । चरणदास करि वास शुकदेव बकसीससों पूज वेगमपुरी अमर सोई ॥

राग सोरठ–ऐसा देश दिवाना रे लोगो जाय सो माता होय। बिन मदिरा मतवारे झूमैं जन्म मरण दुख खोय ॥ कोटि चन्द सूरज उजियारो रवि शशि पहुँचत नाहिं। बिना सीप मोती अनमोलक बहु दामिनि दमकाहिं ॥ बिन ऋतु फूल फूले रहत हैं अमृत रसफल पागो । पवन गवन बिन पवन बहत है बिन बादर झरि लागो॥ अनहद शब्द भवँर गुंजारैं शंख पखावज बाजैं । ताल घण्ट मुरली घन घोरा भेरी दमामें गाजैं॥ सिद्ध गर्जना अतिही भारी घुँघरू गति झनकारैं। रम्भा नृत्य करै बिन पगसों बिन पायल ठनकारैं ॥ गुरु शुकदेव करैं जब किरपा ऐसो नगर दिखावैं । चरणदास वा पगके परशे आवागमन नशावैं ॥

राग सारंग व बिलावल व सोरठ–साधो अजब नगर सुख दाई। औघट घाट बाट जहँ बांकी उस मारग हम जाई॥ श्रवण बिना बहु वाणी सुनिये बिन जिह्वा स्वर गावैं। बिना नैन जहँ अचरज दीखै बिना अंग लपटावैं॥ बिना नासिका बास पुष्पकी बिना पाँव गिरि चढिया । बिना हाथ जहँ मिलो धायकै बिन पाधा जहँ पढिया॥ ऐसा घर बड भागी पाया पहिरि गुरूका बाना। निश्चय ह्वैके आशा मारी मिटि गया आवन जाना॥

गुरु शुकदेव करी जब किरपा अनभय बुद्धि प्रकाशी । चौथे पदमें आनँद भारी चरणदास जहँ बासी ॥

राग सोरठ-सो गुरु विन वह घर कौन दिखावै।जिहि घरअग्नि जलै जल माहीं यह अचरज दरशावै॥कामधेनु जहँ ठाढी सोहै नैन हाथ बिन दुहना।घाये दूधा थोडा देवै भूखें दे पय दूना ॥ पीवैं जन जगदीश पियारे गुरुगम बहुत अघावैं।मूरख कायर और अयोगी सो वे नेक न पावैं॥अमृत अँचवैं वा पद पहुँचे महातेजको धारै।होय अमर निश्चल ह्वै बैठे आवागमन निवारै॥ भेद छिपावै तौ कल पावै काहूसे नहिं कहिये । वह अद्भुत है ठौर अनूठी बड भागनसो लहिये॥ या साधनके बहु रखवारे ऋषी मुनि देवत योगी।करन न देवैं बुधि हरि लेवैं होय न गोरस भोगी॥ लोभी हलकेको नाहिं दीजै कहै शुकदेव गोसाँई।चरण दास त्यागी वैरागी ताहि देहु गहि बाहीं ॥१॥ सो गुरु गम मगन भया मन मेरा।गगनमण्डलमें निज घर कीन्हों पंच विषय नहिं घेरा ॥ प्यास क्षुधा निद्रा नहिं व्यापी अमृत अचवन कीन्हा। छूटी आश भास नहिं कोई जगमें चित नहिं दीन्हा॥ दरशी ज्योति परमसुख पायो सबही कर्म जलावै।पापपुण्य दोऊ भै नाहीं जन्म मरण बिसरावै॥ अनहद आनँद अति उपजावै कहि न सकूं गति सारी ।अति ललचावै फिरि नहिं आवै लगी अलखसों यारी॥सहस कमल दल सतगुरु राजै रुचिरुचि दरशन पाऊं । कहि शुकदेव चरणही दासा सब विधि तोहिं बताऊं॥

राग मलार-चहूं दिशि झिलमिल झलक निहारी । आगे पीछे दहिने बांयें तल ऊपर उजियारी॥ दृष्टि पलक त्रिकुटी ह्वै देखै आसन पद्म लगावै।संयम साधै दृढ आराधै जब ऐसी सिधि पावै ॥ बिन दामिनि चमकार बहुतही सीप बिना लर

मोती । दीपमालिका बहु दरशावै जगमग जगमग ज्योती॥ ध्यान फलै तब नभके माहीं पूरण हो गति सारी । चन्द घने सूरज अणकी ज्यों सूभर भरिया भारी ॥ यह तो ध्यान प्रत्यक्ष बतायो श्रद्धा होय तौ कीजै । कहि शुकदेव चरणहीं दासा सो हमसों सुनि लीजै ॥

राग केदारा–अवधू सहस दल अब देख। श्वेत रँग जहँ पैंखरी छबि अग्रडोर विशेख ॥ अमृत वरषा होत अति झरि तेज पुंज प्रकाश । नाद अनहद बजत अद्भुत महा ब्रह्म विलास॥ घंट किंकिणि मुरलि बाजै शंखध्वनि मनसान । जहँ ताल भेरि मृदंग बाजत सिद्धि गर्जन जान ॥ कालकी जहँ पहुँच नाहीं अमरपदवी पाव । जीती आठौ सिद्धि ठाढी गगन मध्यो आव ॥ करै गुरु प्रताप करणी जाय पहुँचै सोय । चरणदास शुकदेव कृपा जीव ब्रह्मै होय ॥

राग धनाश्री–सो गुरुगम इहि विधि योग कमायो । आसन अचल मेरु कियो सीधो कसि बंध मूल लगायो॥संयम साधि कलावश कीन्ही मन पवना घर आयो।नव दरवाजे पट दै अर्धं ऊर्ध्व मिलायो ॥ नाभितलै पैडो करि पैंठे शक्ति पताल गई है कांप्यो शेष कमठ अकुलायो सायर थाह दई है ॥ उलटि चले मठ फोरि इकीसो गये अभय पद–माहीं । अति उजि-यारो अद्भुत लीला कहन सुनन गम नाहीं। जित भये लीन सबै सुधि बिसरी छूटी जगतकी बाधा । चरणदास शुकदेव दयासों लागी शून्य समाधा॥१॥सो साधो ऐसी योगयुक्ति गति भारी । मूलहिबंध लगाय युक्तिसों मूंदि दई नव नारी॥ आसन पद्म महादृढ कीन्हों हिरदय चिबुक लगाई । चंद्र सूर दोउ सम करि राखे निगति सुरति घर आई ॥ ऊपर खैंचि

अपान सहजमें सहजै प्राण मिलाई । पवन फिरी पश्चिमको दौरी मेरुहि मेरु चलाई ॥ ऐसेहि लोक अमरपद पहुँचे सूरज कोटि उज्यारी । श्वेत सिंहासन सतगुरु परशे करि दरशन बलिहारी ॥ आपा बिसरि प्रेम सुख पायो उनमन लागी तारी।चरणदास शुकदेव दयासों जन्म मरण छुटि बारी ॥२॥

राग मलार–वा पद रामसोंकरि नेह। विषकी बूंद न पइये जित ह्वां बरषत अमृत मेह ॥ चमकत बिजुली गरजत गगना बाजत अनहद घोर । यह मन गलत थकत जित पांचौ मिटि है निशि अरु भोर ॥ जाग्रत मिटि है स्वप्नौं मिटि है मिटिहु सुषोपत जाय।षट ऋतु पइये नाहिं न अवधू एकहि रस दर्शाय॥ बिनहीं जोते बिनहीं बोये उपजत खेत है धीर।लागत अचरज फल महँ मुक्ता बिनहीं सींचे नीर॥राजा गुरु शुकदेव न बाँटै सबहि करैं बकसीस।चरणदास सब रास पावै मिलि हैं बिस्वेबीस॥

राग सोरठ–अवधू ऐसी मदिरा पीजै।बैठि गुफामें यह जग बिसरै चंद सूर सम कीजै॥जहाँ कलाल चढाई भाठी ब्रह्म ज्वाल परजारी। भरि भरि प्याला देत कलाली बाढै भक्ति खुमारी ॥ माता ह्वै करि ज्ञान खड्ग लै काम क्रोधको मारै।घूमत रहै गहै मन चंचल दुविधा सकल बिडारै॥जो चाखै यह प्रेम सुधारस निजपुर पहुँचै सोई। अमर होय अमरापद पावै आवागमन न होई ॥ गुरु शुकदेव किया मतवारा तीनि लोक तृण बूझा। चरणदास रणजीत भये जब आनँद आनँद सूझा ॥

राग सारंग–पीवै कोई यह प्याला मतवारा। सुर नर मुनि जा मदको तरसैं गुरु विन लहै न बारा ॥ शूदरके घर भाठी औटै ब्रह्मा अग्नि जलाई । शिव शोधै अरु विष्णु चुरावै पीवै साधु अघाई॥सीता प्याला भरि२ देवै हनूमान हंकारैं। व्यास

शेष नारद सनकादिक किरिया नाहिं बिचारैं॥ नवधा नेम औ संयम पूजा बिसरी सब क्या कहिये। घूमत रहै महारस चाखे स्वर्ग मुक्ति ना चहिये॥ श्रीशुकदेव सुधारस अमृत नितप्रति अँचवन कीन्हा। चरणदास पर किरपा करिकै निजप्रसाद करि दीन्हा॥१॥ साधो यह प्याला मतवार है। अँचवैगा कोई योग युगन्ता चित स्थिर मन मारिहै॥ चन्द सूर दोउ सम करि राखै ब्रह्मज्वाल अन्तर बरै। मुद्रा लगै खेचरी जबहीं वङ्कनाल अमृत झरै॥ भँवर गुफामें भाठी औटै भभक भभक सुषुमन चुवै। सगुरा पीपी रहित भये हैं बिन पीये उपजैं मुये॥ शिव सनकादिक नारद शारद और पिया नौ नाथ है। सिधि चौरासी हरिपद वासी मगन भया सब साथ है॥ रामानन्द कबीर नामदेव अमर हुए जिन जिन पिया। गुरु शुकदेव करी जब किरपा चरणदासको सो दिया॥२॥

राग धनाश्री–जो जन अनहद ध्यान धरै। पांचौं निर्बल थाके जीवतही जु मरै॥ शोधे मूलबन्ध दे राखै आसन सिद्ध करै। त्रिकुटी सुरति लाय ठहरावै कुम्भक पवन भरै॥ घन गरजे अरु बिजुली चमकै कौतुक गगन घरै। बहुत भाँति जहँ बाजन बाजै सुनि सुनि सन्ध अरै॥ सहज सहजमें हो परकाशा बाधा सकल हरै। जगकी आश बात सब टूटैं ममता मोह जरै॥ शून्य शिखरपर आपा बिसरै कालसों नाहिं डरै॥ चरणदास शुकदेव कहत है सब गुण ज्ञान गरै॥१॥ तबते अनहद घोर सुनी। इन्द्रिय थकित गलित मन हूओ आशा सकल भुनी॥ घूमत नैन शिथिल भइ काया अमल जु सुरति सनी। रोम रोम आनन्द उपजि करि आलस सहज बनी॥ मतवारे ज्यों शब्द समायो अन्तर भीज कनी। भर्म्म कर्म्मके बंधन छूटे

दुबिधा विपति हनी ॥ आपा बिसरी जगको बिसरो कित रहिं पांच जनी । लोग भोग सुधि रही न कोई भूलौ ज्ञान गुणी॥हो तहँ लीन चरणहीं दासा कह शुकदेव मुनी। ऐसो ध्यान भाग्यसों पइये चढि रहे शिखर अनी ॥ २ ॥

राग बिलावल–घटमें खेल ले मन खेला । सकल पदारथ घटही माहीं हरिसों होय जु मेला॥ घटमें देवल घटमें जाती घटमें तीरथ सारे। वेगहि आव उलटि घटमाहीं बीतै परबी न्हाले ॥ घटमें मानसरोवरसूं भर मोती और मराला।घटमें ऊंचा ध्यान शब्दका सोहं सोहं माला ॥ घटमें विन सूरज उजियारा राति दिना नहिं सूझै। अमृत भोजन भोग लगत है विरला जन कोइ बूझै ॥ घटमें पापी घटमें धर्मी घटमें तपसी योगी । गुण अवगुण सब घटही माहीं घटमें वैद्य अरु रोगी ॥ राम भक्ति घटहीमें उपजै घटमें प्रेम प्रकासा । शुकदेव कहैं चौथा पद घटमें पहुँचे चरणहिंदासा ॥

राग विभास–घटमें तीरथ क्यों न न्हावो । इत उत डोलो पथिक बनेही भरमि भरमि क्यों जन्म गवाँवो ॥ गोमति कर्म सुकारथ कीजै अधरम मैल छुटावो । शील सरोवर हितकरि न्हइये काम अग्निकी तपनि बुझावो ॥ रेवा सोई क्षमाको जानो तामें गोता लीजै । तनुमें क्रोध रहन नहिं पावै ऐसी पूजा चित दैकीजै॥सत यमुना संतोष सरस्वती गंगा धीरज धारो । झूठ पटकि निर्लोभ होय करि सबही बोझा शिरसों डारो ॥ दया तीर्थ कर्मनाशा कहिये परशे बदला जावै। चरणदास शुकदेव कहत हैं चौरासीमें फिरि नहिं आवै॥

राग विभास–घटमें तीरथ यों तुम न्हावो । तिनके न्हान अमरपद पहुंचो आदिपुरुष निश्चय करि पावो॥काशी सोतत

करणी कीजै कलिमल सकल नशावो। रहनि गहनि पुष्करको जानौ यामें मज्जन क्यों न करावो ॥ ध्यान द्वारका दृढ करि परशौ हितकी छाप लगावो। इंद्री जित सोइ बदरीनाथा यह गति सतकरि चितमें लावो॥भवँर गुफामें है तिरवेणी सुरति निरति लै धावो।योग युक्तिसो चुबकी लेकर काग पलटि हंसा ह्वै जावो। तनु मथुरा अरु मन वृंदावन तामें रास रचावो। हिरदय कमल खिले परकाशा दरशन देखि अधिक हुलसावो॥ गुरु चरणनमें सबही तीरथ सिमिटि सिमिटि तहँ आवो। चरण-दास शुकदेव कहत है अपनो मस्तक भेंट चढावो॥

राग परज—सुधारस कैसे पइये हो। कूप कहाँ केहि ठौर है कैसे करि लइये हो॥ नेजू कित कित गागरि कित भरनेवारी हो। कैसे खुलै कपाटहीको ताला ताली हो॥ कौन समैं किस गृह विषै अँचवै किन माहीं हो।तुमसे जानै भेदको अरु बहुतक नाहीं हो॥पीकरि किस कारज लगै अरु स्वाद बतावो हो।फल याका कहि दीजिये सब खोलि जतावो हो॥शुकदेवसों पूछन करैं यह चरणहिं दासा हो। किरपा करिकै कीजिये मेरी पूरी आशा हो॥१॥ गुरु हमारे प्रेम पियायो हो।ता दिनते पलटो भयो कुलगोतनशायोहो॥अमल चढो गगन लागो अनहद मन छायो हो। तेज पुञ्जकी सेजपै प्रीतम गल लायो हो॥ गये दिवाने देहसे आनंद दरसायो हो। सब किरया सहजै छुटी तप नेम भुलायो हो॥ त्रैगुणते ऊपर रहूं शुकदेव बसायो हो। चरणदास दिन रैनि नहिं तुरिय पद पायो हो॥ २॥

राग जैजैवंती—ऐसी जो युक्ति जानै सोई योगी न्यारा।आसन जो सिद्धि करै त्रिकुटीमें ध्यान धरैबिना तेल दिया बरै ज्योति हू उज्यारा॥संयम सँभाल साधै मूल द्वार बन्ध बांधै शंखनी

उलटि साधै कामदेव जारा । प्राण वायु हिय माहीं खैंचिकै अपान लाहीं दोउ नीके मिलि जाहीं ऐसा खेल धारा ॥ कुम्भक अथक राखै अनहदकी ओर ताकै सुखमन पैठि नाकै आगे जो विचारा । खोलिकै कपाट सिरा कोऊ चढै शूरवीरा कामधेनु जावै तिरा अमीको उतारा ॥ उनमनी जाय लागै निज गृहमाहिं जागै जन्म मरण भागै छूटै यम भारा । गुरु शुकदेव लहै करणी यहि विधि लहै चरणदास होय रहै आपको सँभारा ॥

राग सोरठ व सारंग-पांचन मोहिं लियो बलिमा । नासा त्वचा और श्रवणीया नैनन अरु रसना ॥ एक एकने वारी बाँधी गहि गहि लैलै जाहिं । निशि दिन उनहींके रस पागो घरमें ठहरत नाहिं ॥ अलि पतंग गज मीन मृगा ज्यों होय रह्यो परधीन । अपनो आप सँभारत नाहीं विषय वासना लीन ॥ हौं कुलवंती टोना सीखौं अनहद सुरति धरूं । गगन मण्डलमें उलटा कूवां तासों नीर भरूँ ॥ भँवर गुफामें दीपक बारो मन्तर एक पढ़ूं । काम क्रोध मद लोभ होमकर बालम चित्त धरूं ॥ यतन यतन करि पीव छुटाऊं फिर नहिं जान न दूं । चरण-दास शुकदेव बतावैं निज मनहीं करलूं ॥

राग सोरठ—तू सदा सोहागिन नारी है । पियके सँग मिला मद पीवै ताते लागत प्यारी है ॥ भँवर गुफामें भवन बनायो-बिन घृत ज्योति जारी है । सुषमन सेज महा सुखदायी भोगत भोग दुलारी है ॥ वश कियो कन्था चलै न पन्था टोना डारो भारी है । आठ पहर तुम्हरे रंग राचो हमको मिलै न वारी है ॥ पति मनमानी सो पटरानी सोई रूप उज्यारी है । हम चारौ जो सौति तुम्हारी तुम गुण आगे हारी है ॥ चरणहिं दास भई

त्वहिं सेवैं लगी रहै नित लारी है। शुकदेवा शिर छत्र हमारो सो वश भयो तुम्हारी है॥

राग बिरलावल–करणीकी गति और है कथनीकी और। बिन करणी कथनी कथै बकवादी बौर। करणी बिन कथनी ऐसी ज्यों शशि बिन रजनी। विन शस्तर ज्यों शूरमा भूषण विनस जनी॥ज्यों पण्डित कथि कथि भले वैराग सुनावै। आप कुटुम्बके फंद पडे नाहीं सुरझावै॥ बांझ झुलावैं पालना बालक नहिं माहीं। वस्तु विहीना जानिये जहँ करणी नाहीं॥ बहु डिंभी करनी बिना कथि कथि करि मूये। संतों कथि करणी करि हरिकी सम हूये॥ कहै गुरू शुकदेवजी चरणदास बिचारौ। करणी रहनी दृढ गहौ थोथी कथनी डारौ॥

हेली–पांच लै लार हेली काया महल पग धारिये। योगयुक्ति डोला करौ री अरी हेली प्रान अपान कहार॥ कुञ्ज कुंज सब देखिये री अरी हेली नाना बाग पहार। मानसरोवर न्हाईये सदा वसन्त निहार॥ विना सीप मोती बनैरी अरी हेली विना गुंद फूलन हार। विन दामिनि चमका रहै विन सूरज उजियार॥ अनहद उत बाजे बजैं री अचरज बहुतक ख्याल। तेजपुंजकी सेजपै कागा होहिं मराल॥ श्रीशुकदेव कृपा करैं जब पावै यह भेद। चरणदास पियसों मिलै छुटैं जगतके खेद॥१॥ योग युक्ति करि लेहि हेली। जो चाहै हरिसों मिलो आसन संयम साधिके री॥ गमनमण्डल करि गेह उलटी दृष्टी चढाईये री होय सूरज परकाश।करम भरम सबही जरैं सहज छुटै जग आश॥ प्रान अपान मिलायकै री मूल बन्दको बांधि। रसना उलटि लगाइये सुरति ऊर्ध्वको साधि॥ बङ्क सुधारस पीजिये अनहद हो गलतान। भँवर गुफा दृढ बैठिके शून्य

शिखरको ध्यान ॥ सुषमन मारग ह्वै चलौ री जब पहुँचौ निजधाम । अचल सिंहासन श्वेत है जहाँ विराजैं राम ॥ यह साधन शुकदेवका री जो कोइ जानै साध । चरणदास अविगति लई देखै खेल अगाध ॥ २ ॥

बैरागका अंग १३

राग मङ्गल-चलाचली जग ठाट अचल हरि नाम है। माल मुल्क चलि जाय जाय रजधाम है॥ तेल फुलेल लगाय बहुत सुन्दर गहे। नाना करते भोग सोभी नर ना रहे॥ तेज तमक और रूप जाय यौवन घना। सकल बराती जायँ जायँ दुलहिनि-बना ॥ रोगी रोग अरु वैद्य आय औषधि भले । ज्योतिष पुस्तक तट विन सर जल लै मिले ॥ ज्ञानी पण्डित पीर अधिक बेवश गले । गौस कुतुब अब्दाल पैगम्बर सब चले ॥ एकके पीछे एक बहीर लगीं चली। नरपति सुरपति जाहिं अन्त वाही गली ॥ ऋषि मुनि देवन सिद्ध योगेश्वर जाहिंगे । जिन वश कीन्हीं मौत सो भी न रहाहिंगे ॥ पांच तत्त्व गुण तीनि नहीं ठहराहिंगे । स्वर्ग मृत्यु पाताल सभी रलि जाहिंगे ॥ धरती अम्बर जाय जाय शशि भान है। चरणदास शुकदेव दयाल यों जान है ॥१॥ रहै रामका नाम जपै सोभी रहै ।वेद पुराणन माहिं सभी योंही कहै॥ जन्म मरण नहिं होय न योनी आवई। सत सिंहासन बैठि अमरपुर पावई ॥ यम जालिमके दण्ड भर्म छुटि जाहिंगे। लख चौरासी बन्ध सभी कटि जाहिंगे ॥ नवग्रह लगे न देह ग्रेह आनँद रहै । डाकिनि सर्पिनि सिंह भूत नाहीं दहै ॥ साधुसंग गुरुसेव आय घटमें बसै । कलह कल्पना जाय द्वन्द्व संकट नसै॥ तिलक दिये ललाट जु कण्ठी सोहनी । नौ बिस लक्षण धारि सहज जीतै मनी॥ ऊंची पदवी होय जगत

सब पग लगै । दुष्ट जलैं मनमाहिं दूरिही सो तकैं ॥ पाप भगैं मुख देखि दरश कोई करै । भक्ति परापत ताहिं सुचरणन आ परै ॥ कहैं गुरु शुकदेव चरणहीं दासको । सब मन्तर शिरमौर सुमिर हरि नामको ॥ २ ॥

राग काफी-क्या दिखलावै शान यह कुछ थिर न रहैगा । दारा सुत अरु माल मुलकका कहा करै अभिमान ॥ रावण कुम्भकर्ण हिरणाकुश राजा कर्ण समान । अर्जुन नकुल भीमसे योधा माटी हुये निदान ॥ क्षणक्षण तेरो तनु छीजत है सुन मूरख अज्ञान । फिरि पछिताये कहा होयगा जब यम घेरैं आनि ॥ विनशैं जल थल रवि शशि तारे सकल सृष्टिकी हानि । अजहूं चेत हेत कर हरिसों ताहीकी पहिचानि ॥ नवधा भक्ति साधुकी संगति प्रेम सहित कर ध्यान । चरणदास शुकदेव सुमिरि ले जो चाहो कल्यान ॥ १ ॥ रामनाम चित लाव अरु सब शोक निवारो । सकल बिकल सब मनके टारो । निश्चय करि ह्यां आव ॥ तीरथ बर्त फल देवै रामनाम तुल नाहिं । पार लखावन मुक्ति करावन समझि देखु मनमाहिं ॥ पढौ पढावो भेद न पावो कछू न लागै हाथ । अर्थ विचारो तो तुम जानो कै सन्तनको साथ ॥ उमिरि गवाँवै तुच्छ स्वादमें करि पांचनसों भोग । अन्तकाल दुख होहिं घनेरे तन मन लिपटैं रोग ॥ लोक परलोक महासुख पावै जो सुमिरै हरिनाम । चरणदास शुकदेव कहत हैं होवैं पूरणकाम ॥

राग मालश्री-थिर न रही रहना है आखिर मौत निदान ॥ देखत देखत बहुतक विनशे आवत तुम्हरी बार । यतन करौ कोइ नाना विधिके बचै नहीं नर नार ॥ वे योगेश्वर वश करि मौतै जडिदये वज्र केवाँर । ह्वै बैठे ज्यों मरना नाहीं माटी गये हाड ॥ कित गये रावण कुम्भकरणसे हिरणाकुश शिशुपाल ।

शंकर दियो अमर वर जिनको सोभी खाये काल॥ यह तन बर्तन काचको रे ठपक लगे खुलि जाय। आज मरै कै कोटि वर्षलौं अन्त नहीं ठहराय॥ बीतति अवधि चलावा आवै छोडि जगतकी आस। गुरु शुकदेव चितावै तोकों समुझ चरणही दास॥१॥ क्षणभंगी छलरूप यह तनु ऐसा रे॥ जाको मौत लगी बहु विधिसों नाना अंगले बान। विष अरु शस्तर रोग बहुतक हैं और विघन बहु हान॥ निश्चय विनशै बचै न क्योंहीं यत्न किये बहु दान। ग्रह नक्षत्र अरु देव मनावैं साधैं प्राण अपान॥ अचरज जीवन मरबो सांचो यह औसर फिरि नाहिं। पिछले दिन ठगियन सँग खोये रहे सु योंहीं जाहिं॥ जो पल है सो हरिको सुमिरो साध सँगत गुरुसेव। चरणदास शुकदेव बतावै परम पुरातन भेव॥२॥ वा दिनकी सुधि राख सोई दिन आवैहै॥ जब यमदूत बुलावन आवैं चल चल चल कहैं भारी। एक घरीकोइ रखि न सकैगो प्यारेहूते प्यारी॥ बिछुरैं मात पिता सुत बान्धव बिछुरैं कामिनि कन्त। जो बिछुरैं सो बहुरि न मिलि हैं जो युगजाहिं अनन्त॥ राम सँघाती नेक न बिछुरैं ताहिं सँभारत नाहीं। अपनी काया सोउ न अपनी समझ देखु मन माहीं॥ चरणदास शुकदेव चितावै छाँडो जग उरझेरा। अमर नगर पहिचान सिदौसी जितकर निश्चल डेरा॥३॥ जानै कोइ सन्त सुजान यह जग स्वप्ना है॥ स्वप्नकुटुम्बी आपा मानै स्वप्ना वैरागी लै। स्वप्नै लेना स्वप्नै देना स्वप्नै निर्भय भै॥ स्वप्नै राजा राज्य करत है स्वप्नै योगी योग। स्वप्नै दुखिया दुख बहु पावै स्वप्नै भोगी भोग॥ स्वप्नै शूरा रणमें जूझै स्वप्नै दाता दान। स्वप्नै पियसँग पावक जरिया स्वप्नै मान अपमान॥ स्वप्नै ज्ञानी गुरुगम जागै अपना रूप निहारि। अज्ञानी सोवत स्वप्नेमें डसे अविद्या नारि॥

चरणदास शुकदेव चितावै स्वप्नासों सब झूठ । अचरज समझ अगाध पुरानी मौन गहो गहि मूठ ॥ ४ ॥

राग ललित—यह सब जानौ झूठा ठाट। चेत सबेरे चलना बाट॥जग सरायमें कहा भुलानो।भठियारीके मोह लुभानो॥ तुझको तौ बहु कोसन जानो। करि हिसाब बनियेंकी हाट॥ कुटुम्ब मित्र कोइ हितू न तेरा । अपने स्वारथहीको घेरा॥ ह्यां नहिं तेरा निश्चल डेरा । उठिये हूजे वेगि उचाट ॥ चलनेकी तदबीर न कीन्हीं । खोटी राह थाह नहिं चीन्हीं ॥ मँजिलौंकी खरची नहिं लीन्हीं ।गाफिल सोवै अजहूं खाट॥ मग माहीं ठग बाग लगाये। बहुत मुसाफिर जित परचाये॥ अरु उनको विष लड्डू खवाये ।मारि लिये स्वादनके घाट॥साव-धान कोइ हाथ न आये । बचकर चले सो निरभय धाये ॥ उनके छलके पेच न खाये । नेक न लागी तिनको आंट ॥ मन चंचलका घोडा कीजे । ध्यान लगाम ताहि मुख दीजे॥ है असवार ताहि गहि लीजैं । भवसागरका चौडा फांट ॥ चरणदास शुकदेव चितावै । अपना जानि तोहिं समझावै॥ तेरे भलेकि बात बतावै । बारबार कहूं तोकूं डांट ॥

राग आसावरी—गुरु मुख यह जग झूठ लखा या।साधु सन्त अरु वेदकहतहैऔर पुराणन गाया॥मृगतृष्णाके नीर लोभाना सीपी रूपा जाना।फटिक शिलापर पीक परी है मूरख लाल लोभाना॥स्वप्नेमें सब ठाट ठटोहै कुल नाते परिवारा। दृष्टि खुली जब सबही नाशे रहो नहीं आकारा॥ताते चेत भजन कर हरिको ह्यां मत मनको पागो।वा घर गये बहुरि नहिं आवै आवागमन न लागौ॥या स्वप्नेमें लाभ यही है चरणदास सुख भाखो। योगेश्वर जापद मिलि रहिया तुरिया हित चित राखो॥

राग बरवा—या तनुको कह गह गर्वकरतहै ओला ज्यों गलजावै रे। जैसे बर्तन बनो काचको ठपक लगे बिगसावै रे॥ झूठकपट अरु छलबल करिकै खोटे कर्म कमावै रे। बाजीगरके बांदरका ज्यों नाचत नाहिं लजावै रे॥ जबलौं तेरी देह पराक्रम तबलौं सबन सोहावै रे। माय कहै मेरा पूत सपूता नारी हुक्म चलावै रे। पल पल पलटै काया तेरी क्षण क्षण माहिं घटावै रे॥ बालक तरुण होय फिरि बूढा वृद्ध अवस्था आवै रे। तेल फुलेल सुगन्ध उबटनो अम्बर अतर लगावै रे॥ नाना विधिसों पिण्ड सँवारै जरि बरि धूरि समावै रे। वैद हकीम करैं बहु औषध पंडित जाप सुनावै रे॥ कोटि यत्नसों बचै न क्योंहीं देवी देव मनावै रे॥ जिनको तू अपने करि जानै दुखमें पास न आवै रे। कोईझिडकै कोई अनखावै कोई नाक चढावै रे। यह गति देखि कुटुँब अपनेकी इनमें मत उरझावै रे। जबहीं यमसों पाला परि है कोई नाहिं छुटावै रे॥ औसर खोवै परके काजै अपनो मूल गवाँवै रे। बिन हरि नाम नहीं छुटकारो वेद पुराण बतावै रे। चेतन रूप बसै घट अन्तर भर्म मूल बिसरावै रे। जो टुक ढूंढ खोज करि देखै आपनहींमें पावै रे॥ जो चाहे चौरासी छूटै आवागमन नशावै रे। चरणदास शुकदेव कहत है सतसंगति मन लावै रे॥

राग बरवा—तनका तनक भरोसा नाहीं काहे करत गुमाना रे। ठोकर लगे नेकहू चलतैं करि हैं प्राण पयाना रे॥ ऐंठ अकड सब छाँड बावरे तेज तमक इतराना रे। रंचक जीवन जगत अचम्भव क्षणमाहीं मर जाना रे॥ मैं मैं मैं क्यों करता है माया माहिं भुलाना रे। बहु परिवार देखिकै फूलो मूरख मूढ अजाना रे॥ टेढो चलै मिरोरत मुच्छैं विषयवास लपटाना रे। आपनको ऊँचो करि जानै मद मातो अभिमाना रे॥ पीर फकीर औलिया

योगी रहै राजा राना रे। धरणि अकाश सूर शशि नाशै तेरा क्या उनमाना रे॥ठाढे घात करै शिर पै यम ताने तीर कमाना रे।पलक पैंडपै तकि तकि मारैं काल अचानक बाना रे॥श्वासा निकसि फटि आँखि जाहिं जब काया जरै निदाना रे।तोको बांधि नरक लै जैहैं करि हैं अगिनि तपाना रे ॥ अजहूँ चेत सीखि ले गुरुकी करिले ठौर ठिकाना रे । अमर नगर पहिं-चान सिदौसी तब नहिं आवन जाना रे ॥ हरिकी भक्ति साधुकी संगति यह मत वेद पुराना रे । चरणदास शुकदेव कहत है परम पुरातन ज्ञाना रे ॥

राग सोरठ-यह तनु बालूकासा डेरा। जैसे दामिनि दमक चमकको क्षण नहिं रहत उजेरा।मैड़ी मण्डप मुल्क खजानो अरु परिवार घनेरा।सो सब कौतुक सों दीखत है राम सँभार सबेरा॥ गज घोडा अरु चाकर चेरा आखिर कोइ न तेरा।जिनके कारण भर्मत डोलै करता मेरो मेरा॥थोडेसे जीवनके काजे बहुतक करत बखेरा । कालबलीकी खबरि नहीं है करहि अचानक घेरा ॥ कहैं शुकदेव समझ नर भोंदू छाँडि विषय उरझेरा। चरणदास हरि नाम भजन बिन कैसे होय निबेरा॥१॥दमका नहीं भरोसा रे करिले चलनेको सामान। तनु पिंजरे सों निकस जायगो पलमें पक्षी प्रान। चलतै फिरते सोवत जागत करत खान अरु पान। क्षणक्षणक्षणक्षण आयु घटति है होत देहकी हान ॥ माल मुलुक औ सुख सम्पतिमें क्यों डूबा गलतान देखत देखत विनशि जायगो मति करु मान गुमान ॥ कोई रहन न पावै जगमें यह तू निश्चय जान।अजहूं समुझि छाँडि कुटिलाई मूरख नर अज्ञान॥ टेरि चितावैं ज्ञान बतावैं गीता वेद पुरान। चरणदास शुकदव कहत हैं राम नाम उर आन॥२॥

राग काफी-वह बोलता कित गया काया नगरी तजिकै। दश दरवाजे ज्योंके त्योंही कौन राह गयो भजिकै॥ सूना देश गाँव भया सूना सूने घरके वासी। रूप रँग कछु औरै हूवा देही भई उदासी॥ साजन थे सो दुर्जन हूये तनुको बांधि निकारा। चिता सँवारि लिटाकरि तामें ऊपर धरा अँगारा। ढहगया महल चहल थी जामें मिलिगया माटी माहीं। पुत्र कलत्र भाय अरु बांधव सबही ठोंक जलाहीं॥ देखतहीका नाता जगमें मुये संग नहिं कोई। चरणदास शुकदेव कहत हैं हरि बिन मुक्ति न होई॥१॥ समझो रे भाई लोगो समझो रे। अरे ह्यां नहिं रहना करना अन्त पयाना॥ मोह कुटुंबके औसर खोयो हरिकी सुधि बिसराई। दिन धंधेमें रैन नींदमें ऐसे आयु गवाँई॥ आठ पहरकी साठौ घरियां सो तैं विरथा खोई। क्षण इक हरिको नाम न लीन्हों कुशल कहांते होई॥ बालक था जब खेलत डोला तरुण भया मद माता। वृद्ध भये चिन्ता अति उपजी दुखमें कछु न सुहाता॥ भूलो कहा चेतु नर मूरख काल खडो शर सांधे। विषका तीर खैंचिकै मारै आय अचानक बांधे॥ झूठे जगसे नेह छोडकरि सांचो नाम उचारो। चरणदास शुकदेव कहत हैं अपना भलो विचारो॥२॥

राग झंझोटी-समझै नहिं मायाका मतवार। भूलि रहो धन धाम कुटुंबमें रहि गुरु दियो बिसार॥ पाप दुकान लीपि अव गुणसों पूंजी रची विकार। कामके दाम क्रोध थैलि धरि बैठा हाट पसार। छल कांटे बिच कपट रुपइया निरख तौल निर्धार। कर्म ढेर कौडिनको करिकै गिनि २ धरत सुधार॥ क्या लाया क्या ले निकसैगा अपने जीव विचार। कोइ दस अचरज देखि तमाशा क्षण इक राम सँभार॥ नरदेही है लाल अमोलक ताकी लखी न

सार । अन्त समय ज्यों हारो ज्वाँरी दोऊ कर चले झार ॥ यह जग स्वप्नो जान बावरे आखिर यमसों रार ॥ भुगतै कष्ट महादुख पावै सो जीवन धिरकार ॥ आवत काल अचानक तोपै कहै शुकदेव पुकार । चरणदास अब राम सुमिरि ले नातर होइ है ख्वार ॥

राग नट व बिलावल-अरे नर अपनो लाभ विचार । श्वास खजानो घटत सदाही ताको वेगि सँभार ॥ जोरि जाय सो बहुरि न आवै खरचै लाख हजार । ऐसो रत्न अमोलक हीरा तू करसो मति डार । सतसंगतिमें हित चित राखो दुष्टन संग निवार । मायाजाल अरु प्रीति कुटुंबकी ताको मनसों बिसार ॥ काम क्रोध अरु मोह लोभसे परबल बडे विकार । ज्ञान अग्नि अन्तरपट जारो तासो इनको जार ॥ विषय वासना इन्द्रिनके लख बूडि रह्यो संसार । चरणदासको नाव चढाके शुकदेव लियो उबार ॥

राग केदार-रे नर क्यों तू गवाँवै जनम । आयु तेरी जाय बीती नाहिं जानै मरम ॥ जनम पाय हरिभजन करिले देहको यही धरम । लोक अरु परलोक सुधरै रहै तेरी शरम ॥ भक्ति सम कछु नाहिं दीखै योग यज्ञ तप करम । आन धर्म विचार त्यागो मेट थोथो भरम ॥ जनम चरणदास सतसंघ मिलिकै आव हरिकी शरण । राम सुखदाई सुमिरि ले वही तारण तरण ॥

राग सोरठ-अरे नर अफल जन्म मत खो रे । ज्यों तेलीको बैल फिरत है निशिदिन कोल्हू धोरे ॥ भक्ति विहीने खर ह्वै आये ढोवत बोझा रोरे । सांझ भये वाको पति वाको घूरे ऊपर छोरे ॥ भरमत भरमत मनुष भये हौ ऊंचे आय चढो रे । लख चौरासी योनि भुगुति करि फिर तामें न परो रे ॥ अबके चूके बहु पछितै हौ मान वचन तू मोरे । चरणदास शुकदेव कहत हैं हरिपद सुरति धरो रे ॥

राग बिलावल-अरे नर जन्म पदारथ खोया रे बीती अवधि काल जब आया शीश पकरिकै रोया रे॥अब क्या होय कहा बनि आवै माहिं अविद्या सोया रे। साधु संग गुरुसेव न चीन्हीं तत्त्व ज्ञान नहिं जोया रे॥ आगेसे हरिभक्ति न कीन्हीं रसना राम न पोया रे। चौरासी यमदंड न छूटै आवागमनका दोया रे॥ जो कछु किया सोई अब पावो वही लुनौ जो बोया रे॥ साहब सांचा न्याव चुकावो ज्योंका त्योंहीं होया रे॥ कहूँ पुकारे सब सुनि लीजौ चेति जाव नर लोया रे। कहै शुकदेव चरणहीं दासा यह मैदान यह गोया रे॥

राग सारंग व राग नट व राग धनाश्री

नट ज्यों नाचि गये कितने। दाता शूर सती सिधि साधक राव रंक जितने॥रावण कुम्भकर्णसे योधा बहुतक कौन गिनै। बहुतक इकछत राज करत थे पूजत लोग जिनै॥ बहुतक भोगी नानाविधिसों करते भोग विलास। बहुतक तपसी वनके वासी तनुपर उपजी घास॥ बहुतक ऋषि मुनि दुर्वासासे देते अडिग शराप। बहुतक ज्ञानी हरि ह्वै बैठे कहते आपहि आप॥ हमहूं याचक नाचन आये यह नहिं अपना देश। चरणदास शुकदेव दयासों फिर नहिं काछूं भेश॥१॥नट ज्यों नाचहि नाचि गये। जिन जिन वेषधरो जगमाहीं सो सो नाहिं रहे॥ बहुतक स्वांग धरो राजाको बहुतक रंक भये। बहुतक भूप कर्णसे हूये कंचन दान दये॥ बहुतक स्वांग सतीके आये ह्वै गये अग्निमये। बहुत चुंडत मुण्डत योगी गुफा बनाय छये॥ भीषम अरु द्रोणाचारजसे शूरा बहुत ठये। रणसो पीठि दई नहिं कबहूं सम्मुख बाण लये॥बहुत यती सिध ह्वै ह्वै बैठे लोगन चरण गहे। बहुतक कामी चतुर सयाने काम मुतास बहे॥

उत्तम मध्यम काछ कछे हैं नाना स्वांग मचे। चरणदास शुकदेव दयासों प्रेमी होय नचे ॥ २ ॥

राग सारंग–दुनिया मगन भये धन धाम। लालच मोह कुटुँबके पागे बिसरि गयेहरि नाम॥एक घरीछुटकारो नाहीं बाँधि रहे आठौ याम। पांच प्रहर धंधेमें माते तीन प्रहर सँग बाम॥फूले फिरत महा गर्वाये पवन भरे ये चाम। दीप कलश ज्यों विनशि जायगो या तनुको यहि काम ॥साधु संग गुरु सेव न कीन्हीं सुमिरे ना श्रीराम। चरणदास शुकदेव कहत हैं कैसे पावों ठाम॥

राग काफी–कोई दिन जीवतो कर गुजरान। कहर गरूरी छांड दिवाने तजो अकसकी बान॥चुगली चोरी अरु निंदालै झूठ कपट अरु कान। इनको डारि गहौ जत सतको सोई अधिक सयान ॥ हरि हरि सुमिरौ क्षण नहिं बिसरौ गुरु सेवा मन ठानि। साधुनकी संगत कर निशिदिन आवै ना कछु हानि॥ मुडौ कुमारग चलौ सुमारग पावै निज पुर बास। गुरु शुकदेव चेतावै तोको समझ चरणहीं दास ॥१॥ एते पर क्यों हुआ मगरूर क्षणभंगी यह तनु बहुरंगी जरि बरि होइ है धूर॥मूछ मरोरि चलै बांकी गति अकडि अकडि रहै घूर। छैल चिकनियां माया मदमें मातो चकनाचूर ॥ काम क्रोधके सस्तर बांधे लोभ रह्यो भरिपूर। गुरुको ज्ञान न मनमें आवै ऐसा है बेसहूर॥ करि अभिमान जगत सच मानै हरिको जानै दूर। चरणदास शुकदेव बतावै साई सदा हुजूर ॥ २ ॥

राग बिलावल–राम नाम तैं क्यों बिसराया। सीखे कपट झपट छल बल बहु काम रु क्रोध मोह लवलाया॥चारि दिनाका जगत अचम्भा झूठे सुखमें कहां लोभाया। क्षण इक सतसंगति नहिं कीन्ही जन्म अकारथ खोय बहाया॥वाद विवाद

स्वादको चौकस विषय वास रसमें लपटाया। दया धर्म हिरदयसों भूला परनिन्दा हिंसाको धाया॥चौरासी लख योनि भुगुति करि मनुष स्वरूप भाग्यसों पाया। लाहा कछू न किया हासल उलटा मूल गवाँया॥श्रीशुकदेव पुकारि चितावें समझत ना केतो समझाया। चरणदास कलियुगके माहीं हरिगुण गावन सार बताया ॥१॥ नाहीं रे कोइ हरि बिन तेरो। यह जग जाल महादुखदाई तामें है इक रैनि बसेरो॥आनि फँसो मायाके फन्दन मोह ममत कीन्हो उरझेरो। रंचकहू छुटकारो नाहीं विषय स्वाद पांचौंने घेरो॥साधु सन्तसों नेह न राखै दारा सुत सम्पतिको चेरो। अन्तकाल बहुतै पछितैहो जब मारै यम आय थपेरो॥धनके कारण घर घर डोलै परकाजै पचि मरन घनेरो। जोरत दाम वाम वश ह्वैके काम क्रोधसों हित बहु तेरो॥जो चाहै तू भलो आपनो तौ ह्यांसे करु वेगि निवेरो॥चरणदास शुकदेव कहत हैं छाँडि देहु सब विषय बखेरो ॥२॥

राग धनाश्री-अपना हरि बिन और न कोई। मात पिता सुत बन्धु कुटुँब सब स्वारथहीके होई॥ या कायाको भोग बहुत दै मर्दन करि करि धोई।साभी छूटत नेक न कसकी संग न चाली वोई॥घरकी नारि बहुतही प्यारी तिनमें नाहीं दोई। जीवत कहती साथ चलूंगी डरपन लागी सोई॥जो कहिये यह द्रव्य आपनो जिन उज्ज्वल मति खोई। आवत कष्ट रखत रखवारी चलत प्राण ले जोई॥इस जगमें कोइ हितू न दीखै मैं समझाऊं तोई। चरणदास शुकदेव कहैं यों सुनि लीजै नर लोई॥

राग कान्हरा-हरि बिन कौन तुम्हारो मीता। कुटुँब संघाती स्वारथ लागे तेरी काहूको नहिं चीता॥ तैं प्रभु ओरीसों मुख मोडा झूठे लोगनसों हित कीता। अरु तैं अपनी आँखौं देखा

कई बार दुख सुख हो बीता ॥ सम्पतिमें सबही घिरि आवैं विपति परे अधिकी दुख दीता॥ मूठी बाँधि जनम नर लायो हाथ पसारि चलैगो रीता॥ धरि धरि स्वांग फिरै तिन कारण कपि ज्यों नाचत ताता धीता। मुये न संगी होहिं तिहारे बाँधि जलावैं देह पलीता ॥ गुरुसेवा सतसंग न कीन्ही कनककामिनीसों करि प्रीता । चरणदास शुकदेव कहत हैं मरत मरत हरि नाम न लीता ॥

राग रामकली-धनि धनि वे नर हरिशरणाये। और पशुनसों सबही नीचे परमारथके काम न आये॥ अचरज मनुषा देही दुर्लभ बड भाग्यनसों पाई। तीनों पनमें नाहिं सँभारी झूठे धन्धे योंहिं गँवाई ॥ बालापन खेलनमें खोया तरुण भया सँग नारी। बूढा भये कुटुँबके संशय पावत है अतिही दुख भारी ॥ जिन कारण तैं पाप कमाये सो नहिं चलिहैं लारी। तेरेही शिर आनि परैगी जैहो अकेले नरक मँझारी॥ गर्भमाहिं तैं वचन किये थे करिहौं भक्ति तुम्हारी। ह्यां आके कछु औरै कीन्हा प्रभुसे झूठा हुआ अनारी ॥ हो सांचा अजहूं सुमिरण कर होहिं दयालु मुरारी॥ चरणदास शुकदेव कहत हैं आगेहु पतित किये भवपारी॥ १॥ फिर फिर मूरख जन्म गँवायो। हरिकी भक्ति साधुकी संगति गुरुके चरणनमें नहिं आयो ॥ धनके जोरनको दृढ कीन्हो महल करन व्रत धारो। टेक पकडकर नारी सेई शिरपर बोझा लियो अति भारो ॥ ह्वै है दुख नानाविधिकेरो तन मन रोग बढायो। जीवत मरत नहीं सुख पैहो आवागमनको बीज जमायो॥ भर्मि भर्मि चौरासी आयो मनुषा देही पाई । या तनुकी कछु सार न जानी फिरि आगे चौरासी आई॥ आँखि उघारि समझु मनमाहीं हिरदय करौ विचारा । ऐसा जन्म बहुरि कब पैहो विरथा

खोवै जग व्यवहारा॥ जानौ जब छांडि चलौगे कोइ न संग तुम्हारे। चरणदास शुकदेव कहत हैं याद करोगे वचन हमारे॥२॥

राग बिहाग-रे नर हरि प्रताप ना जाना। तुव कारण सब कुछ तिन कीन्हा सो करता न पिछाना॥ जिहि प्रताप तेरी सुन्दरि काया हाथ पांव मुख नासा। नैन दिये जासों सब सूझै होय रहा परकासा॥ जिहि प्रताप नानाविधि भोजन वस्त्र अभूषण धारै। वाका नाहिं निहोरा मानै ताको नाहिं सँभारै॥ जिहि प्रताप तू भूप भयो है भोग करे मनमानै। सुख लै वाको भूलि गयो है करि करि बहु अभिमानै॥ अधिकी प्यार करै मातासों पल पलमें सुधि लेवै। तौ तू पीठ दियेही नितही सुमिरण सुरति न देवै॥ कृत्य घनी औ नूण हरामी न्याव इंसाफ न तेरे। चरणदास शुकदेव कहत हैं अजहू चेतु सबेरे॥

राग विहागरा-अरे नर हरिका हेत न जाना। उपजाया सुमिरणके काज तैं कछु औरै ठाना॥ गर्भ माहिं जिन रक्षा कीन्ही ह्वै खानेको दीन्हा। जठर अग्निसों राखि लियो है अंग सम्पूरण कीन्हा। बाहर आय बहुत सुधि लीन्ही दशन बिना पय प्यायो। दांत भये भोजन बहुभाँती हितसों तोहि खिलायो॥ और दिये सुख नानाविधिके समुझि देखु मनमाहीं। भूलो फिरत महा गर्वाया तू कछु जानत नाहीं॥ तव कारण सब कछु प्रभु कीन्हो तू कीन्हा जप काजा। जग व्यवहार पगोही बोलै तोहिं न आवै लाजा॥ अजहूं चेत उलट हरिसौंही जन्म सफल करू भाई। चरणदास शुकदेव कहैं यों सुमिरण है सुखदाई॥

राग काफी-गुमराही छाँड दिवाने मूरख बावरे। अति दुर्लभ है नरदेह भया गुरुवदेव शरण तू आव रे जग जीवन है निशिको स्वपनो अपनो ह्यां कौन बतावरे। तोहिं पांच पचीसने घेर लियो

लख चौरासी भरमावरे ॥ बीति सो बीति गई अजहूं मनको समुझावरे। मोह लोभसों भागिकै त्याग विषय काम क्रोधको धोय बहावरे॥शुकदेव कहैं सबही तजिकै मनमोहनसों लव लावरे। चरणदास पुकारि चिताय दियो मत चूकै ऐसे दाँवरे॥१॥ चला आवै चलावैका घोस।कछू करिले भाई ह्यांसे चलना होय अचानकही फिरि पीछे रहै अपसोस॥फीकै विषयकी मदिरा मतवारा होय रहा बेहोस। बाटमाहीं तो शूल बबूल घने अरु जाना है कई कोस ॥ दमहीं दमहीं दम छीजत है पलपल घटै तनु जोस। माया मोह कुटुँबका सुख ऐसे जैसे दीखै मोती ओस ॥ शुकदेव दियो कृपा करिकै रामरसका प्याला नोश। चरणदास कहैं यह बात भली सुनि लीजै दोनों गोश ॥

राग सोरठ—कछु मन तुम सुधि राखो वा दिनकी। जा दिन तेरो देह छुटैगी ठौर बसौगे वनकी ॥ जिनके संग बहुत सुख कीन्हें मुख ढकि होइ हैं न्यारे। यमको त्रास होय बहुभाँती कौन छुटावन हारे ॥ देहरीलों तेरि नारि चलैगी बडी पौरिलौं माई। मरघटलौं सब वीर भतीजे हंस अकेलो जाई ॥ द्रव्य गडे अरु महल खडे ही पूत रहै घरमाहीं। जिनके काज पचे दिन राती सो सँग चालत नाहीं॥देव पितर तोरे काम न आवैं जिनकी सेवा लावै।चरणदास शुकदेव कहत हैं हरि बिन मुक्ति न पावै॥१॥ मोका भय अति वाही दिनको। जब यह पक्षी माया लोभी त्यागै पिंजरा तनको॥सुत दाराके मोह फँसो है लोभ लगो है धनको।कामक्रोधको कंपो खायो भयो अधीन सबनको॥पांच पहर धन्धेमें खोया नाम न लेत भजनको।तीनि पहर नारी-सँग याती मानत सुख इन्द्रिनको॥ आपनको ऊंचो करि जानै करि अभिमान बरनको।संत संगतिके निकट न आवै जो है

ठाट तिरनको ॥ यम किंकर जब आनि गहैंगे तब ना धीर धरनको। गुरू शुकदेव सहाय करेंगे आसरो दास चरणको२॥

राग केदारा—सो मेरो कहो मान रे भाई। ज्ञान गुरुको राख-हियेमें बंध कटि जाई॥ बालपनते खेलि खोयो गई तरुणाई। चेत अजहूं भली वर है जराहूं आई॥ जिनके कारण विमुख हरिते फिरत भटकाई। कुटुम्ब सबही सुखके लोभी तेरे दुख-दाई॥ साधु पदवी धारण घर छाँडु कुटिलाई। वासना तजि भोग जगके होय मुकताई॥ बहुरि योनी नाहिं आवै परमपद पाई। चरणदास शुकदेवके घर आनँद अधिकाई॥१॥ भाई रे अवधि बीती जात। अंजुली जल घटत जैसे तारे ज्यों परभात॥ श्वास पूंजी गांठि तेरे सो घटत दिन रात। साधु संगत पैठ लागी ले लगै सोइ हाथ॥ बडो सौदा हरि सँभारो सुमिरि लीजै प्रात। काम क्रोध दलाल ठगिया बणिज मत इन साथ॥ लोभ मोह बजाज छलिया लगे हैं तेरि घात। शब्द गुरुको राखि हिरदय तौ दगा नहिं खात॥ अपनी चतुराई बुद्धि पर मति फिरै इत-रात। चरणदास शुकदेव चरणन परश तजि कुल जात॥२॥

राग सोरठ—भाई रे स्वप्न यह संसार। देह स्वप्ना जन्म स्वप्ना स्वप्न कुल व्यवहार॥ माय स्वप्ना बाप स्वना स्वप्न सुत अरु नारि। लाज स्वप्ना जाति स्वप्ना स्वप्न प्रस्तुति गारि॥ योग स्वप्ना भोग स्वप्ना किये वेद निखेद। स्वप्न सो जो होय मिटि है स्वप्न सुख अरु खेद॥ बन्ध स्वप्ना मुक्ति स्वप्ना स्वप्न ज्ञान विचार। स्वप्न है सो बिनशि जैहै रहैगा ततसार॥ चरणदास स्वप्ना ब्रह्म सांचों एक रस नित जान। सत्य स्वप्ना झूठ स्वप्ना कह करूं निर्वान॥१॥ भाई रे तजो जग जंजाल। संग तेरे नाहिं चालै महल बाहन माल॥ मात पितु सुत और नारी बोल

मीठे बैन। डारि फांसी मोहकी तोहि ठगत हैं दिन रैन॥ छल धतूरो दिये सब मिलि लाज लड्डू माहिं। जान अपने कहा भुलाने चेतता क्यों नाहिं॥ बाज जैसे चिड़ी ऊपर भँवत तोपर काल। मारते गहि ले चलैंगे यम सरीखे साल॥ सँघाती हरि बिसारो जन्म दीन्हों हार। चरणदास शुकदेव कहिया समझ मूढ गवाँर॥२॥ भाई रे समझ जग व्यवहार। जबताईं तेरे धन पराक्रम करैं सब ही प्यार॥ अपने सुखको सबही चाहैं मित्र सुत अरु नारि। इन्हौं तौ अपवश कियो है मोह बेडी डारि॥ सबन तोको भय दिखायो लाज लकुटी मार। बाजीगरके बांदर ज्यों फिरत घर घर द्वार॥ जबै तोको बिपति आवै जरा कोर विकार। तब तोसूं लाज मानैं करैं ना तेरि सार॥ इनकी संगति सदा दुख है समझ मूढ गवाँर। हरि प्रियतमको सुमिरि ले कहैं चरणदास पुकार॥ ३॥

राग विहाग—ये सब निज स्वारथके गरजी॥ जगमें हेत न कीजै काहूसों अपने मनको बरजी॥ रोपैं फन्द घात बहु डारैं इनते तू डरिये जी। हृदय कपट बाहर मिठ बोलैं यहां छल हैगो कहाजी॥ सौगंध खाय झूठ बहु बोलैं भवसागर कैसे तरजी। दुख सुख दर्द दया नहिं बूझे इनसे छुटावो हरिजी॥ वैरी मित्र सबै चुनि देखे दिलके महरम कहजी। इनको दोष कहा कह दीजै यह कलियुगकी झरजी॥ दुनियाँ भगल कुटिल बहु खोटी देखि छाती मेरी लरजी। चरणदास इनको तजि दीजै चल बस अपने घरजी॥

राग आसावरी—साधो राम भजेते सुखिया। राजा परजा नेमी दाता सबही देखे दुखिया॥ जो कोई धनवंत जगतमें राखत लाख हजारा। उनको तौ संशय है निशिदिन घटत बढत व्यव-

हारा॥जिनके बहु सुत नाती कहिये और कुटुंब परिवारा। वे तौ जीवन मरणके काजे भरत रहैं दुख भारा॥ नेमी नेम करत दुख पावै कर स्नान सबेरा। दाताको देवैको दुख है जब मँगतौंने घेरा॥ चार वर्णमें कोउ न देखो जाको चिन्ता नाहीं। हरिकी भक्ति बिना सब दुख है समझ देख मनमाहीं॥ सतसंगति अरु हरि सुमिरण करि शुकदेवा गुरु कहिया। चरणदास विपदा सब तजिकै आनँदमें नित रहिया॥

राग सारंग–नर राम भजे सुख पाय है। दुख भाजे अरु पातक नाशै जोरा निकट न आय है॥ चेत सबेरे कहूं पुकारे नात रु तू पछिताय है। जगत ठाट सब ह्यांकी शोभा संग न कोई जाय है॥ बिन गोपाल तुम्हारो को है हमको देहु बताय है। पकरि बांधि यम मारन लागै जबको होय सहाय है॥ देख विचारि समझु मनमाहीं तो बुधि जो अधिकाय है। तौ तू आव सिमिट हरि ओरी चालो जन्म सिराय है॥ चरणदास शुकदेव कहत है अब यही अधिक सयान है। गुरुकी शरण साधुकी संगति प्रभुको कीजै ध्यान है॥

राग भैरव–चेतौरे नर करो विचार। छलरूपी है यह संसार॥ स्वप्ना मात पिता सुत बंधू। स्वप्ना है सबही संबंधू॥ देखै कहै सुनै सो स्वपना। या जगमें नाहीं कोइ अपना॥ स्वप्ना धरती और अकाशा। स्वप्ना चन्द्र सूर्य परकाशा॥ स्वप्ना जल थल पावक पौन। स्वप्ना योग भोग अरु मौन॥ स्वप्ना मायाको व्यवहार स्वप्ना। कुल नाता परिवार॥ स्वप्ना देश नाम अरु भेश। स्वप्ना उत्पति परलय शेश॥ स्वप्ना राजा रानाराव। स्वप्न बानिक बन्यो बनाव॥ स्वप्ने लरै मरै अरु भागै। स्वप्ने सोवै स्वप्ने जागै॥ स्वप्ना है यह सबही ठाट। उठी पैंठ जब मुँदि गइ हाट॥ जो

कछु है सो सबही स्वप्ना। सांचा हरि हरि हरि हरि जपना॥ क्यों भूला मूरख मस्तान। अजहूं समुझि लेहि गुरुज्ञान॥ गफलत छाँडि भजो हरि नाम। जो चाहे तू निश्चल धाम॥ ज्यों सोवत स्वप्नो दरशाय। आँखि खुलैं जबहीं मिटि जाय॥ ऐसे ही सब स्वप्ना जान। अचल अखण्ड रहे भगवान॥ सबठां ब्रह्म रह्यो भरि पूरि। ना अतिनिकट नहीं बहु दूर॥ जो कोइ खोजै सोई पावै। तत दरशी यह भेद बतावै॥ गुरु सुखदेव पुकारि चितावै। झूठ साँचको न्याव चुकावै॥ चरणदास सब स्वप्ना जान। सदा एकरस ब्रह्म पिछान॥

राग मलार-सतगुरु भवसागर डरभारी। काम क्रोध मद लोभ भँवर जित लरजत नाव हमारी॥ तृष्णा लहर उठत दिन राती लागत अति झकझोरा। ममता पवन अधिक डर पावै काँपत है मन मोरा॥ और महाडर नाना विधिके क्षण क्षणमें दुख पाऊं। अन्तर्यामी बिनती सुनिये यह मैं अरज सुनाऊं॥ गुरु शुकदेव सहाय करो अब धीरज रह्या न कोई। चरणदासको पार उतारो शरण तुम्हारी सोई॥

राग बिलावल-भक्ति गरीबी लीजिये तजिये अभिमाना। दो दिन जगमें जीवना आखिर मरिजाना॥ पाप पुण्य लेखा लिखैं यम बैठे थाना। कहा हिसाब तुम देहुगे जब जाहि देवाना॥ मात पिता कोइ ह्वां नहीं सबही बेगाना। द्रव्य जहां पहुँचै नहीं नहिं मीत पिछाना॥ एकसों एकहि होयगी ह्वां सांच तुलाना। काहूकी चाल नहीं छने दूध रु पाना॥ साहिबकी करि बन्दगी दे भूखे दाना। समझावैं शुकदेवजी चरणदास अयाना॥

राग काफी-घरी दोमें मेला बिछुरै साधो देखि तमाशा चलना। जे ह्यां आकर हुए इकट्ठे तिनसों बहुदिन मिलना॥

जैसे नाव नदीके ऊपर बाट बटेऊ आवैं । मिलि मिलि जुदे होयँ पलमाहीं आप आपको जावैं ॥ या बारी बिच फूल घनेरे रंग सुगन्ध सुहावैं। लागैं खिलैं फेरि कुम्हिलावैं झरैं टूटि बिनशावैं॥ दारा सुत सम्पतिको सुख ज्यों मोती ओस बिलावैं। ह्याँई मिलैं और ह्याँ नाशैं ताको क्यों पछितावै ॥ दे कुछ लै कुछ करिले करणी रहनी गहनी भारी। हरिसों नेह लगाय आपनो सो तेरो हितकारी ॥ सतसंगतिको भला बडो है साधु भक्त समुझावैं । चरणदास हो राम सुमिरि ले गुरु शुकदेव बतावैं ॥१॥ वह मेला सोई भला है साधो जहँ सन्तोंका भेला। जिनके रहै सदा हरि चर्चा सुमिरैं राम सुहेला ॥ कथा कहैं अरु करैं कीर्त्तन ज्ञान ध्यान समुझावैं। सोवत जागत बैठे चलते गोविंदके गुण गावैं॥ बोलैं अमृतवाणी सबसों कुमति कुबुद्धि छुटावैं। हरिकी भक्ति साधुकी संगति यह उपदेश बतावैं॥ माला तिलक रामको बाना सुन्दर वेश बनावैं। घर घर होय आरती मङ्गल नवधासों चित लावैं ॥ निशिदिन आनँद रूप दिवाली सदा वसन्त सुहायो। प्रेम महोत्सव नितही उत्सव सबै ठाट मन भायो॥ या विधिसों मन मगन होय करि भजन करैं अतिभारी। चरणदास शुकदेव कहत हैं घटमें होय उज्यारी ॥ २ ॥

राग पर्ज-राम धन जो कोइ पावै हो । राज बडाई इन्द्र पदवी सुरति न लावै हो॥ आठ सिद्धि नौनिद्धिके लालच नहिं लागै हो। तीनिलोक तुच्छ जानिके तामें नहिं पागै हो॥ अर्थ धर्म काम मोक्षको करनी नहिं ठानै हो चारि मुक्त वैकुण्ठलौं कछु वस्तु न जानै हो॥ सबसे नीचा ह्वै चलैं मुख झूठ न भाखै हो। हिंसा अकस वासना कोई नेक न राखै हो॥ साधुनकी करि चाकरी जब वह धन आवै हो । चरणदाससे रंकको शुकदेव

बतावै हो ॥१॥ जिन्है हरिभक्ति पियारी हो। मात पिता सहज छूटैं छूटैं सुत अरु नारी हो॥ लोक भोग फीके लगैं सम अस्तुति अरु गारी हो। हानि लाभ नहिं चाहिये सब आशा हारी हो॥ जगसों मुख मोरे रहैं करैं ध्यान मुरारी हो। जित मनुवाँ लागो रहै भई घट उजियारी हो॥ गुरु शुकदेव बताइया प्रेमी गति भारी हो। चरणदास चारों वेदसों औरै कछु न्यारी हो ॥२॥

रेखता॥ राग भय्यार–तजिकै जगतकी रीतिको करु आपनी तदबीर। इस जग भरोसे ख्वार हो सुन यार मन यार मन गये शाह अमीर॥ इकदम करारी है नहीं क्षणमें फेरै रंग। कबहूं तो हैरां सुख घना सुन यार मन यार मन यार मन चल बिचल बेढंग॥ हशमंत[1] बसौकत[2] थिर नहीं मत देखिहो मगरूर। ठहराव ताको है नहीं सुन यार मन यार मन भग्गल बडाई धूर॥ जाहिं श्वासा सब चले ज्यों आवदर गिरवाल। याद साहबकी करौ सुन यार मन यार मन यार मन सुमिरि हरि हरि हाल॥ शुकदेव सतगुरुने मुझे कायम बतायो राम। चरण-हिदासा चित धरो सुन यार मन यार नम जपो आठो याम॥

रेखता–दो दिनका जगमें जीवना करता है क्यों गुमान। ऐ बेस हूरगी दी टुक रामको पिछान॥ दावा खुदीका दूर कर अपने तू दिलसेती। चलता है अकड अकड जवानीका जोश आन॥ मुरसदका ज्ञान समझकैं हुशियार हो सितांब[3]। गफलतको छांडि सोहबत साधौंकी खूब जान॥ दौलतका जौक[4] ऐसे ज्यों आब काहुबान। जाता रहेगा क्षणमें पछितायगा निदान॥ दिन रात खोवता है दुनियाँके कारबार। इकपल भी याद साईंकि करता

---

१ ऐश्वर्य्य। २ प्रभाव। ३ संगति। ४ लालसा, तृष्णा।

नहीं अजान ॥ शुकदेव गुरुज्ञान चरणदासको कहैं। भजु राम नाम सांचा पद मुक्तिका निधान ॥

हेला—जगको आवन जानि हेला याको शोक न कीजिये। यह संसार असार है रे अरे हेला हरिसों कर पहिंचान॥कुटुंब संग आयो नहीं रे अरे हेला ना कोई संग जाय। ह्याईं मिलैं ह्याईं बीछुरैं ताको झुरै बलाय॥बलाय॥महल द्रव्य किस कामके रे अरे हेला चलैं न काहू साथ।राम तजे इनसों पगे हारो अपने हाथ॥जीवत काया धोवते रे अरे तेल फुलेल लगाय। मज-लिस करिकै बैठते मूये काग न खाय॥लाभ भये हरषै नहीं रे अरे हेला हानि भये दुख नाहिं। ज्ञानीजन वहि जानिये सब पुरुषनके माहिं॥ गुरु शुकदेव चितावइ रे अरे हेला चरणदास हिय राखि।मनुष जन्म दुर्लभ मिलै वेद कहत हैं साखि॥१॥ झूठी जगकी प्रीति है नहीं छांडूं हरिसों मीत हेला। रंग कुसुम संसारको रे अरे हेला प्रभुको रंग मँजीठ ॥ धन यौवन थिर न रहै रे अरे हेला मत कर गर्व गुमान। क्षणक्षण औसर जात है हरिसों कर पहिंचान॥अन्त समय पछितायगो रे हेला जब यम घेरैं आय। जिनके सँग तू मिल रहो कोई न छुटावै जाय॥बीति गई सो जान दे रे अरे हेला अजहूं समझ गवाँर शरण गहो सत्संगकी गुरुके वचन सँभार॥ श्रीशुकदेव बताइया रे अरे हेला राम नाम ततसार। चरणदास यों कहत हैं लैलै उतरो पार ॥२॥ बोलत टेढी बात हेला माया मदमाता रहै। सबहींसों ऐंठो फिरै अरे हेला क्षणमें वेग रिसात॥ व्याज बढा दुगुने करै रे अरे हेला करै चौगुने दाम।नाना रसके स्वाद ले खाय फुलावै चाम॥करसों कबहूं न दान दे रे अरे हेला शीश न नवावै साध। जिह्वासों हरि ना जपै बहुत करै बकवाद॥

पगसों तीरथ न रमै रे अरे हेला सुनै न श्री भागौत । अकड अकड मन माहिं यों जानि बडो कुलगोत ॥ परछाहीं देखे चले रे हेला बांकी बांधै पाग । सो देही किस कामकी खैहैं श्वान न काग॥ पुत्र कलत्र हैं घनेरे अरे हेला सुखमें करत कलोल। हरिभक्तनसों नेह ना कहै क्रोधके बोल॥ धर्म कछु ना करे रे अरे हेला नहिं सतगुरुसों प्रीति । हरिचरचासों जरि मरै यह डूबनकी रीति॥ जगको सांचो जानिकै रे अरे हेला हरिको दियो बिसार । अन्तसमय यम त्रास दै डारै नरक मँझार॥ श्रीशुदेव ऐसे कही अरे रे हेला छांड विषय जंजार । चरण-दास भजु रामको सोई उतारै पार ॥ २ ॥

हेली-यह अवसर फिरि नाहिं हेली राम भजन करि लीजिये। यह तन क्षण क्षण जात है री अरी हेली ज्यों तरुवरकी छांह॥ पिछिले दिन सब खो दिये री अरी हेली कीयो न हरिसों सीर रहेसो ऐसो जानि ले ज्यों अंजलिको नीर॥ बचै सो लाहा लीजिये री हेली सतसंगतिके माहि । हिलमिल हरियश गाइये दृढता जीकी बाहिं॥ जन्म सफल जब होयगो री अरी हेली कुलपारा यण होय। एक रु सौ पीढी तरैं रसना हरिगुण पोय। यही स्मृति यही वेद हैरी अरी हेली यहि साधनको भेव। चरणदास हियमें धरौं कहिया गुरू शुकदेव॥ १॥ और न मीता कोय हेली समुझि सँभारो रामजी । जीवतकी रक्षा करैं अरी हेली मुये मुक्त करैं तोहिं ॥ अरु सब स्वारथके सगे री अरी हेली अन्त न कोई साथ सुखमें सबही रल मिले दुखमें सुनैं न बात॥ छल करि मनकी बूझले री अरी पाछे डारै घात । तिनको तू आपनो कहै सो सो दोषी ह्वै जात ॥ भेद न अपनो दीजिये री अरी हेली कोऊ कैसे होय । हिरदयकी हिरदय रहै हरिही जानै सोय॥ कै गुरु

अपनो जानिये रीअरी हेली कै सतसंग वास गुरु शुकदेव बतावई देख चरणहीं दास ॥२॥ यह नहिं अपना देश हेली ह्यां नहिं मनको दीजिये। अपने घरको चलिये री अरी हेली करि योगिनको वेष ॥ कानन मुद्रा योगकी री अरी हेली ज्ञान जटा शिर धारि। चोल भक्ति सोहावनो धीरज आसन मारि ॥ सेली सत वैरागकी री अरी हेली शील विभूति रमाय। यतकी सींगीं कीजिये बारम्बार बजाय ॥ कर्म जलाय धुनी करो री अरी हेली झूमौ दशवें द्वार। अमल सुधारस पीजिये बाढै रंग अपार ॥ इस बाने पियको मिलौ री अरी हेली सदा सुहागिनी होय। गुरु शुकदेव बतावई चरणदास बन सोय ॥३॥

ज्ञान अंग १४

राग करखा–साधो गुरु दया आपको यों विचार। झूठ अरु सांचको समुझि करि मूलसों माया अरु ब्रह्मको किया न्यारा ॥ पांच अरु तीन गुण देहको ठाट है तासुको लगत है सब विकारा। ब्रह्म अडोल अबोल अतोल है और निर्लिप्त हरि निर्विकार ॥ जाके रूप नहिं रेख अरु नाम सूरत नहीं सोई निज तत्त्व है निराकारा। सुरति अरु निरति दोऊ जहां थकि रहैं तहां बिन भान अति है उज्यारा॥बिना गुरुमुखी कोउ पहुँचि ह्वां ना सकै कनक अरु कामिनी घेरि मारा। चलै सोइ सन्त निर्वाण है शूरमा ज्ञान अरु ध्यानको कर अहारा॥आवा अरु गमनकी टूटि फांसी गई पाय गुरु भेद गयो तिमिर सारा॥ चरणदास शुकदेव मिले मर्म सब दलिमले होय रणजीत अविगति निहारा॥१॥ साधो ब्रह्म दरियाव नहिं वारपारा। आदि अरु मध्य कहुँ अन्त सूझे नहीं नेतिही नेति वेदन पुकारा। मूलपरकीर्तिसी बहुत लहरैं उठैं सकै को पाय गुण है अपारा। विरंचि महादेवसे मीन बहुते जहां होय

परगट कभी गोत मारा ॥ तासुमें बुदबुदे अण्ड उपजैं मिटैं दई दृष्टि जासों निहारा। छका छबि देखि अतीतका वेषकरि जगे जब भाग निरखी बहारा ॥ मरजिया पैठिया थाह पाई नहीं थका ह्वाँई रहा फिर न आया। गया था लाभको मूल खोया सबै भया आश्चर्य आपन गवाँया ॥ पाल बिन सिद्धि अरु निरा आनंद है आपही पाअ है निराधारा। चरणदास शुकदेव दोऊ तह रल मिले तुरतही मिटि गया खोज सारा ॥ २ ॥

राग धनाश्री-सहजगति ज्ञान समाधि लगाई। रूप नाम जहँ किरिया छूटी हू मैं रहन न पाई ॥ विन आसन विन संयम पर-मातम सुधि पाई। शिव शक्ति मिलि एक भये हैं मन माया न हिराई ॥ मगन रहौं दुख सुख दोउ मेटे चाह अचाह मिटाई। जीवन मरण एकसों लागै तबते आप गँवाई ॥ मैं नाहीं नख शिख हरि राजै आदि अन्त मध्याई। शङ्का कर्म कौनको लागै काकी हो मुकताई॥ सकल आपदा व्याधि टरी सब दुई कहाँ मो माहीं। सब हमहीं रामा नहिं पइये सब रामा हम नाहीं ॥ नित आनंद कालभय नाहीं गुरु शुकदेव समाधी। चरणदास निज रूप सामने यह तौ समझ अगाधी ॥ १ ॥ निरन्तर अटल समाधि लगाई। ऐसी लगी टरै नहिं कबहूं करणी आश छुटाई॥ काको जप तप ध्यान कौनको कौन करै अब पूजा। कियो विचार नेक नहिं निकसै हरि बिन और न दूजा ॥ मुद्रा पांच सहज गति साधी आलस आसन सोई। सब रस ब्रह्म मूल जब शोधा आप विसर्जन होई॥ भूलो बन्ध मुक्ति गति साधन ज्ञान विवेक भुलाना। आतम अरु परमातम भूला मम भयो तत गल ताना ॥ अचल समाधि अन्त नहिं ताको गुरु शुकदेव बताई। चरणदासको खोज न पइये सागर लहरि समाई ॥ २ ॥

राग सोरठ-हो अविगति जो जानै सोइ जानै। सबकी दृष्टि परे अविनाशी कोइ कोइ जन पहिंचानै॥ रेख जहां नहिं खींचि सकै रे ठहरै ना ह्वाँ राई। चीतचितेरा ना सकै रे पुस्तक लिखा न जाई॥ श्वेत श्याम नहिं राता पीरा हरी भाँति नहिं होई। अति असूंघ अदृष्ट अकथ है कहि सुनि सकै न कोई॥ सर्वसमें अरु सब देशनमें सर्व अंग सब माहीं। कटै जलै भीजै नहिं छीजै हलै चलै वह नाहीं॥ नहिं गाढा नहिं झीना कहिये नहिं सूक्षम नहिं भारी। बाला तरुणा बूढा नाहीं ना वह पुरुष न नारी॥ नहीं दूर नहिं निकट हमारे नहीं प्रगट नहिं गूझै। ज्ञान आंखकी पलक उघारो जब देखो रे सूझै॥ वासों उत्पति परलय होई वह दोऊते न्यारा। चरणदास शुकदेव दयासों सोई तत्त्व निहारा॥

राग मलार-साधौ समुझौ अलख अरूपा। गुप्तसों प्रकटसों परगट ऐसो है निजरूपा॥ भीजै नहीं नीरसों वह तन ताहि शस्त्र नहिं काटै। छोटा मोटा होय न कबहूं नहीं घटै नहिं बाढै॥ पवन कभी नहिं सोखै ताको पावक तेज न जारै। शीत उष्ण दुख सुख नहिं पहुंचे न वह मरै न मारै॥ इकरस चेतन अचरज दरशै जा सम तुल नहिं कोई। ता पटतर कोइ दृष्टि न आवै वही वही पुनि वोई॥ भीतर बाहर पूरि रह्यो है अण्ड पिण्डसों न्यारा शुकदेवा गुरु भेद बतायो चरणहिं दासा वारा॥

राग पर्ज-गुरु हमारे अलख लखाया हो। देखतेही ऐसे गये जल नोन घुलाया हो॥ नखशिख ढूंढूं आपको कहिं आप न पाया हो। रामहिं रामा ह्वै रहा हम मूल गवाँया हो॥ बरत करै हम होय तौ सब नेम भुलाया हो। फल चाहन वारो गये हरि हेरि हिराया हो॥ ज्ञाता मिटि ज्ञानू मिटै अरु ज्ञेय मिटाया हो। शोच समझ सबही गई चरणदास न पाया हो॥

राग धनाश्री व बिलावल व सोरठ

साधो भाई यह जग यों सत नाहीं । मीन पहार समुद बिच मिरगा खेत अकाशै माहीं॥ जलकी पोट कोट धूवाँको अखिल ब्रह्मको तीरम् ।बांझको पूत शींग शश्शाको मृगतृष्णा को नीरम् स्वप्नको भूप द्रव्य स्वप्नाको अरु जंगलको द्वारम्।गणिका शील नाच भूतनको नारिसों ब्याहत नारम्॥मावसको शशि रैनिको सूरज दूध नरनकी छाती।यह सब कहनि कहावनि देखी चींटी ले भागी हाथी ॥ऐसेहि झूठ जगत सच नाहीं भेद विचारे पायो चरणदास शुकदेव दयासों सांचहि सांच मिलायो ॥

राग रामकली–सतगुरु अक्षर मोहिं पढायो । लेखन लिखा न स्याहीसेती ना वह कागज मध्य चढायो। ना लग मात न माथे बिंदी अरुण पीत नहिं काला।एँडा बेंडा टेढा नाहीं न वह आल जँजाला ॥ ताको देखि थकी सब करणी सबही साधन भागे । सिद्धै भई भोरके तारे मुक्ति न दीखे आगे॥जाके पढे पढन सब छूटे आशा पोथी फारी । मैं तो भया कर्मका हीना कहै सरस्वति ठाढी ॥गुरु शुकदेव पढायो अक्षर अगम देश चटशाला । चरणदास जब पण्डित हूये धारि तिलक अरु माला॥१॥ वह अक्षर कोइ विरला पावै।जा अक्षरके लाग न बिंदी सतगुरुसे नहिं सैन बतावै॥ क्षरही नाद वेद अरु पण्डित क्षर ज्ञानी अज्ञानी ।बावन अक्षर क्षरही जानौ क्षरही चारौं बानी॥ ब्रह्मा शेष महेश्वर क्षरही क्षरही त्रयगुण माया।क्षरही सहित लिये अवतारा क्षर ह्वांतक जहँ काया॥पांचौं मुद्रा योग युक्ति कर क्षरही लगै समाधा।आठौ सिद्धि मुक्तिफल क्षरही क्षरही तन मन साधा॥ रवि शशि तारामंडल क्षरही क्षरही धरणि अकासा॥ क्षरही नीर पवन अरु पावक नरक स्वर्ग क्षर वासा ॥ क्षरही

उत्पति परलय क्षरही क्षरही जाननहारा। चरणदास शुकदेव बतावैं निरअक्षर है सबसों न्यारा ॥ २ ॥

राग भैरव-सकल निरंतर पाया हरिको सकल निरन्तर पाया॥ माटी भाँडे खाँड खिलौने ज्यों तरुवरमें छाया॥ ज्यों कंचनमें भूषण राजै सूरत दर्पण माहीं। पुतली खम्भ खम्भमें पुतली दुतिया तौ कछु नाहीं ॥ ज्यों लोहेमें जौंहर परगट सूतहि तानै बानै। ऐसे राम सकल घटमाहीं विन सतगुरु नहिं जानै ॥ मेहँदीमें रँग गंध फुलनमें ऐसे ब्रह्म रु माया। जलमें पाला पालेमें जल चरणदास दरशाया ॥ ३ ॥

राग ईमन-सखी री हिलमिल रहिया पीव।पुष्प मध्य ज्यों गंध विराजे पिंड ज्यों माहीं जीव॥जैसे अग्नि काठके अंतर लाली है मेहँदीव। माटीमें भाँडे हैं तैसे दूध मध्य ज्यों घीव शुकदेवा गुरु तिमिर नशायो ज्ञान दियो कर दीव। चरणदास कहैं परगट दरशो अमर अखंडित सींव॥१॥साधो अचरज निर्गुण रामका।ना मर्याद ठिकाना नाहीं नाहीं द्वारा धामका॥ मात पिता कुल गोत न वाके वेष न पुरुषा बामका। रूप न रेख नहीं कछु किरिया लेश नहीं नामका ॥ श्रवण लोचन रस नहिं नाशा त्वचा न चोला चामका। आदि न अंत न अरधै उरधै नहिं ठिंगना नहिं लाँबका ॥देखा सुना कहा नहिं जाई नहिं धोला नहिं श्यामका। चरणदास शुकदेव सुझावै नहिं बिनशै नहिं यामका ॥ २ ॥

राग सारंग-घट घटमें रमता रमि रह्यो। चेतन तजै भजै जल पाहन मूरख भ्रममें रह्यो॥ एक अखण्ड रह्यो सर्व व्यापक लख चौरासी सम रह्यो।प्रगट भानु ऐसे हरि दरशै संपुटमें नहिं

खम रह्यो। आपा जानि भूल फिर आपन नख शिखसों नहिं रम रह्यो। चरणदास शुकदेवहि रलगयो वचन बिलासन गम रह्यो ॥

राग मालश्री—तेरी गति अपरम्पार पार कैसे पइये हो। योग युक्ति करि युगता हारे उनकूं सुधि नहिं पाई॥ चित बुधि मनकी गमि जहँ नाहीं सुरति थकै थकि जाई। नेति नेति कहि निगम पुकारै कहु कोउ कैसे पावै। ध्यान न लागै ज्ञान न सूझै अनभयहू फिरि आवै॥ निर्गुणरूप निरालंभ आसन केहि विधि लखिहै कोऊ। ब्रह्मा शेष महेश्वर थाके सकल शिरोमणि सोऊ॥ वाणी शब्द रहति तुरियापद गुरु शुकदेव सुनायो। चरणहिं दास समझ सब बिसरी खोजत खोज हिरायो ॥१॥ वा बिन और न कोय वही गुलजारी रे जग फुलवारी फूलि रही है ना नारंग अनन्त आदि वृक्ष ताकी सब लीला नितही रहत वसंत ॥ पाँच डार पँचरंग है रे शाखा बहुत विचार। अद्भुत गति कछु कहत न आवै फूले पुष्प अपार॥ पात फूल फल सोहने रे है है छिपि छिपि जाहिं। निश्चल द्रुम इक रस रहै रे उत्पति परलय नाहिं विन सींचे विन मूलकी रे अचरज अधिक सुवास। जित तित खिलो शुकदेव है रे नहीं चरणहीं दास ॥ २ ॥

राग विहागरा—तेरे बहुत रूप बहु बानी। तूही एक अनेक भयो है जिन जानी जिन जानी॥ रवि शशि विष्णु महेश्वर तूही तूही चतुर विनानी। ऋषि मुनि देवत सिद्धि तुही है तूही ब्रह्म ज्ञानी ॥ तुम विन दूजो और न पइये गावत वेद पुरानी। कोउ कहै माया है दूजी तो वह कितसों आनी ॥ तू आकाश पवन अरु पावक तू धरती तू पानी। तीनौं गुण तूहीसों निकसे तोही माहिं समानी॥ दश औतार तुही धर आयो तुही इष्ट तू ध्यानी तुही रास तुहि रास खिलइया तू ठाकुर ठकुरानी॥ तूही गुरु शुक-

देव विराजे चरणदास सिख मानी। गुप्त प्रगट सब तूही तू है अद्भुत लीला ठानी ॥१॥ यह सब एक एकही होई। जाके ऐसी निश्चय आवै जीवनमुक्ता सोई ॥ जैसे मनका डोर गुहे है काहू माला पोई। एकही श्वास सकल घट व्यापक भूलो कहै जु दोई॥ हमहूं वही वही जग सारा शिव ब्रह्मादिक वोई। एकहि ब्रह्म अचल अविनाशी और न दुतिया कोई॥ जिन समझा तिन आनँद पाया विन समझे दिया रोई। चरणदास नहिं हरिही हरि हैं सब मैं मैं मैं खोई ॥२॥ जबतैं एक एक करि भाना। कौन कथै को सुनने-हारा को है किन पहिंचाना ॥ तबको ज्ञानी ज्ञान कहाँ है ज्ञेय कहाँ ठहराना। ध्यानी ध्येय जहां नहिं पइये तहां न पइये ध्याना जब कहां बंध मुक्त भुगतइया काको आवन जाना। को सेवक अरु कौन सहायक कहां लाभ कित हाना॥ जबको उपजे कौन मरत है कौन करै पछिताना। को है जगत जगतको कर्त्ता त्रय-गुणको अस्थाना॥ तू तू तू अरु मैं मैं नाहीं सबही दे बिसराना। चरणदास शुकदेव कहां हैं जो है सो भगवाना ॥३॥

राग केदारा व सोरठ—सो लखि हम निर्गुण झरि पाई। जहां न वेद किते व पहुँचे नहीं ठकुराई॥ चारवर्ण आश्रम नहीं नहीं कर्म ना कोई नरक अरु वैकुण्ठ नाहीं नहिं तन ताई ॥ प्रेम अरु जहाँ नेम नाहीं लगन ना लाई। आठ अंग जहाँ योग नाहीं नहीं सिद्धाई॥ आदि अरु जहाँ अन्त नाहीं नहीं मध्याई। एक ब्रह्म अखंड अविचल माया ना राई॥ ज्ञान अरु अज्ञान नाहीं नहीं मुकताई। चरणदास शुकदेव सम तहाँ दुई जरि जाई ॥

राग सोरठ व नट व बिलावल

सो नैना मोरे तुरिया तत पद अटके। सुरति निरतकी गम नहिं सजनी जहां मिलनको लटके॥ भूलो जगत बकत कछु

औरै वेद पुराण न ठटके। प्रीति रीतिकी सार न जानै डोलत भटके भटके ॥ किरिया कर्म भर्म उरझेरे ए मायाके झटके। ज्ञान ध्यान दोउ पहुँचत नाहीं राम रहीमा फटके ॥ जग कुल रीति लोकमर्यादा मानत नाहीं हटके। चरणदास शुकदेव दयासों त्रैगुण तजिकै सटके ॥

राग सोरठ–है कोई जानै भेद हमारा। सब हममें हम सबके माहीं मैं व्यापक मैं न्यारा॥ हम अडोल हम डोलत निशिदिन हम सूक्षम हम भारा। हमहीं निरगुण हमहीं सरगुण हमहीं दश अवतारा॥ हमहीं एक बहुत हो खेले हमहीं सकल पसारा। हमहीं ज्ञान ध्यान पुनि हमहीं हमहीं धारण हारा॥ हमहीं आदि अन्त पुनि हमहीं हमही रूप अपारा। महाराज हम वार पार हैं हमहीं जग उजियारा॥ हमहीं गुरु शुकदेव विराजैं हमहीं तरैं महतारा। चरणदास घट हमहीं बोलैं समझैं समझनहारा ॥

राग काफी–मैं कोइ अजब हूं मेरा अजब तमाशा जोर। मेरेहि पिण्ड खण्ड ब्रह्मण्डा मैं पूरण सब ठौर॥ मैं ब्रह्मा मैं विष्णु महादेव मैं कमला मैं गौर। मैं रवि चन्द्र इन्द्र इन्द्राणी मैं गर्जत वनघोर॥ मैं गुण तीनि पांच तत्त्व मैं हीं मैं दश दिशि चहु ओर मैं निहरूप धरैं नानाविधि निशिदिन करत किलोर॥ मैं गुप्ता मैं मुक्ता परगट मैंही भर्म झकोर। चरणदास मो बिन नहिं रंचक दूजा कोई और ॥

राग बिहागरा–गुप्तमतेकी बात री जानै सोइ जानै। पशू ज्ञान अजमतको देखो अनभुस एकै सानै॥ चलनीकी गति सबकी मति है मनमें अधिक सयानै। गहि असार सारको डारै निश्चय बुधि नहिं आनै॥ हूं गूंगो जगको नहिं सूझै सैन नहीं कोइ मानै। कासों कहौं अरु को सुनै सजनी कहूं तोको पहि-चानै॥ सत्य ब्रह्मको जानत नाहीं मूरख मुग्ध अयानै। चरण

दास कहै समुझत नाहीं भोदूं फिरि फिरि झगरो ठानै ॥१॥
सुनि हो मुक्त मुक्त कहूं तेरी। वेद पुराण जँजिर जरी है सबही गत मारग मिलि घेरी ॥ तैं तो मुक्ति बहुतकी कीन्ही जिन पापन उर झेरी। बन्धन सकल छुटाय काटूं जो आधीन होय तू मेरी स्वर्ग पताल ठौर नहिं तोको डोलत पेरी पेरी। अचल पुरुषसों जाय मिलाऊं तोहिं जानि साधनकी चेरी॥ शुकदेव गुरु जब किरपा कीन्ही तू नाहीं कहुँ है री। चरणहि दास वासना तजिके आपहि आप करि है निबेरी ॥ २ ॥

राग बिहागरा व बिलावल–अब हम ज्ञान गुरुसे पाया। दुबिधा खोय एकता दरशी निश्चय है घर आया ॥ हिरदै शुद्ध हुआ बुधि निर्मल चाह रही नहिं कोई। ना कछु सुनौं न परशू बूझुं उलट पलटि सब खोई॥ समझ भई जब आनँद पाये आतम आतम सूझा। सूधा भया सकल मन मेरे नेक न कहूं अरूझा ॥ मैं सबहुनमें सब मोहूंमें सांच यही करि जाना। यही है वही यही है दूजा वही भाव मिटाना ॥ शुकदेवाने सब सुख दीन्हें तिरपत होय अघायो। चरणदास निकसा नहिं रंचक परमातम दरशायो ॥

राग बिलार बिहागरा–गुरु बिन कौन डुबोवनहारा। ब्रह्म समुद्रमें जो कोइ बूडो छुटि गये सकल विकारा॥ सिन्धु अथाह अगाध अचल है जाको वार न पारा। वाकी लहरि मिटत वाहीमें कौन तरै को तारा ॥ त्रयगुण रहत सदाही चेतन ना काहूं उनहारा। निराकार आकार न कोई निर्मल अति निर्धारा॥ अकरी अलख अरूप अनादी तिमिर नहीं उजियारा। तामें अण्ड दिपत ऐसे करि ज्यों जल मध्ये तारा ॥ काल जालभय

भूती नाहीं तहां नहीं भ्रमभारा । चरणदास शुकदेव दयासों बूडि गये ही पारा ॥

राग सोरठ व आसावरी-सतगुरु निजपुर धाम बसायो जितकै गये अमर ह्वै बैठे भवजल बहुरि न आये॥ योग योग युक्ति करि ध्याने ध्यानी ध्यान लगावैं । हरिजन गुरुकी दया बिना यों दृष्टि नहीं दरशावैं ॥ पण्डित मुण्डित चुंडित ढूंढै पढि सुनि वेद पुराने । जासों वै सब पायो चाहैं सो वै नेति बखाने ॥ जंगम यती तपी सन्यासी सबही वह दिशि धावैं । सुरति निरतिकी गम जहँ नाहीं वे कहौ कैसे पावैं ॥ देश अटपटा बेगम नगरी निगुरे राह न पाया । चरणदास शुकदेव गुरूने किरपा करि पहुँचाया ॥

राग सोरठ-हमारे गुरु हरि नगर दिखाया हो। उलटी बाट घाट जहँ नाहीं निजपुर वास बसाया हो ॥ चन्द्र न सूर गगन नहिं तारे राति दिवस नहिं पाया हो। नहीं तिमिर जहँ चांदनि नाहीं नहीं धूप नहिं छाया हो॥ मनसों अगम सुगम नहिं बुधिसों अनभय अन्त न लाया हो । और कहौ कैसे करि पावै निगम नेति जेहि गाया हो ॥ है प्रत्यक्ष उदय सूरज ज्यों संपुट नाहिं छिपाया हो। बिन गुरु गमके अंजन आँजे दृष्टि नहीं दरशाया हो ॥ जनक जहाँ शुकदेव बिराजैं चरणदास मिलि धाया है। जगकी व्याधि लगन नहिं पाई किरपा करि पहुँचाया हो॥ १॥ हमारे गुरु मारग बतलाया हो। आन देवको सेवा त्यागी अज अविनाशी ध्याया हो॥ हरि पूरण परशो निश्चयसों छांडो झूठी माया हो। इकरस आतम नितही जानौ क्षणभंगी है काया हो॥ चाहौ मुक्त करै तन किरिया भर्म अधिक भर्माया हो। बोकरि पेड बबूल शूलके आँब कहो किन पाया हो॥ अपना खोज कियो

नहिं कबहूं जल पाहन भटकाया हो। जैसे फल सेवत सेमरको कीर अधिक पछिताया हो ॥ ज्ञान पदारथ कठिन महानिधि बिन भेदी किन पाया हो । चरणदास घट सोहं सोहं तामें उलटि समाया हो ॥२०॥

राग काफी–इन नैनन निरकार लहा । कहन सुननकी कौन पतीजै जान अजान है सहज रहा ॥ जित देखो तित अलख निरंजन अमर अडोल अबोल महा । ज्योति जगत बिच झिल मिल झलकै अगम अगोचर पूरि रहा ॥ अलख लखा जब बेगम हूवा भर्मकोट जब तुर्त ढहा । सर्वमई सब ऊपर राजे शून्य स्वरूपी ठोस ठहा ॥ जीवनमुक्त भया मन मेरा निर्भय निर्गुण ज्ञान गहा । गुरु शुकदेव करी जब किरपा चरणदास सुख सिंधु बहा ॥ १ ॥

राग आसावरी–जबसों मन चंचल घर आया । निर्मल भया मैल गयेसगरे तीरथ ध्यान जु न्हाया ॥ निर्वासी है आनँद पाये या जगसों मुख मोडा। पांचों भईं सहज वश मेरे जब इनका रस छोडा ॥ भय सब छूटे आबको लूटै दूजी आश न कोई। सिमिटि सिमिटि रह अपने माहीं सकल विकल नहिं होई ॥ निजमन हूवा मिटिगा दूवा को वैरी को मीता । बंधमुक्तका संशय नाहीं जन्म मरणकी चीता ॥ गुरु शुकदेव भेव मोहिं दीयोजबसों यह मति साधी।चरणदासों ठाकुर हूये छुटि गये वाद विवादी॥ १॥ हम तो आतम पूजा धारी समझि समझि करि निश्चय कीन्हीं और सबन पर भारी ॥ और देवल जहुँ धुँधली पूजा देवत दृष्टि न आवै । हमरा देवत परगट दीखै बोलै चालै खावै ॥ जित देखौं तित ठाकुरद्वारे करौं जहां नित सेवा । पूजाकी विधि नीके जानौं जासों परसन देवा ॥ करि सम्मान स्नान कराऊं

चन्दन नेह लगाऊं । मीठे वचन पुष्प सोइ जानों है करि दीन चढाऊं ॥ परसन करि करि दर्शन पाऊं बार बार बलि जाऊं । चरणदास शुकदेव बतावै आठ पहर सुख पाऊं॥२॥ये मन आतम पूजा कीजे । जितनी पूजा जगके माहीं सबहुनको फल लीजै ॥ जो जो देही ठाकुरद्वारे तिनमें आप बिराजैं । देवलमें देवत हैं परगट आछी विधिसों राजैं ॥ त्रय गुण भवन सँभारि पूजिये अनरस होन न पावै जैसेको तैसा ही परसौ प्रेम अधिक उपजावै ॥ और देवता दृष्टि न आवै धोखेको शिर नावै । आदि सनातनरूप सदाही मूरख ताहि न ध्यावै ॥ घट घट सूझै कोइ यक बूझै गुरु शुकदेव बतावैं । चरणदास यह सेवन कीन्हे जीवन्मुक्त फल पावै ॥ ३ ॥

राग बिहागरा- सब जग पांच तत्त्वका उपासी। तुरियातीत सबनसों न्यारा अविनाशी निर्वासी ॥ कोई पूजै देवल मूरति सो पृथ्वी तत्त्वजानौ। कोई न्हावैं पूजै तीरथ सो जलको तत्त्व मानौं ॥ अग्निहोत्र अरु सूरज पूजा सो पावक तत्त्व देखा । पवन खैंचि कुंभकको राखै वायुतत्त्वको लेखा॥ कोई तत्त्वाकाशको पूजै ताको ब्रह्म बतावै । जो सबके देखनमें आवै सो क्यों अलख कहावै ॥ परमतत्व पाँचोंसे आगे गुरु शुकदेव बखानै । चरणदास निश्चय मन आनौ विरला जन कोइ जानै

राग जयकरी-ब्रह्म अरूप धरे बहुरूप कहो कोउ कैसो स्वरूप कहै । सबमें है अरु सबसे न्यारा कोई भेद अनूप लहै॥ कहुँ कहुँ मूरख गुंगभयो है कहुँ कहुँ वक्ता वेद पढै । कहुँ कहुँ राव रंक दुखसुख है कहुँ कहुँ भोगी भोग करै ॥ कहुँ कहुँ राधे रूप बनावै कहुँ कहुँ मोहन रास रचै। मुडि मुडि जावै फेरि मनावै प्यार प्रीतिके चाव चहै॥ कहुँ कहुँ सूरति मोहनि मूरति

कहुँ कहुँ लालन फंद परे। कहुँ कहुँ मधुवा कहुँ कहुँ प्याला कहुँ कहुँ पीवत प्रेम भरे॥ कहुँ कहुँ ज्ञानी नाना बानी कहूं भरममें भूलि रहे। शुकदेवा गुरु हो समझावै चरणहिदासा चरण गहे।

राग मंगलवासु व बिलावल

कर्म करि निष्कर्म होवै फेरि कर्म न कीजिये। भूलिकै कोई कर्म साधै उलटि कर्म न दीजिये॥ कर्म त्यागै जगै आतम यह निश्चय करि जानिये। जब निर्भय पद सुलभ पावै सांच हियमें आनिये॥ सांच हियमें राखि अवधू नाम निर्गुण नित जपौ। अग्नि इन्द्रिय कर्म लकडी पंच अग्नि अस तपौ॥ जैसे टूट गहनो खोज मेटै होय सोना अति सुखी। ऐसे योग भक्ति वैराग सेती कर्म काटै गुरुमुखी॥ जासौं मिटै आपा आप सहजे ब्रह्म-विद्या ठानिये। गुरू शुकदेव युक्ति भाषै चरणदास पिछानिये॥

राग सोरठ—साधो भर्मा यह संसारा। गतमति लोक बडाई उरझे हो कैसे छुटकारा॥ भर्म पडे नानाविधि सेती तीरथ बर्त अचारा। देह कर्म अभिमानी भूले छूँछ पकरि तत डारा॥ योगी योग युक्ति करि हारे पण्डित वेद पुराना। षट दर्शन पग आप पुजावै पहिरि पहिरि रँग बाना॥ जानत नाहिं आप हम को हैं को हैं वह भगवाना। को यह जगत कौन गति लागै समझै ना अज्ञाना॥ जा कारण तुम इत उत डोलौ ताको पावत नाहीं। चरणदास शुकदेव बतायो हरि नारायण माहीं॥

हेली—यह अचरजकी बात हेली कौन सुनै कासों कहूं। दूर हुतो जब चाव थीरी अरी हेली अब नहिं छोडै साथ॥ जहँ देखौं तहँ सांवरो री अरी हेली तन मन रहो समाय। अन्तरयामी एक है द्वितीया ना ठहराय॥ मत भटक भय भर्म मेरी अरी हेली उलटि आपको देख। तोहीमें हरि बसत है गावत वेद

विशेख॥ जब तू मोसी होयगी री अरी हेली तब समझैगी बात । गूँगेको स्वप्नो भयो यह सुख कहो न जात॥ जो चाहै हरिसों मिलो री अरी हेली गुरु शुकदेव मनाव । चरणदास सखीने कह्यो आप आपमें पाव ॥१॥ हरि पाये फल देख हेली पाव-तही खोई गई । जात अटक कुल खो गये री अरी हेली खोये वरण अरु वेष॥जन्म मरण सब खोय गये री अरी हेली बंधमुक्त गये खोय । ज्ञान अज्ञान न पाइये नेम धर्म नहिं होय ॥ लाज गई अरु भय गये री अरी हेली अरु साथही गई उपाधि।आशा अरु करणी गइ खोये वादविवाद॥ मैं नाहीं हरिही रहे री अरी हेली तू दौरत हरि ओट । पावैगी जब जानि है हरि पावनके खोट ॥ गुरु शुकदेव सुनाइया री अरी हेली चरणदास मन शोच । सब बातनसों जायगी री रहै न तेरा खोज॥२॥ वह घर कैसा होय हेली जितके गये न बाहुरे । अमरपुरी जासों कहै री अरी हेली मुक्तधाम है सोय ॥ विकट घाट वा ठौरको री अरी हेली शठ नहिं पावै पंथ । गुरु मुख ज्ञानी जाहिं हैं हरिसों सम्मुख संत ॥ त्रयगुण मत पहुँचै नाहीं री अरी हेली छहौं ऋतु ह्वां नाहिं । रवि शशि दोऊ ह्वां नहीं नहीं धूप नहिं छाहिं ॥ अवधि नहीं काया नहीं री अरी हेली कलह कलेश न काल । संशय शोक न पाइये नहिं मायाको जाल॥ गुरु शुकदेव दया करैं री अरी हेली चरणदास लहै देश । बिन सतगुरु नहिं पावई जो नानाकर भेष ॥

हेला-दृष्टि उठाके देख हेला ब्रह्म अनादि अरूप है। आदि नहीं अन्तौ नहीं रे अरे हेला आदि सनातन एक॥ नहिं धौला काला नहीं रे हेला हरा पीत नहिं लाल। तीनों गुणसे है परे नहिं पुरुष नहिं बाल॥ शस्तर छेदि सकै न रे अरे हेला पावक सकै

न जारि। नीर भिजोय सकै नहिं ताही न व्यापै वारि॥ रेख जहाँ नहिं खिंचि सकै रे अरे हेला राई ना ठहराय। लेप जहाँ नहिं चढि सकै सकै नहीं कोइ पाय॥ नहीं दूर निकटौ नहीं रे अरे हेला नहिं प्रगट नहिं गूप। गुरु किरपासों पाइये सुन्दर बहुत अनूप॥ है अडोल डोलै नहीं रे अरे हेला है अबोल नहिं बोल। देश कालसों रहित हैं और कहां कहुँ खोल॥ जैसा था सोई आज है रे अरे हेला नया पुराना नाहिं। जासों न जग है भरो जग वाहीके माहिं॥ शक्ति घनी लीला घनी रे अरे हेला घने नाम बहुरूप। त्रयदेवासे बहुत हैं इन्दरसे बहु भूप॥ चन्द्र घने सूरज घने रे अरे हेला घने पिण्ड ब्रह्मण्ड। सब कुछ आपहि ह्वै रह्यो निर्मल अचल अखण्ड॥ जनक दियो शुकदेवको रे अरे हेला उन मोको कहि दीन। दरश भयो चरणदासको सदा रहौं लवलीन॥१॥ अचरज अलख अपार हेला वाकी गति नहिं पाइये। बहु निखेद जोपै करे रे अरे हेला तौ जावैगा हार॥ वाणी थकि बुधिहू थकै रे अरे हेला अनभय थकि थकि जाय। ब्रह्मादिक सनकादिक हू नारद थकि गुण गाय॥ वेद थके अरु व्यास हू रे अरे हेला ज्ञानी थके अरु ज्ञान। शंकरसे योगी थके करि करि निर्मल ध्यान॥ बहुतक कथि कथिही गये रे अरे हेला नेक न निबटी बूझ। वाचक ज्ञानी कहत हैं हमने पायो सूझ॥ पांचौ इंद्रियसों लखै रे अरे हेला ताको सांच न मानि। जो जो इनसों देखिये तिनकी निश्चय हानि॥ गुरु शुकदेव सुनावई रे अरे हेला समझ चरणहीं दास। अपनेही परकाशमें आप रहा परकाश॥२॥

राग-हिंडोलना झूलत गुरुमुख संत अलख हिंडोलने॥ नाभि भ्रुकुटी खंभ रोपे सोहं डोरी लाय। सुरति पटरी बैठि सजनी क्षण आवै क्षण जाय॥ मन मनसा दोउ लगे झूलन धारणा लै

संग। ध्यान झोके देत सजनी भलो लागो रंग ॥ सखि सहेली सिमिटि आई पींग पींगन नेह। बूँद आनँद सब भिगोई सघन बरसै मेह ॥ चार वाणी खडी गावैं महा रँगीली नार। मुक्ति चारौ मालिनी जहँ गुहि गुहि लावैं हार ॥ त्रिगुण बकुला उडन लागे देखि बाद्दल लै। संग पियके सदा झूलै ताते लगै न भै ॥ चरण-दासको नित झुलावैं ईश झुलैं शुकदेव। शिव सनकादिक नारद झूलैं करि करि गुरुकी सेव ॥

सर्व अंग १५

राग मंगल–मन रोगी भयो पिंग कि कुबुधि विकासों। बाढी व्यथा अपार लोभके भारसों॥ कर्म्म भरो मतिहीन छिन छलसों भयो। पांच पचीसौ घेरि मोह मदने दह्यो ॥ कैसे यह दुख जाय कि पूछनको चल्यो। तब पूरण गुणवन्त वेद सतगुरु मिल्यो ॥ कर गहि कियो विचार कह्यो समझायकै। जो कछु तेरे रोग सो देहुँ बैतायकै॥ महापापकी ताप चढी तोहिं धायकै। संशयको सनिपात मिल्यो है जायकै॥ विषय विषय ज्वर रह्यो जु हियो समायकै। तृष्णाकी बहु प्यास रही मन भायकै ॥ सतसंगतिको पक्ष कबौं नाहीं कियो। इन्द्रिनके रस रोग बिगरि सबही गयो॥ कुसँगत संग संग्रहणी जियमाहीं भई। ममताको मल बढो भूख ताते गई ॥ काम क्रोधको कुष्ठ सकल तनु छायकै। शोक शूलको मूल कलेजे आयकै ॥ माया पवन झकोरसों सूजन बहुत है। त्रैगुणके त्रयदोष बात वह को कहै ॥ चिन्ता-हीकी चीस उठै दिन रातही। अति निन्दासे नींद गई ता साथही॥ शीश गुमान पिराय दरद हिंसा घनो। कलह कल्पना भर्मसों रहतो उनमनो ॥ औरौ बडी उपाधि बढै तेरी देहमें। भीजि रह्यो है शरीर पसेव सनेहमें॥ इन रोगनकी औषध देहुँ सुनायकै।

भिन्न भिन्न मैं कहौं तोहिं समुझायकै ॥ कर्म्म करेजवा तोडिकै सत्य गिलोय ले। जतहीकी अजवायन आनि गिलोयदे॥ चित्त चिरैता न्याय पति पीपर भली। नेम नोन सेंधकी नीकीसी डली॥ हितके बर्तनमाहीं तिन्हैं भिजोयके। परमप्रेम जल तामें डारि समोय दे॥ शील शिलापर पीसो छानि उमंगसों। पीव-तही सब रोग नशैंगे अंगसों॥ शुद्ध सुदर्शन चूरण हैगो स्वादही। ताके पाये जाय जगतकी व्याधही॥ दया क्षमा सन्तोष यही माजून है। अधिक आनंद तत्त्व पदको लहै॥ गुरु शुकदेव बतावै औषध सार है। चरणदास जो खाय कष्ट कोई ना रहै।

राग धनाश्री—मनमें दीरघ भये विकारा। सतगुरु साहब वैद मिले बिनु कटै न रोग अपारा॥ त्रयगुणके त्रय दोष पगो है काम क्रोध ज्वर जारा। तृष्णा वायु उठी उर अन्तर डोलत द्वारहि द्वारा॥ विषयवासना पित कफ लागौ इन्द्रिनके सुख सारा। सत्संगति रस करवा लागे करत न अंगीकारा॥ सतपुरुषनको कहा न मानै शील क्षमा नहिं धारा। रसना स्वाद तजौ नहिं मूरख आपनपौ न सँभारा॥ चरणदास शुकदेव मिले जब औषध ज्ञान विचारा। तन मनको सब रोग मिटायो आवागमन निवारा॥

रान केदारा- भाई रे विषमज्वर जग व्याधि। गुरू हमारे दई औषध खाय रहनी साधि॥ शुद्ध चूरण है सुदरशन निबल लखि मोहिं दीन। खात तनके कष्ट नाशैं रोग मन ह्वै क्षीण॥ ज्ञान योग रु भक्ति त्रिफला धारणा नेपाल। रहे सतसंगति भवनमें आश लगे न व्याल॥ कनक कामिनि पंथ बतायो भूलि न कर अहार। अति अजीरण होत इनते बढत विकट विकार॥ चरणदास शुकदेव कहिया औषधी निज सोय। विषम वेदन होय भारी जाहि क्षणमें खोय॥

गीत सावनके गानेका-सखी सजनी है तेरो पिया तेरे पास। अरी बौरी इत उत भटकी क्यों फिरै जी सखी सजनी है सुरति निरति कर देख ॥ अरी बौरी अपने महल रँग मानिये जी सखी सजनी हे मान अहं सब खोय। अरी बौरी यह यौवन थिर ना रहे जी सखी सजनी हे बालम सम्मुख होय ॥ अरी बौरी पिछली अरु सब खोइये जी। सखी सजनी हे पिया मिलनको री साज ॥ अरी बौरी न्हाय शिंगार बनाइये जो सखी सजनी हे चितचौकी धराय। अरी बौरी नायन सुमति बोलाइयेजी। सखी सजनी सचरचा अग्नि जराव ॥ अरी बौरी नीर गरम करि न्हाइयेजी सखी सजनी है योग उबटनो लगाव। अरी बौरी कर्मको मैल उतारिये जी सखी सजनी हे करणी कँगही बहाव ॥ अरी बौरी वेणी मुक्त गुधांइये जी सखी सजनी हे गुरुके चरण चितलाव। अरी बौरी सतसंगति पग लागियेजी ॥ सखी सजनी लाज सिंदूर निकासी। अरी बौरी खोलि शृंगार बनायेजी सखी सजनी हे नवधा भूषण धार॥ अरी बौरी जासों पिया रिझाइयेजी सखी सजनी हे प्रीतिको काजल आंज ॥ अरी बौरी प्रेमकी मांग सँवारिये सखी सजनी हे बुद्धि बेसरि सजि लेहि। अरी बौरी पान विचारि चबाइये जी सखी सजनी दयाकी महँदी लगाव॥ अरी बौरी साँचो रंग न उतरैजी सखी सजनी हे धीरज चूनरि लाल। अरी बौरी नखशिख शील शृंगारिये सखी सजनी हे काम क्रोध तजि लोभ॥ अरी बौरी मोहपीहरसों जिन करौजी सखी सजनी हे पांच सहेली साथ। अरी बौरी इनको संग न लीजियेजी सखी सजनी हे चालौ पिया केरे पास॥ अरी बौरी सुखमन बाट सुहावनी जी सखी सजनी हे गगनमण्डल पद धार॥ अरी बौरी

पिय मिलैं दुख सब हरैं सखी सजनी हे निर्गुण सेज बिछाव। अरी हिलि मिलिकै रंग मानिये जी सखी सजनी हे पावैगी अटल सुहाग ॥ अरी बौरी अजर अमर घर निर्मलेजी। सखी सजनी हे गुरु शुकदेव अशीश अरी बौरी चरणदास मनसा फले जी ॥१॥ भागी साथन हे इह झूलै री मत झूल॥ असी हेली भर्म या देशकी जी भागी साथन हे इह झूलै री मत झूल॥ अरी हेली भर्म या देशकी जी भागी साथन हे। बदला माया कोरी रूप अरी हेली कुमति बूंद जित तित परैंजी भागी साथन हे ॥ कर्म वृक्षकी वेला अरी हेली वारी फल लगि विष भरेजी भागी साथन हे। दुर्मति हरी हरी दूब अरी हेली छल-रूपी फूले फूल हैं जी भागी साथन हे ॥ त्रयगुण बोलत मोर अरी हेली दम्भ कपट बकुला फिरैंजी भागी साथन हे। पाप पुण्य दोउ खम्भ अरी हेली नाक स्वर्ग झोटा लगैंजी भागि साथन हे ॥ मैं मेरी बँधी डोर अरी हेली तृष्णा पटरी जित धरीजी भागी साथन हे। झूलत चावहि चाव अरी हेली नर नारी सब झूलईजी भागी साथन हे ॥ तपसी योगी गये झूलै अरी हेली फल चाहत अरु कामनाजी भागी साथन हे। आशा झुलावत नारि अरी हेली पांच पचीस मिलि गवाइँजी भागी साथन हे ॥ या जगमें ऐसी ऐसी झूल अरी हेली चरणदास झूलत बचेजी भागी साथन हे। इत तजि उतकोरी चाल अरी हेली अमर नगर शुकदेवजी ॥ २ ॥

राग बरवा–साधौ री संगति भवँरा दुर्लभ पइये लीजै जीतन मन बेचि भौंराजी। जी मानै साधौ री संगत भँवरा प्यारीही लागै॥ अनादि आदि भवँरा कौने लखावै अपने सद्गुरुजी संतोष भवँराजी। जी मानै नरक निवारण सतगुरु प्यारेही

लागै॥ आपसकी चरचा भवँरा कौने सुनावै अपने गुरुभाई जी संतोष भवँराजी। जी मानै गुरुका तौ छौना भई या प्यारोही लागै॥ आछे आछे लक्षण भवँरा कौन जु लावै अपने रहनी जी संतोष भवँराजी। जी मानै कर्म छुटावन रहनी प्यारीही लागे आछे आछे परचा भवँराजी॥ कौन दिखावै अपनी युक्तिजी संतोष भवँराजी। जी मानैं काया जितावन करणी प्यारीही लागै॥ आछी आछी वाणी भवँरा कौन उठावै अपने अनभै संतोष भवँराजी। जी मानै बुधिकी तौ मंजन अन भै प्यारी लागै॥चरणदासको तुरिया भवँरा कौने बसावै अपने शुकदेवजी सन्तोष भवँराजी। जी मानै सिरका तौ छत्तर शुकदेव प्यारोही लागै॥

राग बिलावल—अजब फकीरी साहबी भागनसों पइये। प्रेम लगा जगदीशका कछु और न चहिये॥ राव रंकको सम गिनै कछु आशा नाहीं। आठ पहर सिमटे रहो अपनेही माहीं॥वैर प्रीति उनके नहीं नहीं वाद विवादा। रूठेसे जगमें रहैं सुनै अनहद नादा॥ जो बोलैं तौ हरिकथा नहिं मौनै राखैं। मिथ्या करुवा दुर्वचन कबहूं नहिं भाखैं॥जीवदया अरु शीलता नख शिखसों धारैं। पांचौ चेले वश करैं मनसों नहिं हारैं॥ दुख सुख दोनोंके पर आनँद दरशावै। जहां जाय अस्थल करैं माया पवन न जावै॥ हरिजन हरिके लाडिले कोई लहै न भेवा। शुकदेव कही चरण दाससों करि तिनकी सेवा॥१॥ऐसाहोदरवेशहीजगकोबिसरावै। ईमान सबूरी सांचसों सोई बकसा जावै॥जन जर और जमीनको दिलमें नहीं लावै। फिक्रा फकीरीको बुरा वह जिक्र छुटावै॥ फेकाकेका गुण यही राजक करै यादा। काफ कनायंत सुख

१ संन्तोष

घना आनन्द अगाधा॥रे रयाजत बलवान है हरिको अपनावै। आखिरको दीदारही निश्चय करि पावै ॥ एजिदको धारे रहै रहै सबसों नीचा। शुकदेव कही चरणदाससों पावै पद ऊंचा ॥२॥ वह वैरागी जानिये जाके राग न दोष। निर्बंध ह्वै जगमें फिरै चाहै सिद्ध न मोक्ष ॥ पांचनको एकै करै अनहदमें रोक। त्रय गुणते ऊपर बसै जहां हर्ष न शोक॥मन मूडै तन साधकै बाधा सब डार। तत्त्वतिलक माथे दिये शोभा अपरम्पार॥माला श्वास उसाँसकी हिरदय अस्थान। अलख पुरुषसों नेहरा त्रिकुटी मध्ये ध्यान॥ काम क्रोध मोह लोभ ना यही नेम अचार। शुकदेव कही चरणदाससों करे ब्रह्म विचार ॥ २ ॥

राग सोरठ व बिलावल-जो नर इतके भये न उतके। उतको प्रेम भक्ति नहिं उपजी इत नहिं नारी सुतके॥ घरसों निकसि कहा उन कीन्हों घर घर भिक्षा मांगी। बाना सिंह चाल भेंडनकी साधु भये अकि स्वांगी॥ तन मूडा पै मन नहिं मूडा अनहद चित नहिं दीन्हा॥इन्द्रिय स्वाद मिलै विषयनसों बकबकबकबक कीन्हा॥माला करमें सुरति न हरिमें यह सुमिरण कह कैसा। बाहर वेष धारके बैठे अन्तर पैसा पैसा॥ हिंसा अकस कुबुधि नहिं छोडी हिरदय साँच न आया। चरणदास शुकदेव कहत हैं बाना पहिरि लजाया॥

राग सोरठ-समझ रस कोइक पावे हो। गुरु बिन तपन बुझै नहिं प्यासा रह जावै हो॥ बहुत मनुष ढूंढत फिरैं अँधरे गुरु सेवै हो। उनहूंका सूझ नहीं औरनकहँ देवै हो॥ अँधरेको अँधरा मिला नारीको नारी हो।ह्वां फल कैसे होयगा समझै न अनारी हो॥ गुरु शिष्य दोउ एकसे एकै व्यवहारा हो। गये भरोसे

डूबिकै वे नरक मँझारा हो॥ शुकदेव कहै चरणदाससों इनका मत कूरा हो। ज्ञानमुक्ति जब पाइये मिलै सद्गुरु पूरा हो॥

राग जैजैवन्ती–गुरु बिन ज्ञानी नहीं तिमिर नशावै। भाई भरमत फिरै लोई जल और पाहन सोई बात नहीं बूझै कोई तिनको वह धावै॥ देवी और देव पूजै जहां कछु नाहीं सूझै फेरि फेरि जावै दूजे तहां नहीं पावै। वेदकको भेद ठानै ज्योतिष विचार जानै काहूकी कही न मानै करै मन भावै॥ भूत टोना जादू सेवै प्रभुका नाम लेवै भक्तिमें न चित देवै गुण नहिं गावै। श्रीशुकदेव कहै चरणदास होय रहै सोई मुक्तिधाम लहै आपा जो उठावै॥

राग गौरी–सब जग भरम भुलाना ऐसे। ऊंटकि पूंछसों ऊंट बँध्यो ज्यों भेड चाल है जैसे॥ खरका शोक भूंस कूकरकी देखा देखी चाली। तैसे कलुआ जाहिर भैरों सेढ मशानी काली॥ गाँव भूमि हितकरि धावै जाय बाही दौरे। सदो सरवर इष्ट धरत हैं लोग लुगाई बौरे॥ राखे भाव श्वान गर्दभको इनको ल्याय जिमावै। ढेंढ चमारनको शिर नावैं ऊंची जाति कहावैं॥ दूध पूत पाथरसों माँगैं जाके मुख नहिं नासा। लपसी पपडी ढेर करत हैं वह नहिं खावै मासा॥ वाके आगे बकरा मारैं ताहि न हत्या जानैं। लै लोहू माथेसों लावैं ऐसे मूढ अयाने॥ कहैं कि हमरे बालक जियावो बडी आयुर्बल दीजै। उनके आगे विनती करतैं अँसुवन हिरदय भीजै॥ भोये भरडेके पग लागैं साधु सन्तकी निन्दा। चेतनको तजि पाहन पूजै ऐसा यह जग अन्धा॥ सत्संगतिकी ओर न झाँकै भक्ति करत सकुचावैं। चरणदास शुकदेव कहत हैं क्यों न नरकको जावैं॥१॥ अरे नर क्या भूतनकी सेवा। दृष्टि न आवै मुख नहिं बोले ना लेवा

ना देवा॥ ज्यहि कारण घी ज्योति जलावैं बहु पकवान बनावैं। सो खरचैं तू अधिक चावसों वह स्वप्न नहिं खावैं॥ राति जगावैं भोपा गावैं झूठे मूँड हलावैं। कुटुँब सहित तोहि पैंर परावैं मिथ्या वचन सुनावैं॥ ताहि भरोसे जन्म गवाँवैं जीवत मरत न साथा। बड भागन नर देही पाई खोवै अपने हाथा॥ चार वरणमें मैली बुधिका ऊंच नीच किन होई। जो कोई झूठी आशा राखैं अगत जायगा सोई॥ ताते सत विश्वास टेक गहु भक्ति करो हरि-केरी। चरणदास शुकदेव कहत हैं होय मुक्ति गति तेरी॥२॥

राग बिलावल–सब सुखदायक हैं हरि मूरख नहिं जाने। मनमें धरि धरि कामना औरनको माने॥ये जी जो चाहे सन्तानको जप लालबिहारी। सुन्दर बालक होहिंगे घरके उजि-यारी॥ जो चाहै तू धन घना सेव कृष्ण मुरारी। साखि सुदामाकी सुनौ विभव अपारी॥ जगत बडाई जो चहै सुमिरो यदुनाथा। नीच बहुत ऊंचे भये जग नायो माथा॥ जो सिंधुहु वोही चहैं करि हरि हिय ध्याना। सिद्धि परापत होहिगी चढि है परमाना॥ चरणदास हूवो चहै भजि ले भगवाना। कहैं गुरू शुकदेवजी होय मुक्त निदाना॥

राग बिहागरा–साधो निन्दक मित्र हमारा। निन्दकको निकटेही राखौं होन न देऊं न्यारा॥ पाछे निन्दा करि अघ धोवें सुनि मन मिटै विकारा। जैसे सोना तापि अग्निमें निर्मल करै सोनारा॥ घन अहरनकस हीरा निबटै कीमत लक्ष हजारा। ऐसे यांचत दुष्ट सन्तको करने जगत उजियारा॥ योग यज्ञ जप पाप कटन हित करै सकल संसारा। बिन करणी मम कर्म्म कटैं सब मेटैं निन्दक प्यारा॥ सुखी रहो निन्दक जगमाहीं रोग न हो तनु सारा। हमरी निन्दा करनेवाला भव उतरैं जल

पारा ॥ निन्दकके चरणोंकी अस्तुति भाषैं बारम्बारा । चरणदास कहैं सुनि साधो निन्दक साधक भारा ॥

राग सारंग-अरे नर कहा कियो तुम ज्ञान । गई न हिंसा कुबुधि बडाई राग द्वेषकी आन ॥ प्रभुताईको क्षण क्षण दौरे प्रभुको ना क्षण एक । अंतर भोग जगतके प्यारे बाहर साधू वेष ॥ जैसे सिंह गऊ तन धारो कपटरूप प्रगटायो । धोखा खाय पशू आ निकसो पंजा ताहि चलायो ॥ सुंदररूप महा महाबगलेकोएक टांग जल ध्यान । मनमें आशा मीन गहनकी कहां मिलैं भगवान ॥ गुरु शुकदेव बतायो मोको भीतर बाहर शुद्धि । चरणदास वह हरिजन जानौ ताकी है ब्रह्म बुद्धि ।

राग केदारा-छले सब कनक कामिनिरूप । सुर असुर अरु यक्ष गंधर्व इंद्र आदिक भूप ॥ सावित्री वश कियो ब्रह्मा पार्वती त्रिपुरारी । लीला कारण लक्ष्मी सँग हरि लियो अवतार ॥ रावणसे अति बली मारे मौत जिन वश कीन । पशु नरनकी को चलावै एतौ अति अधीन ॥ रूप रसमें दे धतूरा मोह फाँसीडार तपकि पूँजी छीनिकै कियो शृंगीऋषिको ख्वार ॥ माया ठगिनी ठगे सबही बचे गुरु शुकदेव । रणजिता कोइ उबरो करि दास चरणन सेव ॥

राग सोरठ-साधो होनहारकी बात । होत सोई जो होनहार है कापै मेटी जात ॥ कोटि सयानप बहुविधि कीन्हें बहुत तके कुशलात । होनहारने उलटी कीन्हीं जलमें आगि लगात ॥ जो कछु होय होतव्यता भौंडी जैसी उपजै बुद्धि । होनहार हिरदय मुख बोलै बिसरिजाय सब शुद्धि ॥ गुरु शुकदेव दयासोंहोनी धारि लई मनमाहिं । चरणदास शाचे दुख उपजै समेझेसों दुख जाहिं ॥

राग सीठना–टुक रँग महलमें आव कि निर्गुण सेज बिछी। जहां पवन गवन नहिं होय जहांजाय सुरति बसी॥ जहँ त्रय-गुण बिन निर्वाण जहाँ नहिं शूर शशी। जहँ हिलि मिलिकै सुख मान मुक्तिकी होय हँसी॥जहँ पिय प्यारी मिलि एक कि आशा हुई नशी। जहँ चरणदास गलतानकि शोभा अधिक लसी॥१॥ सुनु सुरत रँगीली है कि हरिसा यार करौ। जब छूटै विघ्न विकारकि भव जल तुरत तरौ॥तुम त्रयगुण छैल बिसारि गगनमें ध्यान धरौ। रस अमृत पीवो है कि विषया सकल हरौ॥ करि शील संतोष शृंगार क्षमाकी मांग भरौ। अब पांचौ तजि लगवार अमर घर पुरुष बरौ॥कहैं चरणदास गुरु देखि पियाके पाँव परौ॥२॥जिव आतम बिसरी हे पुरु-षको भूलि रही। जब पिय बिसराई हे जने जन बाँह गही॥ तैं लाज गवांई है कि हे पाँचन पकडि लई। तेरे तीन लगे लगवार पचीसौं संग भई॥ तैं तो जन्म जन्म रहि चूकि कि यमकी मार सही। कहैं चरणदास बिन लालकि भवज जात बही॥३॥ टुक निर्गुण छैलासों कि नेह लगावरी।जाको अजर अमर है देश महल बेगम पुर री॥जहाँ सदा सोहागिनी होय पियासा मिलि रहु री। जहँ आवागमन न होय मुक्ति चेरी तेरी॥ कहैं चरण-दास गुरु मिले सोई ह्वां रहु बौरी।तब सुखसागरके बीच कल हरी है रहु री॥४॥ तू सुन हे लंगर बौरी। तू पांचों घेरी पचीसौ घेरी विषय वासनाकी है चेरी बारी बारी दौरी। तैं पिय भूली चौरासी फूली अंग अंगके सुखमें फूली माया लाई ढोरी॥ तैं काम क्रोधसों नेह लगायो मन माता सब जग भर्मायो मोह यार बांको री। चरणदास शुकदेव बतावैं निर्गुण छैला तोहिं मिलावैं जो टुक चेतन होरी॥५॥ पर आशा है दुखदाई। जिन

धीरजसों पति रसिया छाँडो बांको मोह यार कियो गाढो क्रोधसों प्रीति लगाई॥ जिन जतसत देवरसों मुख मोडा दया बहिनसों नाता तोडा सुमितसौं बिसराई। जो धर्म पिताके घरसों छूटी क्षमा मायसों योंही रूठी कुमति परोसिनि पाई॥ सन्तोष चचाको कहा न माना चची दीनतासों रिस ठाना माया मधि बौराई। चरणदास कहैं जब निजपति हो पावै श्रीशुकदेव शरण तू आवै शील शृंगार बनाई॥ ६॥

राग सीठना-टुक दर्शन दे हरि प्यारे। बिन देखे मोहिं कल न परति यह देह जरति है व्याकुल प्राण हमारे॥ तेरी भौंह मटक और प्रेम लटक हिय अटकी नन्ददुलारे। तेरी सुन्दर सूरति मोहनि मूरति नैना अति मतवारे॥ तुमसों को छैला सदा नवेला अलबेला वांकारे। मैं हूं चरणदासा तुम सुखरासा आशा पुरवो आरे॥१॥ कहां बाजत करत गुमान मुरलिया रंग भरी। तैं मोहे मोहन छैलक बाँके कृष्णहरी॥ सुन बाँस सुता बड भाग तनकसी बन लकरी। कछु टोना कीन्हों है विचित्तर सुघर खरी॥ निशि वासर लगी रहै पियाके अधर धरी। ब्रज सगरो दियो नचाय हाथ भरकी बँसरी॥ तेरी तान मधुरसुर है बरसावत प्रेम भरी। सुनिकै धुनि ऋषि मुनि देव महेश समाधि टरी॥ चरणदास भई सखि हे तुही शुकदेव बरी॥२॥ तुम देखौ हरिकी लीला साधौ कहन सुनन गम नाहीं। वह आप सकल विस्तारै अरु आप करै प्रतिपारै जब चाहै तब तबहीं॥ सारै या जगमें धूम मचाई। वह अद्भुत कौतुक लावै रंकहिको राज्य दिलावै राजाको रंक करावै यह गति किनहुँ न पाई। वह अचरज खेल मचावै पाप पुण्यके न्याव चुकावै आप देखै और दिखावै इक इकसों देइ भिराई॥ जब पाप बढनको आवै हरि आपहि धोय

बहावै दुष्टनको मारि भगावै सन्तनकी करै सहाई। चरणदास कहै जो चाहो शुकदेव शरण अब आवो तुम साईंसों लव लावो वे देहै दुख मिटाई ॥३॥ तेरी क्षण क्षण छीजत आयु समझ अजहूं भाई। दिन दोका जीवन जानि छाँडि दे गुमराई॥सुन मूरख नर अज्ञान चेतता क्यों नाहीं। कहा फूला फिरै गवाँर जगत झूंठे माहीं॥ कियो काम क्रोध सो नेह गही है अकडाई। मतवारा माया माहिं करत हैं कुटिलाई॥ तेरो संगी कोई नाहिं गहै जब यम बाहीं। शुकदेव चेतावै तोहिं त्याग दे मचलाई॥ चरणदास कहैं भज राम यही है सुखदाई ॥ ४ ॥

वसन्त होरी प्रारम्भ

राग वसंत--ऐसे कृष्ण कुँवर खेलत वसन्त। जाको सुर नर मुनि पावत न अन्त॥ संग लिये बहुग्वाल बाल। अरु फेंट-नमें भरि भरि गुलाल॥ सब वस्तर पहिरे लाल लाल। गल सोहत सुन्दर गुंजमाल॥ कोउ ताल बजावत है मृदंग। कोउ ढोल तबूंरा बीण चंग॥ कोउ डफ रवाब मौहरि मृचंग कोउ। गावत स्वरदै दै उमंग॥ जब आई राधिका सखिन साथ। गहि छिरके तबही गोपिनाथ॥ कोउ केशरि गागरि लिये हाथ। काहू बेंदी दई हरि जूके माथ। इक काजर नैनन आंजो आय। मुख चोवा चंदन अबीर लाय॥ नीलांबर प्रभुको दीयो ओढाय। हँसि करत परस्पर मनके भाय॥ यह कौतुक व्रज बाढो अपार मिलि नाचत कूदत गोपी ग्वार॥ लखि मोहिं रही बहुदेव नारि ऐसो अद्भुत अचरज रस बिहारि॥ यह सुख अब कापै कहो जाय। सनकादि नारद रहे लोभाय॥ शुकदेव गुरुने दियो दिखाय। चरणदास ध्यानमें रहो समाय॥१॥ऐसे पारब्रह्म खेलत वसंत। कबहूं एक कबहूं अनंत॥ जैसे हाट एक भूषण अनेक ॥

वरण वरणके धरत वेष ॥ टूटैं गहना गल जो जाय । फिरि चाहै तौ फेरि बनाय॥आपहि विष्णु ब्रह्मा महेश। आपहि धरती आपहि शेश॥आपहि सुर नर मुनिहि जान। आप धरत अवतार आन ॥ आपहि रावण आपहि राम । आपहि कंस आपहि श्याम ॥ आपको ब्रढि मारै आप।आप आपनको जापत जाप॥चरणदास इककी आया देख । हरि कहियत हैं तेरे भेख॥ शुकदेव दयाते पायो भेव।ताते आप अपनकी लागो सेव ॥२॥वह वसंतरे वह वसंत कोइ विरला पावैं वह वसंत । जाकी अद्भुत लीला रँग अनन्त ॥ जँहँ झिल मिल झिलमिल है अपार।जहँ मोती बरषै निराधार ॥ जहँ फूलनकी लागी फोहार।जहँ अनहद बाजे बहु प्रकार ॥ जहँ ताल जु बाजे बिना हाथ । जहँ शंख पखावज एक साथ ॥ जहँ बिन पग घुँघुरूकी टकोर । जहँ बिन मुख मुरली घनघोर॥ जहँ अचरज बाजे और और । जहँ चन्द सर नहिं सांझ भोर ॥जहँ अमृत सरवैं काम धेनु ।जहँ मान क्रोध नहिं मोह मैनु॥ जहँ पांचौ इन्द्रिय एकरूप।जहँ थकित भये हैं मनुष भूप ॥ शुकदेक बतावैं ऐसो खेल । चरणदास करौ क्यों न वासो मेल ॥३॥ खेलौ राम नाम लैलै वसंत। भक्ति करौ मिलि साधुसंत॥मात पिता सुत दारा जान । सब स्वारथके संगी पिछान॥ तोहिं जन्मत सबहिन धरो आय।तैं आप अपनपौ दियौ बँधाय ॥श्वास निकसि रहि जाय देह ।सब कुटुँब सँघाती भरो गेह ॥ जब सबही मिलिकै तजैं नेह।कहैं वेगि निकासौ रही खेह।कहैं खाट बिछौना द्यो निकास ।अरु जारि देहु मुखलै हुतास ॥ ऐसे झूठे संगकि कौन आस।ताते हरि भज ले तू उसाँस ॥ इनसों पगो तजौं हरिसों मीत। अपने भलेकी न करी चीत॥ शुकदेव कह नर अजहूँ चेत। चरणदास

तजो क्यों जगसों हेत ॥४॥ मेरे सतगुरु खेलत निज वसंत । जाकी महिमा गावत साधु सन्त ॥ ज्ञान विवेकके फूले फूल । जहँ शाखा योग अरु भक्ति मूल ॥ प्रेमलता जहँ रही झूल। सतसंगति सागरके कूल॥ जहँ भर्म उडत है ज्यों गुलाल। अरु चोवा चरचै निश्चय बाल॥ शील क्षमाको बरषै रंग। जहां काम क्रोधको मान भंग॥ हरि चर्चा जित है अनंत। सुनि मुक्त होत सब जीवजंत ॥ आन धर्म सब जाहिं खोय। राम नामकी जैजै होय॥ जहाँ अपने पियको ढूँढि लेव। अरु चरण कमलमें सुरति देव ॥ कहैं चरणदास दुख द्वंद्व जाहिं । जब प्रियतम शुकदेव गहैं बाहिं ॥५॥ खेलो नित वसंत खेलो नित वसन्त। मिलि साधु संगमें नित वसन्त॥ जहँ फूल जु फूले चारि रंग। भक्ति ज्ञान अरु योग अंग ॥ रंग जु चौथा है विराग। विषय वासना देहु त्याग ॥ भवँर होय सूँघै जु कोय। जीवनमुक्ता कहिये सोय ॥ भय अरु भ्रम सब छूटि जाय। आनँद पदमें रहे समाय ॥ चन्दन चरचा अति सुबास। महक रही ह्वां आस पास ॥ जिहि सुगन्ध शीतलता होय। ताप तपन सब जाहिं खोय॥ चरणदास हरिचरण माहिं। शीश दिये बहु पाप जाहिं॥ प्रीतम शुकदेवै अनंद। अरु काट निवारै सकल फंद ॥ ६ ॥ वह देश अटपटा बिकट पन्थ। कोइ गुरुमुख पहुँचै होय सन्त॥ बहुत चले मग चाव चाव। औरनसों कहि आव आव॥ हमहूं पहुँचे तुम्हैं दे बसाय। ऐसो जान्यो सुलभ दाय॥ बहुतक तपसी कष्ट साध। बहुतक पण्डित पोथी लाद॥ बहुतक चुण्डित जटा धारि। चहुँ ओर पावक जारि जारि ॥ बहुतक मुण्डित पूजा राखि। बहुतक भक्त पिछली शाखि ॥ बहुतक योगी पवन जीति। हरि मिलबेकी करैं रीति॥ कायर थाके बाट माहिं॥

कछु इक आगे चले जाहिं ॥ द्वै कनक कामिनी लिये घेरि । सोभी उनके पडे फेरि ॥ कोइ उनसे छुट करि आगे जाय । जहँ ऋद्धि सिद्धि लेवै लगाय ॥ शुकदेव कहैं सब डारि आस । ह्वां प्रेमी पहुँचै चरणदास ॥७॥ साधो आतम पूजा करै कोय । जोइ करै सोइ मुक्ता होय ॥ नेह नगरमें बसै जाय। भवन सँवारै हित लगाय । तामें सेवा धारै धार। आठ पहर करैं बार ॥ तन मन वचन सँभारी लेव । सम्मुख देखो अपना देव ॥ दया पुष्पमाला बनाव। क्षमाशील चन्दन चढाव॥ लिये दीनता हाथ जोरि। सांचै रँग मनको बोरि ॥ घट घट प्रीतम राख मान । रस भंग न होवै सावधान ॥ प्रसन्नता सोई धूप दीप। शुकदेव कहैं यों रहु समीप ॥ चरणदास हो संग न छोर। कृष्णमयी लखु चहूं ओर।८॥

होरी॥ राग धमारि–मोहन चतुर सुजान मेरे घर होरी खेलन आयो हो। पीत वसन पियरे आभूषण पीरो तिलक बनायो हो॥ सखी री लालहि लाल गुलाल उडावत ग्वाल बाल सँग लायो हो। सबके करन कनक पिचकारी गावत नाचत धायो हो॥ सखी री आनि अचानक हरिने मेरे मुख चोवा लपटायो हो। केशरि माहीं घोरि अरगजा मो तनपै ढरकायो हो॥ अपने हाथ सवारि पान दै हार हिये पहिरायो हो। रीझ रिझा अरु भीज भिजाकर उर आनन्द बढायो हो ॥ सखी री मैंहू वाके जाय अचानक काजर नैन लगायो हो। मुरली गहि पीताम्बर लैके नीलाम्बर जो उढायो हो॥ सखी री जा सुखको ब्रह्मादिक तरसैं शेष पार नहिं पायो हो। गोपी कहैं चरणदास श्यामकी सो सुख हमैं दिखायो हो॥ १॥ साध चलो तुम सँभारी । जग होरी मचि रही है भारी ॥ दंभ पखण्ड गहे करमें डफ हूबंड हूबँडकी तारी॥ त्रयगुण तार तँबूरा साजे आशा तृष्णा गति धारी। पाप पुण्य दोउ लै पिचकारी

छूटत हैं बारी बारी॥सम्मुख ह्वै करि जो नर खेलौ ताकी चोट लगी कारी।लोभ मोह अभिमान भरो है ले माया गगरी डारी॥ राजा परजा भोगी तपसी भीजि रहे हैं संसारी॥ कुबुधि गुलाल डारि मुख मींडो कामकला पुटली मारी। युग युग खेलत यों चलि आई काहूते नाहीं हारी॥ जड चेतन दोउ रूप सँवारे एक कनक दूजी नारी।पांच पचीस लिये सँग अबला हँसि हँसि मिलि गावत गारी॥ चतुरा फगुवा दै दै छूटे मूरखको लागी प्यारी। चरणदास शुकदेव बतावैं निर्गुण ज्ञान गली न्यारी ॥२॥

होरी राग काफी–ज्ञानरंग हो हो हो होरी ।निहरूपी बहु रूप धरे हैं नाना वेष करो री॥ देखन निकसी अपने पियाको समझ भवनकी पौरी।बुद्धि विचार शृंगार सजो है निश्चय माथे रोरी॥ जीवन्मुक्त हुलास बढो है परगट खेल मचोरी। खेलत खेलत आपन बिसरो लागी कौन ठगोरी॥ आपा खोजि रामहीं पाये मैं नाहीं निकसो री।चरणदास सब हरिही हरि है आपहि आप रहो री॥उपजै कौन कौन अब विनशै बंध मुक्त केहि ठौरी॥

होरी राग धनाश्री–साधौ घुंघुट भर्म उठाय होरी खेलिये। वेद पुराण लाज तजि बैरी इनमें ना उरझैये॥ शिरसों सकुच उतारि चदरिया पियसों रंग बढइये। रूप न रेख सूरति मूरति ताके बलि बलि जइये॥ अचल अजर अविनाशी सोई सम्मुख दर्शन पइये।सत चेतन आनन्द सदाही निर्भय ताल बजइये ॥ पाप पुण्यकी शंका त्यागौ जहँ मर्याद न पइये । ओला नीर विचारो जैसे यों आपन बिसरइये ॥ चरणदास वासना तजिकै सागर बूँद समइये ॥

होरी राग सोरठ–हिलि मिलि होरी खेलि लई हो बालमा घर पाइया।पांच सखी पच्चीस सहेली आनंद मंगल गाइया॥

समझ बूझका चोवा चरचा भर्म गुलाल उडाइया। दुइ गई जब इच्छा कैसी खेलन सकले बहाइया॥ चरणदास वासना तजिकै सागर लहर समाइया॥

होरी राग सोरठ–कासूं खेलै को होरी या हो बालम नाहीं मैं नहीं। अबिर गुलाल अरगजा नाहीं रंग नहीं गागर नहीं॥ ताल मृदंग झाँझ डफ नाहीं राग नहीं रागिनि नहीं।फाग महीना वा घर नाहीं कन्थ नहीं कामिनि नहीं॥ चरणदास नहीं तब हरि कहु कैसे सब कुछ है और कुछ नहीं॥

होरी राग धमारि–आदिपुरुष अविगत अविनाशी नाना कौतुक लावै रे। आपहि आप और नहिं कोई बहुतक रूप बनावै रे॥आपहि मोहनलाल ग्वाल हो मुरली आनि बजावै रे। आपहि व्रजकी वनिता होकर बनको दौरी आवै रे॥ आपहि गोपी कान्ह विराजै आपहि रास रचावै रे।अन्तर्द्धान होय फिर आपहि आपहि ढूंढन धावै रे।आपहि व्याकुल आप देखनकूं लीला प्रेम बनावै रे। परगट होय सबन सुख देवै आपहि रंग बढावै रे॥भोर भयो जब खेल मचावै आप आप रहजावै रे। कबहुँ एक अनेक कभी हैं विधि निषेधगति भावै रे॥ सतचित आनँद रूप सदाही शुकदेव हो समुझावै रे। चरणदास हो समझि समझि करि आपहि आनन्द पावै रे॥

होरी राग धनाश्री–साधौ बुद्धि विवेक सँभारी होरी खेलिये सांखयोगकी युक्तिसौं कीजै नित्य अनित्य विचार।माया सकल निवारिकै रे आतमरूप निहार॥ पांच तत्त्व तीनोंगुण परगट इनको दो दिन फाग। इकरस सत पद जानि रे ताहीसों मन पाग॥ निश्चय चोवा लाइये रे भर्म गुलाल उडाय। देह कर्मके रंगकी रे गागर दे ढरकाय॥जीवन मुक्त जो फगुवा पइये गुरुके

चरणन लाग। जो कोइ ऐसी होरी खेलैं जाके ऊंचे भाग॥ चरणदास कहैं शुकदेव बताई हमहूं खेलें जाग॥ प्रियतम प्रियतम जित जित देखो द्वेष गयो अरु राग॥ १॥ सखी री ततमतले संग खेलिये रस होरी हो। निर्गुण निज निरधार सरस रस होरी हो॥ सखीरी शील शृंगार सवाँरी ये रस होरी हो। दुबिधा मानि निवार सरस रस होरी हो॥ सखीरी रहनी केशर घोरिये रस होरी हो॥ बहुरि न ऐसो बार सरस रस होरी हो। सखीरी सतगुण करि पिचकारि ले रस होरी हो। तम रजके भरमार सरस रस होरी हो॥ सखी री गर्व गुलाल उडाइये रस होरी हो। मोह मटुकिया डारि सरस रस होरी हो॥ सखी री झिल मिल रंग लगाइये रस होरी हो। चंदन चरच विचार सरस रस होरी हो॥ सखीरी निश्चल सिद्ध समाइये रस होरी हो। रिमिझिम झमक फुहार सरस रस होरी हो॥ सखी री शून्य नगरमें नृत्तिये रस होरी हो। अनहद झनक झिंगार सरस रस होरी हो॥ सखीरी सैन सुरतिसों समझिये रस होरी हो। सोहं ब्रह्म खिलार सरस रस होरी हो॥ सखी री पांच पचीसौ रल मिले रस होरी हो। मंगल शब्द उचार सरस रस होरी हो। सखी री अलख पुरुष फगुवा लहो रस होरी हो। आपा आप बिसार सरस रस होरी हो॥ चरण दास रमइया रमि रह्यो रस होरी हो। दरशो फाग अपार सरस रस होरी हो॥ २॥ गुरु दूती बिना सखी पीव न देखो जाय। भावै तुम जप तप करी देखो भावै तीरथ न्हाय॥ पांच सखी पच्चीस सहेली अति चातुर अधिकाय। मोहिं अयानी जानिकै मेरो बालम लियो लुकाय॥ वेद पुराण सबै जो ढूंढे सुरति स्मृति सब धाय। आन धर्म और क्रिया कर्ममें दीन्हों मोहिं भर्माय॥ भटकत भटकत जन्मैं हारी चरण सखी गहै आय। शुकदेव साहब किरपा करिकै दीन्हों

अलख लखाय॥देखतही सब भ्रम भय भागे शिरसूं गई बलाय। चरणदास जब प्रीतम पायो दर्शन किये अघाय॥३॥ हरि पीव पाइया सखी पूरण मेरेभाग।सुखसागर आनन्दमें मैं नित उठि खेलूं फाग॥ चोवा चन्दन प्रीतिकै सखी केशरि ज्ञान घसाय। पुष्प वाससूं जो वह झीनो ताके अंग लगाय॥ बेरंगीके रंगसूं सखी गागर लई भराय।शून्य महलमें जायके सखी पियपर दई ढरकाय॥ भरम गुलाब जब करलियो सखी बालम गयो दुराय। सतगुरुने अञ्जन दियो तब सम्मुख दरशे आय॥तालीलाई प्रेमकी सखी अनहद नाद बजाय। सर्व मयी पिय पायकै हम आनँद मँगल गाय॥ रलमिल प्रियतम ह्वै गये सखी दुई गई सब भाग। चरणदास शुकदेव दयासूं पायो अचल सुहाग॥४॥ मैं तौ ह्वां खेलूंगी जाय जित मेरो पिया बसै।व्याधि उपाधिमें न संशय कोई आनन्द हि आनँद लसै॥ नितहिफागन इकरसहोरी खण्डित कबहुँ न होय। मुक्ति पदारथ फगुवा पइये आपा सरबस खोय॥ जिनके रसिया शिव ब्रह्मादिक खेलत चावहि चाव।ऋषि मुनि देवत खेलत निशिदिन करि करि बहुतकभाव॥ भाग्य बडे उनहींके जानो वा पद लागे धाय।ज्ञान ध्यानके रंगमें डूबे सोई पहुँचे जाय॥ गुरु शुकदेव बताई हमको जबसों बाढी प्रीति। चरण-दासहू अति ललचाये सुनि सुनि ह्वांकी रीति॥५॥ साधो प्रेम नगरके माहीं होरी होय रही।जबसूं खेली महहौं चित दे आपन हूंको खोय रही॥ बहुतन कुल अरु लाज गवांई रहौ न कोई काम। नाचि उठैं कभी गावन लागैं भूले तन धन धाम॥ बहुतनकी मति रंग रँगी है जिनको लागो प्रेम।बहुतनको अपनी सुधि नाहीं कौन करे ऐसो नेम॥बहुतनको गद्गदही वाणी नैनन नीर ढराय। बहुतनको बौरापर लागो ह्वांकी कही न जाय॥

प्रेमीकी गति प्रेमी जानै जाके लागी होय । चरणदास उस नेह नगरकी शुकदेवा कहि सोय ॥ ६ ॥ कोई जानै सन्त सुजान उलटे भेदकूं । वृक्ष चढो मालीके ऊपर धरती चढी अकाश ॥ नारि पुरुष विपरीत भये हैं देखत आवै हास । बैल चढो शंकरके ऊपर हंस ब्रह्मके शीश ॥ सिंह चढे देवीके ऊपर गुरुहीकी बखशीश । नाव चढी केवटके ऊपर सुतकी गोदी माय ॥ जो तू भेदी अमर नगरको तौ तू अर्थ बताय । चरणदास शुकदेव सहाई अब कहा करि है काल । बाँबी उलटि सर्पमें पैठी जबसूं भये निहाल ॥ ७ ॥

इति शब्दवर्णन ॥ १६ ॥

श्रीक्षीरसागरशायिने नमः



भक्तिसागर वर्णन १७



छप्पय-श्रीव्यासको पुत्र तासुको दास कहाऊं।सदा रहूं हरि शरण और ना शीश नवाऊं ॥ साधनसूं यह चहूं मोहिं यह बात दृढावो।माया जाल संसार तासु सों वेगि छुटावो॥अहो श्रीव्रजनाथ विनय सुनि लीजिये । चरणदासको भक्ति कृपा करि दीजिये ॥१॥ गुरु ईश्वर गुरु ईश रीझ गुरु राम बतावैं । गुरु काटैं यमफाँस विपति सब अघ नशावैं॥गुरु देवनके देव भेव ब्रह्मादि लखावैं । गुरु भवसागर तार पार वह लोक बसावैं ॥ चरणदास यह जानिकै सत्संगति हरिको भजो।शुकदेव चरण चित लायकै सो झूठ कानि दुविधा तजो ॥२॥ पग तब होवैं शुद्ध साधुके मगको ध्यावै ॥ हस्त शुद्ध तब होयँ दोऊ कर शीश नवावै॥नैन शुद्ध जब होयँ साधुके दर्शन पावै। रसन शुद्ध तब होय रामगुण मुखसों गावैं॥भनै चरणदास सब शुद्ध हो जब चरण परस गुरु देवके । वै आतम तत्त्व विचार देखकर कर दर्शन अलख अभेवके ॥ ३ ॥

दोहा-दुख मेटन सुखके करन, चरणदास वे साध ।
दाता ज्ञान विज्ञानके, देवैं मता अगाध ॥ १ ॥
साध मुक्ति नहिं चहत हैं, सिद्ध न चाहत साध ।
स्वर्गलोक नहिं चहत हैं, जिनका मता अगाध॥२॥

इडा पिंगला सुखमन धारो । आसन वज्र नागिनी टारो ॥
द्वादश अंगुल होय बेधि षट चक्कर लीजै ।
जब बाजे अनहद तूर जहां मन निज कर दीजै ॥
खेचरी मुद्रा त्रिकुटी आवै । अमृत पियै परम सुख पावै॥
मेरुदण्डको प्राण चलावै । शून्य शिखर जब नगरी पावै॥
जा नगरींमें चन्द्र न भान । पहुँचै साधू चतुर सुजान ॥
जाति पाँति जहँ नाम न नाता । श्वेत श्याम पीता नहिं राता ॥
योग यज्ञ तप जहां न दाना । तीरथ वर्त्त जहां नहिं न्हाना॥
किरिया कर्म जहां नहिं पूजा । मैं हूं तू नहिं एक न दूजा ॥
जहां न सांझ द्योस नहिं राता। एकै ब्रह्म अखण्ड विधाता ॥
चरणदास रामकी घाटी पहुँचै गुरुमत शूरा ।
ओछी बुद्धि बाद वह ठाने करणी करै सो पूरा ॥

छप्पय–बैठि गुफाके मध्य योगकी युक्ति विचारै। आप अकेलो रहै और ना मनुष निहारै ॥ चारि वार नित करै जाप ॐकार अराधै । सूक्षम करै अहार ओगरो पतलो साधै ॥ आसन पद्म लगायकै सीधो राखै मेर । ठोढी हिये लगाइये पलक झाँपकरि हेर ॥

दोहा–कुंभक आठ प्रकारके, तिनमें उत्तम एक ।
केवल कुंभक जानिये, साधै ताहि विशेख ॥ ३ ॥
त्रिकुटीमें तीरथ अगम, तिरवेणी जेहि नाम ।
न्हाय योगकी युक्तिसूं, पूरण हो सब काम ॥ ४ ॥
रणजीत कहै जहँ न्हाइये, त्रिकुटी तीरथ धाम ।
नित परवी जहँ होत है, भजन करौ निष्काम ॥५॥

जा तीरथको पवन न लागै । जा तीरथमें जन अनुरागै ॥
जा तीरथमें रतन अनेका । पूरे गुरुसों मिल मिल देखा॥

वा तीरथमें जो कोइ न्हावै । भवसागरमें बहुरि न आवै ॥
जहाँ न चन्द्र सूर नहिं तारे । गुरुगम पहुँचे अति मतवारे ॥
जा तीरथका बँधा जो नीर । उज्वल निर्मल गहिर गभीर ॥
ब्रह्मा विष्णु जहां त्रय देवा । योग युक्तिमें लावैं सेवा ॥
बारह मास दामिनी दमकै । सोन पटीला जुगुनू झमकै ॥
रणजीत मीत जहाँ बासा कीजै । नित अस्नान महासुख लीजै ॥

छप्पय-अमरी बजरी साध वायु सरने नहि पावै । द्वादश अंगुल प्राण सुरत दे ताहि घटावै ॥ मौन गहै नित रहै अल्प सूक्षम सो बोलै । एक बार आहार जँभाई कबहुँ न खोलै ॥ बांध सो जाय दृढ छींकको अनहद धुनि अति गाजई । भन चरणदास शुकदेव बल सुयोग युक्ति इमि साधई ॥

दोहा-मन पवना वश कीजिये, ज्ञान युक्तिसों रोक ।
सुरति बांधि भीतर धसै, सूझै काया लोक ॥ ६ ॥
मन हिरदैमें रहत है, पवन नाभिके माहिं ।
इंद्रिय रोकै ये रुकैं, और कछू विधि नाहिं ॥ ७ ॥

छप्पय-सूक्षम करै आहार जीति धरणि जब लेई । नीर जीत जब लेय बिन्द जाने नहिं देई ॥ मोह लोभ जब तजे अग्निको जीति मिलावै । पवन जीति जब लेय गगनको बाँध चलावै ॥ अरु हर्ष शोक सम करि गनै पांच जीत एकै करै । भन चरणदास साधुन गहे है प्रकाश कारज सरै ॥

दोहा-गगन मध्य जो क्रम लहै, बाजत अनहद तूर ।
दल हजारको कमल है, पहुँचै गुरु मत शूर ॥ ८ ॥
गगनमँडलके कमलमें, सतगुरु ध्यान निहार ।
चरणदास शुकदेव परशै, मिटैं सकल विकार ॥ ९ ॥

सहस्रदलके कमलमें, रूप अगम अपार।
सोहं सोहं जाप सहजे, होत एक हजार ॥ १० ॥

छप्पय-नौ नाडीकी खैंच पवन लै उरमें दीजै। बज्जर ताला लाय द्वार नौ बन्ध करीजै॥ तीनौ बन्ध लगाय अस्थिर अनहद आराधै। सुरति निरतिका काम राह चल अगम अगाधै॥ शून्य शिखर चढि रहे दृढ जहां जाय आसन करै। भन चरणदास ताडी लगै सो रामदरस कलिम हरै ॥१॥ चौथा पद निर्वाण धाम बेगम पुर कहिये। गुण अतीत जहँ राम निरखि नैनन सुख लहिये॥ अद्वैरूप अखण्डमण्ड मण्डल बहु बंका। जहां काल नहिं ज्वाल शब्द अति उठत निशंका॥ निज पारब्रह्म चौरी रची तहँ शिव सहित फेरी करैं। भन चरणदास चारों मुक्तिसों हाथ जोरि पायँन परैं ॥२॥ मूल कमलमें खेलि पियाकूं देखन चलिये। उलटि वेद षटचक्र जाइ सतवेंसे मिलिये प्राण अपान मिलि राह पच्छिमकी लीजै। बंकनाल करि शुद्ध प्राण लै तामें दीजै॥ मेरु दण्ड चढि जाय जब लोक लोककी गम परै। भन चरणदास ब्रह्माण्डमें ब्रह्मदर्शी दर्शन करै ॥ ३ ॥

दोहा-चरणदास यहि विधि कही, चढिवेको आकाश।
शोधि साधि साधन अगम, पूरणब्रह्म विलास ॥११॥

छप्पय-दल असंख्यको कमलरूप जहँ सत्त विराजै। अनंत भानु परकाश जहां अनहद धुनि गाजै॥ सुन्दर छबि अति हंस संत जन आगे ठाढे। जहँ पहुँचे कोई शूरबीर निशान जो गाडे॥ कमल मध्य जो तख्त है शोभा अपार वरणूं कहा। कहैं चरणदास उस तख्तपर आदिपुरुष अद्भुत महा ॥१॥ छत्र फिरत नित रहत चँवर ढोरत जहँ हंसा दर्शन कर

शिष्य मिटै युग युगका संसा ॥ आवागमन ह्वै रहत मरण जीवन नहिं होई । आनि मिले जब चार मुक्ति कहियत है सोई ॥ जहँ अमर लोक लीला अमर फल अनेक तहँ पावई । भन चरणदास शुकदेव बल सु चौथा पद इमि गावई ॥२॥ जहाँ चन्द्र नहीं सूर जहां नहीं जगमग तारे । जहां नहीं त्रय देव त्रिगुण माया नहिं लारे ॥ जहां वेद नहिं भेद जहाँ नहिं योग यज्ञ तप । जहाँ पवन नहिं धरणि अग्नि नहिं जहाँ गगन अप ॥ अरु जहाँ रात नहिं दिवस है पाप पुण्य नहिं व्यापई । आदि अन्त अरु मध्य है कहैं चरणदास ब्रह्म आपई ॥३॥ जहाँ काल नहिं ज्वाल भर्म नहिं तिमिर उजारा । जहाँ राग नहिं द्वेष जहां नहिं कर्म अचारा ॥ जहाँ काम नहिं क्रोध लोभ नहिं मोह नरेशा । जहाँ मित्र शत्रु जहाँ नहिं देश विदेशा ॥ अरु चरणदास इक ब्रह्म है और न दूजा कोई तहाँ । भया जीप सो ब्रह्म जब योग युक्ति पहुँचे जहाँ ॥४॥ जहाँ आतम देव अभेव सेव कबहूं न करावे । इच्छा दुई न द्रोह कर्म नहिं भर्म सतावे ॥ जहँ जाप थाप नहिं आप तहाँ नहिं रूप न रेखा । जासु जाति नहिं पाँति नारि नहिं पुरुष विशेखा ॥ अरु पारब्रह्म पूरण सदा है अखण्ड नहिं खण्डिता भन चरण-दास ताडी लगे सो शून्य शिखरमें मण्डिता ॥ ५ ॥

ब्राह्मण सो जो ब्रह्म पिछानै । बाहर जाता भीतर आनै ॥ पांचौं बश करि झूठ न भाखै। दया जनेऊ हिरदय राखै ॥ आतम विद्या पढै पढावै । परमातमका ध्यान लगावै ॥ काम क्रोध लोभ न होई । चरणदास कहैं ब्राह्मण सोई ॥

छप्पय-हुतो आपमें आप सृष्टि नहिं देत देखाई। ज्यों पाला जल माहिं धरणिपर लीक लिखाई॥ भाँडे माटी माहिं कनकमें

भूषण राजैं। तरुवर बीरज माहिं यथा फल फूल बिराजैं ॥ गुण रूप नाम सब ब्रह्ममें ॐकार तासूं भई। चरणदास शुकदेव सो वही ब्रह्म माया वही ॥ १॥ पांच तत्त्व तेहि माहिं तीनि गुण जुदे न होईं। चित बुधि इन्द्रिय तहाँ पाप अरु पुण्य समोईं ॥ विष अमृत तेहि माहिं भूक अरु देव मुनीश्वर। फूल शूल तेहि माहिं यमन अवतार ऋषीश्वर॥ चरणदास शुकदेव भज ये सब दरस दृष्टि अब। निराकार निर्गुण कहत भूले भटके लोग सब ॥२॥

सवैया–जैसे जलमें जल कुंभ बस जल भीतर बाहर पूरि रह्यो है। तैसे जलमें जल पाला बँध्यो जल फूटि गयो जल आप भयो॥ ऐसे जगमें वह व्यापि रह्यो किनहू कर लोचन नाहिं गह्यो है। चरणदास कहै दुई दूरि करो सगरो जग एकहि डोरि गह्यो ॥ है ॥१॥ जैसे पट मैलको संग किया जुगयो सब श्वेत भयो तनु कारो। श्याम स्वरूप आकाश भयो जब धूम धुवाँ जो भयो भौ भारो। माया पिशाचको संग कियो जब जीव भयो करता करतारो। शुकदेव कहै दुई दूर करो चरणदास सभी इक सूत निहारो ॥ २ ॥

कबित्त–दीसत न वारपार पूरि रह्यो जक्तसार, ऐसेही अटल नेक टारो ना टरत है। ताकर न नाश ठौर ठौर रह्यो भास जैसे, पुष्पके समान वास पासही रहत है। लोचन रह्यो समाय वेदहू सके न गाय, पुस्तक लिखो न जाय जारो न जरत है। शुकदेवजीकी दया चरणदासको प्रकाश भयो, जैसे मैं खोजि पायो पायों ना परत है ॥१॥ कई कोटि दुर्गा जहां हाथ जोरे रहैं, कई कोटि शम्भू जहां ध्यान लावैं। कई कोटि ब्रह्मा जहाँ खडे अस्तुति करैं, शेष नारद नहीं पार पावैं॥ वेद यशही कहै भेद कछु ना लहैं पंथकी बात वे भी बतावैं। चरणही दासही आश

जितही रहो, कोटि तेंतीसहू शीश नावैं ॥२॥ रामही देव अरु राम देवल भयो रामही रामकी करै पूजा। रामही धर्म अरु भर्म भै रामही रामही ज्ञान अज्ञान सूझा ॥ रामही एक अनेक हैं रामही राम परगट भयो राम गूझा। चरणदास शुकदेव सब रामही राम है शोधि निश्चय किया नाहिं दूजा ॥३॥ रामही बीज अरु रामही पेड है रामही फूल अरु राम पाती। रामही भोगियो रामही योगियो राम जप तप करै दिवस राती ॥ रामही नारि अरु रामही पुरुष है राम मा बाप अरु पूत नाती। शुकदेव चरणदास सब रामही राम है रामही दीवला राम बाती ॥४॥ रामही चोर अरु रामही ठग भयो राम बटमार अरु राम घाती। रामही साधुयुत संत भयो रामही राम रक्षा करैं राम साती॥ रामही देह इंद्रिय भयो रामही मन भयो रामही सुरत माती। गुरु शुकदेव चरणदास चेला भयो राम ही सीप अरु राम स्वाती ॥५॥ आपही वेद अरु आप पंडित भयो आप कित्तेब अरु आप काजी। आप काशी भयो आप जाती भयो आप मक्का भयो आप हाजी॥ आपही बाँग अरु आप मुल्ला भयो आप पण्डा भयो घण्ट बाजी। चरणदास शुकदेव हरि मुरीद मुरसिंद भयो मुक्ति औ बंध सब आप साजी ॥६॥ ब्रह्मही आदि अरु ब्रह्मही मध्य है ब्रह्मही अन्तकूं वेद गावै। ब्रह्मही एक अनेक है ब्रह्मही आपनी दृष्टिमें आप आवै॥ होय दूजा कोई नाहिं ऐसी भई आपही आप आनँद बढावै। ब्रह्म शुकदेव चरणदास भी ब्रह्म है ब्रह्मही ब्रह्मका ध्यान लावै ॥ ७ ॥

राग अरिल्ल-आतम ज्ञान बिना नहिं मुक्ता वेद भेद सब देखा जोय। ब्रह्मा शेष महेश पूजकरि वस वह लोक रहत नहिं सोय॥ जल पाहन अरु भूत भवानी पूज पूज भर्मा सब कोय। चरणदास तत विरला जाने आवागमन दुख बहुरि न होय ॥

सवैया-न ऊरधबाहु न अंग विभूति, न धूनी लगाय जटा शिर धारूं। न मूड मुडाय फिरूं वनही वन, तीरथ बर्त्त नहीं तन गारूं॥ उलट लखों घटमें प्रतिबिम्बसों, दीपकज्ञान चहूं दिशि जारूं। चरणदास कहैं मनहीं मनमें, अब तूही तुही करि तोहिं पुकारूं॥

कवित्त-तारी जो लगाय देखो वेद अर्थ पाय देखो, भक्ति बिना अखिल ईशकोहूं नाहिं पायो है। दशौ दिशा धाय देखो तीरथहू अन्हाय देखो भटको सब प्रेम बिना स्मृति.ये गायो है॥ हिवारे तनु गार देखो करवन शीर मार देखो, ऐसी ऐसी बातन चौरासी भर्मायो है। भाषै चरणदास शुकदेवके प्रतापसेती, आदि पुरुष भक्तहेतु नन्दगेह आयो है॥१॥ मूँडहू मुडाय देखो जटाहू रखाय देखो,सेवरा कहाय देखो भेदहू न पायो है। श्रवण चिराय देखो नादहूं बजाय देखो,धूरहू लगाय देखो भर्म सबै छायो है॥ धूम्रपान झूल देखो कोई भर्म भूल देखो,मोकूं हरि नाम नीको गुरू जो बतायो है। भाषै चरणदास शुकदेवके प्रतापसेती, आदिपुरुष भक्तिहेतु नंदगेह आयो है॥ २॥

सवैया-भूलत भर्मतकूर फिरै इन,बातनमें कह काज सरैगो। बैठि रहो हरिमारगमें, करता जो करै सोई होय रहैगो॥ अपने हितसों जिन तोहिं सृज्यो है,अलेख विलोकिकै सोच करैगो। चरणदास विचारि कहा भटकै, हरि नाम बिना दुख कौन हरैगो॥ १॥ वही राम वहि श्याम विधाता वही विश्वंभर पतित तरै। वही विष्णु वहि कृष्ण मुरारी, वही निरंजन ज्योति धरै॥दीनानाथ हरि वह कहियत है, जो चाहै सो वही करै। चरणदास क्यों भटकै मूरख राम विना दुख कौन हरै॥२॥

कवित्त-वही राम मेरो जिन रावण विनाश्यो जाय, वही राम मेरो जिन लंकपुर जारी है। वही राम मेरो जिन कंसको पछारयो जाय, वही राम मेरो जिन नाथ्यो नाग कारी है। वही राम मेरो जोइ डार पात रमि रह्यो, वही राम मेरो जाकी जगमें उज्यारी है। चरणदास कूर सब संतनको चेरो कहै, वही राम मेरो प्रहलाद पैज पारी है ॥

कु०-वेद पुराणनमें सुनो, संकट मेटन नांव। चरणदासके काजको, अब क्यों थाके पावँ॥ अब क्यों थाके पावँ धाममें हो अक नाहीं। और हमारो कौन गहे या दुखमें बाहीं ॥ सकल सृष्टि बिसराय खैंचि मन तुमसों लायो। इन पांचनको काट करो मेरो मन भायो ॥१॥ भीर परी जब दासपर, जित तित धारो वेष। अगिले पिछले कर्मकी, अब क्यों नहिं मेटो रेख ॥ अब क्यों नहिं मेटो रेख कर्म कोइ दूर न कीन्हों। हम कुछ जानत नाहिं तुम्हीं काहे नहिं चीन्हों॥ अब तुम करो सहाय इन्होंसे मोहिं छुटावो। काम क्रोध मोह लोभ चक्रसों वेर न लावो॥२॥

कवित्त-सबै दुख पावैं बेर बेर पछितावै अब, तोहि नित ध्यावै दुख वही काटि दीजिये। अन्नके दुखारी सब भये हैं भिखारी सृष्टि, काहेको बिसारी प्रभु वेगी जो पसीजिये॥ जक्त गुणागार करि देखो है विचार अब, न करो अबार बंदि छोडि जो कहीजिये। दिल्लीकी अर्ज चरणदास कहै लर्ज शाह, नारदको बर्ज अर्ज मेरी सुनि लीजिये॥१॥ यशुदाके लाल देखि मोहन व्रजलाल देखि, गोपी अरु ग्वाल देखि प्राण वारि दीजिये। माथैपै मुकुट देखि कुण्डलकी झलक देखि घूंघरवाली अलक देखि, ललकाही कीजिये॥ बाँकीसी मरोर देखि मुरलीकी घोर देखि, पैंजनी टँकोर देखि देखा हीय कीजिये। चरणदास कूर देखि

नैननको मूँद देखि, नैननके बिच देखि यही ध्यान कीजिये ॥२॥ पीरा सुधार फेंटों तुर्रा छबि अधिक बनी करहूमें मुरली गही अधरनपै धारीजू । घेरदार नीमो पीरो अंग शुभ रहो एक, पाँव ठाढे सो प्रेमके अहारी हारीजू॥सबही शृंगारकिये राधेजू बांयेंअंग ठाढी मुसक्यात प्राण पिया संग प्यारीजू । नवल किशोर मोर साँवरो सुजान प्यारो, पार चरणदास कीन्हों अटल बिहारीजू३॥

दोहा–मनदानिस्तम् हिज्रने, दीगर वस्ल न कोय ।
चरणदास गफलत उठे, वाहिद वाहिद होय ॥१२॥
हिज्र वस्ल दोनों नहीं, नहिं दरिया नहिं मोज ।
चरणदास जर्रा नहीं, जो कर देखा खोज ॥१३॥
दरिया बाहिद लामका, बाजत अनहद बीन ।
सकल चरण फरजंद ना, नहीं संग ताबीन ॥१४॥
दीद शुनीद जहां नहीं, तहां न काल न हाल ।
जौहर जिसम इसम नहीं, चरणदास नहिं खाल ॥१५॥
बुरी शिफारस यामिनी, और सगाई होय ।
चरणदास यों कहत है, भूल करो मति कोय ॥१६॥

कवित्त–काहेको भक्तपै समान है बगलेको, ध्यान तौ लगायो है मनिके पचावनको।भीतर और विषय वास चरण दास हार, तिलक छाप किये जक्तके दिखावनको॥ हरिकै गुण गावनको रसना रिसात अधिक, मनतो हुलसात बाद निन्दाके बढावनको । बहुत बात सीखराखी लोक और बडाईको, काया नाहिं शोधी एक रामजीके पावनको ॥१॥ यह है काल तामें महाबिकराल जहां, चरचा गोपालजाकी निन्दा करै जानिकै। कोई करै भक्त जाकूं दुष्ट बहुनाम धरैं, वचन कुवचन कहैं क्रोध मन आनिकै ॥ देखै अब जायगो तू परम वैकुंठहीकूं, बडो भयो

साधु माला धारि तिलक ठानिकै। ऐसे दुष्ट नीचनकी बात नहीं मानिये जू, कहैं चरणदास सबै पापी नरक खानिकै ॥ २ ॥ आप बडे नीच करतूत करैं नीचनकी, नीचनको संग जिन्हैं भावैं उत्पात है। रामनाम सुनि हिये लागत है आगि जान, कोऊ करै भजन ताहि देख जर जात है॥ खोटे भये आप कहैं औरनकूं खोटे वै, तो महामोटे पापी माया माहिं इतरात है। साधनके निंदक सुनौ परैंगे नरक मांझ, कहैं चरणदास दुख पावैं बहुभाँति है॥३॥

दोहा-चरणदास हितसों कियो, ग्रन्थ अनेक प्रकार ।
अष्टादश अरु चारको, काढि लियो ततसार ॥१७॥

संवत सत्रहसै इक्यासी। चैत सुदी तिथि पूरणमासी ॥
शुक्लपक्ष दिन सोमहि वारा। रच्यो ग्रन्थ यों कियो विचारा॥
तबहींसूं स्थापन धरिया। कछु इकवाणी बादि न करिया॥
ऐसेहि पांच हजार बनाई। नाम गुरूके गंग बहाई ॥
फिरि भइ वाणी पांच हजारा। हरिको नाम अग्निमें जारा ॥
तीजे गुरु आज्ञासों कीन्ही। सो अपने साधनको दीन्ही ॥
अद्भुत ग्रन्थ महा सुखदाई। ताकी शोभा कही न जाई ॥
तामें ज्ञान योग वैरागा। प्रेम भक्ति जामें अनुरागा ॥
निर्गुण सर्गुण सबही कहिया। फिर गुरुचरण कमलमें रहिया ॥
जो कोइ पढि पढि अर्थ विचारै। आप तरै औरनको तारै ॥
ना मैं कियो न करनेहारा। गुरु हिरदेमें आय उचारा ॥
चरणदास मुखसूं शुकदेवा। आन कहे चारोंही भेवा ॥

इति भक्तिसागर १७

दोहा-जल घृतसूं रक्षा करौ, मूरख हाथ न देव ।
ढीलौ कर नहिं बाँधिये, ग्रन्थ कहत यह भेव ॥१८॥

इति श्रीस्वामिचरणदासजीकृत ग्रन्थ संग्रह सम्पूर्ण ।

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

श्रीराधाश्यामाय नमः

श्रीगुरुभक्तिप्रकाशका परिशिष्टभाग

★

पद राग खमाच

नमो नमो शुकमुनि चरणदासा। कलिके कुटिल जीव तिनके हित संत अवतार धर्यो हरि त्रासा ॥१॥ श्रीपुरुषोत्तम वचन मानिकै मुरलीधर घर कीन्ह निवासा। च्यवन ऋषीश्वर दूसर कुलको परकट कीन्हों जगत उजासा ॥२॥ श्रीशुकदेव कृपा जब कीन्हीं सकल मनोरथहू भये तासा। श्रीराधाकृष्ण पीताम्बर वस्तर श्रीतिलक दीन्हों सुत व्यासा ॥३॥ परम धर्म भागवत कथन करि आन धर्म सब कियो जु नासा। युग युग भक्ति करो हरिजूकी यह वर दियो है उमंग हुलासा ॥४॥ करि परणाम प्रदक्षिणा कीनी इंद्रप्रस्थ निज कियो जु वासा। सद्गुरु कह्यो सोइ पुनि कीन्हों स्वामिभक्ति करि प्रेमकी रासा ॥५॥ अनु-भव शब्द उठा घनघोरा स्वयं रूप निज अंतर भासा। मन वच कर्म शरण जो आये तिनहूंकी मेटी यमफांसा ॥ ६ ॥ त्रिविध ताप मेटनको समरथ मानो पूरण चंद प्रकाशा। तत्पर टहल महल वृंदावन निज स्वरूप नित दंपति पासा ॥७॥ परम पवित्र चरित्र यह गावै ध्यान करै करिकै विश्वासा। निश्चय होय अमर पुर वासी जन्म मरणकी छूटै गांसा ॥८॥ अष्ट सिद्धि जिन चर-णन लागी सकल पदारथ करैं जु आसा। लक्षिदास उभय पाणि जोरिकै युगल भक्ति दीजै निज दासा ॥ ९ ॥

इति परिशिष्टभाग

श्रीशुकदेवजीकी-जन्मलीला

★

गुरु शिष्य संवाद

दोहा-जै जै श्रीरणजीत गुरु, विनय करूं शिर नाय ।
जनम होन शुकदेकी, लीला मोहिं सुनाय ॥ १ ॥
श्री व्यासके सुत शुक सूंचे । भक्ती ज्ञान योगमें ऊँचे ॥
शुभ कर्मनको नीके जानै । नीके अपना रूप पिछानै ॥
विचरत पृथिवीपर नित रहै । तृष्णा जारी आनँद लहै ॥
सर्व शास्तर नीके जानै । सबके अर्थनको पहिचानै ॥
जिनके वचन जगत छुट जावै । करनी करै अभय पद पावै ॥
श्रीविष्णु समान अहै अवतारी । सकल ऋषिनसे पदवी भारी ॥
ऐसे हैं शुकदेव गुसाँई । सदा विराजो मम हिय ठाँई ॥
कैसे जन्म भयो जगमाहीं । याको भेद सुनो मैं नाहीं ॥
उनकी कथा जु लागे प्यारी । सुनि आनँद हो हिये मँझारी ॥
ज्यों संतुष्ट हो अमृत पीये । मैं तिरपतहूं सरवन कीये ॥
चरणदास गुरुवचन तुम्हारे । भरन मिटावन करन उज्यारे ॥ २ ॥
दोहा-रामरूप गुरुजी प्रभो, और कहो इक भेव ।
कैसे तप कियो व्यासने, वर दीनो महादेव ॥ ३ ॥

गुरु वचन

दोहा-रामरूप पूछन करी, तुमने जो यह बात ।
मेरे मनकी भावती, कहतैं बहुत सुहात ॥ ४ ॥
चरणदास कह शिष सोई । तप बिन पूरण काज न होई ॥
तपसों बहुत बडाई पावै । सबमें मुखिया वही कहावै ॥
बडा भये नहिं धनके आये । बडा न होय राजके पाये ॥
तुच्छ बडाई इनकी जानै । बडी बडाई पायो ध्यानै ॥

सबका मूल तपस्या लीजै । तपसों इंद्रिय निग्रह कीजै ॥
पाप होय सो इंद्रिन काजै । इंद्रिय रोंकै सब दुख भाजै ॥
परमारथका मारग सूझै । कारज सिद्ध होहि जो गूझै ॥
इन्द्रियवश मन जीता जावै । रामरूप निहचल घर आवै॥५॥

दोहा-अब सुन शिष तोसूं कहूं, अद्भुत कथा पुनीत ।
जो भीषमजीने कहा, युधिष्ठिरसूं करि प्रीत ॥ ६ ॥

एकहि समय व्यास मुनिराई । पुत्रकामना मनमें आई ॥
यही जु धरिकै मनमें आसा । चलिकै गये महादेव पासा ॥
मेरु शिखरपै शिवजी राजैं । पारवती लिये संग विराजैं ॥
अरु उनके सेवक थे सारे । बैठे थे आनँदमें भारे ॥
वही ठाँव जो व्यास गुसाँई । पुत्रहेत लगे तपके माहीं ॥
कठिन तपस्या करने लागे । ऐसा पुत्र सुमनमें मांगे ॥७॥

दोहा-पृथ्वीसी धीरज धरै, जलसा निर्मल होय ।
तेज अग्निसा तासुमें, वायुसा व्यापक होय ॥ ८ ॥
अरु ऐसाही चाहिये, जैसा बड़ा अकाश ।
करी तपस्या सौ बरस, मनमें धरि यह आश ॥९॥

जलफल फूलपात नहिं लीन्हा । जबलग पवन अहारहि कीन्हा ॥
जहां तपस्या करते ही थे । ह्वां ब्रह्म ऋषि अरु राजऋषी थे ॥
यम अरु इंद्र वरुणको जानौ । वायु कुबेर अग्नि असथानौ ॥
वसु पिरथी अरु सूरज चन्दा । अरु ह्वां थे सातौं सिंधा ॥
अरु पर्वत थे नरतनु धारे । जहां अप्सरा गंधरव सारे ॥
अरु चौरासी सिद्ध जहांई । अरु नारदमुनि हुते तहांई१०॥

दोहा-पीत पुष्पमाला पहर, ललित गौरजा कंत ।
मानौ फूली सांझही, हिम शशि सोभावंत ॥ ११ ॥
व्यास तपस्या जो करी, बडा कष्टही धारि ।
सावधान तामें रहे, गये न मनमें हारि ॥ १२ ॥

अरु बल छीन हुवा नहिं वाका । तीन लोकमों अचरज ताका ॥
धन धन कहा ऋषी मुनि सारे । जो ह्वां थे सो सबै पुकारे ॥
तेज तपस्या जटा जु चमकैं । मानो अग्नि भाँतिसी दमकैं ॥
देख तपस्या ऐसी शंकर । परसन भये बहुतही मनकर ॥
वर देनेकी मनमें आई । व्यास ओर देखा मुसक्याई ॥
कहा मनोरथ पूरा कीना । पुत्तर चाहा जैसा दीना ॥१३॥

दोहा-पूरी करी जु कामना, मैं तोको सुत दीन ।
रामभजनमें रहैगा, ध्यानमाहिं लवलीन ॥ १४ ॥

महादेवसूं यह वर पाया । व्यास बिदा हो मारग धाया ॥
आ पहुँचे सु स्थेलक माहीं । फुल्लत भये बहुत हरषाहीं ॥
सदा मगन आनँदमें पागे । निशिदिन रहैं ध्यान लवलागे ॥
व्यासदेवके तपकी बूझी । सो हम कही बात थी गूझी १५

शिष्य वचन

दोहा-तपकी कही सु मैं सुनी, तिरपत भये जु कान ।
रामरूप इक और भी, पूछे कृपानिधान ॥१६॥
कौन महीना कौन तिथि, कौन हुता जो बार ।
व्यासगेह कैसे भया, शुकदेवजीका अवतार ॥१७॥

गुरु वचन

वैशाख महीना मध्यमें मावस तिथि दिन सोम ।
जन्म लियो शुकदेवजी, गिरि सुमेरकी भौम ॥१८॥
डेढ पहर दिन चढा था, जब हूवा बीचार ।
वेदव्यासके उर विषे, उपजा हर्ष अपार ॥ १९ ॥

तप पाछे केतिक दिन माहीं । होम ठठा श्री व्यास गुसाईं ॥
मावस तिथिदिन सोमहि वारा । परबी लख यह किया विचारा ॥
होम करनकी मनमें आई । ताकी सौज सबै मँगवाई ॥
सावधान हो बैठे नीके । लागे मथन अग्नि अरनीके ॥

ताही समय अप्सरा आई । सहज माहिं सुन्दर अधिकाई ॥
नाम घृताची रूप अपारा । व्यासदेव वा ओर निहारा ॥
मोहित भये देख वा नारी । होनहारकी गति ही न्यारी ॥
लखा अप्सरा मनमें जबहीं । तोती रूप धरा उन तबहीं ॥
पलक कटाक्ष काम वश भया । बीज खसा थाँभा नहिं गया ॥
बिंदु पडा अरनीके मांहीं । ईश्वरगति जानी नहिं जाही २० ॥

दोहा-फिर अरनी मथने लगे, प्रगटे अग्निस्वरूप ।
मूरत श्री शुकदेवकी, नख शिख व्यासहि रूप ॥ २१ ॥
किशोर अवस्था हो गये, तुरतहि ले अवतार ।
अति सुन्दर तनु साँवरे, मानो कृष्ण मुरार ॥ २२ ॥

गंगा वहीं प्रगट हो आई । रूप नारिके अति छबि छाई ॥
वामें शुकजी आनि न्हवाए । फूल स्वर्गके पवन वर्षाए ॥
दण्ड एक दूजी मृगछाला । नभसे उतरी ही ततकाला ॥
आय अप्सरा निरतन लागी । गंध्रव गावन लाग सुभागी ॥
जहां दुंदुभी बाजन लागे । लगी शंखध्वनि होने आगे ॥
जितने बाजत थे सो सारे । बाजन लगे सु न्यारे न्यारे ॥
पित्र देव नारदसे मुनी । हाहा हूहू सु स्तुति भनी ॥
मगन भए थिर चर जग सबहीं । राम रूप शुक जनमें जबहीं २३

दोहा-रीति जन्मनेकी करी, पारवती त्रिपुरार ।
करी बधाई भवन अप, बाँधी बंदनवार ॥ २४ ॥
वासवने बस्तर दिए, शुकदेवजीको आय ।
फटै न जीरण होय ना, मैल नहीं लग जाय ॥ २५ ॥
और कमंडलु काठका, दियाजु उनके हाथ ।
धन्य समय धनि दिवस था, रामरूप धनि नाथ २६ ॥

जिनका दरशन शुभ अहै, सो पक्षी नभ माहिं ।
दिए दिखाई आयके चहूं ओर मंडराहिं ॥ २७ ॥
तोता हरियल हंसही, सारस अरु पिकरोर ।
भाँति भाँतिके और खग, नीलकंठ अरु मोर ॥२८॥
जन्म देख शुकदेवको, सभी भए परसन्न ।
आपसमें पक्षी कहैं, जै जै धनि धनि धन्न ॥ २९ ॥

जन्मत तप और मन लाए । जगमें पगन नेक नहिं पाए॥
स्वतः सिद्ध भे श्रीशुकदेवा । जानत हुते चारहो भेवा ॥
सर्व शास्त्रने अर्थ पिछानै । जैसे व्यासदेव मुनि जानै ॥
विना पढे सबही कुछ जाना । तौभि बृहस्पतिको गुरु माना॥
जो विद्या गुरु किया सनेही । बिन गुरु विद्या फल नहिं देही॥
नहिं तौ चाह कहा थी उनको । विद्याही पढनेका तिनको ॥
याते मर्यादा गुरु चीन्हा । सकल शास्त्र पाठ जू कीन्हा॥
चार वेद उनसों पढ लीन्हा । मीमांसामें अतिमन दीन्हा ३०॥

दोहा-राजनीति अरु काव्य सब, पढ गए रहे जितेक ।
गुरु पूजे दइ भेंटही, सु स्तुति करी अनेक ॥ ३१ ॥
फेर तपस्याको लगे, पांचों इंद्रिय रोक ।
मन दीना भगवानको, रहा न हर्ष न शोक ॥३२॥
करते थे दण्डवत ही, सकल देवता ताहि ।
ऋषि मुनि हू करते हुते, बडा जान करि चाहि ॥३३॥
जो कारज होता कछू, करते इनसूं बूझ ।
अधिकी थे तप ज्ञानमें, बुद्धि बडी थी सूझ ॥३४॥

और जगत कारजके माहीं । कबहूं चित्त लगायो नाहीं ॥
हरिके सुमिरणमें नित रहते । मोक्ष धर्मका मारग चहते ॥
एक दिना शुकदेव सुभागे । आय पिताकूं कहने लागे ॥

मोक्षधर्म मोको समझावो । मेरे मनका भर्म मिटावो ॥
तुम सम और न दीखै कोई । मोक्षधर्म को जानैं सोई ॥
ताते कृपा बेगही कीजे । मोक्षधर्मको मारग दीजे ॥
सीखनको हियरो हुलसावै । बारबार मनमें यहि आवै ॥
ज्ञान अरूपी समझो चाहूं । ताते परमातमको पाऊं ॥३५॥

दोहा—पुत्तरकी अभिलाष ही, सुना व्यासही देव ।
जब समझावन ही लगे, मोक्षधर्मको भेव ॥ ३६ ॥

पहले शास्त्र योग सिखायो । बहुरि सांख्ययोग समझायो ॥
मत वेदांत दियो समझाई । जिज्ञासी हूए अधिकाई ॥
जभी व्यासमुनि ऐसी जानी । श्रीशुकदेव भए ब्रह्मज्ञानी ॥
जैसे व्यास ब्रह्मको जानै । ऐसेही शुकदेव पिछानै ॥
जब कही पुत्तर आवो आगे । ढिग बैठाय कहन यों लागे ॥
मिथिला नगर जनक जहँ राजा । ह्वां तुम जाव मुक्तिके काजा ॥
मोक्षधर्म वे नीके जानैं । ब्रह्मदरशी ब्रह्मरूप विधानैं ॥
सोई समझ सब तोकूं देहै । कृपा करि संदेह मिटै है॥३७॥

दोहा—यह सुनि करि ठाढे भये, आज्ञा शिर धर लीन ।
गिरि सुमेरुते उतरकै, गवन नगरकूं कीन ॥ ३८ ॥

जा पहुंचे नगरीके माँही । राजा जनक रहे जा ठाँही ॥
राजद्वारपै ठाढो भयो । द्वारपालने ह्वां जा कह्यो ॥
व्यासपुत्र चल द्वारे आयो । ठाढो है यों जाय सुनायो ॥
जनक विदेह समझ यों भाषो । कही कि ह्वांई ठाढो राषो ॥
सात दिवस शुकदेव गुसांई । ठाढे रहे पँवरिके ठाई ॥
राजा जनक नहीं सुध लीनी । बडी परीक्षा गाढी कीनी ॥
अठयें दिन मंदिरको ल्यावो । ठाढ रहै तौ ना बैठावो ॥
सात दिवस फिर पूछा नाहीं। शुकजीके मन कछू न आई॥३९॥

दोहा-चौदह दिन गये बीतके, हुवा पंद्रवाँ द्योस ।
बुलवाये रनिवासमें, देखनको जग होस ॥ ४० ॥
नाचनको पातुर पठवाई । कह्यो कटाक्ष करो तुम जाई ॥
हेतु भाव करि वशमें ल्यावो । नाना विधिको भोजन खवावो॥
सात दिनालौं योंही कीन्हो । मन शुकदेवको नाहीं लीन्हो ॥
मोहित भये न काहू नारी । हेतुभाव करि बहु पचि हारी॥
अरु भोजन दीयो सोइ खायो । अपनी इच्छा नाहिं मँगायो॥
चौदह दिन ठाढे जो बीतई । जाको बुरो न मानै चितई ॥
अस राजा मिहमानी करई । जाको लोभ न मनमें धरई ॥
स्थिरचितदुखसुख्ख नहिं व्यापो । पवन लगैज्योंगिरिनहिंकापो
दोहा-दुख सुख कुछ व्यापै नहीं, चित्त स्थिर है जौन ।
राम रूप गिरि ना हलै, आये गये जु पौन ॥४२॥
जब राजा शुकदेवको, देखा बहुत हलाय ।
पीछे दिन इक्कासवें, लीनों निकट बुलाय ॥ ४३ ॥
नमस्कार पूजा करि हेती । समाचार पूछा हित सेती ॥
कौन कामना मन धरि आये । सो अब हमसूं कहो सुनाये ॥
जत सत शील क्षमामें पूरे । ज्ञान ध्यान अरु तपके शूरे ॥
अपने कारज सब तुम कीने । मगनरूप आनँद लवलीने ॥
बडो अचंभो मोकूं आयो । कौन मनोरथ मनमें लायो ॥
तब बोले शुकदेव विज्ञानी । लज्जा लिये मधुरसी बानी ॥
कछू कछू पूछनकूं चाऊं । मनमें जो संदेह मिटाऊं ॥
यह संसार भयो काहीते । कब लग रहै कहौ द्वाईते॥४४॥
दोहा-यह जग कैसे बनत है, और समापत होय ।
दुख सुख मन या जीवकूं, मोहिं बतावो सोय॥४५॥
जब कह जनक सुनो शुकदेवा । एक आतमा सुस्थिर भेवा ॥
नित सत जानो भेद जु वाको । काहू विधि करि नाशन जाको॥

अरु वा छूटि सभी भ्रम जानौ। भ्रमहीते यह जग प्रगटानौ ॥
जबलग भरम तभीलौं भासै। भर्म मिटेसे सबही नासै ॥
अरु संसारिनके मन आंधे। भ्रमहि आपने दुख सुख बाँधे॥
शुकजी कही ये आगे जानो। ग्रंथनमाहिं लिखी पहँचानो ॥
मेरे भ्रमसूं जग उपजत है। मेरे भ्रमहीसूं ज़ु खपत है ॥
सो कहु यह जगत कबलौं है। मोहिं बतावो यह जबलौं है४६॥

दोहा—जनक कही मैं जानिया, मत वेदांत निहार।
ज्ञानीके सतसंगसूं, अन्तर कियो विचार ॥ ४७ ॥
भांति भांतिकी सृष्टिही, दीखत दीखत है जो येह।
भाव अवस्था एकही, एक वस्त्र लख लेह ॥ ४८ ॥

एककु देखत है ज़ु अनेका। तेरे ही भ्रम तोहिं विशेषा ॥
या जगकूं तुम यही विचारो। तेरोहि भर्म दिखावन वारो ॥
जो तोको यह देत दिखाई। अपनो भरम जानले याई ॥
जो यामें संदेह कराई। भरम बन्धमें जानो वाही ॥
व्यासपुत्र तुम हो बुधवानै। हुतौ जानबो सो तू जानै ॥
सब इंद्रीनके रहे न स्वादा। दुखसुख व्यापै नाहिं न बाधा॥
जिसको ऐसा होवै प्रापत। मुक्ति भयो वाकूं जानो संत ॥
मेरो यह भ्रम है अकि नाहीं। यह द्विविधा मत रखमनमाहीं४९॥

दोहा—निहचै करिके जान तू, यही बात है ठीक।
यह जग मेरोही भरम, यह विचारले सीख ॥५०॥
तो मन निहचै होय सब, भरम जायगो नाश।
जगत नेकहूं ना रहै, खुलै तिमिरकी गांस ॥५१॥
थिरही केवल आतमा, सत चित आनँदरूप।
यही जानिकै मौन गहु, होरहु ज्ञानस्वरूप ॥५२॥
कियो ज़ु राजा जनकने, इही भांति उपदेश।
रामरूप शुकदेवके, मनको गयो अन्देश ॥ ५३ ॥

जभी आत्मारूपमें, मगन भये शुकदेव ।
भरम तिमिर अज्ञानको, रह्यो नेक नहिं लेव ॥५४॥
भई अवस्था और ही, रोम रोम आनन्द ।
जीवनमुक्ता हो गए, रही न दुबधा संध ॥ ५५ ॥
भूले सब व्यवहारही, आपनकूं गए भूल ।
अहंकार नश्यो सबै, ताको रहो न मूल ॥ ५६ ॥
श्रीजनकके वचन सुनि, लिये उपदेश अघाय ।
जान मोक्ष सिद्धांतकूं, नीके समझा आय ॥ ५७ ॥
थे तो पूरण पहलही, सब विध सबही भाय ।
सतगुरु इस कारण किये, निहचै कीना आय ॥५८॥
विन सतगुरु निश्चय नहीं, कैसेहु चातुर होय ।
केतीही विद्या पढो, भूल मिटै ना कोय ॥ ५९ ॥
मुदित होय दण्डवत करि, उठ चाले भये भोर ।
पवन भांति उत्तर दिशा, चले पर्वतौ ओर ॥ ६० ॥

ह्वांसू उठे पवन ज्यों धाए । बेगहि पर्वत ऊपर आए ॥
व्यास तपस्या करते पाये । दरशन करिकै अंग नवाए ॥
व्यास उठाय दृष्टि जब देखा । आवत अपना पुत्र विशेषा ॥
सूरज अग्नि तेज ज्यों धरई । बेगहि धावत मानौ सरई॥६१॥

दोहा—वाको तेज न रुकसके, गिरिवर तरुके ओट ।
आय पिताके पासही, चरणनमें रहे लोट ॥ ६२ ॥

पिता उठाय हिये सूं लाये । दोनों मिल बहुतै सुख पाये॥
व्यास प्यार करि पूछन लागे। समझा सो सब कहु मो आगे॥
तब शुकदेव सभी कुछ कहिया। देखा सुना जनकसूं लहिया॥
भांति सिखनकी रहन विचारा। तप सेवा करने प्रण धारा ॥
ऐसेही महभारत माहीं । बिना सुने जानै कोइ नाहीं ॥

बाजे मूरख वाद बढावैं । बिन जाने कुछकी कुछ गावैं ॥
अबके द्वापरकी यह काथा । महभारतमें भो विख्याता ॥
भारतमें हैं पर्व अठारा । तामें शांति पर्व विस्तारा ॥
शांतिपर्वमें मोक्षधरम जो । तामाहीं यह कथा परमसो ॥
वेदव्यासके सुत शुकदेवा । तिनको तौ कारण इह भेवा ॥
सोई मोकूं मिले जु आई । जिनकी लीला तोहिं सुनाई ॥
ऐसे ही यह राम दुहाई । ज्योंकी त्यों तोकूं समझाई ॥
रामरूप यह निहचै कीजो । सांची बात हिये धरि लीजो ॥
दंतकथा झूठी जग छाई । कहैं कि गर्भ बसे शुक आई ॥
और कहैं बारह वर्ष ताहीं । रहे शुकदेव उदरके माहीं ॥
ऐसो चूक करी क्या भारी । सहा दुःख जो अधिक पियारी ॥
मूरख कहते नाहिं लजावैं । ईश्वरको जो दोष लगावैं ॥
उनकी बात सुनौ जनि प्यारे । वेतो हैं अपराधी भारे ॥६३॥

दोहा—मोहिं मिले शुकदेवजी, तिनकी तौ यह बात ।
गर्भयोनि आये नहीं, निहचै जानो तात ॥ ६४ ॥
चरणदास यों कहत हैं, रामरूप उरधार ।
यह लीला गावै सदा, उतरै भव जल पार ॥६५॥

शिष्य वचन

दोहा—धन सतगुरु परमारथी, चरणदास महाराज ।
अद्भुत कथा सुनायकै, पुरवे मो मन काज ॥६६॥
सब विधि कियो निहाल मुहिं, कथा सुनाई गूप ।
बारबार बलिहार हूं, कहै रामहीं रूप ॥ ६७ ॥
निहचै जानी सांच मैं, तुम्हरे वचन प्रसाद ।
सो लेकरि हिरदे धरी, नाशी मूल अगाद ॥ ६८ ॥

इति श्रीस्वामिरामरूपजीकृत शुकदेवजीकी जन्मलीला समाप्त ।

पतिव्रताको अंगवर्णन

★

दोहा—पतिव्रता वाकूं कहैं, पति आज्ञाकी टेक ।
रामरूप वह संत जो, सुमिरै साहिब एक ॥ १ ॥
आन पुरुष चित ना बसै, पतिव्रता है सोय ।
रामरूप एकै भजै, जो कुछ होय सु होय ॥ २ ॥
एक देह मन एक है, दीन्हा एकै हाथ ।
रामरूप दोजिक पडैं, दूजा लें जो साथ ॥ ३ ॥
जो आशिक है एकके, दूजेसूं क्या काम ।
रामरूप मुख दो नहीं, जो दूजा लै नाम ॥ ४ ॥
दूजेकूं धावै वही, जो दूजाका होय ।
रामरूपके मन बस्या, पीव पियारा सोय ॥ ५ ॥
उपजावै पाले वही, वही खपावै जान ।
तो दूजा क्यों सेइये, रामरूप है राम ॥ ६ ॥
एक जीव एकै दिया, दूजेसूं नहिं काम ।
रामरूप आशिक वही , जपै एकको नाम ॥ ७ ॥
बंदा तौ आशिक भया, मिहरवान महबूब ।
रामरूपं रब एकसूं, इश्क लगाया खूब ॥ ८ ॥
एक मूल गह लीजिये, रखिये एकै टेक ।
दूजी राह न चालिये, यह पतिव्रत विशेष ॥ ९ ॥
दूजा अंग न लाइये, दूजा देख न नैन ।
रामरूप रति एकसूं, सुनै न दूजा बैन ॥१०॥
हँस बोलूं तौ पीवसूं, जो देखूं तौ पीव ।
रामरूप वानर किया, तन मन धन अरु जीव॥११॥
जाना नरक कबूल है, पीव पियारे साथ ।
चाह नहीं मोहिं स्वर्गकी, रामरूप बिन नाथ ॥१२॥

तन मन दीना एककूं; एकहि सेती व्याह ।
एकै जाना रामरूप, दूजेकी नहिं चाह ॥ १३ ॥
भाँवर लीन्हीं भावकी, गठजोडा गुरुज्ञान ।
हथलेवा हित हरीसूं, रामरूप रंग मान ॥ १४ ॥
सांचे समरथ पीवसूं, मैं जो किया उछाह ।
संत जु माई बाप है, दीन्हीं तिन्हौं विवाह ॥ १५ ॥
लिया जनम सतसंगमें, जब पाया हरि पीव ।
नहीं तौ भरम्या फिरै था, चौरासीका जीव ॥१६॥
प्रेम प्रीत सतसंगसूं, पाया नेडै राम ।
नहीं तौ भरम्या फिरै था, रामरूप बेकाम ॥ १७ ॥
लख चौरासी जून मैं, बहुते कीते पीव ।
एक पीव जाने विना, भटक परा यह जीव ॥ १८ ॥
कहीं ठिकाना ना मिला, बिन सांचे भरतार ।
रामरूम शोभा गई, जने जनेके लार ॥ १९ ॥
परपुरषाकी चूनरी, ओढै चढै कलंक ।
अपने पीकी गूदडी, शोभा देत निशंक ॥ २० ॥
रूखा सूखा पीवका, खावैं सरस सुरंग ।
पर पीका षटरस बुरा, यह विभचारन अंग ॥ २१ ॥
परपुरषासूं प्रीतरी, जनम बिगोवा होय ।
निरफल सेवा तासुकी, भला कहे नहिं कोय ॥२२॥
जने जनेसूं प्रीतरी, करत फिरैं विभचार ।
रामरूप जगमें कुजस, ले तन दे भरतार ॥ २३ ॥
पतिव्रताकूं पीव विन, पुरुष न दीखे और ।
रामरूप त्यौं हरि बिना, आस न दूजी ठौर ॥ २४ ॥
हंसा तौ मोती चुगै, सिंह न सूंघै घास ।
रामरूपके हरि बिना, और न दूजी आस ॥ २५ ॥

ब्रह्मा शेष महेशलौं, शूर तेतीसौं जान ।
रामरूप सेवैं हरी, नर क्या धावै आन ॥ २६ ॥
आन धरमसूं काम क्या, अपना धरम संभाल ।
रामरूप रहु टेकमें, सांई करै निहाल ॥ २७ ॥
सगा सनेही रामसा, और न दीखै कोय ।
रामरूप ताकूं तजे, तौ कैसे सुख होय ॥ २८ ॥
करम कटैं हरि नामसूं, दुख दरिद्र सब जाय ।
रामरूप आफत टलै, यमकी नाहिं बसाय ॥ २९ ॥
तन मनकी बेदनि सबै, राम भजनकूं जाय ।
रामरूप उस छाँडिकै, भरमत फिरै बलाय ॥ ३० ॥
सेवक हूजे रामका, तजि दूजा दरबार ।
रामरूप उस एकमें, जो चाहै सो प्यार ॥ ३१ ॥
जड सींचे सब सींचिया, डाल पात फल फूल ।
रामरूप पूजे सबै, जब पूज्या हरि मूल ॥ ३२ ॥
सब काया तिरपत भई, जब मेल्हा मुख ग्रास ।
मन बुधि इन्द्री प्राण जो, सबकूं भया हुलास ॥३३॥
ताते अविगति पूजिये, छाँड आनकी आस ।
रामरूप उस एकके सबै देवता दास ॥ ३४ ॥
परमतत्व जाने बिना, मनका भरम न जाय ।
रामरूप उस एकमें, रहिये सदा समाय ॥ ३५ ॥
सिर नावै तौ रामकूं, जपै तौ सिरजनहार ।
रामरूप यह पति बरत, जब रीझैं भरतार ॥ ३६ ॥
मनसा वाचा करमना, एक पीवसूं लाय ।
रामरूप पिय रीझकै, लेवै कंठ लगाय ॥ ३७ ॥
संतनमें साझा नहीं, मनमें प्रीत न भाव ।
रामरूप उस पीवसूं, कैसे बनै बनाव ॥ ३८ ॥

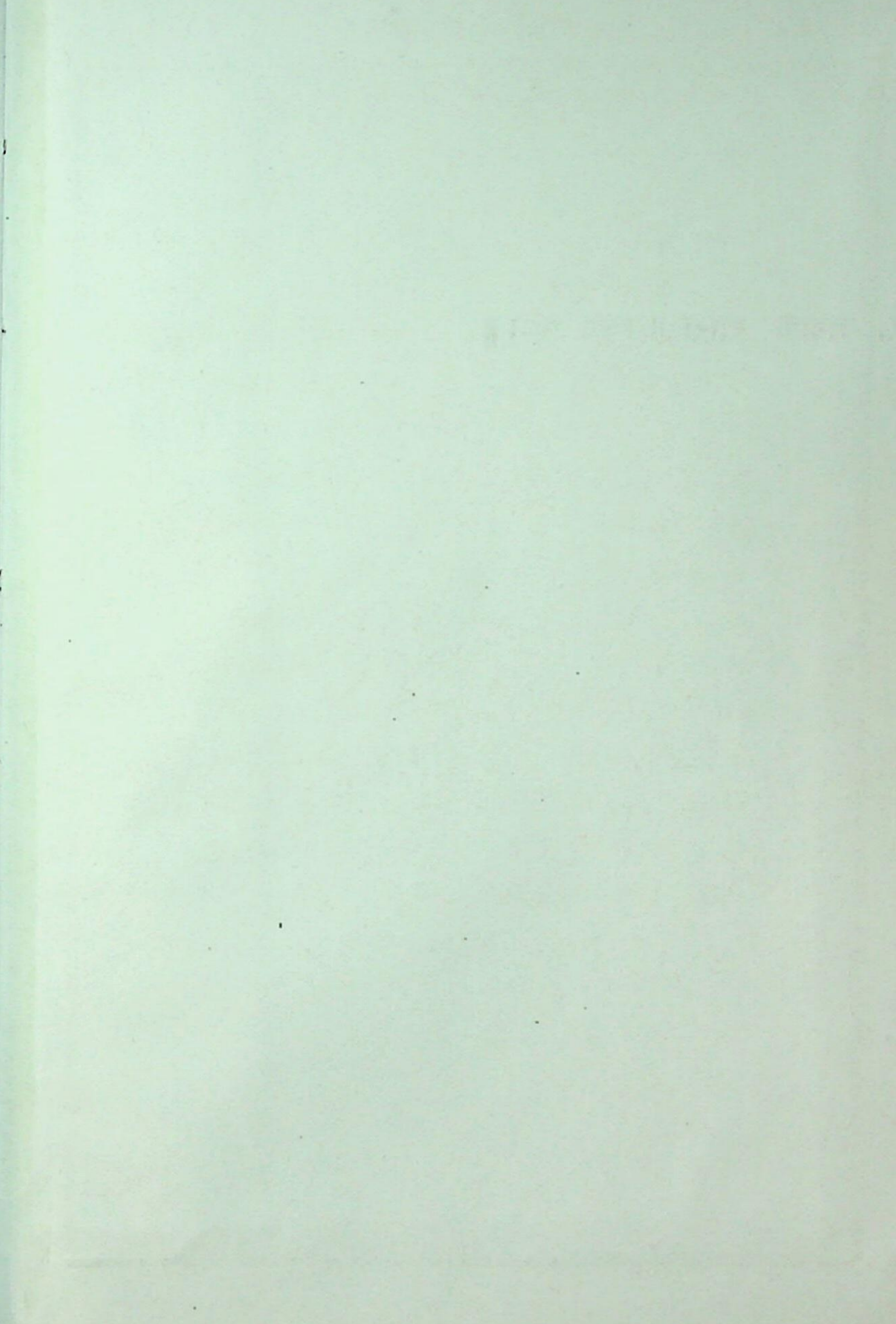
जहां भक्ति तहँ मैं नहीं, मैं जहँ भक्ती नाहिं ।
रामरूप तज मानकूं, तब प्रीतम गल बाहिं ॥३९॥
रहिये राजी रजामें, पतिव्रता है सोय ।
रामरूप आपा नहीं, पीव कहै सो होय ॥ ४० ॥
साहिब रीझें भक्तिसूं, भक्ति बिना हरि दूर ।
रामरूप कहै भक्ति बिन, गए बिसूर बिसूर ॥ ४१ ॥
जो आशिक हैं रामके, तिन्हैं न जगसूं काम ।
रामरूप कहै तजि दिए, जन जमीन जर गाम ॥४२॥
राजा राना छत्रपति, जाय न तिनके पास ।
रामरूप हरिके हुए, जब कैसी जग आस ॥४३॥
आज्ञा पालै पीवकी, सो पतिव्रता नारि ।
रामरूप करै भक्ति ही, सब परपंच बिसारि ॥४४॥
भेद आपने पीवका, बाहरि कहै न कोय ।
रामरूप पतिव्रता सो, आज्ञाकारी होय ॥ ४५ ॥
आज्ञाकारी पीवकी, तन मन सेवा माहिं ।
रामरूप ऐसा कोई, जगमें बहुतै नाहिं ॥ ४६ ॥
आज्ञा ले जावै कहीं, ऊठै बैठै सोय ।
आज्ञा ले भोजन करै, कबहूं दुख नहिं होय ॥४७॥
हानि लाभ कछु ना गिनै, एक हुकमसूं काम ।
रामरूप आवत जैसो, पतिवर्ताहू वाम ॥४८॥
सोइ सुहागिनि सुंदरी, पति आज्ञामें होय ।
रामरूप ऊंची चढै, भला कहै सब कोय ॥४९॥
जंतर टोना त्यागकै, हुकुम पियाका पाल ।
यह विधि है वश करनकी, सदा पीव खुसियाल ॥५०॥

रामरूप ज्यों पतिव्रता, साहिब सेती दास ।
शिष गुरुसों ऐसो रहै, दिन-दिन भक्तिप्रकाश ॥५१॥
आज्ञा मेटी पीवकी, चाली मनके भाय ।
अब कैसे भरतारकूं मुख दिखलाऊं जाय ॥ ५२ ॥
जैसी तैसी पीवकी, पीया बकसन हार ।
रामरूप समरथ धनी, मैंही औगुनगार ॥ ५३ ॥
मैं तो औगुन बहु किये, तेरी ओट भरतार ।
रामरूपकूं राख लो, अब शरनैं करतार ॥ ५४ ॥
जो छीनै तौ रामजी, जो देवैं तौ राम ।
पात न हाले हुकुम बिन, राम करैं सब काम ॥५५॥
रामहिं सेती मांगिये, रामहिं सबका साह ।
राम रूप दाता वही, और सरबकूं चाह ॥ ५६ ॥
आशा रखिये रामकी, और सरबसूं तोडि ।
रामरूप पतिव्रत यहै, एक रामसूं जोडि ॥५७॥
मीरा गिरधारी भज्यो, करमाने जगन्नाथ ।
तुलसीदासा, राम बिन और न नायो माथ ॥५८॥
गहो टेक भगवानकी, जो सब जगका नाथ ।
रामरूप साँचा धनी, सो क्यों तजिये साथ ॥ ५९॥
कान आँख जिनने दई, नाक तुचा कर पांव ।
रामरूप हरि सब दिया, ताको लेयत नांव ॥६०॥
रामरूप हरिने दिए, सुत नाती धन प्रान ।
राति जगावैं पीरकी, यह देखो अज्ञान ॥ ६१ ॥
रामरूप हरिनेह करि, अन्न उपाया जान ।
काढैं माय जु पीरका, यह पूरा अज्ञान ॥ ६२ ॥

बैठे दीने रामनैं, पूजैं सेढ मसाण ।
राम रूप वे कृतघन, क्यों न सहैं जम साण ॥६३॥
आन धरम वाकूं कहैं, शीश नवावैं आन ।
रामरूप भटकत फिरैं, बिन सांचे भगवान ॥६४॥
पाखंडी वह जानिये, निसदिन पाप कमाय ।
रामरूप कहै राम तज, सरनि आनकी जाय ॥६५॥
जबलग मनमें कामना, तबलग भक्त न होय ।
रामरूप फल दे सही, पर आप मिलैं नहिं कोय॥६६॥
आशा रखिये दरशकी, दूजी चाह निवार ।
रामरूप तौ सब मिलै स्वरग मुक्ति भंडार ॥ ६७ ॥
बिन आशा सब कुछ मिलै, आशा आश निराश ।
रामरूप आशा नहीं, सोई साचा दास ॥ ६८ ॥
रामरूप कहैं नाम बिन, कछू न कीजे चाह ।
स्वरग मुक्ति रिध सिद्धिलौं, सबसूं बेपरवाह ॥६९॥
आन देव अमरा करैं, तीन लोक दैं राज ।
रामरूप कहै भक्ति बिन, मेरे किसी न काज ॥७०॥
जो हरि देवै आपसूं, सो धारूं निज सीस ।
रामरूप मुख ना कहै, तू दे कुछ जगदीश ॥७१॥
फल निमित्त हरिकूं भजै, धन पुत्तरकी आस ।
रामरूप वे भक्तके, स्वारथहीके दास ॥ ७२ ॥
स्वरग आदिके फल लिये, भजें निरञ्जन नाम ।
रामरूप सांचे भगत, पावैं प्रभुको धाम ॥७३॥
सहकामी झूठा भगत, निहकामी भरपूर ।
रामरूप तजि कामना, रहें प्रेममें चूर ॥ ७४ ॥

अर्थ धर्म काम मोक्ष ए, चार पदारथ सार।
रामरूप जो हरि भगत, तिन्हें न उनकूं प्यार ॥७५॥
रामरूप वैकुंठ लौं, चाह तजै सोइ दास।
बिना राम पद और सब, जानै झूठी आस ॥७६॥
वही शिरोमनि दास है, अनन्य भक्त निहकाम।
रामरूप माँगे नहीं, सुत नाती धन धाम ॥ ७७ ॥
स्वारथकी सेवा बुरी, अन्त टूटही जाय।
रामरूप कबलौं रहे, कच्चे सूत बँधाय ॥ ७८ ॥
एक दोय लौं पूरिये, सहकामीकी आस।
रामरूप कबलौं भरे, दिनमें सौ सौ प्यास ॥ ७९ ॥
आखरकूं टूटै सही, स्वारथरूपी प्रीति।
रामरूप कबलौं रहै, जलमें बालू भीति ॥ ८० ॥
भक्ति करै चाहै मुकति, सोऊ अधमा दास।
रामरूप पूरा सोई, रखे न कोई आस ॥ ८१ ॥
आंखोंसे दरशन चहै, मुखसूं हरिको नाम।
रामरूप वह दास निज, करै भक्ति निहकाम ॥८२॥
कोऊ सेवै देवता, काहु राजकी आस।
रामरूप कहै मैं किया, गुरू श्याम चरणदास ॥८३॥

इति श्रीपतिव्रताको अंगवर्णन





खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन, बम्बई.